Jewels of Ramayana

रामायण के रत्न

श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Jewels of Ramayana

रामायण के रत्न

Editors
Omprakash K. Gupta
University of Houston-Downtown
Shivprakash Agrawal
Shri Ram Charit Bhavan

श्री राम चरित भवन, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

प्रकाशक
श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Publisher
Shri Ram Charit Bhavan
Houston, USA

प्रथम संस्करण 2025
First Edition 2025

ISBN: 978-1-960627-06-3

पुस्तक में निहित विषयवस्तु, तथ्य, विचार अथवा विश्लेषण के लिए उसके लेखक पूर्ण रूप से उत्तरदायी हैं। इसके समस्त अधिकार भी लेखकों के पास सुरक्षित हैं। प्रकाशक अथवा संपादक मंडल की विषयवस्तु के प्रति सहमति और उत्तरदायित्व नहीं है। पुस्तक या उसके किसी भी अंश का पुनर्प्रस्तुतिकरण किसी भी माध्यम से स्वीकार्य नहीं होगा। चाहे यांत्रिक माध्यम हो या इलैक्ट्रॉनिक; जानकारी का संचयन लिखित आज्ञा लिए बिना नहीं किया जाना चाहिए। केवल एक समीक्षक को समीक्षा में आंशिक उदधृत करने की छूट रहेगी।

The contents, facts, views, and analysis in this work are entirely the responsibility of the authors and they reserve all rights. Neither the editorial board nor the publisher is responsible of contents by the authors. No part of this book may be reproduced in any form on by an electronic or mechanical means, including information storage and retrieval systems, without permission in writing, except by a reviewer who may quote brief passages in a review.

अनुक्रमणिका

1	अवतार, माया और भक्ति: रामचरितमानस एवं श्रीमद्भगवद्गीता का तुलनात्मक विश्लेषण - *आशुतोष कुमार*	1
2	The Rameshwaram Bridge - An Ancient Mystery Built by Lord Rama's Vanara Sena - *Bharat Raj Singh, Pramod Kumar Singh, Hemant Kumar Singh*	5
3	श्रीरामचरितमानस में भक्ति* - *कैलाश चन्द्र शर्मा*	10
4	भगवान राम की सहायता करने वाले मानवेतर प्राणी - *त्रिप्ती रतूरी*	13
5	रामायण में पिता - *अलका प्रमोद*	15
6	रामकथा का उद्देश्य - लोक मंगल - *उषा गौड*	18
7	रामायण में माता कौशल्या - *वीणापाणि*	21
8	पंच कन्याओं में वाल्मीकि रामायण के तीन नारी पात्र - *श्रवण कुमार उपाध्याय*	25
9	केवट के राम - *सरिता श्रीवास्तव*	29
10	रामायण की महत्वपूर्ण शिक्षाएं - *उषा श्रीवास्तव*	32
11	रामचरितमानस में शासन में लोकतंत्र - *अम्बे कुमारी*	37
12	रामसेतु एवं आधुनिक पुल निर्माण: एक तुलनात्मक अध्ययन - *Sulochana Sharma*	38
13	गुरुवर के राम - *अलका श्रीवास्तव*	42
14	समुद्र लांघने हेतु केवल हनुमान ही सक्षम क्यों - *संतोष कुमार मिश्र "असाधु"*	44
15	सुंदरकांड के सुन्दर हनुमान - *Ameeta Gupta*	49
16	जनक और जानकी : पिता-पुत्री की अप्रतिम मिसाल - *नीलम झा*	52
17	The Difference between the Ramayana and Mahabharata - *Kajari Guha*	55
18	सुंदरकांड की सुंदरता - *संजना मिश्रा*	57
19	मानस के सात सोपान - रूप से स्वरूप की यात्रा - *पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु'*	59
20	Ramayana Heritage in Tamil Nadu - *Sriraman Chandramouli, S Vijaykrishnan, Kum. Sriranjani Sriraman*	70
21	Mystery of Sita: Revealing Her Past and Divine Purpose - *Manali Gandhar Newaskar*	75
22	रामलीला - *आशा श्रीवास्तव*	78
23	पावन भूमि – जहाँ राम ने पग धरे - *सी. कामेश्वरी*	80
24	Lord Hanuman, the Immortal Hope: A Journey from Myth to Modernity - *Puspita Mondal*	83
25	अवतार के रूप में श्री राम एवं महर्षि परशुराम का वैशिष्ट्य: एक विहंगम दृष्टि - *मधु चतुर्वेदी*	87
26	रामकथा में विभीषण का प्रसंग - *राम मल्लिक, सरस्वती मल्लिक*	90

27	Leadership Skills in Ramayana - *Vaishali S*	93
28	‘रावणः एक उत्कृष्ट प्रतिनायक’ - *लीना सुनिल पांडे*	97
29	The Chinese Dai Rāmāyaṇa (Lanka Sip Ho) and the Lao Rāmāyaṇa (Phra Lak Phra Lam): A Comparative Analysis - *Irfan Ahmad*	101
30	जीवन संजीवनी: रामायण - *स्मिता नरेन्द्र लाघावाला*	107
31	सीता: ‘तृन धरि ओट’ उपन्यास के विशेष संदर्भ में - *श्रीमती आशा राठौर*	109
32	राम कथा में शबरी का चरित्र और भगवान राम से संवाद - *सरस्वती मल्लिक, राम मल्लिक*	113
33	तुलसी-काव्य में नवाचार - *आचार्य ओम नीरव*	115
34	नेतृत्व में अग्रणी सीता: नेत्री सीता - *विनीता मिश्रा*	119
35	विद्या निवास मिश्र जी का राम विषयक साहित्यिक अवदान - *हेम कुमार गहतोड़ी*	122
36	राम के चरित्र में उनके विभिन्न जीवनमूल्यों का अध्ययन - *हेमा जोशी*	125
37	"चिकित्सा विज्ञान और रामायण" - *उर्मिला त्रिपाठी*	129
38	हनुमान चालीसा- एक आधुनिक परिकल्पना - *Avi Sharma*	132
39	जगमोहन रामायण की विशेषताएँ और स्वतन्त्रता - *शुभस्मिता दाश*	141
40	Ramayana in the Age of AI-Driven Management - *Subodh Saluja*	146
41	Bhakti in Brotherhood – The Exemplary Devotion of Lakshmana, Bharata and Shatrughna - *Vijaykrishnan S, Lavanya Hariharan*	150
42	रामायण और महाभारत में मानवाधिकार: एक दार्शनिक एवं सामाजिक विश्लेषण - *पूनम रानी*	156
43	एक अद्भुत व्यक्तित्व "लंकिनी" - *Karuna Pande*	158
44	प्राश्निक पार्वती और मानस संवाद योजना - *राजरानी शर्मा*	161
45	आत्मा सुखे नियोक्तव्यः – Valmiki Ramayana’s Synthesis of Happiness and Impermanence - *Ashruth Suryanarayanan*	166
48	विविध रूपों में तुलसी के राम : एक आदर्श - *कुलभूषण शर्मा*	168

अवतार, माया और भक्ति: रामचरितमानस एवं श्रीमद्भगवद्गीता का तुलनात्मक विश्लेषण

ISBN: 978-1-960627-06-3

आशुतोष कुमार
कनोडिया ग्रुप, नोएडा, उत्तर प्रदेश
(ashutoshkumar1969@gmail.com)

1. प्रस्तावना

यह शोध पत्र श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रमुख आध्यात्मिक सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसमें भगवान के अवतार के कारण, माया और उसके प्रकार, जीव और ईश्वर के भेद, माया से मुक्त होने के उपाय, भक्तों के प्रकार पर विस्तृत चर्चा की गई है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण धर्म की पुनर्स्थापना और अधर्म के विनाश हेतु अवतार लेने की बात कहते हैं, जबकि तुलसीदासजी के रामचरितमानस में भी यही विचार प्रकट होता है। माया के संदर्भ में दोनों ग्रंथों में इसकी शक्तियों और प्रभावों का उल्लेख है, जिसमें अविद्या व विद्या के भेद स्पष्ट किए गए हैं। भक्ति के चार प्रकार—आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी का वर्णन करते हुए गीता और मानस दोनों ही ग्रंथों में ज्ञानी भक्त को सर्वाधिक प्रिय बताया गया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि इन ग्रंथों में प्रतिपादित तत्वज्ञान परस्पर संबद्ध है और व्यक्ति को मोक्ष मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है। यह शोधपत्र इन गूढ़ आध्यात्मिक विषयों को सरलता से समझाने का प्रयास करता है, जिससे पाठक ईश्वर, आत्मा और भक्ति की गहरी समझ प्राप्त कर सकें।

मुख्य शब्द: मानस, श्रीमद्भगवद्गीता, माया, जीव और ईश्वर

2. विस्तार

सबसे पहले हम श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीरामचरितमानस में वर्णित भगवान के अवतार के कारणों की चर्चा करते हैं।

2.1 भगवान के अवतार का कारण

श्री मद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 4/7)
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय संभावनामि युगे युगे ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 4/8)

और श्री रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसी दास जी लिखते हैं

जब जब होइ धर्म की हानि, बाढ़हि असुर अधम अभिमानी ॥ (बालकाण्ड, 120.3)
तब-तब धरि प्रभु विविध शरीरा, हरहि दयानिधि सज्जन पीरा॥ (बालकाण्ड, 120.4)

उपयुक्त श्लोक और चौपाई से यहीं सिद्ध होता है कि जब-जब पृथ्वी पर धर्म की हानि होती है और अधर्म का उत्थान होता है, दुष्टों और अभिमानियों का प्रभाव बढ़ता है तब सज्जनों की पीड़ा को हरने के लिए, दुष्टों का विनाश करने के लिए तथा धर्म को पुन: स्थापित करने के लिए करुणानिधान परमेश्वर के समय और परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग रूप में अवतार लेते हैं। तुलसीदास जी फिर आगे लिखते हैं

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।। (बालकाण्ड दोहा संख्या 192)

अर्थात भगवान ने ब्राह्मण, गौ, देवता और संतो के लिए श्री राम के रूप में अवतार लिया।

2.2 माया

रामचरित मानस के अरण्यकाण्ड में भगवान श्री राम लक्ष्मण जी से कहते हैं, इंद्रियां, इंद्रियों के विषय तथा मन जहां तक पहुंच जाए, हे भाई तुम उन सबको माया जानो।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।। (अरण्यकांड 14/2)
मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया।। (अरण्यकांड 14/1)

मैं और मेरा, तू और तेरा, यही माया है, जिसने समस्त जीवो/ भूतों को अपना वश में कर रखा है। गीता में भी भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि प्रकृति को वश में करके वे संसार की बार-बार रचना करते हैं और उनकी अध्यक्षता में प्रकृति द्वारा संसार का नियन्त्रण होता है। प्रकृति ही माया है।

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः । (श्रीमद्भगवद्गीता 9/8)
मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।

हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 9/10)

यह प्रकृति त्रिगुणात्मक है, गुणों के कार्यरूप (सात्विक, राजस और तमस) तीन भावों में से ये सारा संसार और प्राणि समुदाय व्याप्त हो रहा है। यथा त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् (श्रीमद्भगवद्गीता 7/13)

2.3 माया के प्रकार

रामचरित मानस में वर्णन आता है

बिद्या अपर अबिद्या दोऊ (अरण्यकांड 14/2)

एक दुष्ट अतिशय दुःखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा॥

एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरणा नहिं निज बल ताकें॥ (अरण्यकांड 14/3)

एक विद्या है और दूसरी अविद्या, जो दो प्रकार की है। पहले अविद्या की चर्चा करते हैं। पहली अविद्या रूपी माया जीव को जन्म-मरण के चक्कर में फंसाती है। जीव भटकता रहता है, जन्म या मृत्यु के चक्कर में। दूसरी परमेश्वर की माया है, जिसे योगमाया भी कहते हैं। जिसके वश में सत्व, रज और तम तीनों गुन हैं, ये परमेश्वर से प्रेरित होकर जगत की रचना, स्थिति और प्रलय करती है। इसी को भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में परा प्रकृति और अपरा प्रकृति के नाम से बताया है।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।

जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् । । (श्रीमद्भगवद्गीता 7/5)

अपरा प्रकृति भगवान की जड़ प्रकृति है, जो पंचभूतों, पुरुष, बुद्धि और अहंकार में आठ रूप से विभाजित है। जो भौतिक जगत से संबंधित है। ये वे विद्याएं और ज्ञान हैं जो इस दुनिया में प्राप्ति के लिए उपयोगी होते हैं, जैसे कि भाषा, गणित, विज्ञान, तर्कशक्ति, कला और अन्य शास्त्र। इसका उद्देश्य व्यक्ति को भौतिक सुख, समृद्धि और समाज में सफलता प्राप्त करने में मदद करना है। अपरा विद्या के अंतर्गत भौतिक संसार का ज्ञान मौजूद है, जो व्यक्ति की स्थिरता को पूरा करता है, और यह त्रिगुणात्मक है, लेकिन इसका उद्देश्य आत्मा के सर्वोच्च सत्य से जुड़ना नहीं है। परा प्रकृति भगवान की चेतन प्रकृति है जिस से ये संपूर्ण जगत धारण किया जाता है, और यह निष्त्रैगुण है।

अब देखते हैं कि विद्या क्या है? भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता के दशम अध्याय विभूतियोग में श्लोक 32 में विद्या का वर्णन करते हुए कहते हैं *"अध्यात्म विद्या विद्यानाम्"* अर्थात् मै समस्त विद्याओं में अध्यात्म विद्या हूँ । विद्या सर्वोच्च ज्ञान है, जो आत्मा और ब्रह्म (परमात्मा) के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए है। यह आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति की दिशा दर्शाता है। विद्या का उद्देश्य आत्मा के वास्तविक स्वरूप को पहचानना है, जो व्यक्ति को जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्त करवाती है। इसी को आत्मविद्या या ब्रह्मविद्या भी कहते हैं।

2.4 जीव और ईश्वर में भेद

रामचरित मानस में वर्णित है, जो माया को, ईश्वर को और स्वयं को नहीं जानता- वह जीव और जीव को उसका कर्म बंधन तथा मोक्ष देने वाला- ईश्वर।

माया ईस न आपु कहुँ जान कहिअ सो जीव।

बंध मोच्छ प्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव॥15॥ (अरण्यकांड दोहा सं.15)

फिर तुलसीदास जी आगे उत्तरकांड में लिखते हैं

ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुख रासी ॥ (उत्तरकाण्ड 116/1)

और श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं, सभी भूतों में ये सनातन जीव मेरा ही अंश है।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः । (श्रीमद्भगवद्गीता 15/7)

उपरोक्त श्लोक और मानस की चौपाई से ये सिद्ध होता है कि जीव / जीवात्मा, ईश्वर का ही अंश है और इसलिए वह अविनाशी, अजर, अमर, चेतन, निर्मल और स्वभाव से ही सुख की राशि है । अब प्रश्न यह है कि जब जीव ईश्वर का ही अंश है तो वह ईश्वर को क्यों नहीं जानता? तो इसका कारण अविद्या है क्योंकि माया के द्वारा ज्ञान का अपहरण हो गया है (माययापहृतज्ञाना)। आगे गीता में आता है

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।

मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 7/13)

सात्विक, राजस और तामस रूपी त्रिगुणात्मक भावों से ये सारा संसार और प्राणि समुदाय मोहित हो रहा है। यही कारण है, इन तीनों गुनो से परे अविनाशी ईश्वर को नहीं जान पाता है। और यही बात रामचरित मानस में भी है।

सो मायाबस भयउ गोसाईं। बँध्यो कीर मरकट की नाईं॥ (उत्तरकाण्ड, 116/2)

आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी॥

फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥ (उत्तरकाण्ड, 43/3-4)

प्रत्येक जीव ईश्वर का अंश तो है लेकिन मैं, मेरा, तू, तेरा के कारण इस माया में लिप्त है। जो निम्न चौपाइयों में वर्णित है।

माया बस स्वरूप बिसरायो तेहि भ्रम ते दारुण दुःख पायो।।

चिंता साँपिनि को नहिं खाया । को जग जाहि न ब्यापी माया।। (उत्तरकाण्ड, 70/2)

प्रभु माया बलवंत भवानी । जाहि न मोह कवन अस ग्यानी।। (उत्तरकाण्ड, 61/5)

माया बस्य जीव सचराचर ।। (उत्तरकाण्ड, 77/2)

माया बस्य जीव अभिमानी ।। (उत्तरकाण्ड, 77/3)

माया के करण ही जीव अपने अविनाशी, निर्मल और चेतन स्वरूप को भूल जाता है और इसी भ्रम से तरह तरह के दुख पाता है। संसार में ऐसा कौन है जो इस माया से अछूता है। भगवान शिव कहते हैं, हे भवानी! प्रभु की माया बहुत ही बलशाली है, ऐसा कौन ज्ञानी है जिसे वह मोहित ना कर दे? जड और चेतन सभी जीव माया के बस में हैं।

2.5 माया के कार्य और उससे पार पाने के उपाय

रामचरित मानस उत्तरकांड के बिभिन्न चौपाइयों में आता है - *जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहुँ न पावा।।* अर्थात माया सारे जगत् को नचाती है और जिसका चरित्र (करनी) किसी ने नहीं लख (देख, समझ) पाया और *"माया कृत गुन दोष अनेका"* तथा *"रहे ब्यापि समस्त जग माहीं "* । माया रचित अनेकों गुण-दोष, मोह, काम, अविवेक इत्यादि। जो सारी दुनिया में व्याप्त हैं। श्री राम जी स्वयं कहते हैं, हे तात! माया से ही अनेक गुन और दोष रचे गए हैं। इनकी कोई अपनी पहचान नहीं है। विवेक इसमें है कि दोनों ही ना कहे जाएं, इन्हें देखना ही अविवेक है।

सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक।

गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक ।। (उत्तरकाण्ड, 41)

मायाराचित गुण-दोष काम, मोह, राग, अविवेक इत्यादि हैं। माया कृत गुण दोष अनेका। मोह मनोज आदि अविवेका ।। (उत्तरकाण्ड, 56.2)

भगवान श्री राम कहते हैं यह सारा संसार मेरी माया से उत्पन्न है (मम माया संभव संसारा)। (उत्तरकाण्ड, 85.2)

भगवान श्री कृष्ण गीता में कहते हैं - *दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया* (मेरी ये गुणमयी देवी माया दुरत्या / दुस्तर है अर्थात इस पार पाना बड़ा कठिन है। यहां एक ध्यान देने वाली बात है कि भगवान ने माया को "मम माया" कहा है अर्थात माया भगवान की है लेकिन जो लोग इसकी स्वतंत्र सत्ता मानते हैं उनके लिए माया से पार पाना आसान है। माया से पार होने का उपाय भी भगवान ही बताते हैं। *"मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते"* अर्थात जो मुझको निरंतर भजते हैं वो इस माया का उल्लंघन कर जाते हैं। इसका अर्थ ये हुआ कि "भगवान की शरणागति" ही माया से पार पाने का एकमात्र उपाय है। मानस में श्री काकभुशुण्डि जी पक्षिराज गरुड़ जी से कहते हैं, *"हरि माया कर अमित प्रभावा। विपुल बार जेहि मोहि नचावा ।।"(हरि की माया का अमित प्रभाव है, जिसने बार-बार हमें नचाया है या भ्रमित किया है)* , फिर कहते हैं, हे खगराज गरुड़जी! वही माया प्रभु श्री रामचंद्र जी की भृकुटी के इशारे पर अपने समाज (परिवार) सहित नटी की तरह नाचती है।

सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा।।1।। (उत्तरकाण्ड 71/1)

फिर कहते हैं, हे पक्षीराज! इसी प्रकार श्री हरि के भजन बिना जीवों का क्लेश नहीं मिटता। श्री हरि के सेवक को अविद्या नहीं व्यापती और प्रभु की प्रेरणा से से उसे विद्या प्राप्त होती है।

ऐसेहिं हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा।।

हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। प्रभु प्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या।। (उत्तरकाण्ड 78.1)

भगवान के भजन के बिना करोड़ों उपाय करने से भी नहीं जाती है *(बिनु हरि जाई न कोटि उपाया)*। अंत में काकभुशुण्डि जी अपना अनुभव कहते हैं, हे गरुड़ जी बिना हरि भजन के क्लेश नहीं मिटते हैं *(निज अनुभव अब कहु खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा ।।)*

उपरोक्त विवेचन से दो बातें बिल्कुल स्पष्ट हैं 1) ये माया समस्त जीवो को भ्रमित करके रखती है तथा उनमें अनेक प्रकार के गुण और दोषों को उत्पन्न करती है। हालाँकि सच तो यह है कि जीव स्वयं ही अपने स्वरूप की अज्ञानता के कारण माया रूपी संसार में आसक्ति करके अपने लिए अपार दुःखों का निर्माण करता है। 2) बिना भगवान की शरण में गए इस माया से उबरना नामुमकिन है। जब जीव माया रूपी संसार को दुःख स्वरूप समझ कर उससे अनासक्त होता है, तब अपने एवं ईश्वर के आनंदमय स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर माया रूपी संसार के दुःखों से मोक्ष प्राप्त कर लेता है। अत: भगवान की भक्ति बहुत जरूरी है।

2.6 भक्त के प्रकार

रामचरित मानस में चार प्रकार के भक्तों का वर्णन किया गया है।

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।। (बालकाण्ड 21.3)

इसी बात को गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं- हे अर्जुन, अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी, ऐसे चार प्रकार के भक्त मुझको भजते हैं।

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 7/16)

दोनो ही ग्रंथो में ये वर्णित है कि संसार में चार प्रकार के भक्त हैं और ये चारों ही पवित्र, निष्पाप और उदार हैं। मानस उत्तरकांड के विभिन्न चौपाइयों में, इनको परिभाषित किया गया है।

1. जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥ संकट निवारण के लिए उपासक, ये आर्त भक्त हैं
2. जाना चहहिं गूढ़ गति' - ईश्वर को जानने की इच्छा रखने वाले उपासक, ये जिज्ञासु हैं,
3. साधक नाम जपहिं लय लाएं, होहि सिद्धि अनिमादिक पाएं (धन की इच्छा रखने वाले उपासक), ये अर्थार्थी हैं और
4. नाम जीहँ जपि जागहिं जोगी। बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी॥

ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा॥

ये परमात्माको जाननेवाले ज्ञानी भक्त हैं । जो वैराग्यवान और मुक्त योगी हैं । राम नाम को ही जीभ से जपते हुए जागते हैं और नाम तथा रूप से अनुपम, अनिर्वचनीय, अनामय ब्रह्मसुख का अनुभव करते हैं।

भगवान् कहते हैं कि सब-के-सब अर्थात् चारों प्रकारके भक्त सुकृती हैं । यहाँ तुलसीदासजी ने भी इनको सुकृती (उत्तम कर्म करने वाले) बताया है और ये अनघ और उदार भी हैं । यही बात गीता में भी आयी है— *'उदारा सर्व एवैते'* (श्रीमद्भगवद्गीता ७ । १८)।

भगवान को कौन से भक्त सबसे प्रिय हैं। मानस के अनुसार "ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा" (बालकाण्ड दोहा 21/4) और श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान कहते हैं

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते |

प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रिय: || (श्रीमद्भगवद्गीता 7/17)

ज्ञानी भक्त प्रभु को विशेष रूप से प्रिय हैं। भगवान ने ज्ञानी को *एकभक्तिर्विशिष्यते* अर्थात अनन्य प्रेम भक्तिवाला और अति उत्तम कहा है और अपने को उसका अत्यन्त प्रिय बताया है - *प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं* ।

3. निष्कर्ष

श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीता दोनों ही भारतीय आध्यात्मिक परंपरा के प्रमुख ग्रंथ हैं, जो जीवन, धर्म, भक्ति, ज्ञान और मोक्ष के मार्ग को स्पष्ट करते हैं। गीता में भगवान श्रीकृष्ण कर्म, ज्ञान और भक्ति योग के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताते हैं, जबकि श्रीरामचरितमानस में भगवान राम के चरित्र और उनकी लीलाओं के माध्यम से भक्ति और धर्म के आदर्श प्रस्तुत किए गए हैं। दोनों ग्रंथों में माया, जीव और ईश्वर के संबंध की गहन व्याख्या मिलती है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि ये ग्रंथ न केवल आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करते हैं, बल्कि जीवन के नैतिक और व्यवहारिक पक्ष को भी सशक्त रूप से प्रभावित करते हैं। निष्कर्षतः, इन दोनों ग्रंथों में वर्णित शिक्षाएँ आज भी प्रासंगिक हैं और व्यक्ति को आत्मिक उन्नति के साथ-साथ समाज में सद्भाव और नैतिकता स्थापित करने की प्रेरणा देती हैं। साथ ही साथ, हमें भक्त बनने की प्रेरणा मिलती है क्योंकि यही एक साधन है जो हमें इस संसार से मुक्ति दिला सकती है।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. गोस्वामी तुलसीदास कृत श्रीरामचरित मानस
2. श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस गोरखपुर
3. गीता प्रबोधिनी - स्वामी रामसुखदास, गीता प्रेस गोरखपुर
4. https://www.holy-bhagavad-gita.org/
5. https://www.ramcharitmanas.iitk.ac.in/

The Rameshwaram Bridge - An Ancient Mystery Built by Lord Rama's Vanara Sena

ISBN: 978-1-960627-06-3

Bharat Raj Singh
Pramod Kumar Singh
Hemant Kumar Singh
School of Management Sciences, Lucknow
(brsinghlko@yahoo.com)

The Rameshwaram Bridge, a 35-kilometer-long chain of shoals and islands connecting India and Sri Lanka, has been a subject of fascination for centuries. This ancient bridge, attributed to Lord Rama's Vanara Sena, is not only an engineering marvel but also a testament to the rich cultural heritage of India. As described in the Ramayana, the epic Hindu scripture composed by Goswami Tulasidas and originally written by Balmiki, the Rameshwaram Bridge was constructed by Lord Rama's army of monkeys and bears to facilitate their journey to Lanka to rescue Sita from the clutches of Ravana (Balmiki Ramayan, 5.1-5.5). The bridge's construction, which took only five days to complete, is a testament to the ingenuity and skill of the Vanara Sena (Goswami Tulasidas, Ramacharitamanas, 6.1-6.245). The Rameshwaram Bridge's unique engineering features, including its submerged structure, demonstrate exceptional construction skills. The bridge's foundation, composed of rocks and sand, has withstood the test of time and the harsh marine environment. The bridge's construction also showcases the advanced knowledge of marine engineering and architecture possessed by the ancient Indians. This study aims to explore the historical and mythological significance of the Rameshwaram Bridge, as well as its engineering and architectural features. By examining the ancient texts and scriptures, such as the Ramayana and the Ramacharitamanas, this study seeks to provide a comprehensive understanding of this ancient marvel.

1. Introduction

The Rameshwaram Bridge, also known as Adam's Bridge, is a chain of shoals and islands connecting India and Sri Lanka. This ancient bridge has been a subject of interest for centuries, with its construction attributed to Lord Rama's Vanara Sena. The bridge's unique engineering and construction features make it an important study subject. The Rameshwaram Bridge, also known as Adam's Bridge, is a chain of shoals and islands connecting India and Sri Lanka (NASA, 2014). This ancient bridge has been a subject of interest for centuries, with its construction attributed to Lord Rama's Vanara Sena (Balmiki, 400 BCE; Goswami Tulasidas, 1575 CE). The bridge's unique engineering and construction features make it an important study subject as seen the significance in **Figure.1**.

Figure 1 *Significance of Ram Setu*

According to ancient Indian literature, such as the Ramayana and the Ramacharitamanas, the Rameshwaram Bridge was constructed by Lord Rama's army of monkeys and bears to facilitate their journey to Lanka to rescue Sita from the clutches of Ravana (Balmiki, 400 BCE; Goswami Tulasidas, 1575 CE). The bridge's construction, which took only five days to complete, is a testament to the ingenuity and skill of the Vanara Sena (Goswami Tulasidas, 1575 CE).

NASA satellite pictures have confirmed the existence of the Rameshwaram Bridge, with images showing a chain of shoals and islands connecting India and Sri Lanka (NASA, 2014) as shown in **Figure. 2**.. The bridge's structure, which is still visible even after 5,000 years, is a testament to the advanced engineering and construction skills of the ancient Indians.

Figure 2 *Under water Coral Bridge 30 Km*

Recent studies suggest that the Rameshwaram Bridge may have been constructed using wooden piles, which were driven into the seabed to form a foundation for the bridge (Ramasamy, 2013). This theory aligns with several intriguing facts about the Ram Setu, which has captivated the imagination of many. According to the *Valmiki Ramayana* and *Ramcharit Manas*, Lord Rama built a bridge over the sea to reach Sri Lanka. Though much of the bridge has been severely damaged due to the *Sethusamudram Project*, remnants of this "setu" still exist today. Let's explore 10 interesting facts about the Ram Setu.

1. **NASA's Satellite Images:** In 1993, NASA released satellite images showing a 48-km wide landmass between Dhanushkodi in India's south and Pamban in Sri Lanka's northwest. These images sparked political debates in India, and the landmass came to be known as "Rama's Bridge" or Ram Setu. The first image of this formation was captured by NASA's Gemini-11 spacecraft on December 14, 1966. Twenty-two years later, the ISS 1A satellite confirmed the submerged landmass between Rameswaram and Jaffna islands as shown in **Figure.2**.
2. **Scientific Inquiry:** In December 1917, the American TV show *Ancient Land Bridge* suggested that the Hindu myth of Lord Ram building a bridge to Sri Lanka might have a basis in reality. A 50 km long line of rocks between India and Sri Lanka is believed to be 7,000 years old, while the sand beneath it is about 4,000 years old. The age discrepancy of these materials raises the possibility that the bridge could have been man-made.
3. **Naming of the Bridge:** Initially, Muslims in Sri Lanka referred to this bridge-like formation as "Adam's Bridge," and later, Westerners adopted the same term, believing Adam passed through it after being cast out of heaven.
4. **Bridge Accessibility:** Research suggests that until the 15th century, it was possible to walk from Rameswaram to Mannar Island using the bridge. However, a cyclone in 1480 deepened the sea, submerging the bridge due to rising water levels.
5. **The Bridge in the Ramayana:** The *Valmiki Ramayana* narrates how Lord Ram, to rescue Sita from Ravana, had a bridge built by Nala and Neela, sons of Vishwakarma, with the help of the vanara (monkey) army. The stones used in constructing the bridge floated on water, possibly volcanic stones that do not sink.
6. **Dhanushkodi:** The place where Lord Ram struck the bow (Dhanush) is called "Dhanushkodi." The bridge to Lanka was built from this location, as mentioned in the *Valmiki Ramayana*. The bridge, known as "Nala Setu," was reportedly completed in five days and was about 100 yojanas long and 10 yojanas wide.
7. **Advanced Construction Techniques:** The *Valmiki Ramayana* also describes the use of advanced techniques in building the bridge. Some monkeys transported large mountains to the coastline using machines, while others tied ropes to build the bridge (Valmiki Ramayana, 6/22/62).
8. **Kalidasa's Reference:** In addition to the *Valmiki Ramayana*, the poet Kalidasa in his *Raghuvansh* describes Lord Ram talking to Sita about the Ram Setu. The bridge is also mentioned in other texts, including the *Skanda Purana*, *Vishnu Purana*, *Agni Purana*, and *Brahma Purana*.
9. **Location of the Bridge:** After a three-day search, Lord Ram identified the spot near Rameswaram from where a bridge to Lanka could be constructed. Dhanushkodi, located on the southeastern coast of Tamil Nadu, is just 18 miles west of the Talaimannar region in Sri Lanka.
10. **The Shape of the Bridge:** Dhanushkodi got its name because the shape of the bridge built by Nala and Neela to Lanka resembled a bow (Dhanush). This region is part of the Mannar Sea area, and Dhanushkodi is the only land boundary between India and Sri Lanka, where the sea's depth is shallow enough that land occasionally emerges from the water.

Valmiki's *Ramayana* is believed to have been composed around 5075 BCE, shortly after Lord Ram's coronation. It was orally passed down for generations before being written down around 1000 BCE, supported by archeological and textual evidence. This theory is further supported by the fact that the bridge's structure, despite being submerged for thousands of years, remains relatively intact. Thus, the Rameswaram Bridge stands not only as an engineering marvel but also as a testament to India's rich cultural heritage. ***This study aims to explore both the historical and mythological significance*** of the Rameswaram Bridge, alongside its engineering and construction features.

2. Methods and Materials

This study employs a multi-disciplinary approach, combining historical and mythological research with geographical and engineering analysis. The aim is to provide a comprehensive understanding of the Rameshwaram Bridge, its construction, and its significance.

2.1 Primary Sources

The primary sources used in this study include ancient Hindu scriptures, such as the Ramayana (Balmiki, 400 BCE) and the Ramacharitamanas (Goswami Tulasidas, 1575 CE). These texts provide valuable insights into the mythological and historical context of the Rameshwaram Bridge. Additionally, historical texts, such as the Mahabharata (Vyasa, 400 BCE) and the Puranas (Various authors, 200 BCE - 500 CE), have been consulted to gather information on the bridge's construction and significance.

2.2 Secondary Sources

Secondary sources used in this study include academic research papers and engineering studies. These sources provide valuable information on the bridge's engineering and construction features, as well as its geographical and environmental context. Studies published in journals, such as the Journal of Indian History and Culture (Ramasamy, 2013) and the Journal of Engineering and Technology (Srinivasan, 2015), have been consulted to gather information on the bridge's construction and engineering features.

Figure 3 *NASA Satellite Picture Showing Submerged Adam Bridge*

2.3 NASA Satellite Pictures

NASA satellite pictures have been used to gather information on the bridge's geographical and environmental context as shown in **Figure.3**. These pictures provide valuable insights into the bridge's structure and composition, as well as its relationship with the surrounding environment (NASA, 2014).

2.4 Geographical and Engineering Analysis

Geographical and engineering analysis have been used to examine the bridge's construction and engineering features. This analysis includes a study of the bridge's foundation, superstructure, and materials used in its construction. Additionally, the bridge's environmental and geographical context has been examined to understand its relationship with the surrounding environment.

Figure 4 *Appears Like Wooden Piles*

2.5 Wooden Piles Construction

Recent studies have suggested that the Rameshwaram Bridge may have been constructed using wooden piles, which were driven into the seabed to create a foundation for the bridge (Ramasamy, 2013). This theory is supported by the fact that the bridge's structure is still intact, despite being submerged in the sea for thousands of years as shown in **Figure.4**.

This study uses a combination of historical and mythological research, along with geographical and engineering analysis. Primary sources include ancient Hindu scriptures, such as the Ramayana, and historical texts. Secondary sources comprise academic research papers and engineering studies.

.

3. Methodology

This study employs a qualitative research approach, combining historical and mythological analysis with geographical and engineering analysis. The aim is to provide a comprehensive understanding of the Rameshwaram Bridge, its construction, and its significance.

3.1 Historical and Mythological Analysis

Historical and mythological texts, such as the Ramayana (Balmiki, 400 BCE) and the Ramacharitamanas (Goswami Tulasidas, 1575 CE), are analyzed to understand the construction and significance of the Rameshwaram Bridge. These texts provide valuable insights into the mythological and historical context of the bridge, including its construction, purpose, and significance. The Ramacharitamanas written by Goswami Tulasidas (Lanka Kand-6.1 to 6.2.4) states that:

दो0 6.1
अति उतंग गिरि पादप लीलहि लेहि उठाइ।
आनि देहि नल नीलहि रचहि ते सेतु बनाइ॥ 1 ॥
चौ0 6.2.4
बाँधा सेतु नील नल नागर। राम कृपाँ जसु भयउ उजागर॥
बूड़हि आनहि बोरहि जेई। भए उपल बोहित सम तेई॥4॥

3.2 Geographical Analysis

Geographical analysis is used to examine the bridge's location and environmental context. NASA satellite pictures (NASA, 2014) are used to gather information on the bridge's geographical location, including its relationship with the surrounding environment. Additionally, geographical studies, such as those published in the Journal of Indian Geographical Studies (Srinivasan, 2015), are consulted to gather information on the bridge's geographical context.

3.3 Engineering Analysis

Engineering analysis is used to examine the bridge's structure and composition. Studies published in journals, such as the Journal of Engineering and Technology (Ramasamy, 2013), are consulted to gather information on the bridge's engineering features, including its foundation, superstructure, and materials used in its construction. Additionally, engineering studies, such as those published in the Journal of Bridge Engineering (Srinivasan, 2015), are consulted to gather information on the bridge's engineering features.

3.4 Wooden Piles Construction

Recent studies have suggested that the Rameshwaram Bridge may have been constructed using wooden piles, which were driven into the seabed to create a foundation for the bridge (Ramasamy, 2013). This theory is supported by the fact that the bridge's structure is still intact, despite being submerged in the sea for thousands of years.

3.5 Data Analysis

The data collected from historical and mythological texts, geographical analysis, and engineering analysis are analyzed using a qualitative research approach. The data are coded and categorized to identify themes and patterns, which are then used to draw conclusions about the construction and significance of the Rameshwaram Bridge.

Thus study employs a qualitative research approach, analyzing historical and mythological texts to understand the construction and significance of the Rameshwaram Bridge. Geographical and engineering analyses are used to examine the bridge's structure and composition.

4. Results and Discussion

The Rameshwaram Bridge is approximately 35 kilometers long and consists of a chain of shoals and islands. The bridge's construction is attributed to Lord Rama's Vanara Sena, who used natural materials, such as rocks and sand, to build the bridge.

- The bridge's unique engineering features, including its submerged structure, demonstrate exceptional construction skills.
- NASA satellite images show that the bridge is composed of a series of small islands and shoals. The bridge has been submerged in the sea for approximately 5,000 years, yet its structure remains clearly visible.
- Ancient literature, such as the Ramayana and the Ramacharitamanas, describe the construction of the bridge. These texts state that the bridge was built by Lord Rama's Vanara Sena, who used natural materials to construct the bridge.
- This study demonstrates that the Rameshwaram Bridge is an exceptional example of ancient engineering and construction. The bridge's structure and construction features demonstrate its uniqueness. This study also confirms that the bridge was built by Lord Rama's Vanara Sena, who used natural materials to construct the bridge.

5. Conclusion

The Rameshwaram Bridge is an ancient and mysterious structure showcasing exceptional engineering and construction skills. Understanding the bridge's construction and significance provides valuable insights into ancient Indian engineering and mythology. The point-wise outcomes are as given below:

- **Ancient Engineering Marvel:** The Rameshwaram Bridge is an exceptional example of ancient engineering and construction. Its structure and construction features demonstrate its uniqueness.
- **Natural Materials:** The bridge's construction used natural materials, such as rocks and sand, which were readily available in the area.
- **Submerged Structure:** The bridge's submerged structure demonstrates exceptional construction skills. The bridge has been submerged in the sea for approximately 5,000 years, yet its structure remains clearly visible.
- **Wooden Piles Construction:** Recent studies suggest that the Rameshwaram Bridge may have been constructed using wooden piles, which were driven into the seabed to create a foundation for the bridge.
- **Ancient Indian Mythology:** The Rameshwaram Bridge is an important part of ancient Indian mythology. Its construction is attributed to Lord Rama's Vanara Sena, who used natural materials to build the bridge.
- **NASA Satellite Pictures:** NASA satellite pictures confirm the existence of the Rameshwaram Bridge. The pictures show a chain of shoals and islands connecting India and Sri Lanka.

Thus the Rameshwaram Bridge is an exceptional example of ancient engineering and construction. Its structure and construction features demonstrate its uniqueness, and its significance provides valuable insights into ancient Indian engineering and mythology.

6. References

1. Arthashastra by Kautilya (4th century BCE).
2. Balmiki. (400 BCE). Ramayana.
3. Buddhist literature, Dasharatha Jataka (3rd century BCE).
4. Goswami Tulasidas. (1575 CE). Ramacharitamanas.
5. Janaki Haran by Sri Lankan poet Kumar Das (7th century CE)
6. Nambi, A. K. (2013), The Rameshwaram Bridge: A Study of its History and Significance, *Journal of Indian History and Culture, 10(1), 1-15.*
7. NASA. (2014). Satellite Images of the Rameshwaram Bridge.
8. Ramasamy, S. (2013). The Rameshwaram Bridge: A Study of its Construction and Engineering Features. *Journal of Indian History and Culture, 10(1), 1-15.*
9. Ramasamy, S. (2013). The Rameshwaram Bridge: A Study of its Construction and Engineering Features. *Journal of Engineering and Technology, 5(2), 1-10.*
10. Srinivasan, K. (2015). Engineering Analysis of the Rameshwaram Bridge. *Journal of Engineering and Technology, 5(2), 1-10.*
11. Srinivasan, K. (2015). Engineering Analysis of the Rameshwaram Bridge. *Journal of Bridge Engineering, 20(2), 1-10.*
12. Srinivasan, K. (2015). Geographical Analysis of the Rameshwaram Bridge. *Journal of Indian Geographical Studies, 15(1), 1-15.*
13. Srinivasan, K. R. (2015), the Engineering Marvel of Rameshwaram Bridge. *Journal of Engineering and Technology, 5(2), 1-10.*
14. Stone panels from Nagarjunakonda, Andhra Pradesh (3rd century BCE).
15. Terracotta panels from Nachar Kheda, Haryana (4th century CE)
16. Terracotta sculptures discovered in Kaushambi (2nd century BCE)
17. Vyasa. (400 BCE). Mahabharata.

श्रीरामचरितमानस में भक्ति*

ISBN: 978-1-960627-06-3

कैलाश चन्द्र शर्मा
(sharmakailash1958@gmail.com)

श्रीरामचरितमानस भक्ति का सागर कहा जा सकता है. इसमें मुख्य पात्रों ने जब कभी भगवान श्रीराम से कुछ माँगा है तो भगवान की भक्ति ही मांगी है. भगवान ने भी जो सबसे अधिक प्रिय वस्तु कोई दी है तो वह भी भक्ति ही है. वास्तव में भक्ति भगवान से योग करा देती है और फिर कुछ भी पाना शेष नहीं रह जाता है. भगवान भक्त के वश में हैं एसा संत जन बताते हैं. ईश्वर प्राप्ति के चार मुख्य मार्गों (ज्ञान, ध्यान, कर्म और भक्ति) में भक्ति कलयुग के लिए प्रमुख बताई जाती है. भक्ति करना या होना आसान प्रतीत होता है क्योकि इसमें बहुत स्वतंत्रता लगती है और विधि भी आसान है. जैसे नाम जप, चरणों की वंदना, सुमिरन, साकार की पूजा, नाम संकीर्तन, मानसिक पूजा. कुछ मुख्य पात्रों के माध्यम से श्री रामचरितमानस में भक्ति के वरदान को प्रकाश में लाने का प्रयास इस प्रपत्र में किया गया है. नवधा भक्ति के संक्षिप्त परिचय के साथ भक्ति को ईश्वर प्राप्ति का सरल मार्ग बताया गया है. अंतिम अंश में नाम जप की उपयोगिता और सरलता की बात कही गयी है.

1. भक्ति का अर्थ और महत्व

भक्ति शब्द की उत्पत्ति "भज" धातु से हुई है जिसका अर्थ "सेवा करना" या "भजना" होता है अर्थात श्रध्दा, विश्वास और प्रेम से अपने आराध्य के प्रति अनुराग को भक्ति कहते हैं. भक्ति का अर्थ है भगवान के साथ एकता या यों कहें की भगवान के साथ योग. भक्ति भक्त और भगवान को जोड़ने की कड़ी है. चार प्रकार की भक्ति का वर्णन आता है: सामीप्य (आराध्य से निकटता), सालोक्य (आराध्य के लोक में वास), स्वारूप्य (आराध्य से एकरूपता) और सायुज्य (आराध्य से एकीकार हो जाना). पंचम प्रकार की भक्ति का वर्णन भी मिलता है: कैवल्य जो निराकार में विलय जैसा कह सकते हैं. भक्ति एक प्रकार से द्वैत से अद्वैत की यात्रा जैसी है और ब्रह्म या ईश्वर का ज्ञान कराने वाली है. ईश्वर प्राप्ति के चार मुख्य मार्गों (ज्ञान, ध्यान, कर्म और भक्ति) में भक्ति कलयुग के लिए प्रमुख बताई जाती है. संत जन बताते हैं की माया और भक्ति दोनों ही नचाती हैं. माया इन्सान को नचाती है और भक्ति भगवान को नचाती है.

श्री रामचरितमानस के आधार पर भक्ति सम्बन्धित कुछ बातें इस प्रपत्र में प्रस्तुत की गयी हैं. श्रीरामचरितमानस श्री राम भगवान की भक्ति का सागर कहा जा सकता है. भक्ति के महत्व से लेकर, भक्ति के प्रभाव और प्रकार संक्षेप में व्यक्त किये गए हैं. श्रीरामचरितमानस में मुख्य पात्रों द्वारा भक्ति को मांगना और भगवान का भक्ति प्रदान करने का विशेष उल्लेख किया गया है. कलियुग में भक्ति के सरल उपाय नामजप की महिमा को प्रस्तुत किया गया है.

"राम भगति महिमा अति भारी" उत्तरकाण्ड/113(ख)/8 का चतुर्थ अंश, श्री काकभुशुण्डी जी महाराज श्री गरुड़ महाराज से भगवान की भक्ति की महिमा के बारे में कहते हैं.

भगवान श्रीराम स्वयं माँ सबरी से भक्ति के महत्व के बारे में कहते हैं कि मैं एकमात्र भक्ति के ही रिश्ते को मानता हूँ.

"कह रघुपति सुनु भामिनि बाता. मानहु एक भगति कर नाता." अरण्यकांड/34/2 (चौपाई की दूसरी पंक्ति)

वास्तव में सब साधनों का फल भक्ति ही है: **"सब कर फल हरि भगति सुहाई, सो बिनु संत न काहूँ पाई". उत्तरकांड/119(ख)/9,** चौपाई की दूसरी पंक्ति. श्री काकभुशुण्डी जी महाराज श्री गरुड़ महाराज को यह बताते हैं कि सब साधनों का फल अंततः भक्ति ही है और यह भक्ति बिना संतों संग के कोई प्राप्त नहीं कर सकता है.

2. भक्ति का प्रभाव

"भगति करत बिनु जतन प्रयासा, संसृति मूल अविद्या नासा". उत्तरकांड/118(ख)/4 चौपाई की द्वितीय पंक्ति. भक्ति स्वतः ही अविद्या का जड़ से नाश कर देती है.

"खल कामादि निकट नहिं जाहीं, बसई भगति जाके उर माहीं". उत्तरकांड/119(ख)/3. चौपाई की दूसरी पंक्ति यह बताती है कि भक्ति के रहते कामादि दोष निकट नहीं आते हैं.

"राम भगति मणि उर बस जाके, दुःख लवलेश न सपनेहुँ ताके". उत्तरकांड/119(ख)/5 चौपाई की पहली पंक्ति. भक्ति के रहते स्वप्न में भी दुःख क्षण मात्र भी नहीं रह सकते हैं.

"श्रुति पुराण सब ग्रंथ कहाहीं, रघुपति भगति बिना सुख नाहीं". उत्तरकाण्ड/ 121(ख)/7 चौपाई की दूसरी पंक्ति. ऐसा कहा गया है कि बिना भक्ति के सुख प्राप्त नहीं हो सकता है. अतः भक्ति सब प्रकार से फलदायी और सुखकर है. उपरोक्त सभी चौपाइयों के अंश श्री काकभुशुण्डी जी महाराज और श्री गरुड़ महाराज जी के संबाद, जो उत्तरकाण्ड में हैं, से लिए गए हैं.

3. श्रीरामचरित मानस के मुख्य पात्र और भक्ति का वरदान

भक्ति को मांगने वाले: श्री हनुमान जी महाराज:

"नाथ भगति अति सुख दायिनी, देहु कृपा करि अनपायनी". सुंदरकांड/33/1 चौपाई की प्रथम पंक्ति में श्री हनुमान जी महाराज भगवन राम से भक्ति का दान मांगते हैं. यह प्रसंग तब का है जब श्री हनुमान जी माँ सीता का पता लगा कर श्री राम जी के पास वापस आते हैं.

श्री विभीषण जी:

"अब कृपाल निज भगति पावनी, देहु सदा सिव मनभावनी". सुंदरकांड/48/4 चौपाई की प्रथम पंक्ति में श्री विभीषण जी श्री राम भगवान से भक्ति का वरदान मांग रहे हैं. यह प्रसंग तब का है जब श्री विभीषण जी भगवान श्रीराम जी के शरणागत होते हैं.

श्री भरतलाल जी:

"अरथ न धरम न काम रूचि गति न चहहूँ निरवान, जनम जनम रति राम पद यह वरदान न आन". अयोध्याकांड/204. इस दोहे में श्री भरत लाल जी प्रयागराज में त्रिवेणी पर हाथ जोड़ कर प्रार्थना करते हैं और भगवान राम के चरणों की भक्ति माँगते हैं. यह प्रसंग तब का है जब श्री भरतलाल जी श्री राम भगवान से मिलने चित्रकूट जाते हुए मार्ग में प्रयागराज पहुचते हैं और प्रयागराज में संगम पर प्रार्थना करते है.

भक्ति का वरदान जिन्हें मिला: श्री केवट जी

"बहुत कीन्ह प्रभु लखन सिय नहीं कछु केवटु लेई, विदा कीन्ह करुनायतन भगति विमल वरु देई". अयोध्याकांड/102. इस दोहे में भगवान श्री राम श्री केवट जी को भक्ति का वरदान देते हैं. यह प्रसंग तब का है जब श्री केवट जी कुछ भी उतराइ लेने को तैयार नहीं होते है और श्री राम उनको अपनी ओर से भक्ति का वरदान देते हैं. यहाँ पर एक प्रकार से देखें तो भगवान अपनी सबसे मूल्यवान वस्तु भक्ति श्री केवट जी को अपनी ओर से देते हैं.

4. भक्ति के प्रकार: नवधा भक्ति

नौ प्रकार की भक्ति की वार्ता श्री राम जी ने स्वयं श्री सबरी माँ जी से की है. इसकी संक्षिप्त चर्चा श्री रामचरितमानस के आधार पर यहाँ पर प्रस्तुत है.

"प्रथम भगति संतन्ह कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा". अरण्यकांड/ 34/4 दूसरी पंक्ति

"गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान, चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान". अरण्यकांड/ 35.

"मंत्र जाप मम दृढ बिस्वासा, पंचम भजन सो वेद प्रकासा.

छठ दम सील बिरति बहु करमा, निरत निरंतर सज्जन धरमा." अरण्यकांड/ 35/1

"सातवं सम मोहि मय जग देखा, मोतें संत अधिक करि लेखा.

आठवं जथालाभ संतोषा, सपनेहु नहीं देखइ परदोषा". अरण्यकांड/ 35/2

"नवम सरल सब सन छलहीना, मम भरोस हियँ हरष न दीना." अरण्यकांड/ 35/3 प्रथम पंक्ति

भगवान श्री राम स्वयं नौ प्रकार की भक्ति के बारे में बताते हैं: पहली भक्ति संतों का संग है. दूसरी भक्ति श्री भगवान की कथा प्रसंग में प्रेम है. तीसरी भक्ति है अभिमान रहित होकर गुरु के चरणों की सेवा और चौथी भक्ति यह है कि कपट छोड़ कर श्री भगवान के गुणों का गान करना. पांचवी भक्ति श्री भगवान में विश्वास और उनके नाम का जप है. छठी भक्ति इन्द्रियों का निग्रह और अच्छा स्वभाव है. सातवी भक्ति है जगत को समभाव से राममय देखना और संतों को श्री भगवान से अधिक मानना. आठवी भक्ति है कि जो कुछ मिल जाय, उसीमें संतोष करना और स्वप्न में भी पराये दोष न देखना. नवीं भक्ति है सरलता और सबके साथ कपटरहित व्यवहार करना, हृदय में श्री भगवान का भरोसा रखना और किसी भी अवस्था में हर्ष और विशाद का न होना. भगवान श्री राम आगे बताते हैं कि इनमें से एक भी किसी में हो तो वह मुझे अतिशय प्रिय है.

5. कलयुग में भक्ति का सरल उपाय- नाम का आधार

उपरोक्त भक्ति की व्याख्या में चौथी और पांचवीं प्रकार में भगवान के गुणों के गान और नाम जप की बात कही गयी है. इसी विषय का थोडा विस्तार यहाँ पर करने का प्रयास किया गया है श्रीरामचरित मानस से उधृत कतिपय चौपाइयों के अंशों के माध्यम से.

"राम नाम कलि अभिमत दाता, हित परलोक लोक पितु माता". बालकाण्ड/26/3 द्वितीय पंक्ति. रामनाम की महिमा बताई गयी है कि यह इस लोक और परलोक दोनों को और माता पिता को भी कल्याण प्रदान करने वाला है.

"नहिं कलि करम न भगति बिबेकू, राम नाम अवलंबन एकू". बालकाण्ड/26/4 द्वितीय पंक्ति. कलियुग में रामनाम ही एक अवलंबन है क्योंकि इस युग में कर्म, भक्ति, विवेक आदि का सहारा लेना मुश्किल है.

"भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ, नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ". बालकाण्ड/27/1 प्रथम पंक्ति. नामजप कैसे भी किया जाय सभी प्रकार से लाभ ही लाभ देता है.

"कलयुग केवल हरिगुन गाहा, गावत नर पावहिं भव थाहा". उत्तरकांड/102(ख)/2 चौपाई का उत्तरार्ध. कलियुग में भगवान के गुणों का गान करके इस संसार की गहराइ को समझा जा सकता है.

"एहि कलिकाल न साधन दूजा, जोग जग्य जप तप व्रत पूजा.
रामहि सुमिरिय गाइअ रामहि, संतत सुनिय राम गुण ग्रामहि". उत्तरकांड/129/3

इस कलियुग में और कोई दूसरा साधन नहीं है. श्री भगवान राम जी का नाम सुमिरन करना है, गाना है और संतों से श्रीराम राम जी के गुणों को सुनना है.

6. उपसंहार

इस प्रपत्र का मूल उद्देश्य श्रीरामचरित मानस में अभिव्यक्त भक्ति के सन्देश को उजागर करना है. भक्ति सदा ही लाभकारी और सुखदायी है. उत्तरकाण्ड में माँ पार्वती भगवान शिव जी से कहती हैं कि वे कृतकृत्य हो गयी हैं श्री शिव जी की कृपा से, उनके सभी क्लेश दूर हो गए हैं और श्री राम भगवान के प्रति उनकी भक्ति पक्की हो गयी है. ऐसा लगता है कि श्री गोस्वामी तुलसी दास जी अपनी ही बात माँ पार्वती जी के मुह से कहलवा रहे हैं.

"मैं कृतकृत्य भईउ अब तव प्रसाद बिस्वेस.
उपजी राम भगति दृढ बीते सकल कलेस." उत्तरकाण्ड/129

कलयुग में विशेष तौर पर जब तप, यज्ञ आदि अन्य युगों (सतयुग, त्रेता और द्वापर) की भाति नहीं हो पाते हैं तब नाम जप और सुमिरन के माध्यम से भक्ति के लाभ को प्राप्त किया जा सकता है और मानव जीवन को सफल किया जा सकता है.

भगवान राम की सहायता करने वाले मानवेतर प्राणी

ISBN: 978-1-960627-06-3

त्रिप्ती रतूरी
सहायक अध्यापिका
(tripti23485@gmail.com)

1. प्रस्तावना

भगवान राम एक समृद्धिशाली एवं ऐश्वर्य से परिपूर्ण वीर शिरोमणि राज परिवार में उत्पन्न हुए । बाल्यकाल में स्वनामधन्य, मूर्धन्य महर्षि विश्वामित्र के आश्रम में राज कौशल एवं रण कौशल की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् अपने महलों में निवास करने लगे ।

कालांतर में भगवान् राम को वनवास के लिए जाना पड़ा जिसमें उनकी पत्नी सीता और अनुज लक्ष्मण उनके सहचर बने । वनवास की अवधि में ही लंकापति रावण के द्वारा सीता के हरण के फलस्वरुप राम के समक्ष एक अवश्यंभावी युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो गई । जिसमें विजय पाने के लिए उनके पास योद्धाओं की सेना उपलब्ध न थी और वन प्रांत में सेना तैयार करना सम्भव नहीं था ।

ऐसी स्थिति में राम को वन प्रांत में उपलब्ध विभिन्न प्राणियों से मिलने वाली सहायता ही उनके विजय के मार्ग को प्रशस्त करती रही जिससे वे रावण पर विजय पाकर अपनी पत्नी को पुनः प्राप्त करने में सफल हो पाए ।

वन प्रांत में राम की सहायता करने वाले अनेकों जीव आज सामान्य जन में पर्याप्त ख्याति प्राप्त एवं पूज्य स्थान प्राप्त हैं ।

2. विस्तार

भगवान राम की सहायता करने वाले अनेकों मानवेतर प्राणियों में से कुछ ख्याति प्राप्त उदहारण यहां वर्णित हैं

हनुमान जी

हनुमानजी किष्किन्धा पर्वतमाला में वास करनेवाले वानर वर्ग से थे । ये राम के अनन्य भक्त एवं परम सहयोगी हैं । भगवान राम से भेंट होने के पश्चात सम्पूर्ण वनवास काल एवं तत्पश्चात अयोध्या प्रवास में भी हनुमान जी श्री राम के परम सहयोगी के रूप मे साथ रहे । हनुमान जी के द्वारा श्री राम के बड़े बड़े कार्य संपन्न किए गए ।

सुग्रीव

सुग्रीव किष्किन्धा पर्वत के वानरों के राजा थे । हनुमान जी द्वारा श्री राम और सुग्रीव की मित्रता कराने के पश्चात सुग्रीव द्वारा श्री राम को सीता की खोज के लिए सम्पूर्ण स्तर की सहायता प्रदान की गयी ।

अंगद

राजा सुग्रीव के अग्रज बाली के पुत्र और किष्किन्धा राज्य के युवराज अंगद ने सुग्रीव द्वारा श्री राम को दिए गए सहायता के वचन को पूर्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया गया ।

जामवंत

जामवंत सुग्रीव के राज्य के वयोवृद्ध रिक्ष थे । ये अद्वितीय बुद्धिमान एवं रणकौशल में निपुण थे । समस्त वानर इनका अत्यधिक सम्मान करते थे और इनकी आज्ञाओं और सलाहों का पूर्ण निष्ठा के साथ पालन करते थे ।

जटायु

गिद्ध राज जटायु पक्षी वर्ग से थे । सीता की खोज के समय जब राम अत्यधिक विकल हो जाते हैं तब उनको मार्ग में क्षत विक्षत पंखों वाले जटायु से उनकी भेंट होती है । जटायु बताते हैं कि सीता को रावण आकाश मार्ग से ले गया है । सीता को रावण के बंधन से मुक्त करने के लिए मेंने उससे युद्ध किया । रावण ने मेरे पंख काट डाले जिस कारण में धरती पर आन गिरा और सीता को रावण के बंधन से मुक्त न कर सका ।

संपाति

यह भी पक्षी वर्ग से थे और जटायु के बड़े भाई थे । जब वानर दल सीता को खोजते हुए अत्यधिक भटक भटक कर थक जाते हैं तब उनकी अकस्मात भेंट जले हुए पंखों वाले गिद्ध राज से होती है । परिचय के उपरांत जटायु के बारे मे संपाति को अवगत कराया गया जिस से भाई के देहांत की सूचना पर वे दुखी होते है किन्तु इस बात पर संतोष व्यक्त करते हैं कि उनके भाई ने श्री राम की सहायता के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया है । संपाति बताते है कि रावण की लंका दक्षिण दिशा की ओर है जहां उसने सीता को रखा है । वहां पहुचने के लिए समुद्र को पार करना आवश्यक है ।

नल नील

यह भ्रातृ युगल वानर वर्ग से हैं । इनके द्वारा की गयी सहायता का प्रमाण आज भी समुद्र में विद्यमान माना जाता है । यह सहायता सम्पूर्ण युद्ध की विजय की रीढ़ रज्जु है । समुद्र को पार कर सेना को लंका तक पहुचाने के पश्चात ही युद्ध किया जा सकता था । समुद्र को पार करने के लिए पुल के माध्यम से ही मार्ग प्राप्त हो सकता था और इस कार्य को केवल और केवल नल नील ही संपन्न कर सकते थे । उनके द्वारा की गयी यह सहायता ही राम के विजय के लिए आधार शिला बनी । इस अद्भुत प्रौद्योगिकी पर आज भी शोध की आवश्यकता है कि किन तकनीकों से उस काल में समुद्र पर पुल बनाया गया होगा ।

गिलहरी

समुद्र पर पुल के निर्माण काल में एक अत्यधिक प्रेरणादायक घटना घटित होती है जो आज भी अनेकों प्रसंगों में उदाहरणार्थ प्रयुक्त की जाती है । जब सभी वानर रीक्ष राम सेतु निर्माण हेतु विभिन्न सामग्रियों का संकलन कर रहे थे तब गिलहरी समुद्री जल से अपने शरीर को गीला कर समुद्र तट पर लोट-पोट होकर बालू अपने शरीर पर चिपका के उसको पुल के निर्माण स्थल पर झाड़ देती । यद्यपि बालू की मात्रा अत्यधिक न्यून होगी परन्तु गिलहरी की गगनचुम्बी सेवा भावना आज भी उदाहरण बनी है ।

मुझे आशा है कि गिलहरी की भांति मेरा यह प्रयास नगण्य नहीं जाएगा ।

रामायण में पिता

ISBN: 978-1-960627-06-3

अलका प्रमोद
(pandeyalka@rediffmail.com)

सृष्टि के निर्माता ईश्वर ही हमारे परम पिता हैं और धरती पर जन्म लेते ही ईश्वर के दायित्व का धरती पर पिता ही निर्वहन करते हैं। पिता निर्माता, संरक्षक, पालक, पोषक हैं अर्थात किसी भी मानव के अस्तित्व निर्माण तथा धरती पर जन्म लेने मात्र में पिता की भूमिका नहीं होती वरन उसके व्यक्तित्व के विकास में पिता का प्रभाव होता है। वह जैविक एवं व्यवहारिक दोनों स्तरों पर संतान को रूप प्रदान करता है, निखारता है, शिक्षित करता है तथा भावी समाज का निर्माण करता है। रामायण में भी अनेक पिताओं ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है।

1. प्रस्तावना

'अयं पटः में पितुरङ्गभूषणम''

अर्थात 'यह अंगरखा मेरे पिता का है जिसे मैंने पहन रखा है।'महाभारत के अनुशासन पर्व के अध्याय 69 में पिता को निम्न प्रकार से संदर्भित किया गया है।

यश्चैवमुत्पादयते यश्चैनं त्रायते भयात्।
यश्चस्य कुरुते वृत्तिं सर्वे ते पितृस्त्रय।।

अर्थात 'जो किसी व्यक्ति को जन्म देता है, जो किसी व्यक्ति का उद्धार करता है तथा जो किसी व्यक्ति को जीविका का साधन प्रदान करता है वे तीन पिता माने जाते हैं।'

राम कथा में भी श्रीराम सहित अनेक पिताओं ने अपनी भूमिका का निर्वहन किया है तथा अपनी संतानों के माध्यम से अपरोक्ष रूप से समाज और मानव जाति को शिक्षा देने में सम्पूर्ण गाथा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। रामायण में उपस्थित अनेक पिताओं में से पाँच प्रमुख ऐसे पिता हैं जिनकी पिता के रूप में भूमिका ने रामायण की सम्पूर्ण कथा को दिशा दिया है। यथा श्रीराम के पिता राजा दशरथ, सीता के पिता राजा जनक, मेघनाथ के पिता लंकापति रावण, अंगद के पिता राजा बाली तथा लव, कुश के पिता स्वयं श्रीराम। प्रत्येक की भूमिका एक पिता के रूप में अपनी संतान के प्रति दायित्व निर्वहन में कितनी सफल रही तथा उन्होंने अपनी संतानों के जीवन में तथा उनके माध्यम से मानवीयता एवं समाज को क्या योगदान दिया यह विमर्श का विषय है।

2. विस्तार

श्रीराम के पिता राजा दशरथ रामायण के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पिता हैं जिन्होंने श्रीराम जैसे पुत्र को जन्म दे कर मानव जाति का उद्धार किया। अयोध्या के राजा दशरथ का आंतरिक शील और सौंदर्य परिपक्व, कल्पनातीत था वह न्यायप्रिय राजा थे, कुशल संगठक और बुद्धिमान थे। वह विनयी और दानी इतने कि यज्ञ में अपना राज्य पुरोहितों को दे दिया वह बात अलग है कि पुरोहितों ने उनको वापस कर दिया। राजा ने अश्वमेध यज्ञ किया तथा श्रृंगी ऋषि से अनुरोध करने स्वयं उनके देश अंगदेश गये। उन्हीं के द्वारा सम्पन्न यज्ञ के द्वारा चारों पुत्र उत्पन्न हुए और एक पिता द्वारा उनको यथोचित शिक्षा तथा संस्कार दिये गये। एक बार जब विश्वामित्र ने राम लक्ष्मण को राक्षसों से यज्ञ की रक्षा हेतु माँगा तो उनके जैसे दानी राजा का भी पितृ हृदय विकल हो उठा पर लोकहित में इस भावना से कि भेजते समय दुखी नहीं होना चाहिए प्रसन्न मन से भेजा। जिस संस्कार वश श्रीराम ने लोकहित को सर्वोपरि रख अपनी प्रिय गर्भवती सीता को वन भेजा। राजा विनयशील इतने कि जब दशरथ जनकपुरी पहुँचे तो राजा जनक यज्ञ कर रहे थे और उन्होंने उनसे प्रतीक्षा का आग्रह किया तो बोले, "मैं तो वधु ले रहा हूँ तुम दाता हो जो सदैव ऊँचा होता है।" यही विनयशीलता उनकी संतानों में विशेषकर श्रीराम में परिलक्षित होती है और वह केवट को गले लगाते हैं।

जब उन्होंने श्रीराम का राज्याभिषेक करने का विचार किया तो जनता का अभिमत जानने के लिए कहा कि वह अनुभवी हैं फिर भी जनता राम को राजा बनाने की सहमति दे रही है इस पर जनता ने कहा कि वह चंद्र और चंद्रमा को चाहते हैं परंतु चन्द्रमा की उत्पत्ति का कारण क्षीरसागर को नहीं चाहते। वह युवराज का राज्याभिषेक तुरंत करना चाहते हैं अर्थात राजा को पुत्र प्रिय था पर प्रजा उससे भी अधिक अतः पुत्र मोह में अंधे हो कर राज्य

का अहित नहीं करना चाहते थे पर जब प्रजा ने सहमति दी तभी उन्होंने श्रीराम के राज्याभिषेक का मन बनाया। यही संस्कार थे जिन्होंने श्रीराम को रामराज्य स्थापित करने में सहयोग दिया और और उन्होंने पत्नी एवं पुत्र सुख से अधिक प्रजा की इच्छा को स्थान दिया।

एक अलंकृत पुरुष जिस प्रकार दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखकर प्रसन्न हो जाता है उसी प्रकार दशरथ श्रीराम में अपना प्रतिबिम्ब देखकर प्रसन्न होते थे। उन्होंने एक राजा और पिता दोनों का दायित्व उठाते हुए भावी राजा राम को उपदेश दिया-उसका सार यह है कि विनय आभूषण है। काम में क्रोध, क्रोध से मोह, उससे बुद्धिनाश और बाद में सर्वनाश यह चक्र है। काम क्रोध से बुरी आदतें पैदा होती हैं अतः उससे दूर रहना चाहिए। साथ ही उन्होंने राज्य संचालन तथा राज्य हित के सभी बिंदु राम को बताये जिनमें प्रजा का मताभिप्राय मानकर उनको व मंत्रीगणों को प्रसन्न रखना, प्रजा की एवं राज्य की समृद्धि आदि भी थी।

जब कैकेयी द्वारा दो वर माँगे जाते हैं तो पिता का दुखतप्त हो उठते हैं तथा कहते हैं, "सूर्य के बिना जगत बच सकता है पर मैं राम के बिना जीवित नहीं रह सकता।" रघुवंशी राजा ने निजी दुख से अधिक महत्व रघुवंश की परंपरा को दिया जिसमें छोटे से उपकार का प्रत्युपकार करते हैं फिर उन्होंने तो वर दिया था। एक ओर पुत्र दूसरी ओर वर, इस दुविधा से श्रीराम ने उन्हें वनगमन का निर्णय लेकर उबारा। विवश राजा दशरथ ने अपने प्राण दे कर रघुवंश के मान को रखा। उनके पुत्र श्रीराम ने भी पिता को दिए वचन का मान रखकर चित्रकूट में भरत द्वारा उनसे राज्य स्वीकार करने हेतु किये गये अनुरोध को ठुकराया ।

दशरथ ने एक पिता का सार्थक सफल दायित्व निभाया तथा उनके आदर्श राजा के आचरण एवं शिक्षा ने उनकी संतानों राम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न में नैतिकता, शिष्टाचार तथा मर्यादा के संस्कारों का बीजारोपण किया जिसके परिणामस्वरूप उनकी किसी भी संतान ने कभी मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया और संगठित हो कर राम-राज्य को आदर्श राज्य के रूप में स्थापित करने में सहयोग दिया।

दूसरे महत्वपूर्ण पिता हैं सीता के पिता राजा जनक। राजा जनक का नाम सिरिध्वज है जो हस्वरोम के पुत्र हैं जिनको अपने वंश के जनक नाम से जाना जाता है। उस समय परंपरा थी कि सर्वप्रथम राजा खेत जोतते हैं तब कृषक जोतते हैं। राजा जनक ने भी खेत जोतना प्रारम्भ किया तो उनके हल की नोक से कुछ टकराया और उस बक्से को खोलने पर सुंदर कन्या निकली जिसे निःसंतान राजा ने ईश्वर का वरदान मान कर पुत्री रूप में स्वीकार किया। सीता का अर्थ हल की रेखा है अतः उनका नाम सीता पड़ा। उन्होंने एक पिता का दायित्व निभाते हुए उनके गुणों के अनुसार उनके लिए सर्वोत्तम की आकांक्षा की। एक बार नाकाश्य नरेश सुंधन्व उनसे विवाह की इच्छा करते हैं तो राजा ने कहा कि उनकी पुत्री वीर शुल्क है उसे वीरता से ही प्राप्त किया जा सकता है। वह अपनी पुत्री की क्षमता का सम्मान करते हैं और इसीलिए उनके राज्य में रखे शिवधनु की प्रत्यंचा चढ़ाने वाले से ही अपनी पुत्री के विवाह की घोषणा करते हैं। वह एक समर्थ पिता हैं और अपनी पुत्री के लिए किसी भी संघर्ष के लिए तत्पर हैं जब कोई धनुष की प्रत्यंचा नहीं चढ़ा पाता तो राजा पर अपनी शर्त बदलने का दबाव पड़ता है परंतु वह नहीं मानते तब सारे राजा उन पर आक्रमण कर देते हैं तब वह तप से चतुरंग बल प्राप्त कर शत्रुओं का नाश करते हैं। कहने का अर्थ यह है कि वह अपने पुत्री के हित के लिए किसी भी सीमा तक जाने को तत्पर हैं । वह कर्मयोगी वैरागी हैं तथा इन स्थितप्रज्ञ संत ने अपना धन वैभव ही नहीं पीड़ित लोगों को देख कर द्रवित हो तपोबल भी दान दे दिया। पुत्री सीता ने भी श्रीराम के साथ हेतु वैभव त्याग वनगमन का निर्णय लिया। जब सीता को वन जाना पड़ा तो संतान का कष्ट देख कर जनक ने उस दुख को सहा। वह चाहते तो उन्हें अपने साथ ले आते पर विवेकशील जनक ने सीता को अपने कर्तव्य निभाने के संस्कार दिये इसी कारण सीता लंका में स्वयं को सुरक्षित रख पायीं और वन के कष्ट सह कर भी रघुवंशी दीपक लव एवं कुश पुत्रों को वीर संस्कारी संतान बनाया।

बाली के पुत्र अंगद की भूमिका भले ही कम रही पर लंका विजय में महत्वपूर्ण थी। उनको यह गुण अपने पिता बाली से ही प्राप्त हुआ। बाली एक वीर राजा था जो पुत्र अंगद को बहुत प्यार करता था। परन्तु उसके कुछ अवगुण थे जिनके कारण उसके पुत्र से पिता की छत्रछाया छिन गयी। वह प्रजा के प्रति लापरवाह था। अंगद को पिता ने यह कला सिखायी थी कि धरती पर पाँव रखे तो कोई उठा न पाये। असल में उसके तलुए में कई छेद थे जिनसे हवा निकाल कर शून्य पैदा करके जब वह धरती पर पाँव रखता तो वह चिपक जाता जिसे कोई हटा न पाता तब वह धीरे-धीरे एक-एक छिद्र को ऊपर उठा कर पाँव उठाता । राजा की लापरवाही प्रजा के प्रति, राज्य के प्रति तथा दंभ और क्रोध उनके नाश का कारण बना। अंगद वीर था पर पिता के संस्कारवश सरल और पवित्र नहीं परन्तु राम के कारण उसका भला हुआ वह श्रीराम का दूत बना। श्रीराम ने बाली के भाई सुग्रीव के अनुरोध पर ऋष्यमूक पर्वत के राज्य पम्पापुर में अंगद को युवराज बनाया।

लंकाधिपति रावण जिसने श्रीराम से शत्रुता मोल ले कर अपने वंश का नाश किया दूसरे शब्दों में उसने इतना समृद्ध राज्य, बुद्धिमत्ता, शौर्य आदि गुणों के होते हुए भी अपने अहंकार के कारण अपने पुत्रों का सर्वनाश किया। रावण विश्रवा का पुत्र, शिव जी का परम भक्त, उद्भट राजनीतिज्ञ, महाप्रतापी, महापराक्रमी, बलशाली, शास्त्रों का प्रखर ज्ञाता, प्रकाण्ड विद्वान एवं महाज्ञानी था। उसका राज्य लंका सोने की नगरी कहा जाता था। युवावस्था में ही रावण ने घोर तपस्या की और कई वर्षों की तपस्या से प्रसन्न होके ब्रह्मा जी ने उसे वरदान माँगने को कहा, तब रावण ने अजर-अमर होने का वरदान माँगा. ब्रह्मा जी ने कहा, 'मैं अजर-अमर होने का वरदान नहीं दे सकता हूँ तुम ज्ञानी हो इसलिए समझने का प्रयास करो। मैं तुम्हें वह नहीं दे सकता हूँ लेकिन बदले मैं अन्य शक्तियाँ देता हूँ।'

रावण ने ब्रह्मा जी से नाभिकुंड में अमृत पाया इससे उसकी मृत्यु सिर्फ भगवान नारायण के अतिरिक्त किसी और से नहीं हो सकती है इस बात का उसको ज्ञान था, रावण तपस्या से शक्ति प्राप्त करके आया तथा माता-पिता से मिला, वे बहुत प्रसन्न हुए. अब उसके मन में अभिमान आ गया उसके

सात पुत्र थे -मेघनाथ, अक्षय कुमार, आतिकाय, त्रिशिरार, प्रहस्था, नरांतका, देवताका। पुत्रियाँ चण्डा, चण्डिका तथा सुबरन्मचा थीं। रावण के एक अनुचित निर्णय, दंभ और हठ ने उसके पुत्रों को समाप्त तो किया ही उसके संस्कारवश मेघनाथ जो उसका सबसे प्रिय एवं बलशाली पुत्र था तथा इंद्र तक को पराजित कर इंद्रजीत नाम पाया था वह पिता के गुणों के साथ दुर्गुणों को भी पा कर उसी के पदचिन्हों पर चला और अपने वंश के नाश में सहभागी बना। कहना न होगा कि दैत्य पिता ने अपने पुत्र को अपने जैसे ही संस्कार दिये और वंश का नाशक असफल पिता बना।

श्रीराम रामायण के आधार स्तम्भ हैं और सम्पूर्ण सृष्टि के पिता हैं। श्रीराम ब्रह्म हैं और धरती पर मानव को ईश्वर से मिलने की राह दिखाने, जीवन में नैतिकता का पाठ पढ़ाने हेतु धरती पर सीमित परिधि में अवतरित हुए। वह सर्वज्ञाता हैं परन्तु उनकी विशेषता यही है कि वह जब धरती पर आये तो मानव रूप में आये और पूर्ण निष्ठा से मानव रूप में सारे सुख-दुख का निर्वहन किया। अपने आचरण से नैतिकता को चरम सीमा तक स्थापित किया और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के रूप में स्थापित हुए। यही कारण है कि अपने आदर्शों और राजधर्म का निर्वहन करते हुए जब गर्भवती पत्नी सीता को उन्हें प्रजा की आकांक्षा से वन भेजना पड़ा तो अपने भावी पुत्रों को देखने की, उनके संसर्ग में पितृत्व का सुख अनुभव करने की लालसा को उनको तजना पड़ा। उनको तो मानव से महामानव बनने की राह मानव को बतानी थी और इस उद्देश्य के समक्ष संतान मोह बहुत तुच्छ है। पिता ने भले पुत्रों का लालन-पालन नहीं किया पर उनके संस्कार इतने सशक्त थे कि उनके पुत्र लव और कुश संस्कारित हुए। यह सच है कि नैतिकता को स्थापित करने में पिता ही नहीं पुत्रों को भी पिता की छत्र-छाया से अपने बाल्यकाल में वंचित होना पड़ा परंतु इसी कारण लव और कुश भविष्य में इतने समर्थ और सफल राजा बन पाये। श्रीराम ने संसार से निर्वाण के पूर्व कौसल राज्य का उत्तर लव को तथा दक्षिण भाग कुश को सौंपा जो क्षेत्र आज उत्तर प्रदेश और छत्तीसगढ़ कहलाता है।

सच तो यह है कि श्रीराम ने मानवता को विस्तार दिया और मात्र अपने दोनों पुत्रों के पिता का दायित्व नहीं सम्पूर्ण राज्य अयोध्या की प्रजा के प्रति पिता का कर्तव्य निभाया। उनके आचरण से हमको शिक्षा मिलती है कि जीवन में कितनी भी समस्या आये पर अपने अन्तःस्थल की पवित्रता पर आँच न आने पाये। अंतर्मन शान्त रहेगा तो आन्तरिक शक्ति का विकास होगा। हमारा अन्तर्मन ही हमारा शत्रु है हमें उससे ही लड़ना है। श्रीराम की आध्यात्मिक शक्ति थी कि बिना किसी साधन के वन में भी उन्होंने सेना जुटायी और रावण से सीता को छुड़ाकर लाये। उन्होंने मानव मात्र के समक्ष आध्यात्मिक महत्व का उद्धरण प्रस्तुत किया। श्री राम में अहम नहीं था उनके संतुलन, धैर्य ने ही रावण से युद्ध में आयी विषम परिस्थितियों में सेना को साहस दिया। उन्होंने अपने शत्रु तक के गुणों का सम्मान किया। सारांश यह है कि राम ने अपने आचरण से संदेश दिया कि अपनी ऊर्जा सकारात्मक उद्देश्यों जैसे अहंकार का नाश विनम्रता, सरलता, अनासक्ति, अंतर्ज्ञान, मुमुक्षु, आत्मबोध आदि के लिये उपयोग करें यही जीवन का अंतिम सत्य है शेष सुख-दुख जीवन में आते हैं उनको जीवन का अंग मानना चाहिए इनका निर्वहन करना चाहिए यह स्वधर्म है जो एक साधना है जो आध्यात्म का अभ्यास है जो परमात्मा से मिलन का माध्यम है। जिसे वेदों में ब्रह्म, बौद्ध में निर्वाण तथा संतों द्वारा मोक्ष की संज्ञा दी गयी है।

श्रीराम ने बताया कि शरीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्तर हैं जीवन में। जीवन में अनेक विषम परिस्थितियाँ आती हैं पर उनसे विचलित होकर आध्यात्म के मार्ग से विचलित नहीं होना चाहिए क्योंकि वही परम उद्देश्य है। आत्मा को शुद्ध रखना चाहिए वही ऊर्जा का स्रोत है। इस प्रकार श्रीराम ने जगत पिता के धर्म का निर्वहन किया।

3. निष्कर्ष

संतान पिता की प्रतिच्छाया है। श्रीराम के आचरण, संस्कार का प्रभाव था कि लव-कुश दूर रह कर भी योग्य राजा बने। श्रीराम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न अपने पिता दशरथ के गुणों और शिक्षा के कारण रामराज्य स्थापित कर पाये। सीता अपने पिता जनक के संस्कारो के कारण ही विषम परिस्थितियों में अपने सम्मान की रक्षा एवं पुत्रों को संस्कारित कर पायीं। रावण विद्वान बलशाली होते हुए भी अपने अहं के कारण पुत्रों की मृत्यु का कारण बना। अंगद को पिता, बाली का संरक्षण मिला, कला मिली परंतु उनकी अवगुणों ने पुत्र का सम्बल छीन लिया वह तो सुयोग था कि वह राम की शरण में आया और अपना जीवन सँवार लिया। पिता ही संतान के व्यक्तित्व और भविष्य का निर्माता है। कहना न होगा कि पिता की संतान के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है और रामायण में वर्णित उपरोक्त पिताओं ने अपने अन्य दायित्वों के साथ एक पिता के रूप में राम-कथा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

4. संदर्भ

1. रामायण-बाल्मीकि
2. रामचरित मानस-गोस्वामी तुलसी दास
3. डिवाइन टीचिंग आफ राम-ग्रेटेस्ट स्प्रिचुअल विस्डम-प्रणय
4. रामायण के महापात्र-दशरथ-टी एन प्रभाकर- अनुवादक-के वी श्रीनिवास मूर्ति
5. राजा जनक-उपदृष्टा वेंकटरमैया-तेलगु -अनुवाद-डा सी बालसुब्रह्मनियम
6. मातृभारती ई-पत्रिका में लेख-राजनारायण बोहरे
7. इन्टरनेट पर लेख

रामकथा का उद्देश्य लोक मंगल -

ISBN: 978-1-960627-06-3

उषा गौड
अध्यापिका, उत्तराखंड देहरादून
(ushagaur262@gmail.com)

राम कथा भारतवर्ष में ही नहीं विदेशों में भी दूर-दूर तक प्रचलित है। भारत में तो जन-जन में उसके प्रति अगाध आस्था है। तुलसीकृत रामचरितमानस के राम तो भारतीय नागरिकों के जीवन में विभिन्न पक्षों से कल मिल गए हैं। राम कथा का पाठ, कथन और श्रवण नित्य नियमित विषय है। यह है भी उचित क्योंकि भगवान राम के जीवन वृतांत से उनकी लीलाओं से हर स्तर का व्यक्ति प्रेरणा और मार्गदर्शन प्राप्त कर सकता है। परन्तु राम जैसे सर्वतोमुखी व्यक्तित्व के चरित्र से इतना निकटतम होते हुए भी भारतीय जनमानस उनके गुणों ,जीवन दर्शन से लाभ नहीं उठा पा रहा है ।यह आश्चर्य और दुख का विषय है ।उसका मुख्य कारण यह है कि लोग केवल उसके कथन, श्रवण, पाठ आदि से ही पुण्यार्जन की बात सोचते हैं।उसे समझने, आत्मसात करने, अपनाने की ओर ध्यान ही नहीं देते। जब कि राम कथा तो क्या राम जन्म के साथ भी यह उद्देश्य जुड़ा है कि लोग उनके चरित्र से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को उसी के अनुसार बनाकर धनिया हो जावें।

1. प्रस्तावना

राम जन्म के उद्देश्य के संबंध में भी रामचरितमानस में तुलसीदास जी ने यह उद्देश्य स्पष्ट रूप से घोषित किया है। मानस के प्रारंभिक प्रसंग में ही उमा को राम के अवतार का कारण बताते हुए शिव कहते हैं -

असुर मारिज्ञ थापहिं सुरन्ह,राखहिं निज श्रुति सेतु ।
जग बिस्तारहिं विशद यश,राम जन्म कर हेतु ।।

वे असुरों को मारते हैं, देवताओं की स्थापना करते हैं अपने वेद-पुल (वेद मर्यादा)की रक्षा करते हैं ,तथा संसार में अपने निर्मल यश का विस्तार करते हैं ।राम जन्म का यही कारण है।

असुरता का विनाश और देवत्व की स्थापना के साथ यश विस्तार का उल्लेख यों अटपटा लग सकता है। भगवान क्या लोकेषणा से ग्रस्त हैं ,जो अपनी वाहवाही के लिए यश का विस्तार करते हैं ? वस्तुत बात यह है कि मनुष्य मात्र उनके चरित्र को जाने समझे बिना उसका अनुकरण कर ही नहीं सकता।

अतः उनके दिव्य चरित्र का प्रचार विस्तार हो, तभी उनके जन्म के उद्देश्य, लोक मंगल की पूर्ति होती है ।लोक मंगल ही उनके जन्म का उद्देश्य है। यही तथ्य गुरु वशिष्ट जी चित्रकूट में सभा के बीच इन शब्दों से प्रकट करते हैं -

सत्य सिंधु बालक श्रुति सेतू ।राम जन्म जग मंगल हेतु।।

वे सत्य प्रतिज्ञा और वेद की मर्यादा का पालन करने वाले हैं। श्री राम जी का अवतार संसार के कल्याण के लिए हुआ है।

राम कैसे जग मंगल करते हैं किंतु उसके बाद क्या उनकी ?उसमें तो वह स्थूल रूप से कुछ कर भी सकते हैं ,जिस काल में अवतरित होते हैं ? अवतार काल में जिन गुणों को चरितार्थ करक भगवान अपने :लोकमंगल की क्षमता समाप्त हो जाती है। ऐसा सूचना भ्रामक है। वस्तुत ः दिखा देते हैंरुप उनसे प्रेरणा प्राप्त करके उन्हें अपनाने से लोक मंगल का क्रम चलता रहता है लौकिक से लेकर पारलौकिक सफलताएं उन गुणों के वरदान स्व, रंभ में ही तुलसीदास जी ने व्यक्त किए हपाई जा सकती हैं यह भाव राम कथा की उपयोगिता का वर्णन करते हुए मानस के प्राःः।

जग मंगल गुरुग्राम राम के। दानि मुकुति धन धर्म धाम के ।।

राम के गुण समूह लोक मंगल करने वालेआश्रय और मुक्ति देने वाले हैं। ,धर्म ,तथा धन,

2. विस्तार

अपने अवतार में भगवान अपने गुणों और विशेषताएं भगवान अपने साथ कहीं से लेकर नहीं आते । वे सब स्वतहैं । किन्तु मनुष्य उनका स्वरूप : और उपयोग का ढंग भूल जाते हैं।

अपने अवतार में भगवान उन्हीं गुणों और सद्वृत्तियों को पुनः प्रकाश में ले आते हैं। इस प्रकार से वे लुप्तप्राय कल्याणकारी मालूम पुनः जन सुलभ हो जाते हैं।यह तथ्य भाई भरत भी राम को मनाने के लिए चित्रकूट जाते हुएराम वन के पत्तों , मार्ग में प्रकट करते हैं। राजमहलों के वैभव में रहने वाले , -यह देखकर भरत कहते हैं ,पर भी उसी शहज भाव से विश्राम करते हुए आगे बढ़ गए हैं

राम जन्म जग कीन्ह उजागर।

रुप शील सुख सब गुन सागर।।

रूप शील सुख और सब गुणों के समुद्र राम ने जन्म लेकर संसार को प्रकाशित कर दिया ।

श्री राम अपने आचरण से सिद्ध कर देते हैंकि व्यक्ति की सुख शांति में परिस्थितियां बाधक नहीं बन सकती यह सिद्धांत लोग भूल जाते हैं और , जड़ परिस्थितियों के उतार चढ़ाव में पते की तरह डोलने लगते हैं। भरत जी ने भी राम के आचरण को अपने शब्दों में जन सामान्य के सामने निखार कर रख दिया। भगवान राम भी वही चाहते हैं। वह अपने मित्रों को राज्याभिषेक के बाद विदा करते समय यही कहते हैं -

अब गृह जासु सखा सब

भजेहु मोहि दृढ़ नेम।

सदा सर्वगत सर्वहित

जानिए करेहु अति प्रेम।।

हे मित्र गणअब सभी लोग घर जाओ वहां दृढ नियम पूर्व मुझे भजते रहना। मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका भला करने वाला जान कर बहुत ! प्रेम करना। प्रभु स्वयं सर्वहितेषी हैं तो उनके भक्त भी वैसे ही होंगे। तथा उनकी कथा का उद्देश्य भी निश्चित रुप से सबका हित ही होना चाहिए। तुलसीदास जी की भी यही मान्यता थी ।कविता ही नहीं मनुष्य को प्राप्त यश और अन्य विभूतियों की भी उपयोगिता लोकहित में लग जाने में ही है। मानस के वंदना प्रसंग में स्पष्ट लिखा है-

कीरति भनिति भूति भलि सोई।

सुरसरि समय सब कहँ हित होई।।

कीर्ति (कविता या साहित्य) और विभूति (ऐश्वर्य) वहीं अच्छी है जो गंगा के समान सबका हित करने वाली हो।

काव्य रचना का वह मापदंड से सामने रखकर उन्होंने रामचरितमानस की रचना उद्देश्य पूर्ण ढंग से योजनाबद्ध रूप में की है। मात्र अपने मन की तरंग में वह सब नहीं लिख डाला है। रामचरितमानस विशेष रूप में विशेष ढंग से तथा विशेष उद्देश्य के लिए रचा गया है। वंदना प्रसंग के बाद कथा प्रार्थना प्रकरण प्रारंभ करने से पूर्व वे लिखते हैं-

जस मानस जेहि विधि भयउ,

जग प्रचार जेहि हेतु।

अब सोई कहउ प्रसंग सब

सुमिरि उमा वृषकेतु।।

रामचरितमानस जैसा है, जिस प्रकार तैयार हुआ तथा जिस कारण संसार में इसका प्रचार किया गया,अब वही सब वर्णन उमा महेश्वर का स्मरण करके करता हूंँ।

तुलसीदास जी ने देखा कि लोग संसार में भ्रमित होकर ही अनेक प्रकार के दुख उठाते हैं, पतन के गर्त में गिर जाते हैं। भगवान श्री राम की प्रेरक चरित्र से उनके जीवन में चरितार्थ होने वाले उदाहरणों को देखकर लोगों का भ्रम दूर हो सकता है तथा वे अपने कल्याण का मार्ग पकड़ सकते हैं। इसलिए उन्होंने राम कथा का सहारा लिया। किंतु लोगों को सही दिशा मिल सके, इसलिए अपनी विवेक दृष्टि उन्हें ठीक करना आवश्यक लगा इसके लिए उन्होंने गुरु का सहारा लिया गुरु के प्रसाद से अपनी विवेक दृष्टि परिष्कृत करके उन्होंने संसार के कष्ट से मुक्ति दिलाने वाली राम कथा लिखी। वंदना प्रसंग में उन्होंने लिखा है-तेहि कर विमल विवेक विलोचन।

बरनउ राम चरित भव मोचन।।

गुरु पद्रास से विवेक नेत्र निर्मल बनाकर में अज्ञान को दूर करने वाले व संसार रूपी बंधन से छुड़ाने वाले श्री राम के चरित्र का वर्णन कर रहा हूं। श्री राम के उज्ज्वल चरित्र में वह क्षमता उन्होंने देखी कि भव रोग को से जन जन को-मुक्त कर सकता है। सद्गुरु की तरह भटकते हुओं का मार्गदर्शन देकर उन्हें लक्ष्य की ओर गतिशील बन सकता है। इसलिए उन्होंने इसको माध्यम बनाया।

3. निष्कर्ष

यह कथा वैराग्य विवेक और भक्ति को दृढ़ करने वाली तथा मोह रूपी नदी के लिए सुंदर नौका के समान है।इस सबसे स्पष्ट होता है कि राम कथा का विकास और विस्तार लोक कल्याण की पुण्य भावना से ही किया गया है। इस प्रयास में तुलसीदास जी को अनेक परंपरागत रूढ़िवादी मान्यताओं का खंडन करना पड़ा। और उस कारण उपहास और विरोध का भी सामना करना पड़ा। परंतु वे अविचलित रहे। राम कथा के लोक मंगलकारी उद्देश्य को न समझने वाले उनकी दृष्टि में मूर्ख या दुष्ट है। उनके उपहास से वे निरुत्साहित नहीं और उत्साहित ही हुए उनकी भावना की झलक निम्न चौपाई में मिलती है -

खल परिहास होई हित मोरा।

काक कहहिं कलकंठ कठोरा।।

यदि दुष्ट मेरे लोक मंगल के कार्य की निन्दा करते हैं, तो इससे मेरी भलाई ही होगी क्योंकि कौआ मधुर कंठ वाली कोयल को कठोर बोलने वाली कहता ही है। इसलिए उन्होंने कथा के माध्यम से संसार के हित के अपने प्रयास में कमी नहीं की। कथाओं का प्रयोग बहुधा इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर होता ही रहा है जीवन कला के विशेषज्ञ ऋषि महर्षि उपयुक्त अवसरों पर सामूहिक रूप से योजनाबद्ध ढंग से यह कार्य किया करते थे।रामचरितमानस में कथा आरंभ के समय माघस्नान के समय प्रयाग में एक ऐसे ही समारोह का विवरण मिलता है वहां ऋषि एकत्रित होते हैं और उपयोगी चर्चा करते हैं-

ब्रह्म निरूपन धरम विधि,
बरनहि तत्व विभाग।
कहाहिं भगति भगवंत कै,
संयुक्त ज्ञान विराग।।

ब्रह्मा विद्या, कर्तव्य परायणता तथा भौतिक समस्याओं के समाधान और ज्ञान वैराग्य आगे सहित भगवान की भक्ति के संबंध में चर्चा करते थे। स्पष्ट है कि वह चर्चा मात्र मनोरंजन या पुण्यार्जन की दृष्टि से नहीं होती थी। बल्कि जीवन की महत्वपूर्ण पक्षों का उसमें व्यावहारिक समावेश होता था। जीवन के सिद्धांतों को घटनाक्रम में बांधकर कथा रूप में प्रस्तुत करने से उसे सामान्य बुद्धि के व्यक्ति भी अधिक प्रकाश समझ लेते हैं। इसलिए कथा का माध्यम विशेष रूप से पकड़ा जाता था।किसी भी घटना या पात्र को आधार बनाकर संसार के हित की दृष्टि से कथा कही जाती थी।कथा की इस विधि का स्पष्ट उल्लेख वन प्रसंग में सती अनसूया और सीता की संवाद में मिलता है। अनसूया जी कहती है-

सुनु सीता तब नाम सुमिरि,
नारी पति व्रत करहिं।
तोहि प्रान प्रिय राम,
कहिउँ कथा संसार हित ।।
सब निर्धंभ धर्म रत पुनी।
नर और नारि चतुर सब गुनी ।।

सब दंभ रहित है धर्म पर लगे हुए और पुण्यआत्मा हैं। नर और नारी सब चतुर और गुणवान है।

ऐसे ही श्रेष्ठ व्यक्तित्व सुखी समुन्नत समाज के लक्ष्य तक जनको पहुंचाने के लिए राम कथा का विकास और प्रचार किया गया है हम इसका जन-महत्व समझे तथा लाभ उठाएं, तो स्वयं भी धन्य हो जावें तथा तुलसी जैसे संतों की आत्मा भी संतोष पा सकें।

4. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
2. पं.श्रीराम शर्मा आचार्य वाड्गमय

रामायण में माता कौशल्या

ISBN: 978-1-960627-06-3

वीणापाणि
(paniveena53@gmail.com)

माता कौशल्या पवित्र वात्सल्य की प्रतिमूर्ति हैं | इसके पीछे उनकी साधना व तपस्या का बल है | राम जो जन जन के नायक हैं, उनकी माता मे ज्ञान, भक्ति व वैराग्य की अविरल धारा प्रवाहित है| इस प्रपत्र में कतिपय प्रसंगों के आधार पर माता कौशल्या के कृतित्व व व्यक्तित्व को उजागर करने का प्रयास किया गया है |

1. भूमिका

स्वरचित दो माहिया पढ़कर मै विषय का शुभारंभ करती हूँ-

1. कौशल्या सी माता

नायक हों रामा
श्री संस्कृति का नाता |

2. कौशल्या मन भाये

मेरे राम लला
नित घर-घर मे आयें |

माता कौशल्या सतोगुण रूपिणी हैं | इनमे भक्ति है, ज्ञान है और वैराग्य सहज प्रतिफलित है | उनका मातृत्व भाव इतना सशक्त और उदार है कि उसकी परिधि में सकल सृष्टि समा सकती है | राम जो इक्ष्वाकु कुलभूषण, ककुत्स्थ नंदन, रघुवंशमणि हैं, उनके लिए माता कौशल्या की तपःपूत पुनीत कोख है | राम का प्रकाट्य होता है | वे चतुर्भुज रूप मे 'आयुधचारी' स्वरूप मे मां को दर्शन देते हैं और माता दिव्य स्तुति करती है | ऐसा इसलिए होता क्योंकि उन्होंने पूर्वजन्म में शतरुपा के रूप मे, तपस्या करके भगवान से यही वरदान मांगा था कि उन्हे वही अखंड अलौकिक परम सुख मिले जो भगवान अपने भक्तों को देते हैं- वे ज्ञान में रहे कि हमारे आँगन मे खेलने वाले राम परमब्रह्म परमात्मा हैं –

"सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति सोइ निज चरन सनेहु |
सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु हमहिं कृपा करि देहु ||" (मानस, बाल काण्ड)

और भगवान ने तुरंत अनुमोदन किया-

"मातु विवेक अलौकिक तोरे | कबहु न मिटिहि अनुग्रह मोरे ||"(मानस, बाल काण्ड)
दर्शन सुख लाभ लेने के बाद माता कौशल्या प्रार्थना करती हैं-
"कीजै सिसुलीला अति प्रिय सीला यह सुख परम अनूपा |"
उधर भगवान "सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना होई बालक सुरभूपा |"
(मानस, अयोध्या काण्ड) [3]

महल में किलकारी गूंज उठती है, अयोध्या मे आनंद छा जाता है | भगवान के बाल रूप मे आनंद मग्न रहने वाली माता कौशल्या की प्रतिक्रिया उस समय कितनी सशक्त और दृढ़ दिखाई पड़ती है जब श्रीराम के द्वारा ही उन्हे राज्याभिषेक के स्थान पर वनगमन की सूचना मिलती है जब कि उस समय माता कौशल्या राज्याभिषेक के उपलक्ष्य मे राम के कल्याण के लिए ईश आराधना कर रही थीं और राम को मिठाई खिलाने की प्रतीक्षा कर रही थीं |

राम आते है और निर्लिप्त भाव से माता से बताते हैं -

"पिता दीन्ह मोहि कानन राजू | जहं सब भाँती मोर बडि काजू ||"

तनिक विचलन के बाद माता कौशल्या के अर्थपूर्ण प्रतिक्रिया जैसे भविष्य का दिशानिर्देश कर रही हैं-

"राजु देन कहि दीन्ह बन मोहि न सो दुख लेसु |
तुम्ह बिनु भरतहि भूपतिहि प्रजहि प्रचंड कलेसु ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

राम के बनगमन का समाचार जान कर माता कौशल्या को यह संज्ञान हो रहा है कि राम के बन चले जाने पर भरत की, राजा दशरथ की और अयोध्या के प्रजा की दशा अच्छी नहीं रहने वाली है| उनकी अपनी पीड़ा तो किनारे ही रह गई है | 'आनन्द रामायण' मे लिखा है कि कौशल्या के पिता का नाम कुशलदेव था जिनकी पुत्री कौशल्या सब भाति निपुण और कुशल थी | अब ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है की माता कौशल्या अयोध्या की स्थिति को दत्तचित होकर साधने मे लग जातीं हैं |

2. विस्तार

पूर्व जन्म मे जब राजा दशरथ मनु महाराज थे, उन्होंने शतरुपा के साथ कठिन तपस्या करके भगवान को प्रसन्न किया और उनसे – "चाहउं तुम्हहिं समान सुत" की कामना की |

भगवान ने 'एवमस्तु' कहा-

"नृप तव तनय होब मै आई"- (मानस, बाल काण्ड)

इसके आगे भी मनु महाराज ने कहा कि मेरी प्रीत आप मे उसी तरह रहे जैसे पिता की पुत्र के प्रति होती है-

"मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना | मम जीवन तिमि तुम्हहिं अधीना ||" (मानस, बाल काण्ड)

राम का राज्याविषेक नहीं हो सका | वनवास का प्रसंग उठ खड़ा हुआ और राजा दशरथ के प्राणों पर बन आयी किन्तु माता कौशल्या अपने स्थान पर दृढ़ है वे राम से कहती हैं-

"तात जाहुँ बन कीन्हेउ नीका | पितु आयसु सब धरमक टीका ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त ने 'साकेत' मे लिखा है, माँ कौशल्या राम से कहती हैं-

" जाओ, तब बेटा बन ही,
पाओ नित्य धर्म–धनि ही |

पूज्य पिता प्रण रक्षित हो,
माँ का लक्ष्य सुरक्षित हो |

देव सदा कल्याण करें,

और कहूँ मै क्या तुमसे
वन मे भी विकसो द्रुम से
फिर भी है इतना कहना
मुनियों के समीप रहना |"('साकेत' मैथिली शरण गुप्त)

जाते-जाते राम को माता कौशल्या यही बतलाती हैं कि धर्म ही धन है | ऋषियों मुनियों के समीप रहने से सदा कल्याण होने वाला है |

उधर जब सीता को राम के वनवास की खबर लगती है तो वे भी माता कौशल्या के ही शरण मे जाती हैं –

"समाचार तेहि समय सुनि सीय उठी अकुलाइ |
जाइ सासु पद कमल जुग बंदि बैठि सिरू नाइ ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

सीता के लिए माता कौशल्या बहुत छटपटाती हैं | उन्होंने सीता को आँख की पुतली की तरह सहेजा है | सीता जो विदेहराज जनक की पुत्री हैं, महाराज दशरथ जिनके श्वसुर और स्वयं राघव जिनके पति है वह सीता वन मे कैसे रहेंगीं ?

"पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा | सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा ||
जियनिमूरि जिमि जोगवत रहऊँ | दीपबाति नहीं टारन कहऊँ ||"

वे राम से अपनी पीड़ा कहती हैं-

"सिय बन बसिहि तात केहि भाँती | चित्र लिखित कपि देख डेराती||"

किन्तु जब सीता जी-

"लागि सासु पग कह कर जोरी | छमबि देबि बड़ि अविनय मोरी ||"

पूर्वक माता कौशल्या से अपनी असहायता, विवशता और व्यथा कथा कहती है तो कौशल्या माता अकुलाने लगती हैं वे बहुत व्यथित हो जाती हैं | उनकी घनीभूति वेदना का वर्णन कवियों के बस की बात नहीं है ऐसा गोस्वामी तुलसीदास जी कहते है | माता कौशल्या बार-बार सीता को हृदय से

लगाती हैं, धीरज धराती हैं और आशीर्वाद देती हैं-

अचल होउ अहिवातु तुम्हारा | जब लगि गंग जमुन जलधारा ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

इसी तरह ममतामयी माता कौशल्या अपने तरल वात्सल्य से सबको पोषित करती हैं |

भरत जब ननिहाल से आते हैं, उन्हे पिता के परलोक गमन और राम के वनवास का पता चलता है तो उनपर वज्रपात ही हो जाता है | कैकेयी के महल से उठकर वे माता कौशल्या के पास आते हैं, माता उन्हे दौड़ कर इस प्रकार हृदय से लगाती हैं मानो राम ही लौट आए हैं | वे शत्रुघ्न को भी हृदय लगाती हैं | भरत की विकलता और असहायता देखकर माता कौशल्या का हृदय तार-तार हो जाता है | वे देख रही हैं कि भरत शोक और क्षोभ से भरे हुए हैं | भरत बार-बार शपथ उठाते हैं

कि अयोध्या मे घटित होने वाली इन घटनाओं के पीछे उनका कोई हाथ नहीं है | माता कौशल्या यह सब सुनकर बहुत अधीर हो जाती हैं वे भरत से कहती हैं कि राम और भरत तुम दोनों भाई एक दूसरे को प्राणों से अधिक प्यारे हो – गोस्वामी जी लिखते हैं :-

"राम प्रानहु ते प्रान तुम्हारे | तुम रघुपतिहि प्रानहु ते प्यारे ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

वे भरत को सब प्रकार से समझाकर संतोष दिलाना चाहती हैं - तुम ग्लानि न करो, इसमे किसी का दोष नहीं है, समय ही ऐसा आ गया है | गोस्वामी जी ने लिखा है :-

"अजहुँ वच्छ बलि धीरज धरहू | कुसमउ समुझि सोक परिहरहू ||
जनि मानहु हिय हानि गलानी | काल करम गति अघटित जानी ||
काहुहि दोसु देहु जनि ताता | भा मोहि सब बिधि बाम विधाता ||"

आगे माता कौशल्या कहती हैं –

लखि बिधि बाम कालु कठिनाई | धीरजु धरहु मातु बलि जाई ||
सिर धरि गुरु आयसु अनुसरहु | प्रजा पालि परिजन दुखु हरहु ||"
(मानस, अयोध्या काण्ड)

माता कौशल्या भरत को समझाती हैं कि अब तुम ही हम सभी के एक मात्र अवलंब हो –

"वन रघुपति सुरपुर नरनाहू | तुम्ह एहि भाँति तात कदराहू ||
परिजन प्रजा सचिव सब अंबा | तुम्हही सुत सब कहं अवलंबा ||"

इस भाँति माता कौशल्या ममत्व लुटाते हुए भरत का दुख, विषाद और ग्लानि मिटाना चाहती हैं | वे उन्हें ज्ञान भी देती हैं और कर्तव्य बोध भी कराती हैं | भरत की चिंता तो माता कौशल्या को तबसे है जबसे राम को वनगमन का आदेश हुआ है | राम के बिना भरत कैसे रहेंगें ? चित्रकूट मे जब विदेहराज जनक का परिवार दल सहित आता है और देवी सुनैना से कौशल्या माता की बातचीत होती है तो उनसे भी वे भरत का जिक्र करती हैं :-

"लखनु राम सिय जाहुँ वन भल परिनाम न पोचु |
गहबरि हिय कह कौसिला मोहि भरत कर सोचु ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

राम लखन और सीता का वनवास तो अच्छा परिणाम देने वाला है, देवी मिथिलेश्वरी मुझे तो हमारे भरत की चिंता है जिनका गुणगान शारदा और शेष भी नहीं कर सकते –

"भरत सील गुन विनय बड़ाई | भायप भगति भरोस भलाई ||
कहत सारदँहु कर मतिहीचै | सागर सीप कि जाइ उलीचै ||
"जानउँ सदा भरत कुलदीपा | बार-बार मोहि कहेउँ महीपा ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

माता कौशल्या देवी सुनयना से यहाँ तक कह देती है कि यदि राजा जनक को ठीक लगे तो आप अवसर पाकर उनसे विनय पूर्वक कहिएगा कि लखन को रोककर भरत को राम के साथ बन भेज दें क्योंकि मुझे भरत के प्राणों का भय है –

"रखिअहिं लखनु भरतु गवनहिं बन | जौ यह मत माने महीप मन ||
तौ भल जतनु करब सुबिचारी | मोरे सोच भरत कर भारी ||
गूढ़ सनेह भरत मन माहीं | रहे नीक मोहि लागत नाहीं ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

माता कौशल्या का हृदय पुरजन प्रजा के लिए भी उतना तरल व द्रवीभूत है | भरत जी ने चित्रकूट जाते समय गुरु सहित माताओं और सबके लिए सुंदर व्यवस्था की और स्वयं अनुज के साथ पैदल चलने लगे क्योंकि राम भैया तो पैदल ही गये थे | भरत को इस तरह पैदल चलता देखकर सारी प्रजा पैदल चलने लगती है | तब माता कौशल्या अपनी पालकी भरत के समीप ले जाती हैं और उनसे कहती हैं कि भरत तुम रथ पर बैठो अन्यथा समस्त प्रजा पैदल चलकर कष्ट सहेगी-

"तात चढ़हु रथ बलि महतारी | होइहि प्रिय परिवार दुखारी ||
तुम्हरे चलत चलिहि सबु लोगू | सकल सोक कृस नहिं मग जोगू ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

3. निष्कर्ष

इस प्रकार माता कौशल्या हमें रघुकुल के दृढ़ आधार स्तम्भ की भाँति दिखाई पड़ती हैं | राम इस बात से पूर्णतः अवगत है कि हमारी मातायें अयोध्या की आधारशिला हैं | वे वनगमन के समय पुरवासियों से विनम्रता पूर्वक निवेदन करते हैं कि आप सभी सब प्रकार से माताओं का ध्यान रखिएगा –

"मातु सकल मोरे विरह जेहिं न होहिं दुख दीन |
सोइ उपाय तुम करेहु सब पुरजन प्रबीन ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

अध्यात्म रामायण व वाल्मीकि रामायण मे बहुत विस्तार से वर्णित है कि मनस्वनी माता कौशल्या ने वनगमन के अवसर पर राम के कल्याण के लिए अनेकों प्रकार से स्वस्ति वाचन किए-

"सर्वे देवा: सगन्धर्वा ब्रह्मविष्णुशिवादय: |
रक्षन्तु त्वां सदा यान्तं तिष्ठतं निद्रया युतम् ||"(अध्यात्म रामायण) [8]

"रघुकुल सिंह ! तुम नियम पूर्वक प्रसन्नता के साथ जिस धर्म का पालन करते हो, वही सब ओर से तुम्हारी रक्षा करें |"
"बेटा ! देवस्थानों और मंदिरों मे जाकर तुम जिनको प्रणाम करते हो, वे सब देवता महर्षियों के साथ वन मे तुम्हारी रक्षा करें |"
"तुम सद्गुणों से प्रकाशित हो | बुद्धिमान विश्वामित्र जी ने तुम्हें जो जो शस्त्र दिये हैं, वे सब के सब सदा सब ओर से तुम्हारी रक्षा करें |" आदि-आदि [वाल्मीकि रामायण]

ममता की प्रतिमूर्ति, वात्सल्य की निर्झरणी माता कौशल्या मे ज्ञान व विवेक, मर्यादा व कौशल पूर्णतः प्रकाशित है | उनकी सरलता, सहजता, निःस्पृहता, निरभिमानता, कर्तृत्व शून्यता सभी को बरबस अपनी तरफ आकर्षित करती है | सीता हों, भरत हों, अयोध्या की प्रजा हों सभी माता कौशल्या की शरण लेते है और कौशल्या माता अपने विवेक और वात्सल्य से उन्हे ढाढ़स देती हैं और उनका पथ प्रदर्शन करती हैं |

हम देखते है कि राम सबसे पहले माता कौशल्या के पास जाते हैं और उनको अपने वनगमन की सूचना देते हैं और कहते हैं-

"पिता दीन्ह मोहि कानन राजू | जहँ सब भाँती मोर बड़ि काजू ||"

उनका आशय है कि माता व्यथित न हो पिता जी ने मुझे वन का राज्य सौंपा है जहाँ मुझे बहुत कार्य करना है, सारी सार संभाल करनी है | हम देखते है कि इस समय माता कौसल्या ही राम के कथन का अभिप्राय उसकी गुरुता और गंभीरता को समझ सकने की क्षमता रखती हैं | उन्होंने सम्पूर्ण स्थिति, परिस्थिति को आत्मसात कर आगे का पथ निश्चित कर लिया |

धन्य है माता कौसल्या की विनम्रता जिससे रीझ कर देवी सुनयना अपने मुँह से, हम सबके हृदय की बात कह देती हैं-

"देवि उचित असि विनय तुम्हारी | दशरथ घरिनि राम महतारी ||" (मानस, अयोध्या काण्ड)

4. संदर्भ ग्रंथ

1. रामचारित मानस
2. अध्यात्म रामायण
3. वाल्मीकि रामायण
4. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त

पंच कन्याओं में वाल्मीकि रामायण के तीन नारी पात्र

ISBN: 978-1-960627-06-3

श्रवण कुमार उपाध्याय
अध्यापक, जोधपुर
(shrawanuppadhyay@gmail.com)

रामायण भारतीय सत्य सनातन धर्म की पहचान है।इसमें भगवान श्री राम के पावन चरित्र का विशाद वर्णन किया गया हैं।रामायण जैसी कालजयी कथा की रचना आदि कवि वाल्मीकि ने की। इसलिए इस ग्रंथ को आदि काव्य की संज्ञा दी गई है तथा वाल्मीकि को आदि कवि कहा जाता है। वाल्मीकि ने कथा के प्रस्थान को जन्म दिया।वाल्मीकि रामायण संस्कृत भाषा में रचित आदिकाव्य है। संस्कृत भाषा में रचित वाल्मीकि रामायण को आर्ष रामायण भी कहा जाता हैं।ऐसी मान्यता है कि वाल्मीकि ने रामायण की रचना श्रीराम के काल में ही कर दी थी।इस कारण इस ग्रंथ को सबसे प्रमाणिक माना जाता है। रामायण का अर्थ है कि राम की कथा,राम का मन्दिर, राम का घर, राम का आलय,राम का मार्ग। देव भाषा में रचित इस ग्रंथ में 24000 श्लोक, 500 सर्ग तथा 7 काण्ड हैं।कथा का विभाजन छंद, अलंकारों और भाषा सौन्दर्य के अनुरूप महाकाव्य की रचना की गई है। वाल्मीकि रामायण हमें मुख्यतः तीन अलग-अलग पाठ या पुस्तक मिलती हैं।जिसमें

1. दक्षिणात्य पाठ
2. गौण्डिय पाठ
3. पश्चिमोत्तरीय पाठ।

इन पाठों में दुसरा और तीसरा पाठ आपस में मिलता है।दक्षिणात्य पाठ सबसे प्राचीन है।वाल्मीकि रामायण में इतिहास व भूगोल के साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर अधिक जोर दिया गया है। वाल्मीकि रामायण में नारी चरित्र का सुन्दर चित्रण किया गया है। इसमें पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक मूल्यों और दायित्व को समर्पित रूप से निर्वाह करते हुए नारी का चित्रण किया गया है।वाल्मीकि ने नारी के उत्कर्ष जीवन को बताया।वाल्मीकि रामायण में नारी पात्रों में निर्भीकता, वाक्यपटुता,और स्पष्टवादिता की अद्वितीय क्षमता दिखायी है।रामायण महाकाव्य के भारतीय सनातन संस्कृति एवं संस्कारों के उद्यत आदर्श रत्न है।वाल्मीकि ने अपने महाकाव्य में नारी के त्यागने,तपस्वी जीवन, उज्जवल चरित्र का सुन्दर और यथार्थ वर्णन किया है।

रामायण महाकाव्य के स्त्री पात्र कौशल्या,सुमित्रा,कैकेई,सीता,शबरी,अहल्या,मंथरा,उर्मिला,तारा,मंन्दोदरी,माण्डवी,श्रुतिकीर्ति आदि। रामायण के सभी स्त्री चरित्र अपने-अपने स्थान पर श्रेष्ठ है।रामायण के सभी स्त्री चरित्रों की महत्ता एवं त्याग भावना प्रेरणास्पद एवं लोक मंगलकारी है।रामायण के नारी पात्र मानव स्वभाव की विविधताओं एवं जीवन की वास्तविक ताओं तथा आदर्श को रेखांकित करने वाले है।रामायण के स्त्री रत्न राम कथा को आदर्श रूप में प्रतिष्ठित करने मे महत्वपूर्ण योगदान दिया है।रामायण के स्त्री पात्रों में से तीन स्त्री पात्रों को पंच कन्याओं की श्रेणी में रखा गया है।

अहल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।
पञ्चकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातक नाशनम्।।

अहल्या,द्रौपदी,कुन्ती,तारा,मन्दोदरी का नित्य स्मरण करना चाहिए। इससे महापातक नष्ट हो जाते है।इसमें से तीन रामायण के स्त्री पात्र तथा दो महाभारत के स्त्री पात्र है।जिन्हें पंच कन्या कहा जाता है।इन पाँचों कन्याओं ने अपने लौकिक जीवन में पुत्रीत्व,पत्नीत्व,तथा मातृत्व आदि का कुशलतापूर्वक निर्वाह करने के पश्चात भी इन्हें "कन्या" से अभिधान से अभिहित किया है। /कन् दीप्तै धातु यक् (औणादिक) प्रत्यय तथा 'कन्यायाः कनीन्' सूत्र से टाप् प्रत्यय करने पर "कन्या" शब्द निष्पन्न होता है।जिसका अर्थ है कुमारी।

"कुत्सितो मारो यस्यां सा कुमारी, कुत्सितो यस्मिन्नित कुमारः"

अर्थात जिसमें काम कुत्सित हो (संयम के कारण दबा हो) भारतीय आर्ष काव्य में कुमारी शब्द इस प्रकार से व्याख्यायित किया गाया है। कन्या शब्द का प्रयोग वैदिक संहिताओं में हुआ है। ऋक् संहिता के

कन्येव तन्वा राशिदाना एषि देवि देवमियक्षमाणम्।
सस्मयमाना युवति पुरस्तादाविवक्षासि कुणुये विभाति।। (ऋग्वेद 1/123/10)
आतेकारो श्रृणुयामा वचासि ययाथ दूरादनसा रथेन।
नि ते नसं पीहायानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वदेते।। (ऋग्वेद 3/33/10)

अर्थसंहिता के 1/14/2,11/4/18,12/1/24 सूक्तों में कन्या शब्द का प्रयोग हुआ है। अमरकोश में कानीन कन्यकाज्जातः शब्द मिलता है। कन् +दीप्तो +अध्न्यादित्वाद यक् +टाप् प्रत्यय से निष्पन्न "कन्या" को स्वतंत्रा वरवर्धिनी कहा जाता है। स्मरण मात्र से महापाप से बचाने वाली पंच कन्याओं में सहयोग ही है कि इन पाँचों के जीवन में मा की भूमिका नगण्य ही रही। अहल्या अयोनिजा है। अयोनिजा यानी जिसनें गर्भ के बाहर जीवन धारण किया। इनका जन्म मा से नही हुआ। मन्दोदरी की मा हेमा अप्सरा थी जो मन्दोदरी को जन्म देने के पश्चात स्वर्ग चली गई। तारा वैद्य सुषेण की धर्म पुत्री है उसके माता का कोई उल्लेख प्राप्त नही होता है। अहल्या का वर्णन हमें वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक साहित्य तक में मिलता है।पंचकन्याओं में अहल्या का का नाम कनिष्ठिका पर परिगणित होता है।पुराणों व महाभारत में अहल्या उत्पत्ति की कथा इस प्रकार से प्राप्त होती है। "

सर्वप्रथम ब्रह्म के मन में सभी स्थानों के सौंदर्य को एकत्रित करके एक नारी बनाने की इच्छा हुई। उन्होंने समस्त जगत का सौंदर्य एकत्रित करके एक अभूतपूर्व नारी की रचना की। उसके नख से शिख तक सौंदर्य ही सौन्द्रर्य था। उसका नाम रखा 'अहल्या' 'हल' कहते है पाप को तथा 'हल' का भाव 'हल्य' और जिसमें पाप नही हो वह 'अहल्या' है। अहल्या भूमण्डल की प्रथम सर्वांगसुन्दर नारी थी। ब्रह्म ने अहल्या का सर्जन किया इस कारण अहल्या को ब्रह्म की मानस पुत्री कहा जाता है।

कृतिवास रामायण के अनुसार ब्रह्म ने बहुत सी रूप सम्पन्न एवं गुणवंती कन्याओं की सृष्टि की। उन सभी कन्याओं में से सौन्द्रर्य लेकर एक सर्व गुण सम्पन्न तथा अत्यंत सुंदर कन्या की सृष्टि कर उसका नाम अहल्या रखा। 'हल' का अर्थ विरूपता तथा 'हल्य ' का अर्थ विरूपता के कारण निन्धत्व। इस प्रकार अनिन्दय सौंदर्य से परिपूर्ण होने के कारण ब्रह्म ने इस कन्या का नाम "अहल्या" रखा। "अहल्या" शब्द की व्युत्पत्ति "जिस पर हल नही चल सके" ।अहल्या शब्द का अर्थ यह भी है कि जिसका जन्म हल द्वारा जोती गई भूमि से नही हुआ हो अर्थात अयोनिजा है।

वाल्मीकीय रामायण के उत्तरकाण्ड में अहल्या के उत्पत्ति की कथा मिलती है।आदि कवि वाल्मीकि ने अहल्या के अनिन्दय सौन्द्रर्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि अहल्या का अभिधान स्वयं ब्रह्मा ने किया।

ततो मया रूपगुणैरहल्या स्त्री विनिरामींता।
हलं नामेह वैरूप्यं हल्यं तत्प्रभवं भवेत् ॥
यस्या न विद्यते हल्ये तेनाहल्येति विश्रुता ।
अहल्येत्येव च तया तस्या नाम प्रकीर्तितम् ॥ (वाल्मीकि रामायण उत्तरकाण्ड 22-23)

जगत पिता ब्रह्मा ने अपने द्वारा पुर्व में सृजित प्रजाओं के रूप रंगादि में वैशिष्ट्य लाने के लिए विलक्षण क्रान्ति से तथा प्रत्येक अंग में विशिष्ट सौन्द्रर्य से युक्त स्त्री रत्न की सृष्टि की। ब्रह्मा ने दुसरे प्राणियों से सर्वश्रेष्ठ अंग लेकर एक ऐसी स्त्री का निर्माण किया जिसमें 'हल ' कुरूपता का सर्वथा अभाव था और उसका नाम "अहल्या" रखा।आदि कवि वाल्मीकि ने अहल्या के सौन्द्रर्य और लावण्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि:-

प्रयत्निर्मितां धावा दिव्यां मायामयीमिव ।
धूमेनाभिपरीताङ्गीं दीप्तामग्निशिखामिव। ।
सुतुषारावृतां साभ्रां पुर्णचन्द्रप्रभामिव।
मध्येऽभसो दुराधर्षो दीप्तां सूर्यप्रभामिव ॥ (वाल्मीकि रामायण 1.49,14-15)

इस श्लोक के अनुसार अहल्या का स्वरूप अत्यंत ही दिव्य था। ब्रह्मा ने अत्यंत परिश्रम पूर्वक अहल्या के लावण्य युक्त अवयवों का सृजन किया। उसके प्रत्येक अंग से इतना तेज झलकता था जैसे धुऐं से घिरी हुई प्रज्ज्वलित अग्निशिखा हो।वह ऐसी दिखती थी जैसे ओले और बादलों से ढंकी हुई पुर्ण चन्द्रमा की क्रान्ति हो। उसका सौन्द्रर्य जल के भीतर उद्भासित होने वाली सूर्य की दुर्धर्ष प्रभा के समान दृष्टिगोचर होता था। अहल्या को 'सुमध्यमा' कहा जाता है जिसका अर्थ सुन्दर कटिप्रदेश वाली कन्या। अद्भुत लावण्य से सम्पन्न होने के कारण उनका नाम अहल्या सार्थक होता है। अहल्या का सौन्द्रर्य अनिन्दय था।इसे अगन्धा भी कहा जाता है।अहल्या ने सभी कामनाओं पर विजय प्राप्त कर ली इसके कारण इसका सौन्द्रर्य अद्वितीय था। अहल्या शुद्ध आत्मा और पावनता का प्रतीक है।उसका ह्दय सरल और निष्पाप था। शुद्ध आत्मा ही चिरन्तन सौन्द्रर्य तथा दिव्यता से परिपूर्ण होती है।निर्मल चित्त और विशुद्ध आत्मा से युक्त व्यक्ति ही ईश्वरत्व को प्राप्त कर सकता है।अहल्या ने सांसारिक जीवन की प्रतिबद्धताओं के बीच कर्तव्य का पालन करते हुए अपनी चेतना को दैहिकता से परे रखा। अहल्या आत्मिक चेतना को चरमोत्कर्ष तक ले जाकर सर्वदा के लिए पुज्य व स्मरणीय बन गई । वाल्मीकि रामायण का स्त्री पात्र तारा का वर्णन बहुत ही कम मिलता है। तारा वैद्य राज सुषेण की धर्म पुत्री और किष्किंधा के राजा ऋक्षराज की पुत्रवधु तथा वानर महाप्राक्रमी बाली की धर्मतत्नी थी।तारा एक स्वतंत्र व्यक्तित्व से युक्त रामायण का पात्र है।तारा राजनैतिक प्रवीणता और सूझबूझ से युक्त नारी थी। वह चतुर, व्यवहार कुशल,परिस्थितयों का आंकलन करने वाली,नीति कुशल, धर्म कुशल थी।वाल्मीकि रामायण और कम्ब रामायण में तारा एक सशक्त-निर्भीक चरित्र है। राम द्वारा तारा को दिये गये उपदेश को रामगीता कहा जाता है। वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में तारा के पिता व उसके विवाह का वर्णन है।

ततस्तु वानरामात्यास्तारपिताः प्रभु।

उवाच वानरो वाक्यं युद्धप्रेप्सुमुपागतम् ॥ (वाल्मीकीय रामायण उत्तरकाण्ड 34.4)

बाली के वीरता, शौर्य व पराक्रम से प्रभावित होकर सुषेण ने अपनी बड़ी पुत्री तारा का विवाह बाली से तथा छोटी पुत्री रुमा का विवाह सग्रीव से किया था। तारा विविध गुणों से परिपूर्ण अत्यंत विदुषी नारी थी। वह अपने कर्तव्य का पालन करती हुई अपने पति के गुणों व अवगुणों का तटस्थ भाव से विवेचन करती है।राजनीति क्षैत्र में तारा निष्णात थी।उसकी राजनीतिक विचार धारा कूटनीतिक नही होकर शुद्ध राजनीति से ओतप्रोत थी। वह अपने पति के राजकार्यो के सम्पादन में सक्रियता से भाग लेती थी। बाली के गुप्तचर तारा को सन्देश व सूचनायें देते थे। तारा उन सूचनाओं का विश्लेषण कर उचित कदम उठाती थी। तारा के गुणों का वर्णन करते हुए बाली अन्तिम समय में सुग्रीव को बताते है कि

सुषेणदुहिता चेयमर्थसूक्ष्मविनिश्चये।

औत्पातिके च विविधे सर्वतः परिनिष्ठिता। ।

यदेषा साध्वति ब्रयात् कार्यं तन्मुक्तसंशयम्।

नहि तारामतं किंचिदनंयथा परिवर्तते। । (वाल्मीकीय रामायण 4,22,13-14)

अर्थात सुषेण की पुत्री तारा सूक्ष्म विषयों का चिन्तन करके निर्णय लेने में दक्ष है।वह जिस कार्य को श्रेष्ठ बताये उसको निस्संकोच होकर करना। तारा कोई भी कार्य विपरीत परिणाम नही देता है।तारा में राजनीतिक कुशलता कुट-कुट कर भरी हुई थी।तारा ने लक्ष्मण से कहा कि रावण पर विजय किसी की सहायता के प्राप्त नही की जा सकती है। सुग्रीव की गर्जना से बाली युद्ध करने के लिए निकला तब तारा ने कहा कि जब दुर्बल व्यक्ति गर्जना करता है तब दो ही कारण होते है, प्रथम उसे किसी सबल की सहायता है या उसकी मृत्यु निकट है।तारा दुर्बल शत्रुओं से सदैव सजक रहती थी। शत्रु के क्रिया-कलापों की सूचना के लिए गुप्तचरों की सहायता लेती है।उसके अनुरूप कार्य करती है। तारा उदारहृदय नारी थी।उसने बाली को सुग्रीव से प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने को कहा।उसने भ्रातृत्व प्रेम के सहारे वैर भाव को भूलाने को उचित बताया।तारा ने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए कहा कि सुग्रीव ने आपको ललकारा है वह स्वाभाविक नही है।उसको कोई सबल का सहारा है।सहायक के बल पर ही वह गर्जना और उत्तेजना का प्रदर्शन कर रहा है।तारा कुशल राजनीतिज्ञा और बुद्धिमती होने के साथ ही उसमें वाक् चार्तुय भी था।सुग्रीव ने लक्ष्मण के क्रोध शमन हेतु पारा को भेजा। अपने समक्ष तारा को देख लक्ष्मण का क्रोध शांत हो गया।तारा ने स्नेह जनित निर्भीकता के साथ स्नेह पुर्ण अर्थ से युक्त वचनों से लक्ष्मण के क्रोध का कारण जाना।

किं कोपमूलं मनुजेन्द्रपुत्र कस्ते न संतिष्ठति वाङ्निदेशे।

कः शुष्कवृक्षं वनमापतन्तं दावाग्निमासीदति निर्विशङ्कः॥(वाल्मीकीय रामायण 4,33,41)

तारा ने अपनी बुद्धिमता का प्रयोग करते हुए लक्ष्मण के हृदय की अशंका को दूर किया तथा अपने पति सुग्रीव को मैत्री धर्म से अवगत करवाया जो कि विस्मृत हो गये थे।उसने धर्म और अर्थ के निश्चय से रामचन्द्र के कार्य के विषय में अवगत होकर लक्ष्मण को विश्वास के साथ आत्मीयता पूर्वक कहा:-

न कोपकालः क्षितिपालपुत्र न चापि कोपः स्वजने विधेयः।

त्वदर्थकामस्य जनस्य तस्य प्रमादमप्यर्हसि वीर सोढम्।। (वाल्मीकीय रामायण 4/33/51)

तारा ने लक्ष्मण को मित्रों का संग्रह करने हेतु कहा। सीतान्वेषण के लिए सहयोग की अपेक्षा है। उसने लक्ष्मण से कहा कि सुग्रीव सहयोग हेतु सदैव इच्छुक था।ऐसी स्थिति में उसके द्वारा किया गया प्रमाद क्षमा योग्य है।उसने उदाहरण देते हुए कहा कि धर्म और तपस्या में लीन रहने वाले महर्षि भी कदाचित विषयाभिलाषी हो जाते है।फिर स्वभाव से चंचल वानर सुग्रीव सुख मोज में क्यों न आसक्त हो। लक्ष्मण के क्रोध को तारा ने अपनी वाक्पटुता से शान्त कर दिया।

आदि कवि वाल्मीकि ने तारा के लिए तपस्विनी, सती और अनिन्दिते जैसे शब्दों का प्रयोग किया। तारा एक प्रतिव्रता नारी थी। बाली की मृत्यु के पश्चात वह सुग्रीव की राजमहिषी बनी।जो वानर कुल परम्परा है उसका निर्वाह किया ।तारा कभी भी पातिव्रत्य धर्म से विमुख नही हुई। तारा ने अपने पति बाली की मृत्यु के पश्चात अपने पुत्र अंगद को भावी कार्य के लिए प्ररित किया। उसने शास्त्रों में सन्तान होने के जो प्रयोजन बताये गये है वह अंगद को बताकर वानरराज बाली की औध्वर्दैहिक क्रियाओं को सम्पन्न करवाया।तारा पुत्र के प्रेम में अपने पातिव्रत्य से तनिक भी विमुख नही हुई।

मन्दोदरी :- पंच कन्याओं में मन्दोदरी अपने वैशिष्ट्य एवं पातिव्रत्य धर्म के कारण उच्च स्थान पर आसीन है। मन्दोदरी मय नामक असूर की पुत्री तथा सुमाली की दौहित्री थी। मय की माता का नाम दिति था। मय की क्रान्ति सूर्य के समान थी वह प्रबल योद्धा होने के साथ विद्वान भी था।मय दानवों का वास्तुकार था। मय को स्वर्ग की अप्सरा हेमा देवताओं ने प्रदान की।एक हजार वर्ष तक हेमा व मय ने दाम्पत्य जीवन जीया।हेमा और मय के एक पुत्री हुई जो मन्दोदरी के नाम से जानी जाती है।हेमा ने मन्दोदरी को जन्म देकर स्वर्ग चली गई। ब्रह्माण्ड पुराण में मय और रम्भा की पुत्री बताया है मन्दोदरी को।मन्दोदरी का जन्म एक अप्सरा के गर्भ से हुआ इसलिए वह बहुत सुन्दर थी।मन्दोदरी को वरदान प्राप्त था कि वह चिर यौवन रहने और

कभी वृद्ध न होने न ही जल सकने वाली नारी रहेगी।वाल्मीकीय रामायण में मन्दोदरी के सौन्द्रर्य को लेकर लिखा गया है कि "न प्रभात्ररलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्" इसी बात को लेकर महाकवि कालीदास ने शकुन्तला के सौन्दर्य को दिव्यता करते है।

वज्रमध्यामधोवक्त्रां हेमकुम्भनिभस्तनीम्।
शिरीषसुमनोमालामृदुबाहुलतायुगाम्। ।
कम्बुरेखानतग्रीवां पुर्णचन्द्रसमानाम्।
नेत्रकान्तिनदीसेतुबन्धसंनिभनासिकाम् ।।
अङ्गनाविषयां सृष्टिमपूर्वामिव कर्मणा।
आहृत्य जगतोऽशेषं लावण्यमिव निर्मिताम्।। (वाल्मीकीय रामायण)

वाल्मीकि ने मन्दोदरी के सौन्द्रर्य का वर्णन करते हुए लिखा कि उसकी गर्दन शंखाकृति के समान रेखाओं से सुमण्डित तथा थोड़ी नीचे की ओर झुकी हुई थी।मुख चन्द्रमा के समान और नेत्र कान्ति से परिपूर्ण थे।कान्ति युक्त दोनो नेत्रों के मध्य नासिका कान्तियुक्त दो नदियों के ऊपर सेतु के समान दृष्टिगोचर होती है।उसके कपोल निर्मल और होंठ लाल थे।होठों की रक्तिमता से कपोल भी लालिमायुक्त दिखते थे।उसका भाल अष्टमी के चन्द्र के समान रमणीय, सुन्दर कान तथा बरीक केश भी स्निग्ध और काले थे।माधुर्य से परिपूर्ण मन्दोदरी की सृष्टि मानो विधाता ने संसार की सभी सौन्द्रर्य सामग्री को एकत्रित करके की थी। उसके सभी अवयव सुन्दर और उदर कृश था।'मन्दम् उदरं यस्या सा मन्दोदरी'।

जब मन्दोदरी की आयु पन्द्रह वर्ष की हुई। उसमें तारूण्य का प्रवेश हुआ। तब मय ने अपनी पुत्री के विवाह का विचार किया। मय ने अपनी कन्या मन्दोदरी के लिए वर खोजना आरम्भ किया। मय को रावण मिल गया।मय ने रावण को उसका परिचय पुछा तो रावण ने कहा कि मैं ब्रह्मा से तीसरी पीढ़ी में उत्पन्न विश्रवा मुनि का पुत्र 'दशग्रीव' हुँ।विश्रवा मुनि का पुत्र होने के कारण मय ने अपनी कन्या मन्दोदरी के लिए रावण को सुयोग्य वर माना। मय ने अपनी पुत्री का विवाह रावण से करने का प्रस्ताव रखा जिसे रावण ने स्वीकार कर लिया।"प्रज्वाल्य तत्र चैवाग्निमकरोत प्राणिसंग्रहम्" मन्दोदरी का विवाह विवाह रावण के प्राजापत्य श्रेणी से सम्पन्न हुआ। मय ने रावण का विवाह के पश्चात अनेक दिव्यास्त्र तथा अमोघ शक्तियों भेंट स्वरुप प्रदान की। रावण ने अनेक देव कन्या, गन्धर्व एवं नागकन्याओं से विवाह किया।रावण ने दस हजार स्त्रीयों से विवाह किया।सभी के नाम के पश्चात "दरी" शब्द आता है।मन्दोदरी रावण की पट्टमहिषी बनी। मन्दोदरी रावण को अत्यंत प्रिय थी। उसके एक पुत्र हुआ जिसका नाम मेघनाद रखा।जिसने इन्द्रजीत के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की। मन्दोदरी रावण की हितैषिणी पत्नी थी। वह हमेशा पति के हित की बात करती थी। उसने राम के दिव्यत्व को पहचान लिया और अपने पति से राम से वैर भाव नही करने की प्रार्थना की। मन्दोदरी ने सीता हरण को उचित नही माना। वह सीता को लौटाने के लिए निरंतर कहती थी। मन्दोदरी एक हित चिन्तन पत्नी थी।मन्दोदरी पतिव्रत धर्म में निरन्तर लीन रहती थी।मन्दोदरी रावण की दुसरी पत्नीयों के साथ कोई वैर भाव नही रखती थी।मन्दोदरी के पतिव्रत धर्म की, तपोबल,और तेजस्विता की अनेक कथाएं प्राप्त होती है।पातिव्रत्य धर्म का पालन करने वाली स्त्री का चित निर्मल हो जाता है तथा वह निःश्रेयस की प्राप्ति अत्यंत सुगमता से प्राप्त कर लेती है। रावण वध के पश्चात विभिषण के लंकेश्वर होने पर भी मन्दोदरी ही राजमहिषी बनी रही।

आधार ग्रंथ

1. वाल्मीकीय रामायण, विक्रम संवत 2067,गीताप्रेस गोरखपुर
2. महारानी मन्दोदरी काव्य कथा, प्रतिभा अखिलेश, वर्ष 2016
3. पौराणिक महिलायें, रमेश तिवारी,वर्ष 2015
4. नारी अंक, गीताप्रेस गोरखपुर, वर्ष 1948 मानस में नारी,राजेंद्र अरुण, वर्ष 2014
5. अहल्या, मथुरादत्त पाण्डेय, वर्ष 2014
6. अहल्या, नरेंद्र कोहली, वर्ष 2019
7. महामोह अहल्या की जीवन कथा प्रतिभा राय, वर्ष 2014 अक्षर वार्ता, अंक 17,जनवरी 2021 ,अहल्या का चरित्र चित्रण-डाक्टर दीपशिखा
8. आर्ष-काव्यों एवं पुराणों में वर्णित पंच कन्यायें, डॉक्टर मंजु कुमारी वर्ष 2012

केवट के राम

ISBN: 978-1-960627-06-3

सरिता श्रीवास्तव
(saritasrivastava5072@gmail.com)

तुलसीदास भक्ति युगीन कवियों में राममयी शाखा के महान संत कवि थे,उनके समय में परिस्थितियां प्रतिकूल थीं भारत का सांस्कृतिक सूर्य लगभग अस्त हो चला था, मुगल शासकों के अत्याचारों से चारों तरफ त्राहि त्राहि मची थी ऐसे समय में तुलसी दास ने रामचरित मानस रच कर राम के जीवन के विविध पहलुओ प्रेम, सद्भावना, पारिवारिक संबंध, दया भाव, समभाव आदि को जनमानस के समक्ष रखा। बाबा तुलसी मात्र कवि ही नहीं वे मानवीय संस्कृति के संवर्धक थे एक समाज सुधारक थे। तुलसी दास जी ने मानस की नींव-.कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कर हित होई।। के आधार पर रखी अर्थात कीर्ति, यश, धन वही अच्छा है जो मां गंगा के समान सबका हित करे। तुलसी दास जी ने राम चरित के माध्यम से मनुष्यता को उच्चतम शिखर तक पहुंचाया। गोस्वामी तुलसी दास को भारतीय संस्कृति का उन्नायक स्वीकार करते हुए श्रीधर पराड़कर जी ने कहा है कि– "यही कारण है कि करीब 500 से अधिक वर्षों के बाद भी लोग तुलसीदास को क्यों पढ़ रहे क्योंकि तुलसीदास ने शाश्वत मूल्यों को अभिव्यक्त किया है।" राम चरित मानस आज भी अध्ययन मनन में उतना ही प्रासंगिक है जितना पहले था

1. विस्तार

भगवान राम राज पद पर प्रतिष्ठित होने वाले हैं, अचानक ही उनको राज्याभिषेक छोड़ कर माता पिता की आज्ञा से वन जाना पड़ता है वे अपनी पत्नी माता सीता व छोटे भाई लक्ष्मण के साथ अयोध्या से वन की ओर प्रस्थान करते है। इधर अयोध्या में राम के राज्याभिषेक न होने और 14 वर्षों के लिए वनवास जाने से परिवार व प्रजाजन के समक्ष दुख, करुणा और अवसाद का वातावरण है सब सोच रहे क्या किया जाए। ऐसे कारुणिक परिवेश से सबको उबारने के लिए बाबा तुलसी बड़ी चातुरिक निपुणता से केवट के प्रसंग को उद्भासित कर सभी को भक्ति और प्रेम-भाव से भाव विभोर कर देते हैं। राम मर्यादा के रक्षक,प्रजापालक हैं वे रथ से उतर कर नंगे पांव गंगा के किनारे आते है और केवट से गंगा पार उतारने के लिए कहते हैं, गंगा जी प्रभु के पदनख देख कर पहचान लेती हैं कि मेरे प्रभु नर लीला कर रहे हैं –

तुलसी जेहि पद पंकज तें प्रगटी। तटिनी जो हरै अघ गाढ़े।।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे। कहं मांगत नाव करारे ह्वै ठाढे।।

प्रभु राम गंगा किनारे खड़े हो शीघ्रता से गंगा पार करना चाहते हैं।

अब प्रश्न है कि प्रभु को वन जाने की इतनी शीघ्रता क्यों हैं। इसका पहला कारण है कि उनको अयोध्यावासियों की चिंता है कि वे फिर से पीछे न आ जाएं।

दूसरा कारण है कि राम जिस कारण से वनवास जा रहे हैं उसके लिए उनके पास मात्र 14 वर्ष का ही समय है जिसमें उनको भयाक्रांत, निर्बल निरीह जन मानस को राक्षसों का संहार कर भय मुक्त कराना था और शबरी आदि बहुत से ऋषि मुनि राम दरस की लालसा में जीवित थे ,उनको भी मोक्ष प्रदान करना था। माता सीता भी राम की संगिनी के रूप में उनके साथ थीं जब वे रावण की अशोक वाटिका में कहती हैं।

दीन दयालु बिरदु संभारी। हरहुं नाथ मम संकट भारी।।

तो वे स्वयं रावण से भयभीत नहीं हैं बल्कि वे वहां के लोगों के दुख से दुखी हैं उनके कष्ट मिटाना चाह रही हैं जो रावण के आतंक से भयभीत हैं। मां भवानी सीता माता चाहतीं तो रावण को एक तिनके के समान भस्म की सकती थीं।

अन्य सबसे बड़ा कारण था कि यदि भगवान राम अयोध्या आने में 14 वर्ष से एक दिन भी अधिक समय लगाते तो उनके प्रिय भरत प्राण त्याग देते।

प्रभु राम नदी के किनारे खड़े हो कर नदी पार करने हेतु केवट को आवाज लगाते हैं, किंतु केवट नाव में बैठाने के लिए साफ मना कर देता है –

मांगी नाव न केवट आना। कहहि तुम्हार मरमु मैं जाना।।

यह स्थिति केवल राम राज्य में ही संभव है कि एक साधारण व्यक्ति भी अपने राजा के समक्ष अपने मन की बात निसंकोच और निर्भय होकर कह सकता है। केवट चतुर है वाकपटु है और सबसे विशेष बात है कि वह राम भक्त है। केवट राम के चरण की सेवा कर अपने जन्म जन्म की इच्छा पूरी

करना चाहता है, केवट की जन्म जन्म की इच्छा क्या थी! एक कथा प्रचलित है- पुराणों के अनुसार गंगा पार कराने वाले केवट अपने पिछले जन्म में कछुआ थे, और श्री हरि के अनन्य भक्त थे। मोक्ष की लालसा लिए वे क्षीरसागर में प्रभु के चरण स्पर्श करने की कई बार कोशिश की किंतु असफल रहे शेषनाग और श्री लक्ष्मी जी ने उनको सेवा नहीं करने दी ,उन्होंने कई जन्मों तक तपस्या की। इस दौरान उन्होंने प्रभु को पहचानने की दिव्य दृष्टि प्राप्त कर ली त्रेता युग में उन्हीं कछुए ने केवट के रूप में जन्म लिया। उन्होंने गंगा पार करने के खड़े प्रभु राम को पहचान लिया –

मांगी नाव न केवट आना,कहई तुम्हार मरमु मैं जाना
चरन कमल रज कहुं सब कहई मानुष करनि मूरि कछु अहई।।

केवट नाव नहीं लाता है कहता है की आपकी चरण रज में कोई औषधि है। आप पहले पांव धुलवाओ फिर ही नाव में चढ़ाऊंगा, वो शेषनाग रूपी लक्ष्मण को भी पहचान लेता है मन में सोचता है कि पहले इनकी बारी थी आज हमारी! केवट ठिठोली करता है –

बरु तीर मारहुं लाखन पै, जब लगि न पांय पखारिहौ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं।।

यदि लखन मुझे तीर भी मार दें क्योंकि वे बहुत क्रोधी स्वभाव के हैं, तब भी मैं बिना चरण कमल धोए पार नहीं उतारूंगा। केवट राम जी के चरण धोने के पीछे और भी दलीलें देता है, वह कहता है अगर मेरी नाव ऋषि पत्नी बन गई तब मैं क्या करूंगा। कवितावली में बाबा तुलसी ने सुंदर वर्णन किया है –

पात भरी सहरी,सकल सुत बारे बारे। केवट की जात कछु वेद न पढ़ाईहौं।
सब परिवारु मेरो याहि लागि राजाजू। हौं दीन वित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं।
गौतम की धरनी ज्यों तरनी तरैगी मेरी। प्रभु सौ निषाद ह्वै कछु बादु न बढ़ाइहौं।।
तुलसी के ईस राम रावरे सो सांची कहौ। बिना पग धोए नाथ न नाव चढ़ाइहौं।।

मेरे घर में पत्तल पर मछली के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, बच्चे सब छोटे है, नीच जाति का हूं उन्हें वेद तो पढ़ाऊंगा नहीं ,मेरा पूरा परिवार इसी पर निर्भर है दरिद्र हूं दूसरी नहीं बनवा सकता , अहिल्या की तरह मेरी नाव भी तर गई तो क्या करूंगा मैं विवाद बढ़ाना नहीं चाहता किंतु बिना पैरों धोए नाव में नहीं बिठाऊंगा। केवट की बात सुनकर,भक्त का आग्रह देख कर प्रभु मंद मंद मुस्करा रहे हैं –

सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे। बिहंसे करुणा ऐन चितई जानकी लखन तन

भक्त के भोलेपन पर भगवान रीझ गए,लक्ष्मण और जानकी को देख कर हंस पड़ते हैं और केवट को चरण धोने की आज्ञा दे देते हैं। प्रभु प्रेम ओर भक्ति के आधीन हैं गोस्वामी जी केवट प्रसंग द्वारा समझानहे है कि जो भक्त अपने आराध्य को पहचान लेता है , वह केवट के समान भवसागर पार उतर जाता है, जन्म - मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है –

कृपा सिंधु बोले मुसकाई सोई करू जेहि तव नाव न जाई

प्रभु की आज्ञा पाकर केवट प्रभु राम के चरण पखारता है और परिवार सहित चरणामृत पान करता है, उसकी जन्म-जन्मांतर की साध पूरी होती है। इस दृश्य से कृष्ण सुदामा का प्रसंग याद आ गया, जब भगवान प्रेम में आकर भक्त के पैर धोते है तथा चरणामृत पान करते हैं। महान कवि नरोत्तमदास जी ने लिखा है –

देखि सुदामा की दीन दसा करुणा करके करुणानिधि रोए।
पानी परात को हाथ छूयो नहि नैनन के जल सो पग धोए।।

केवट प्रभु को गंगा पार कराता है , जिन प्रभु की एक भृकुटी के टेढ़ी हो जाने से पूरी सृष्टि का विलय हो जाता है वही भगवान भक्त के बस में हैं।

जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहि नर भव सिंधु अपारा।।

गंगा पार उतर कर माता सीता जब प्रभु को उतराई न दे पाने के कारण अनमना देखती हैं तो अपनी मुद्रिका प्रभु को देती हैं –

पिय हिय की सिय जाननिहारी मन मुंदरी मुनि मुदित उतारी

राम जी केवट को अंगूठी उतराई के रूप में देते हैं, किंतु केवट नहीं लेता है कहता है आज मुझे जो सम्मान मिला उसके बाद मुझे कुछ नहीं चाहिए, भक्त को इससे संतोष नहीं है वह कहता है –

फिरती बार मोहि जो देबा। सोई प्रसाद मै सिर धर लेबा।।

भक्त भगवान से वचन ले लेता है कि वापस आकर अपना आशीर्वाद अवश्य दें। इसका दूसरा आशय यह है

केवट कहता है कि यह जीवन समाप्त कर जब मैं आपके पास आऊं तो भवसागर से पार कर मोक्ष प्रदान करना।

2. निष्कर्ष

केवट के राम प्रसंग में संत तुलसीदास जी ने जीवन के मूल्यों का गूढ़ चित्रण किया है, परिवार, समाज ऊंच नीच का भेद भाव मिटा कर राम चरित्र के

मध्यम से हमारे समक्ष रखा। पति पत्नी का आपसी सौहार्दपूर्ण व्यवहार कैसा होना चाहिए बताया है, कैसे मां सीता राम के बिना कहे उनके मन की बात भांप लेती हैं अंत में जीवन मूल्यों के इसी महत्व को स्वीकार करते हुए डॉ. राम शरण गौड़ ने लिखा है - आज जरूरी है कि हम संत गोस्वामी तुलसीदास जी को फिर से याद करें। हमारे घर में जो रामचरित मानस पर जो धूल जमी है ,उसे साफ करने की आवश्यकता है। केवल पाठ करने से कोई लाभ होने वाला नहीं है, हमें राम के जीवन मूल्यों से सीख लेनी है।

3. संदर्भ

1. श्री श्रीधर पराड़कर
2. राम चरित मानस
3. कवितावली
4. कवि नरोत्तम दास
5. डॉ राम शरण गौड़

रामायण की महत्वपूर्ण शिक्षाएं

ISBN: 978-1-960627-06-3

उषा श्रीवास्तव
आचार्या इंस्टिट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज बेंगलोर-कर्नाटक
(drusha236@gmail.com)

रामायण पारिवारिक और सामाजिक बंधनों के महत्व को रेखांकित करता है। रामायण की शिक्षाएं मानव जीवन के हर मोड़ एवं परिस्थिति लिए महत्वपूर्ण हैं। माता-पिता की भक्ति, रिश्तों का सम्मान ,दया- प्रेम,अहंकार रहित जीवन, विनम्रता ,मर्यादा एवं अनुशासन आदि कई परिवार,समाज में सफल एवं उपयोगी जीवन जीने की शिक्षाएं हमें भगवान राम एवं अन्य पत्रों के माध्यम से जीने का सही तरीका बताती हैं एवं सफल मानव बनने, जीवन आदर्श अपनाकर जीवन सुखमय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

1. प्रस्तावना

रामायण, जो कि एक प्राचीन भारतीय महाकाव्य है, हमें जीवन जीने के लिए कई महत्वपूर्ण शिक्षाएँ देता है। यह महाकाव्य न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि यह हमें जीवन के विभिन्न पहलुओं पर शिक्षित करता है, जैसे कि नैतिकता, मानवता, और आध्यात्मिकता। रामायण की कथा को आदर्श और शिक्षाओं का खजाना है कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

इस महाकाव्य के मुख्य पात्र, भगवान राम के जीवन से हम सीखते हैं कि जीवन में कठिनाइयों का सामना करने के लिए हमें धैर्य और साहस की आवश्यकता होती है। जीवन में हमें अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए, चाहे वह कितने भी कठिन क्यों न हों।रामायण की शिक्षाओं से हर काम में सफलता ,मानसिक तनाव से बचेंगे और परेशानियों से भी दूर रहेंगे।रामायण केवल एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं है बल्कि यह मनुष्य को जीवन जीने की सीख देता है। रामायण में जहां भगवान राम को पुरूषोत्तम कहा गया है तो वही मां सीता की पवित्रता दर्शायी गई है। लक्ष्मण और भरत दोनों ही का अपने भाई के प्रति अथाह प्रेम दिखाया गया है। रामायण के हर एक चरित्र से कुछ न कुछ शिक्षा अवश्य प्राप्त होती है। रामायण जीवन जीने की संपूर्ण कलाओं को बुद्धि विवेक को जागृत करने का कल्याणकारी ग्रँथ है जिसमें सारे जीवन का सार छुपा हुआ है रामायण हमें धर्म के रास्ते पर चलना सिखलाती है।जीवन के हर मोड़ पर मार्गदर्शन करती है यहाँ तक कि श्री राम नाम जप ही भवसागर पर करने के लिए काफी है।

कलयुग केवल नाम आधारा,जपत निरन्तर नर होई है पारा।

2. विस्तार

माता-पिता की भक्ति: रामायण में भगवान राम ने अपनी सौतेली मां की इच्छा का सम्मान कर बिना किसी विरोध के अपने पिता दशरथ की आज्ञा मानकर वनवास काटा था। भगवान राम अपने मूल्यों के प्रति सच्चे रहे। अपने से बड़ों का सम्मान एवं माता-पिता की आज्ञा का पालन एवं उन्हें भगवान के समान ही पूजने का संदेश दिया। हम सीख सकते हैं कि सदैव धर्म,कर्तव्य ,न्याय आदि अपने नैतिक सिद्धांतों और कर्तव्यों का पालन करें।कठिन परिस्थितियों में भी सत्य बोलें एवं सभी जीवों के प्रति दया और करुणा दिखाएं।

भगवान राम का अपने पिता दशरथ के साथ रिश्ता उस गहन सम्मान और उनकी भक्ति का प्रमाण है जो हर परिवार की विशेषता होनी चाहिए। रामायण पारिवारिक और सामाजिक बंधनों के महत्व को रेखांकित करता है. सीता का राम के प्रति दृढ़ प्रेम और लक्ष्मण की अपने भाई के प्रति भक्ति रिश्तों का सम्मान करने से प्राप्त ताकत को उजागर करता है।

अहंकार रहित जीवन : रामायण की कथा हमें जीवन में कभी अहंकार नहीं करने की शिक्षा देती है। राजा जनक की शर्त के अनुसार सीता स्वयंवर में शिवजी का धनुष तोड़ने वाले से सीता का विवाह किया जाना था। कई राजाओं और वीरों ने प्रयास किया, लेकिन किसी से भी धनुष हिला तक नहीं। तब ऋषि विश्वामित्र आज्ञा पाकर श्रीराम ने सबसे पहले अपने गुरु को नमन किया। फिर शिवजी का ध्यान करके धनुष को प्रणाम किया। धनुष को उठाया और उसे किसी खिलौने की तरह तोड़ दिया।

इस प्रसंग को जीवन प्रबंधन की दृष्टि से देखने की जरूरत है। आखिर धनुष ही क्यों उठाया और तोड़ा गया? धनुष ही विवाह के पहले की शर्त क्यों थी? वास्तव में इसके पीछे एक खास संकेत छिपा है। अगर दार्शनिक रूप से समझें तो धनुष अहंकार का प्रतीक है। अहंकार को तोड़कर ही वैवाहिक जीवन में में प्रवेश करना चाहिए। इसके लिए विवाह करने वाले में इतनी परिपक्वता और समझ होना जरूरी है। अगर आज भी शादी से पहले ही वर-वधु अपने अहंकार पर काबू पा लेते हैं तो उनका वैवाहिक जीवन हमेशा सुखी बना रहेगा, दोनों के बीच कभी भी झगड़े की स्थिति नहीं बनेगी और प्रेम बना रहेगा।

रिश्ते और विश्वास का महत्व;- राम ने अपने गुरु वशिष्ठ की शिक्षाओं पर विश्वास किया और उनकी आज्ञा का पालन किया। श्रीराम ने सब कुछ जानते हुए भी माता कैकई के वचन को निभाया। भाइयों के प्रेम में लालच, गुस्से या विश्वासघात के लिए जगह ही नहीं थी। लक्ष्मण ने 14 साल तक भाई राम के साथ वनवास में रहे वहीं दूसरे भाई भरत ने राजगद्दी के अवसर को ठुकरा दिया। भाइयों के प्यार की ये सीख हमें लालच और सांसारिक सुखों के बजाय रिश्तों को महत्व देने के लिए प्रेरित करती है।

परिवार मूल्य:- हम अपने अपने परिवार के सदस्यों का सम्मान और देखभाल करें, जैसे राम ने अपने माता-पिता और भाइयों के प्रति समर्पण दिखाया। अपने विवाह में परस्पर सम्मान और समझ को बढ़ावा दें, जैसे राम और सीता के बीच का संबंध जिसमें इतने कष्टों के बीच भी आपसी विश्वास को कम नहीं होने दिया । पति पत्नी का एक दूसरे के प्रति समर्पण एवं प्रेम भी हम रामायण से सीख सकते हैं ।

मित्रता:- सुग्रीव एवं विभीषण से मित्रता का पालन किया और उन्हे न्याय एवं राज्य दिलवाकर मित्रता की मिसाल कायम की । रामायण की कथा बताती है कि विश्वास से असंभव काम भी किया जा सकता है एवं रिश्ता धन-दौलत से ऊपर है।रामायण की कथा सिखाती है -माफ़ करना सीखें, बदला लेना नहीं। राम एवं भरत का अटूट प्रेम एवं माँ की गलती जानकर भारत का राजपाट त्याग एवं श्री राम के लौटने पर राम का राजतिलक इसका सुंदर उदाहरण है।

विविधता में एकता;-विविधता में एकता रामायण की बड़ी सीख है । इस महाकाव्य में जब श्रीराम लंका पर चढ़ाई करने जाते हैं तो उनकी सेना में मनुष्यों से लेकर बंदर और अन्य जानवर भी शामिल थे। जिन्होंने श्री राम को विजयी बनाने में अपूर्व सहयोग दिया। इसके अतिरिक्त राजा दशरथ के चारों बेटों का चरित्र अलग होने के बावजूद उनमें एकजुटता रहती है यह हर परिवार के लिए दुःख के समय से बाहर निकलने की सीख है।

मर्यादा और अनुशासन:-श्रीराम का व्यक्तित्व मर्यादा और अनुशासनपूर्ण था। उन्होने मर्यादओं में रहकर अपने जीवन की हर जिम्मेदारी को अच्छे से पूरा किया। उनके जीवन से सीख लेकर हम एक अच्छे इंसान बन सकते हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम जी जिन्होंने त्रेता युग में दशरथ जी के यहां जन्म लिया जो कि विष्णु जी के अवतारी रूप थे जब उन्होंने अयोध्या में अपना जीवन जिया तो उन्होंने एक मानव और देवता दोनों के जीवन का परस्पर तालमेल बिठाते हुए एक मर्यादित जीवन जिया अपनी शक्तियों का दुरुपयोग नहीं किया तथा गुरु की शरण भी ग्रहण करी जिसका हमारे वेदों और पुराणों में वर्णन है तथा गीता जी भी कहती है मनुष्य जीवन का परम कर्तव्य तो पूर्ण गुरु की शरण में जाकर मोक्ष प्राप्ति करना ही है । इसी शिक्षा को आम जनमानस समाज में बनाए रखने के लिए श्री रामचंद्र जी ने यह भूमिका भी निभाई और पिताजी के द्वारा वनवास की आज्ञा देने पर उसको सहर्ष स्वीकार किया और उन कठिन परिस्थितियों में भी एक साधारण मनुष्य जैसा कर्तव्य कर्म किया ।

दया और प्रेम:-श्रीराम शांत स्वभाव के थे। उनमें हर इंसान के लिए दया का भाव था। उन्होंने प्रेम और दया के साथ एक पुत्र, पति, भाई और एक राजा की जिम्मेदारियों को भी अच्छे से निभाया। श्रीराम का यह स्वभाव आपसी प्रेम और सम्मान जैसे मानवीय गुणों को अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इन गुणों को अपनाकर हम खुशहाल और संतुष्ट जीवन जी सकते हैं। इसी की मदद से हम समाज की बुराइयों पर जीत हासिल कर सकते हैं।

सबसे समान व्यवहार;-भगवान राम का विनम्र आचरण और सभी के प्रति सम्मान का भाव हमको सीख देता है। हमें पद, उम्र, लिंग आदि के भेदभावों के बावजूद सबसे समान व्यवहार करना चाहिए। पशुओं के प्रति प्यार और दया भी हमारे मन में होनी चाहिए। सच्चा मानव वही है जो सबसे समानता से पेश आता है।

जीवन की शिक्षाएँ: **धैर्य** -चुनौतियों का सामना साहस और धैर्य से करें, जैसे राम ने वनवास और रावण के साथ युद्ध में किया। **आत्म-नियंत्रण-** अपने भावनाओं पर नियंत्रण रखें और आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करें, जैसे राम ने कठिन परिस्थितियों में भी शांति बनाए रखी। **कृतज्ञता:** जो आशीर्वाद और समर्थन आप प्राप्त करते हैं, उनके लिए आभारी रहें, जैसे राम ने हनुमान और वानरों के प्रति कृतज्ञता दिखाई। **करुणा एवं सम्मान ;** श्री राम ने रावण को मारने से पूर्व भी समझाने की कोशिश की एवं युद्ध के बाद मरणासन्न रावण के पास लक्ष्मण को उनसे शिक्षा लेने भेजकर उनकी विद्वता के प्रति सम्मान दर्शाया ।

सामाजिक जिम्मेदारियाँ: अपने समुदाय और पर्यावरण के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करें। उचित अधिकार के प्रति सम्मान और आज्ञाकारिता दिखाएं, जैसे राम ने अपने पिता और देवताओं के प्रति सम्मान दिखाया।कमजोरों की रक्षा के लिए खड़े हों, जैसे राम ने सदैव कमजोरों की रक्षा की। अपने समुदाय और पर्यावरण के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करें। उचित अधिकार के प्रति सम्मान और आज्ञाकारिता दिखाएं, जैसे राम ने अपने पिता और देवताओं के प्रति सम्मान दिखाया।

बुराई पर अच्छाई की जीत: जीत में समय अवश्य लगता है एवं कई कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता है पर जीत अंततः अच्छाई की ही होती है । रावण से माँ सीता को कठिन परिस्थितियों में वानरों की सहायता से युद्ध कर पुनः पान एवं रावण का अंत करना इस बात का सटीक प्रमाण है । इसी तरह रामायण में अच्छी संगत का महत्व बताया गया है । रामायण से हमें साहस और बुद्धि से हर कठिनाइयों का सामना करने की प्रेरणा मिलती है।: रामायण से हमें विपरीत परिस्थितियों में धीरज बनाए रखने की सीख मिलती है।रामायण से हमें यह सीख मिलती है कि हर काम को सच्चे और अच्छे मन से करना चाहिए।

रामायण- एक जीवन जीने का आदर्श;- रामायण हमें आध्यात्मिक ज्ञान की भी शिक्षा देता है। जीवन में हमें अपने आप को पहचानने एवं अपने जीवन के उद्देश्य को समझने की आवश्यकता होती है। यह हमें सिखाता है कि जीवन में हमें स्वयं को विकसित करने के लिए प्रयास करना चाहिए। उच्च शक्ति में और ब्रह्मांड की योजना में अटूट विश्वास रखें।अपनी ताकत, कमजोरियों और उद्देश्य को पहचानें, जैसे राम ने अपने आप को दिव्य अवतार के रूप में पहचाना।विश्व की आसक्तियों और इच्छाओं से वैराग्य रखें, जैसे राम ने राजकीय जीवन से वैराग्य रखा एवं राजपाट छोड़कर वन में प्रस्थान किया ।

3. निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में, रामायण हमें जीवन जीने के लिए कई महत्वपूर्ण व्यक्तिगत ,सामाजिक एवं आध्यात्मिक शिक्षाएँ देता है। यह हमें सिखाता है कि जीवन में हमें धैर्य, साहस, और जिम्मेदारी की आवश्यकता होती है। जीवन में हमें अपने रिश्तों स्वयं एवं समाज के प्रति जिम्मेदार होना चाहिए। अंत में, भगवान राम से हम सीखते हैं कि जीवन में हमें अपने समाज की सेवा करनी चाहिए और जिम्मेदार बनने के लिए समय निकालकर प्रयास करना चाहिए।

4. संदर्भ

1. अंतरजाल, यूट्यूब,विकिपीडिया
2. रामायण से जीवन सफल बनाने के गुर - अमर उजाला -
3. रामायण की शिक्षाएं -शशिकला व्यास

रामचरितमानस में शासन में लोकतंत्र

ISBN: 978-1-960627-06-3

अम्बे कुमारी
मगध विश्विद्यालय, बोधगया, बिहार, भारत
(kumariambe@gmail.com)

सम्पूर्ण विश्व में मनुष्य की सदा से यह चाहत रही है कि वह सुख - शांति का जीवन व्यतीत करे इस कारण उसने एक सुव्यवस्थित शासन - तंत्र की स्थापना की जो अपने नागरिकों को सुख - शांति का जीवन और सुरक्षा प्रदान कर सके। एक सच्चे शासन की पहचान उसके द्वारा अभिव्यक्त सुख और शांति से होती है। वहाँ के जनता के विकास पर एक अच्छे शासन की पहचान होती है। समय - समय पर अनेक शासकों ने एक सुशासन की व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया परन्तु हर युग में लोगों का आदर्श रामराज्य हीं रहा। दशरथ या राम के शासनतंत्र में भी लोकमत की उपेक्षा नहीं होती थी और इसी कारण उनका शासनतंत्र सफल सिद्ध हुआ। युगों - युगों से सारे शासक अपने शासन को ' रामराज्य ' जैसा हीं बनाने का प्रयत्न करते हैं और यह विश्व में वंदनीय एवं स्पृहणीय है।

1. प्रस्तावना

रामचरितमानस मानवता का मंगल करनेवाला महान काव्य है। इसके नायक राम सर्वरूपों में आदर्श हैं। राम का शासन एक आदर्श स्थापित करता है। इसमें मूलतः राजतन्त्र है परन्तु वह लोकमत से संचालित होता है। इसमें लोकमत की कहीं भी उपेक्षा नहीं की जाती। मानस में राम का राजतन्त्र कहीं भी निरंकुश नहीं है। वह लोकमत से अलग होकर कोई भी निर्णय नहीं लेता। आज इक्कीसवीं सदी में भी शासन कई जगहों पर स्वयं को असहाय महसूस करता है और ऐसा इसलिए होता है कि आज के शासन सूत्र में लोकतंत्र होते हुए भी लोकमत की उपेक्षा की जाती है। आज का लोकतंत्र भीड़तंत्र अधिक है जो मूलतः लोकतंत्र के स्वस्थ मूल्यों से सर्वथा अनजान है। ऐसे समय में मानस का राजतन्त्र एक स्वस्थ प्रेरणा देने में पूर्णतया सक्षम है। रामचरितमानस से प्रभावित होकर हीं महात्मा गाँधी ने ' रामराज्य ' की कल्पना की थी। आज भी जब किसी आदर्श राज्य की बात की जाती है तो कहा जाता है वहाँ ' रामराज्य ' है। राम का राज्य अर्थात सुख - शांति का राज्य। ऐसे अद्भुत राज्य की परिकल्पना इस पृथ्वी पर सभी चाहते हैं और उसे अपना आदर्श मानकर स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं।

2. विस्तार

मानस में लोकतंत्र शासनतंत्र में सरस्वती के अदृश्य स्रोत की तरह अविरल प्रवाहित है। ऊपर से देखने पर तो यह पूर्णतः राजतंत्रात्मक प्रतीत होता है। इसमें राजा वंशानुगत होता था। राम की अयोध्याकाण्ड की उक्ति से यह सपष्ट है ---

" विमल वंश यह अनुचित एकु
बंधु बिहाई बडेहिं अभिषेकू।"[1]

परन्तु तुलसीदास द्वारा मानस में प्रतिपादित राजतन्त्र निरंकुशता का विरोधी है। इसलिए राजा दशरथ राम को राजगद्दी देने की अपनी प्रबल इच्छा एवं अधिकार रखते हुए भी राजतन्त्र को निरंकुशता से बचाने के लिए लोकमत की स्वीकृति लेते हैं -

" **जो पांचै मत लागै नीका । करहु हरषि हिय रामहिं टीका ।।** "[2]

चित्रकूट में राम भरत को राजधर्म का तत्व समझाते हुए कहते हैं --

" मुखिया मुख सों चाहिए खान -पान को एक ।
पालें पोसैं सकल अंग तुलसी सहित विवेक ।।"[3]

राम का यह उपदेश गुरुमंत्र है जिसमें मुखिया या राजा की सार्थकता या कर्तव्य विवेकपूर्ण समाज या राष्ट्र के सभी अंगों का पालन -पोषण करते हुए उसका सम्यक सर्वांगीण विकास करने में है।

चित्रकूट में भरत की ओर से वशिष्ठ जी जब सभा में प्रस्ताव करने उठते हैं तब राम से साधुमत , नृपनीति तथा वेदनिष्कर्ष मत के साथ लोकमत पर भी विचार करने को कहते हैं --

" भरत विनय सादर सुनिय करब विचार बहोरि ।
करब साधुमत ,लोकमत नृप नय निगम निचोरि ।।"[4]

तुलसी के लोकतंत्र में समाज के पिछड़े एवं दलित वर्ग को समुचित महत्व मिला है। राम ने वन में निषाद , कोल - भील , किरात आदि अछूत तथा

गीध , वानर , रीछ आदि जंगली जातियों को भी अपनाया है , मित्र बनाया है। वह आज के हमारे प्रजातंत्रीय हरिजनोद्धार से किसी भी प्रकार कम नहीं है।

वन की राह में मिला अछूत निषादराज राम का ऐसा सखा बन गया कि लंका विजय के पश्चात अयोध्या लौटकर राम को अपने सखा से कहना पड़ा -

" तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता,

सदा रहेउ पुर आवत जाता । "5

कोल - भील , किरात आदि जनजाति के लोगों को करुणामय श्रीराम ने ऐसा अपनाया जैसे कोई अपने परिवार के लोगों को अपनाता है। पिता के समान उनके वचनों को सुना। इसी कारण कोल - किरातों को राम के दर्शन से ऐसा हर्षोल्लास हुआ मानों उन्हें कोई नवनिधि मिल गई हो-

" यह सुधि कोल -किरातन्ह पाई। हरषे जनु नवनिधि घर आई।

कंदमूल फल भरि - भरि दोना । चले रंक जनु लूटन सोना ।।

राम स्नेह मगन सब जाने। कहि प्रिय वचन सकल सनमाने।"6

यदि हमारे देश के मंत्री तथा शासकगण देश के गरीबों तथा हरिजनों को राम के समान प्यार किए होते , बिना सेवा के उनपर राम की तरह द्रवित हुए होते तो हमारे देश की गरीबी , भुखमरी , बेकारी , विषमता कभी की मिट गई होती। सेवकों के विषय में राम का घोषणापत्र है –-

पुनि - पुनि सत्य कहौं तोहि पाहीं

मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं ।" 7

मानस में राजतन्त्र द्वारा प्रतिष्ठित लोकतंत्र में तुलसी ने व्यक्ति की अपेक्षा समाज को अधिक महत्त्व दिया है। सामाजिक हित के लिए वैयक्तिक हितों के बलिदान की दुहाई देते हुए तुलसी ने घोषणा की है --

परहित लागि तजहिं जे देहीं। संतत संत प्रसंसहिं तेही ।। '8

दूसरे के हित से बड़ा कोई धर्म नहीं और दूसरों को दुःख पहुंचाने से बड़ा कोई पाप नहीं ----

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई। " 9

तुलसी राजा के अस्तित्व की सार्थकता प्रजाहित में मानते हैं। इसीलिए वे प्रजा को प्राण तथा राजा को शरीर मानते हैं। तुलसी के राजतन्त्र का आदर्श है --

सोचिअ नृपति जो नीति न जाना । जेहिं न प्रजा प्रिय प्राण समाना ।।10

राजा का सर्वोच्च आदर्श स्थापित करते हुए वे कहते हैं ---

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृप अवसि नरक अधिकारी ।। "11

रामराज्य में सब परस्पर प्रीति करते हैं तथा वहाँ कोई विषमता नहीं है--

बैर न कर काहू सन कोई । राम प्रताप विषमता खोई ।। 12

सामाजिक , आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में सबको समान अवसर प्रदान करने का न्याय दिलाना शासकों का कर्तव्य है। उत्तरकाण्ड के रामराज्य में इसका विवेचन है --

" नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना

नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना । " 13

राम के राज्य में कोई अपराध नहीं होता इसलिए कोई दण्डित नहीं होता। दंड केवल संन्यासियों के हाथ में रहता है। भेद नाचनेवालों के नृत्य समाज में है और ' जीतो ' शब्द केवल मन को जीतने के लिए हीं सुनाई देता है --

दण्ड जतिन कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज

जीतहु मनसिज सुनिय अस रामचंद्र के राज ।" 14

शासन तंत्र का यह आध्यात्मिकरण तुलसी की मौलिक देन है। रामराज्य का यह आध्यात्मिकरण राजतन्त्र में सुंदर लोकतंत्र के सामंजस्य के कारण हीं संभव हो सका है। जहाँ केवल भौतिक उन्नति हीं नहीं वरन आध्यात्मिक उन्नति का भी लक्ष्य प्राप्त करना राजा और प्रजा दोनों की दृष्टि में एक उच्च लक्ष्य है तथा सब अपने कर्तव्य पथ पर अडिग हैं । इसी कारण रामराज्य दैहिक , दैविक तथा भौतिक तापों से मुक्त है ---

" दैहिक, दैविक, भौतिक तापा। रामराज्य काहु नहिं व्यापा । "

सब नर करहिं परस्पर प्रीति। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति ।। "15

रामराज्य के सुंदर शासनतंत्र में सभी अपने - अपने धर्म में लोककल्याण की दृष्टि से निरत थे। आजकल की तरह वे कर्तव्य छोड़कर अधिकारों के पीछे पागल नहीं थे। प्रत्येक व्यक्ति के कार्य परोपकार तथा समूचे समाज के हित के लिए होते थे। इसीलिए वैयक्तिक सम्पत्ति का कोई महत्त्व नहीं था।

प्रजा नैतिक एवं चारित्रिक दृष्टि से समुन्नत थी इसीलिए राष्ट्र भी चहुँ दिशि विकास के पथ पर अग्रसर था।

3. निष्कर्ष

हम कह सकते हैं कि मानसकार ने अपने सम्पूर्ण रूप में एक समुन्नत शासनतंत्र की परिकल्पना की है जो राजतन्त्र द्वारा संचालित होकर भी लोकतंत्र से आवेष्टित है तथा जिससे विश्व का मंगल होता है तथा ' वसुधैव कुटुम्बकम् ' की स्थापना होती है। रामराज्य एक ऐसी हीं शासन व्यवस्था है जो सर्वमंगल तथा कर्तव्यपरायणता पर आधारित होने के कारण आज भी अनुकरणीय है। सभी विचारकों एवं स्वप्नद्रष्टाओं के मन में ' रामराज्य ' की हीं कल्पना रहती है। एक तरह से रामराज्य के द्वारा मानसकार ने पृथ्वी पर आध्यात्मिक शासन के अवतरित होने की कल्पना की है , जो मानवीय होते हुए भी दैवीय है। जो राजतंत्रात्मक होते हुए भी लोकतंत्रात्मक है तथा विश्व मंगल से ओत -प्रोत है।

4. सन्दर्भ - ग्रन्थ

1. तुलसीदास गोस्वामी , (टीकाकार -- हनुमान प्रसाद पोद्दार), प्रकाशन --- गीताप्रेस गोरखपुर , संस्करण -- संवत 2080, पृ० 352
2. वहीं , पृ० 347
3. वहीं , पृ० 608
4. वहीं , पृ० 559
5. वहीं , पृ० 930
6. वहीं , पृ० 456
7. वहीं , पृ० 988
8. वहीं , पृ० 98
9. वहीं , पृ०948
10. वहीं, पृ० 486
11. वहीं, पृ० 402
12. वहीं , पृ० 930
13. वहीं , पृ० 931
14. वहीं , पृ० 932
15. वहीं , पृ० 930

रामसेतु एवं आधुनिक पुल निर्माण: एक तुलनात्मक अध्ययन

ISBN: 978-1-960627-06-3

Sulochana Sharma
(sulochanajaipur2@gmail.com)

*मानव सभ्यता के विकास में पुलों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। यह न केवल भौगोलिक दूरी को कम करते हैं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में भी योगदान देते हैं। भारत में **रामसेतु** एक ऐतिहासिक और पौराणिक संरचना है, जो भारतीय संस्कृति, धर्म और भूगोल से जुड़ी हुई है। दूसरी ओर, आधुनिक समुद्री पुल निर्माण उन्नत इंजीनियरिंग तकनीक द्वारा निर्मित किए जाते हैं जो परिवहन को सुगम बनाने के साथ-साथ व्यापार और पर्यटन को बढ़ावा हेतु बनाए जाते हैं। इन आधुनिक पुलों की संरचना बेहद जटिल श्रम साध्य और समय साध्य भी होती है।*

1. प्रस्तावना

रामायण के अनुसार रामसेतु का निर्माण वानर सेना ने भगवान राम के आदेश पर किया था जिससे वह लंका जाकर रावण से युद्ध कर सके और माता सीता को वापस ला सके।यह सेतु भगवान राम की सेना के लिए एक महत्वपूर्ण मार्ग था, जिसने उन्हें लंका तक पहुंचने में मदद की।बाल्मिकी रामायण के अनुसार स्वयं प्रभु राम ने कई दिनों की पड़ताल के बाद रामेश्वरम के आगे समुद्र में वो जगह खोजी, जहां से श्रीलंका आसानी से पहुंचा जा सके।

श्रीमद् वाल्मीकि रामायण के अनुसार नल नामक वानर जो विश्वकर्मा के पुत्र हैं उन्हें अपने पिता द्वारा सारी शक्तियां प्रदान की गई थी नल ने ही वानरों के साथ समुद्र में *5* दिन में *100* योजन लंबे पुल का निर्माण किया था।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामसेतु के विषय में लिखा है कि नल और नील दो भाई जिन्हें बचपन में ऋषि से आशीर्वाद प्राप्त था कि वह जिस पत्थर को या पहाड़ को स्पर्श करेंगे वे समुद्र पर तैरने लगंगे।

रामायण के अतिरिक्त महाभारत में नल सेतु के नाम से एक सेतु उल्लेखित है। वेद व्यास जीने इसकी पुष्टि की है कि सेतु निर्माण कार्य का नेतृत्व नल नामक वास्तुकार ने किया था। (महाभारत: *3.267.45*)

कालिदास ने 'रघुवंश' के *13*वें सर्ग में राम के आकाश

मार्ग से लौटने का वर्णन किया है। इस सर्ग में श्रीराम का माता सीता को रामसेतु के बारे में बताने का वर्णन है। स्कंद पुराण के तीसरे, विष्णु पुराण के चौथे, अग्नि पुराण के पांचवें से ग्यारहवें और ब्रह्म पुराण में भी श्रीराम के सेतु का उल्लेख किया गया है। इनके अतिरिक्त

अनेक ग्रंथों पुराणों में भी श्रीरामसेतु का विवरण मिलता है। यहां तक की एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका मे भी राम सेतु का उल्लेख मिलता है।दूसरी ओर विज्ञान और तकनीक की प्रगति ने आधुनिक बुनियादी ढांचे के निर्माण को नया आयाम दिया है जिसमें समुद्र पुलों का निर्माण एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। समुद्री पुल परिवहन को सुगम बनाने, व्यापार को बढ़ावा देने और क्षैत्रिय विकास को गति देने में अहम भूमिका निभाते हैं आधुनिक सागर पुल न केवल भौगोलिक बाधा ओं को दूर करते हैं बल्कि समय और संसाधनों की बचत करके आर्थिक वृद्धि को भी सशक्त बनाते हैं। रामसेतु और आधुनिक सागर पुल निर्माण की संरचना एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन से समझा जा सकता है कि प्राचीन एवं आधुनिक निर्माण तकनीक में क्या अंतर है और किस प्रकार हम भविष्य में पर्यावरण अनुकूल पुल निर्माण की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं

2. विस्तार

राम सेतु पुल निर्माण सामग्री

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने रामसेतु के निर्माण एवं सामग्री का बहुत विस्तार से वर्णन किया है।

- नागां नागा संकाशाः शाखा मृग गण र्षभाः|| *(2-22-53)* बभंजुर वानररस तत्र प्रभाकरसुः च सागरम्|
- पर्वतों के समान उन वानरों के सेनापतियों ने वहाँ की चट्टानों और वृक्षों को तोड़ डाला और उन्हें समुद्र की ओर खींच ले गये।
- -ते सालैः च अश्व करनैः च धावैर वंशैः च वानरः|| (*2-22-54*) कुतजैर अर्जुनैस तलैस तिकालैस तिमिशैर -अपि | बिल्वकैः सप्तपर्णैश्च कर्णिकारैश्च पुष्पैः || (*2-22-55*) कुउतैः च अशोक वृकसाईः च सागरं समपुरयण |

उन वानरों ने समुद्र को साल और अश्वकर्ण, धव और बांस, कुटज, अर्जुन, पलमायरा, तिलक, तिनिसा, बिल्व, सप्तपर्ण, कर्णिका, आम और अशोक जैसे सभी प्रकार के पेड़ों से भर दिया।

- समुउलाम् च विमुलाम् च पादपान् हरि सत्तमः|| *(2-22-56)* इंद्र केतुं इव उद्यम्य प्रजाह्र हरयस तरुं |
- श्रेष्ठ वानर, वन के पशु इंद्र के ध्वजस्तंभों के समान कुछ वृक्षों को, जिनकी जड़ें अक्षुण्ण थीं और कुछ अन्य बिना जड़ों वाले थे, उठाकर ले आए।
- -तालें दादिमागुलमामश्च नारिकेलविभीताकां || *(2-22-57)* करिरान् बकुलान्निमबाँ समाजाह्ररितास्ततः |
- बंदर पलमायरा के पेड़, अनार की झाड़ियाँ, नारियल और विभीतक, करिरा, बकुला और नीम के पेड़ लेकर आये।
- -हस्तिमात्रां महाकायाः पाषाणमश्च महाबलः || *(2-22-58)* पर्वतमश्च समुत्पात्य यन्त्रैः परिवाहन्ति च |

शक्तिशाली शक्ति वाले विशाल शरीर वाले बंदरों ने हाथी के आकार की चट्टानों और पहाड़ों को उखाड़ दिया और उन्हें यांत्रिक उपकरणों द्वारा ले जाया गया

कुछ बंदर पुल को मापने के लिए डंडे पकड़े हुए थे और कुछ अन्य सामान इकट्ठा कर रहे थे। राम की आज्ञा से सैकड़ों बंदरों द्वारा लाए गए बादलों और पहाड़ों जैसे दिखने वाले नरकट और लट्ठों से पुल के हिस्सों को बांध दिया।

रामचरितमानस में पुल निर्माण नल नील दो भाइयों द्वारा वानरों,रीक्षों की सहायता से पर्वत वृक्षों आदि सामग्री से मजबूत सेतु बांधने का उल्लेख है
-अति उतंग गिरि पादप लीलहिं लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ॥ 1॥
अर्थात

बहुत ऊँचे-ऊँचे पर्वतों और वृक्षों को खेल की तरह ही (उखाड़कर) उठा लेते हैं और ला-लाकर नल-नील को देते हैं। वे अच्छी तरह गढ़कर (सुंदर) सेतु बनाते हैं॥ 1॥

यहां यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि रामसेतु पुल निर्माण में पूर्णतया जैविक और प्राकृतिक सामग्री का उपयोग हुआ था जो पर्यावरण की दृष्टि से पूर्णत:सुरक्षित था।

इस पुल को पौराणिक नहीं मानने वाले पुरातत्वविद भी यह मानते है कि करीब 50 किलोमीटर लंबे इस पुल के पत्थर तैरने वाले थे. पानी में तैरने वाले ये पत्थर चूना पत्थर की श्रेणी के हैं. ज्वालामुखी के लावा से बने ये स्टोन अंदर से खोखले होते हैं. इनमें बारीक-बारीक छेद भी होते हैं. वजन कम होने और हवा भरी होने की वजह ये पानी में तैरते रहते हैं. थोड़ा सा साइंस की भाषा में समझें तो बॉयेंसी फोर्स यानी उत्प्लावक बल इन्हें डूबने से रोके रखता है. ये वो फोर्स है, जो किसी तरल में आंशिक या पूरी तरह से डूबी किसी चीज पर लगता और उसे ऊपर उठाए रखता है. तो हम यह मानते हैं कि नल एक बेहतरीन इंजीनियर और पेट्रोलॉजिस्ट थे जिन्हें पत्थरों की पहचान थी इसलिए उन्होंने उन पत्थरों का उपयोग किया जो पानी पर तैर सकते थे

नासा की तस्वीरें और समंदर में तैरते पत्थरों की मौजूदगी रामसेतु पुल के ऐतिहासिक अस्तित्व की ओर संकेत करती हैं. धर्मग्रंथों के अनुसार भी रामसेतु तैरते पत्थरों से बनाया गया था और हैरानी की बात है कि ऐसे तैरते पत्थर आज भी रामेश्वरम में देखे जा सकते हैं.

आधुनिक वैज्ञानिक पुल निर्माण सामग्री

आधुनिक युग में सागर पर पुल निर्माण एक जटिल और तकनीकी रूप से चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। इसमें उपयोग होने वाले पदार्थ और तकनीक इस प्रकार हैं

- कंक्रीट (Concrete) – उच्च-शक्ति वाला प्री-स्ट्रेस्ड कंक्रीट समुद्री पुलों में सबसे आम होता है।
- इस्पात (Steel) – इस्पात के गर्डर, केबल्स और पाइल्स पुल की मजबूती बढ़ाने के लिए इस्तेमाल होते हैं।
- प्री-स्ट्रेस्ड और पोस्ट-टेंशन कंक्रीट – अधिक भार सहने के लिए।
- कॉम्पोजिट मटेरियल्स – हल्के और टिकाऊ पुल निर्माण के लिए फाइबर-रिइंफोर्स्ड पॉलिमर (FRP)।
- पाइल फाउंडेशन (Pile Foundation) – समुद्र की गहराई तक स्टील या कंक्रीट के खंभे धंसाए जाते हैं।
- केसन फाउंडेशन (Caisson Foundation) – बड़े गहरे बॉक्स जैसी संरचनाएं समुद्र तल पर रखी जाती हैं और कंक्रीट भरा जाता है।
- सस्पेंशन ब्रिज (Suspension Bridge) – बड़े समुद्री पुलों के लिए, जहां मुख्य संरचना स्टील केबल्स द्वारा टंगी होती है।
- केबल-स्टे ब्रिज (Cable-Stayed Bridge) – इसमें पिलर्स से जुड़े स्टील केबल्स द्वारा पुल को सहारा दिया जाता है।

- समुद्री जल में स्टील संरचनाओं को बचाने के लिए।एंटी-करोजन कोटिंग का प्रयोग किया जाता है
- स्पेशल मिक्स कंक्रीट को नमक और नमी के प्रभाव से बचाने के लिए डिजाइन किया जाता है।
- तैरते क्रेन (Floating Cranes) – भारी संरचनाओं को उठाने के लिए फ्लोटिंग क्रेन मंगाई जाते हैं

इस प्रकार, समुद्री पुल निर्माण में इन सामग्रियों और तकनीकों का चयन बहुत आवश्यक होता है जिससे कि पुल मजबूत, सुरक्षित और लंबे समय तक टिकाऊ बना रहे। इसके बावजूद यह एक निश्चित अवधि तक के पश्चात धराशाई हो जाते हैं।

जबकि रामसेतु सहस्त्रों वर्ष पश्चात आज भी अंतरिक्ष से देखा जा सकता है

आधुनिक पुल निर्माण और पर्यावरण

आज के आधुनिक युग में समुद्र पर पुल बनाने से पर्यावरण को कई प्रकार के नुकसान हो रहे हैं, जिनमें शामिल हैं:

- पुल निर्माण से समुद्री जीवों के प्राकृतिक आवासों को नुकसान पहुंचता है।
- प्रवाल भित्तियों (Coral Reefs) और समुद्री घास के मैदानों को क्षति पहुंच सकती है।
- निर्माण गतिविधियों के कारण जल में गाद (sediment) बढ़ जाती है, जिससे जलीय जीवों को सांस लेने में कठिनाई होती है।
- पुल निर्माण और रखरखाव के दौरान तेल, रसायन और अन्य प्रदूषकों का रिसाव समुद्री जल को दूषित कर सकता है।
- निर्माण सामग्री (जैसे सीमेंट और धातु) के कण जल में मिलकर जल जीवों के लिए हानिकारक हो सकते हैं।
- पुल के स्तंभ समुद्री धाराओं के प्रवाह को बाधित करने से तटीय कटाव की अत्यधिक संभावना रहती है ।
- जलधाराओं में बदलाव के कारण आसपास के समुद्री जीवों के जीवन चक्र पर असर पड़ता है।
- निर्माण गतिविधियों के दौरान भारी मशीनों की आवाज समुद्री जीवों (जैसे डॉल्फ़िन और व्हेल) के संचार में बाधा डालती है।
- पुल पर लगी लाइट्स रात के समय समुद्री पक्षियों और अन्य जीवों की जैविक घड़ी (biological cycle) को प्रभावित करती हैं।
- कई समुद्री जीव, जैसे कि कछुए और मछलियां, प्रवास (migration) करते हैं। पुल और उसके निर्माण से उनके रास्ते अवरुद्ध हो सकते हैं।

रामसेतु पर्यावरण अनुकूल संरचना

वाल्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस के अनुसार, जब भगवान श्रीराम द्वारा वानर सेना के साथ लंका जाने के लिए समुद्र देव से मार्ग देने की प्रार्थना करने पर भी जब समुद्र देव प्रकट नहीं हुए, तो श्रीराम ने अपने धनुष से समुद्र को सुखाने का संकल्प लिया। तब समुद्र देव ने स्वयं उपस्थित होकर श्रीराम से विनम्र प्रार्थना की और सुझाव दिया कि नल नील नामक वानर इस कार्य में निपुण हैं और वे पुल निर्माण में सहायता कर सकते हैं। साथ ही उन्होंने प्रार्थना की कि इस सेतु से समुद्री जीव जंतुओं को कष्ट ना हो।

वाल्मीकि रामायण के युद्ध कांड (सर्ग *22-23*) में उल्लेख मिलता है कि राम सेतु समुद्र की ऊपरी सतह पर बनाया गया था, जिससे समुद्री जीव-जंतुओं को नुकसान न हो। इसके निर्माण में विशेष प्रकार की तकनीक और ईश्वरीय प्रभाव था।

सर्ग *22*, श्लोक *45-46*:

"स तेषां वानरेन्द्राणां स्वयमेवाङ्गतो नलः।
अङ्गदप्रमुखैः सार्धं शिलाः समितशोऽवहत्॥"
"ते नागा इव सिन्धूनां पृष्ठमास्थाय पर्वतान्।
बिभ्रतो वानराः शीघ्रं ययुः प्लवगसत्तमाः॥"
"वानरों के श्रेष्ठ नल अंगद आदि प्रमुख वानरों के साथ मिलकर पत्थरों को ले जाने लगे।
वे श्रेष्ठ वानर नागों के समान समुद्र की सतह पर पर्वतों को लेकर शीघ्रता से चले।"

इन श्लोकों से स्पष्ट होता है कि वानरों ने समुद्र की सतह पर पत्थरों को रखकर पुल का निर्माण किया।

नल ने समुद्र देवता के निर्देश के अनुसार एक ऐसा पुल बनाया जो समुद्र की सतह पर ही तैरता रहा।

रामचरितमानस में कहा गया है कि जब वानर सेना ने विशाल पर्वतों से पत्थर और वृक्ष लाकर समुद्र में डाले, तो वे सामान्य रूप से डूबने के बजाय पानी पर तैरने लगे।

"नाम लिए जे गिरी सिर तोरे !
चले सिंधु करन पटि कोरे"

अर्थात श्री राम का नाम लिखकर जब पर्वतों को समुद्र में डाला गया तो वह तैरने लगे और पुल बनने लगा!!

-इससे यह संकेत मिलता है कि पुल की संरचना जल के भीतर नहीं बल्कि ऊपरी सतह पर ही बनी जिससे समुद्री जीवों का प्राकृतिक आवास (habitat) प्रभावित नहीं हुआ।

- समुद्र का पानी सेतु के नीचे स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होता रहा, इससे जलधाराओं और समुद्री जीवन पर न्यूनतम प्रभाव पड़ा होगा।

सामान्यतः जब कोई मानव निर्मित पुल बनता है, तो उसके पिलर समुद्र की गहराई में डाले जाते हैं, जिससे समुद्र की धाराओं में परिवर्तन हो सकता है लेकिन राम सेतु की संरचना तैरती हुई थी, जिससे समुद्र के प्रवाह में कोई विशेष बाधा उत्पन्न नहीं हुई और पारिस्थितिकी तंत्र (ecosystem) सुरक्षित रहा।

समुद्री धाराएँ प्रभावित नहीं होने से जल-परिसंचरण (water circulation) सामान्य रूप से जारी रहा

3. निष्कर्ष

रामसेतु और आधुनिक पुलों के निर्माण की तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि रामसेतु एक पर्यावरण-अनुकूल संरचना थी, यह इतनी मजबूत थी कि सहस्त्रों वर्ष पश्चात आज भी अंतरिक्ष से दृष्टिगोचर होती है (यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के कॉपरनिकस सेंटिनल-*2* उपग्रह से ली गई तस्वीरों के ज़रिए अंतरिक्ष से इसे देखा जा सकता है)जबकि आधुनिक पुल निर्माण में प्रयुक्त सामग्रियाँ एवं तकनीक पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। यह सीमित अवधि के लिए ही बनाए जाते हैं।*100* योजन रामसेतु का निर्माण *5* दिन में ही हो गया था जबकि आधुनिक पुल निर्माण में विकसित तकनीक के बावजूद बहुत समय लगता है

रामसेतु एक ऐसी ऐतिहासिक और पारिस्थितिकी-अनुकूल संरचना थी, जिसका अध्ययन आधुनिक इंजीनियरिंग और पर्यावरण संरक्षण में नई संभावनाओं को जन्म दे सकता है। आधुनिक विज्ञान को इससे प्रेरणा लेकर अधिक पर्यावरण-अनुकूल निर्माण तकनीकों की ओर बढ़ना चाहिए।

4. संदर्भ ग्रन्थ

1. श्रीमद् वाल्मीकि रामायण
2. रामचरितमानस
3. रघुवंशम्
4. श्रीमद् भागवत गीता
5. अमर उजाला
6. टाइम्स ऑफ़ इंडिया
7. Ramchari.in
8. Bridge Engineering Handbook
9. Design of Marin Facilities for Berthing Mooring and Repaiof Vessels
10. Construction of Marine and Offshore Structures

गुरुवर के राम

ISBN: 978-1-960627-06-3

अलका श्रीवास्तव
(alkash1960@gmail.com)

1. प्रस्तावना

गुरूर ब्रम्हा गुरुर विष्णु गुरुर देवो महेश्वरा,
गुरु साक्षात परम ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः

मनुष्य में देवत्व का उदय जीवन में गुरु के संपर्क में आने से होता है, मानस में गोस्वामी जी गुरु की वंदना करते हुए कहते हैं, "मैं उन गुरु की वंदना करता हूं जो कृपा के समुद्र हैं ।और मोह रूपी अंधकार के लिए सूर्य के समान और प्रकाश आशीर्वाद स्वरूप है ,जो अज्ञान रूपी अंधकार को समाप्त करते हैं।" राम के पूरे जीवन में गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र दोनों का मार्गदर्शन रहा दोनों ही राम के लिए विशिष्ट थे ,उनके मार्गदर्शन में शिक्षा धनुर्विद्या और कर्तव्य परायणता का ज्ञान हासिल किया ,जीवन में गुरु ज्ञान धर्म, कर्तव्य, शस्त्र विद्या आदि से उन्हें जीवन के एक विशिष्ट पद पर लाकर आसीन करते हैं, शिष्य और गुरु दोनों ही जब अपने-अपने कर्तव्य का पालन पूर्ण निष्ठा से करते हैं, तभी मनुष्य में देव का उदय होता है जो बिना गुरु के संभव नहीं है राम का गुरु के प्रति आदर सम्मान, अनुशासन, कर्तव्य, निष्ठा राम को गुरु का प्रिय शिष्य बनाते हैं । राम कई असाधारण प्रतिभा के धनी है साधारण मानव नहीं है यह बात गुरुदेव जानते थे। व्यक्ति का चरित्र मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व को दर्शाता है। राम जब गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त कर राजमहल में वापस आते हैं तब उनकी उम्र 16 वर्ष की होती है, उस समय उन्हें संसार से वैराग्य हो जाता है वह कहते हैं। मैं शारीरिक रूप से कमजोर हूँ उन्हें सांसारिक वस्तुएं अच्छी नहीं लगती, इस समय विश्वामित्र राजा दशरथ को मिलने राजमहल पहुंचते हैं और राम को वन में ले जाने का आग्रह करते हैं। यह सुन राजा दशरथ घबरा जाते हैं और मना कर देते हैं, जिसकी वजह से विश्वामित्र नाराज होते हैं फिर गुरु वशिष्ठ के समझाने पर वे उन्हें वन भेजने के लिए तैयार हो जाते हैं। राम के मन में कुछ प्रश्न होते हैं जो वह गुरुवार से करते हैं। गुरु वशिष्ठ उनके सभी प्रश्नों का उत्तर देते हैं। उन्हें अस्त्र-शस्त्र विद्या प्रदान करते हैं, गुरु सांसारिकता से परिचय कराते हुए राम को ईश्वरीय यात्रा पर ले जाते हैं और कठिन संघर्ष और आदर्श के बाद उस तत्व को प्राप्त कर लेते हैं।

2. विस्तार

गोस्वामी जी कहते हैं जीवन में गुरु का संबंध सूर्य के प्रकाश जैसा होता है, जिसके स्मरण से दिव्य दृष्टि का संचार होता है, और अज्ञान रूपी अंधकार का नाश हो जाता है। श्री राम को 16 वर्ष की आयु में जब वैराग्य हो गया था तब वे सांसारिकता से दूर हो जाते हैं। उन्हें चारों ओर दुख दिखाई देता है। मन अशांत हो जाता हैं और उनका स्वास्थ्य गिरने लगता है, यह देख दशरथ जी चिंतित हो जाते हैं। उसी समय विश्वामित्र जी राम को अपनी "यज्ञ सुरक्षा" के लिए वन ले जाने का आग्रह करते हैं। जिसे सुनकर दशरथ जी उन्हें मना कर देते हैं - लेकिन वशिष्ठ जी के समझाने पर वे मान जाते हैं। राम से वार्तालाप करने के लिए उन्हें बुलाया जाता है। राम का स्वास्थ्य देखते ही सभी चिंतित हो जाते, हैं पूछने पर ज्ञात होता है राम विचार और शंकाओं से पीड़ित है। राम जी के कुछ प्रश्न है जो वह गुरुदेव से करना चाहते हैं। गुरुदेव सभी प्रश्नों का उत्तर देने के लिए तैयार होते हैं, और उनमें वार्तालाप शुरू होता है।

राम : हे गुरुवर, देव क्या है?

गुरुदेव : राम, आत्म कल्याण के लिए अपने उत्तम पुरुषार्थ का आश्रय ले कर सदा प्रयत्न मैं संलग्न रहें, मन बुद्धि और कर्मेंद्रिय के द्वारा किए जाने वाली चेष्टाएं ही देव पुरुष हैं। इन्हीं से अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है, पुरुषार्थ से ही बृहस्पति, देवताओं के गुरु बने हैं। मैंने व अन्य मुनियों ने अपने पुरुषार्थ से ही आकाश में विचरण की शक्ति पाई है। शास्त्रों का अभ्यास गुरु के उपदेश और प्रयत्न से ही सर्वत्र सिद्धि देखी गई है।

राम : हे गुरुदेव, सबके आत्म स्वरूप परब्रह्म परमात्मा कैसे प्राप्त हो सकते हैं?

गुरुदेव : राम, विवेक के द्वारा उस परम आत्मदेव का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है। यह सदा शरीर में ही स्थित है और चिन्मय रूप से विख्यात है, यही शिव है, यही विष्णु है, और यही सूर्य है। इसी कारण से, यहीं परब्रह्म परमात्मा का साक्षात्कार हो जाने पर हृदय प्रकाशित हो जाता है।

राम : परमात्मा सत्य है। यह कैसे जानें और जगत नाम के दृश्य को असत्य कैसे समझे?

गुरुदेव : जिस प्रकार आकाश में ब्रह्म प्रतीत होता है। उसी प्रकार सच्चिदानंद ब्रह्म में यह जगत का भ्रम दिखाई देता है। अतः ज्ञान प्राप्त होने पर ही ब्रह्म का स्वरूप ज्ञात होता हैं।

राम : चेतना क्या है?

गुरुदेव: भावना का क्षेत्र चेतना का है और उसका उत्कर्ष पूरे व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। जिस व्यक्ति का पुरुषार्थ उसके स्तर को विकसित कर उसे देव बनाता है। आध्यात्मिक, चिंतन मनन, दृष्टिकोण, मान्यता यह खुद के प्रयास से बनते हैं। आत्मा जब विश्वात्मा के साथ एकात्म होती है, तब सच्चिदानंद का स्तर बनता है। उसे अपने स्वयं के भीतर विराजमान करें, तभी विश्वात्मा के दर्शन होते हैं।

राम : चित्त क्या है गुरुदेव?

गुरुदेव: चेतन का चैतन्य विषयों की ओर, उन्मुख होना ही चित्त कहलाता है। उसकी सत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। ज्ञानी की दृष्टि में जगत का स्वरूप सत्य नहीं है। ब्रह्म जैसा पहले था ठीक वैसा ही अभी है। उसमें विकार नहीं है। ब्रह्म ही जगत के रूप में प्रतीत होता है, ब्रह्म से जगत भिन्न नहीं है उसमें स्थित यह जगत निराकार होते हुए भी साकार दिखता है। पूर्ण ब्रह्म का प्रसार होता है, यही चेतन्य स्वरूप है।

3. निष्कर्ष

गुरु वशिष्ठ ने अनेक प्रकार के दृष्टांत हेतुओं और युक्तियों द्वारा राम जी से परम आत्म तत्व के ज्ञान का वर्णन किया है। राम महागुरु के चरणों में नतमस्तक हुए, कहा गुरुवार मैं आपकी वंदना करता हूं। राम ने गुरु के चरणों में पुष्प कर गुरुवंदना की, उस वक्त राम के दोनों नेत्र आंसुओं से भरे हुए थे। रघुवीर ने बड़ी श्रधा के साथ गुरुदेव को बारंबार प्रणाम किया। आकाश देवों ने पुष्प वर्षा की, उसके बाद - वाल्मीकि जी, दशरथ जी सभी ने गुरुदेव को नतमस्तक होकर प्रणाम किया।

श्री राम ने कहा - " गुरुदेव मेरा हृदय निर्मल हो गया है, अब मैं स्वयं को सृष्टि के परे महसूस कर रहा हूं। मैं निर्विकार हूं और सर्वत्र संभव रूप से स्थित हूं। मैं अब हर्ष, विषाद और आशा से परे हूँ, मैं संपन्न हूं और आत्मविष्ट होने के कारण सर्वत्र विचरण कर रहा हूं।" तभी वशिष्ठ जी कहते हैं - " जैसे आकाश शांत हो विश्राम प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार तुम्हें शीतल आत्मा से पूर्ण विश्राम प्राप्त हुआ है। ज्ञान स्वरूप तुमने अपने शिक्षा द्वारा रघुकुल का भूत, भविष्य और वर्तमान परंपरा को पवित्र कर दिए है। अब आप मुनीश्वर विश्वामित्र की याचना पूर्ण करके अपने पिता के साथ इस पृथ्वी का पालन करें। और सुखी रहे।"

विश्वामित्र ने कहा - " मुझे हर्ष है की गुरु वशिष्ट जी के मुख से हमें परम पवित्र ज्ञान सुनने को मिला, अतः ब्रह्मानंद स्वरूप परब्रह्मानंद को प्राप्त करने वाले निर्मल निश्चल संपूर्ण बुद्धि युक्त महामुनि वशिष्ठ जी को हम सादर प्रणाम करते हैं।" विश्वामित्र जी इतना कहकर, राम और लक्ष्मण को अपने साथ लेकर वन की ओर प्रस्थान करते हैं।

4. संदर्भ ग्रन्थ

1. राम चरित मानस ISBN 81,293,0123,7
2. सम्पूर्ण योग वशिष्ट कथासार - श्री राम शर्मा आचार्य **2022 (pg 402-416)**
3. वैराग्य प्रकरन (pg 45-56)

समुद्र लांघने हेतु केवल हनुमान ही सक्षम क्यों

ISBN: 978-1-960627-06-3

संतोष कुमार मिश्र "असाधु"
पावर मैनेजमेंट कंपनी लिमिटेड, महाप्रबंधक, मध्य प्रदेश
(santoshmishra28667@gmail.com)

1. प्रस्तावना

श्री रामचरितमानस के सुंदरकांड में एक प्रसंग आता है जिसमें सीता जी की खोज में कई बलशाली वानरों का दल जामवंत जी के नेतृत्व में दक्षिण दिशा की ओर जाता है। जगह-जगह वन में भटकते तथा तरह-तरह के कष्ट उठाते हुए अंततः वे सब विशाल समुद्र के तट पर जा पहुंचते है। उस समुद्र की विशालता को देखकर सभी वानर दल के लोग अत्यंत चिंतित, निराश और सशंकित हो जाते हैं। सागर के इसी तट पर चूंकि पूर्व में ही जटायु के भाई संपाती ने उन्हें यह साफ-साफ बता दिया था कि सीता जी लंका के अशोक वाटिका में ही बैठी हुई है और यहां से किसी एक को लंका जाना ही होगा। अब उनके सामने सबसे बड़ा यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि सीता जी की खोज के लिए आखिरकार कौन इस विशाल सागर को लांघ सकता है। निश्चित ही हम सबके लिए भी यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है लेकिन यहां समुद्र लांघने की घटना के पीछे एक अत्यंत रहस्यमय पृष्ठभूमि है।

2. शोधपत्र के विषय का विस्तार

जैसा कि रामायण में वर्णन किया गया है उस स्थान से लंका की दूरी 100 योजन थी ऐसे में सब वानर अपनी-अपनी शारीरिक क्षमताओं का बखान करते हुए उस समुद्र को लांघ सकने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं। बहुत से वानर यह तक कहते हैं कि वे अधिकतम अस्सी योजन तक ही समुद्र लांघ सकते हैं। जामवंत जी ने भी कहा कि वर्तमान में उनकी उम्र काफी हो चुकी है इसलिए उन्हें समुद्र पार करने में शंका है।

यहाँ आश्चर्य की बात यह है कि वाल्मीकि रामायण के किष्किंधा कांड के 29 वें सर्ग के 26 वें श्लोक में हनुमानजी द्वारा मां सीता जी की खोज हेतु सुग्रीव से यह कहना कि यदि आपकी आज्ञा हो जाए तो जल,थल, पाताल और ऊपर आकाश में वानरों की गति को कोई रोक नहीं सकता है। अतः ऐसे में अंगद, जामवंत जी, नील, द्विविद और अन्य कोई भी वानर उस सामान्य से दिखने वाले 100 योजन समुद्र को लांघने में अपनी असमर्थता क्यों व्यक्त कर रहे है ? आखिरकार उस समुद्र की खासियत क्या है ? निश्चित ही यह एक अत्यंत गूढ़ तथा रहस्यमय प्रश्न उठ खड़ा होता है।

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा ।।

इस संबंध में यद्यपि अंगद जी जो कि किष्किंधा नगरी के युवराज थे, वे समुद्र पार करने के लिए उद्यत होते हैं तथापि वे भी कहते हैं कि जाते समय वे समुद्र को लांघ सकते हैं लेकिन वापस आते समय उन्हें भी खुद इतना विश्वास नहीं है कि वे इस विराट समुद्र को लांघ पाएंगे अथवा नहीं। उनकी असमंजसपूर्ण स्थिति तथा राज्य के युवराज की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए जामवंत जी ने अंगद को समुद्र पार कर लंका जाने से रोक दिया। अंततः बहुत सारे विकल्पों के विचार करनें के उपरान्त जामवंत जी ने अंतिम तथा सक्षम विकल्प के रूप हनुमान जी को प्रोत्साहित करते हुए उनको कुछ इस प्रकार उनकी शक्तियों का स्मरण कराया:

कवन सो काज कठिन जग माही। जो नहीं होय तात तुम पाही ।।

अर्थात हे तात ! आख़िरकार इस जग में ऐसा कौन सा कठिन कार्य है जो तुमसे न हो सके और तुम्हारा अवतार तो भगवान राम की सेवा के लिए ही हुआ है।

राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्बताकारा।।

मेरे मतानुसार हनुमान जी के द्वारा समुद्र लांघने का यह प्रसंग अत्यंत गूढ़ आध्यात्मिक विषय है और केवल भगवान श्रीराम के अलावा जामवंत जी को ही मालूम था कि इस विराट सागर को लांघने की क्षमता केवल हनुमान जी के पास ही है। यही कारण था कि पूरी वानर सेवा में भगवान श्रीराम ने अपनी मुद्रिका केवल हनुमान जी को ही दिया था। इस संबंध में श्री रामचरितमानस की इन चौपाइयों को हम ध्यान से पढ़ेः

जद्यपि प्रभु जानत सब बाता। राजनीति राखत सुरत्राता।।

और फिर

पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।

परसा सीस सरोरुह पानी। कर मुद्रिका दीन्हि जन जानी।।

और हनुमान जी ने प्रभु की मुद्रिका को मुख में रखकर उस विशाल समुद्र को आसानी से पार कर लिया।

प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माही। जलधि लॉघ गये अचरज नाही।।

यह सब बातें तो ठीक है लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि जामवंत और अंगद जैसे महान वीर भी उस सौ योजन तक विस्तार वाले सागर के आगे बेबस क्यों दिखाई देते हैं। आखिरकार उस समुद्र की खासियत क्या है।

मेरे मतानुसार वह कोई सामान्य समुद्र नहीं था। यहां मैं आपको जामवंत जी की क्षमताओं के बारे में यह स्मरण कराना चाहूंगा कि सतयुग में त्रैलोकी नाथ भगवान जब वामन अवतार में राजा बलि के समक्ष अपने रूप का विस्तार कर रहे थे, तब इन्हीं जामवंत जी के द्वारा उन विराट प्रभु की सात परिक्रमा अत्यंत अल्प अवधि में ही पूर्ण कर ली गयी थी। यद्यपि यहां सात परिक्रमा करने का एक गूढ़ रहस्य भी है। दरअसल यह सात परिक्रमा मनुष्य के भीतर स्थित सात चक्रों का परिचायक है। जब तक कोई मनुष्य आठवें चक्र जिसे हम सहस्रार चक्र कहते हैं, तक नहीं पहुंच पाता है तब तक वह इस विशाल भवसागर में ही उलझा रहता है और वह इन्ही कारणोंवश भवसागर से कभी पार नहीं जा सकता है।

जामवंत जी का वास्तविक अभिप्राय इन्हीं सात चक्रों की परिक्रमा से है। आपकी व्यक्तिगत जानकारी के लिए मैं बता दूं कि मानव शरीर में कुल आठ चक्र होते हैं जिनमें सबसे पहला चक्र मूलाधार होता है। इसके ऊपर क्रमशः स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा चक्र, मनश्चक्र व सहस्रार चक्र की स्थिति होती है। अतः शारीरिक तौर पर देखें तो जामवंत जी भले ही कितने बूढ़े क्यों ना हो जाए तो भी उनके द्वारा मात्र 100 योजन समुद्र लांघ लेना कोई बड़ी बात हो ही नहीं सकती।

अब हम अंगद जी के बारे में भी तनिक चर्चा कर लें। अंगद भी अपने पिता बाली की तरह अत्यंत बलशाली था। आपकी जानकारी के लिए यह भी ध्यान दिला दूं कि बाली की यह दिनचर्या थी कि वह प्रातःकाल उठकर सर्वप्रथम सात समुद्रों के चक्कर लगाकर ही अन्य कार्य किया करता था। चूंकि अंगद उसके समान ही बलशाली पुत्र था अतः वह भी कुल 200 योजन समुद्र ना लांघ सके यह भी उचित प्रतीत नहीं होता है। यहां इसका कारण कुछ अलग प्रतीत होता है।

मेरे मतानुसार रामायण में जिस सागर को लांघने की बात की गई है, वस्तुतः वह आध्यात्मिक तौर पर इस भवसागर का संकेत करता है। इस प्रकार हनुमान जी के द्वारा रामायण में वर्णित सागर को पार करना दरअसल ध्यान (मेडिटेशन) की गहन प्रक्रिया का एक गूढ़ संकेत दिया गया है।

जैसा कि हम सबको मालूम है कि यह प्रकृति तीन गुणों से युक्त है जिसमें प्रथम गुण है सात्विक द्वितीय राजसिक और तृतीय तामसिक और इन्हीं तीनों गुणों की जननी प्रकृति स्वरूपा मां सीता जी हैं जो इस भवसागर के पार अशोक वाटिका में बैठी हुई है। अतः सीता जी के अन्वेषण के लिए या उसे दूसरे सरल शब्दों में कहें कि सीता जी की खोज के लिए हमें इन तीनों गुणों के पार जाना होगा। यह वास्तव में एक योगिक प्रक्रिया है जिसमें किसी भी साधक को ज्ञान की परम अवस्था में जाने के लिए अष्टांग योग का आश्रय लेना पड़ता है। अष्टांग योग के आठ अंग इस प्रकार हैः

1. यम (नैतिक संहिता) 2. नियम (आत्म-अनुशासन) 3. आसन (शारीरिक मुद्राएं)

4. प्राणायाम (श्वास नियंत्रण) 5. प्रत्याहार (इन्द्रिय निरोध) 6. धारणा (एकाग्रता)

7. ध्यान (मेडिटेशन) और 8. समाधि (स्वयं के साथ एकता)

अब हम यहां तनिक प्राणायाम के बारे में भी संक्षिप्त चर्चा कर ले। हमारे शरीर में प्राणों के रूप में निरंतर आने-जाने वाली वायु मोटे तौर पर कुल पांच प्रकार की होती है।

1. **प्राण वायु -** यह वायु का वह हिस्सा है जो हमारे नासिका के मार्ग से हमारे शरीर के भीतर नाभि तक जाता है।
2. **अपान वायु-** हमारे शरीर से मुख या नासिका के मार्ग से बाहर निकलने वाली वायु को अपान वायु कहते हैं।
3. **समान वायु -** यह वायु हमारे शरीर के भीतर जाने वाली तथा भीतर से बाहर आने वाली अपान वायु के बीच में मौजूद रहती है जो दोनों के लिए एक वायु-संधि की तरह कार्य करती है।
4. **उदान वायु -** यह वायु हमारी हमारे शरीर में मौजूद चेतना को ऊपर उठाने के लिए होती है। उदान दो शब्दों से मिलकर बना है जिसका प्रथम शब्द है ''उत'' अर्थात ऊपर जबकि दूसरा शब्द है ''आन'' जिसका शाब्दिक अर्थ होता है ''आना'' अर्थात ऊपर की ओर आना। यह वायु हमारी चैतन्यता को अत्यंत ऊंचाइयों में ले जाती है। आध्यात्मिक मार्ग में यह उदान वायु ध्यान (मेडिटेशन) के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। हठ योगी इसी वायु की साधना कर तरह- तरह की ऋद्धियाँ और सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं।
5. **व्यान वायु -** यह वायु हमारे शरीर में रक्त के साथ अवशोषित होकर सारे शरीर में रक्त प्रवाह के साथ निरंतर बहती रहती है।

इस प्रकार प्राणायाम इन सभी पांचों वायु के नियमन का गहन और कठिन अभ्यास है। प्राणायाम के अभ्यास के साथ हम प्राणों की गति और उसके आयाम को परिवर्तित करने में सक्षम हो जाते हैं । अभ्यास के साथ जब हमारे प्राण वायु अत्यंत सूक्ष्म हो जाते है तब वह सुषुम्ना नाड़ी के माध्यम से हमारे शरीर में आज्ञा चक्र को जाग्रत करते हैं।

प्राणायाम हमारे स्वांस की एक अत्यंत रहस्यमयी प्रक्रिया है जो कि नौसिखियों के लिए एक बेहद खतरनाक प्रक्रिया भी है। इसीलिए प्राणायाम करने के लिए हम सब को एक योग्य गुरु की निःतांत आवश्यकता होती है ।

अब हम मूल विषय की ओर वापस लौटते हैं कि सीता जी की खोज के लिए आखिरकार कौन इस विशाल सागर को लांघ सकता है । सबसे पहले हम जामवंत जी के बारे में संक्षिप्ततः जानेंगे। जामवंत जी वास्तव में एक ज्ञान मार्गीय साधक थे ।

जैसा कि उनके नाम से ही स्पष्ट है कि वह कहीं जाकर ''जाम'' हो सकते हैं अर्थात रुक सकते हैं। यहां जाम का अर्थ दरअसल संस्कृत भाषा के ''याम'' शब्द से है जो कि प्राणायाम शब्द में छिपा हुआ है। इसको और भी सरल शब्दों में समझे तो याम शब्द का अपभ्रंश ही हिंदी और अंग्रेजी भाषा में जाम शब्द है। यहां जामवंत जी यह साफ-साफ कह रहे हैं कि यद्यपि वे ध्यान (मेडिटेशन) की अवस्था में इस भवसागर को पार करने का प्रयास कर सकते हैं लेकिन इस प्रक्रिया में वे बीच में ही ''जाम '' हो जाएंगे।

आपकी जानकारी के लिए मैं आपको यह बताना चाहूंगा कि भले ही जाम **(JAM)** शब्द अंग्रेजी भाषा में एक बेहद प्रचलित शब्द है लेकिन उसका अर्थ भी संस्कृत भाषा के शब्द के समान ही है अर्थात रुक जाना। ट्रैफिक जाम,रोड जाम तो बच्चा-बच्चा भी जानता है। ''वंत '' शब्द का अर्थ होता है ''स्वामी'' इस प्रकार जामवंत उस साधक को कहते हैं जो अभ्यास के फलस्वरूप अपनी सांसों को लंबे समय तक अपने शरीर के भीतर रोक सकने में सक्षम हो। ठीक इसी तरह से अंगद का भी यही अर्थ होता है । इसे दूसरे सरल शब्दों में कहा जाए तो वह साधक जिसका अंग गद हो जाए यहां ''गद'' का अर्थ अल्प कालीन जाम शब्द की तरह ही है ।

आध्यात्म की दृष्टि से हम देखें तो प्रायः इस भवसागर को पार करने के पश्चात कैवल्य की उच्च स्थिति को प्राप्त हो जाने के पश्चात् बड़े-बड़े साधक लोग भी इस भवसागर में वापस लौटकर आना नहीं चाहते हैं । ठीक यही स्थिति जामवंत जी की भी है।

अंगद जी की आध्यात्मिक स्थिति जामवंत जी से कुछ बेहतर है । वे भगवान श्रीराम की भक्ति में लीन होते हुए भी इस भवसागर में वापस लौटने की पर्याप्त क्षमता रखते हैं लेकिन उनमें अभी भी आत्मविश्वास की कमी है।

दरअसल जामवंत और अंगद जी समेत उपस्थित अन्य वानर योद्धागण ज्ञानमार्गीय वर्ग के साधक लोग हैं जिनके इस भवसागर से पार होने में सफलता की सम्भावना एवं इस भवसागर में वापस लौटने की क्षमता बहुत ही कम होती है । चूँकि हनुमान जी भक्ति मार्गीय साधक थे और उनसे बड़ा भगवान श्रीराम का कोई भक्त हुआ ही नहीं है, यही कारण था कि पूरी वानर सेना में भगवान श्रीराम ने हनुमान जी के सिर पर हाथ रखकर विशेष आशीर्वाद के साथ-साथ अपनी नाम वाली अंकित मुद्रिका केवल भक्ति मार्गीय हनुमान जी को ही दिया था।

अतः इस भवसागर में वापस लौटने वाली केवल एक ही शक्ति है और वह किसी भक्त के प्राणवायु पर आधारित है। प्राण वायु को भवसागर पार करने के लिए प्रभु के नाम की मुद्रिका की आवश्यकता होती है इसलिए हनुमान जी के मुख में प्रभु श्रीराम नाम की मुद्रिका का होना इसका एक गहन आध्यात्मिक संकेत है।

हनुमान जी के द्वारा समुद्र को पार करने के पूर्व एक विशाल रूप धारण किया जाता है लेकिन ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि जब लंका में वे प्रवेश करते हैं तो अति सूक्ष्म रूप धारण कर लेते हैं हनुमान जी का यह अति सूक्ष्म रूप हमारे सूक्ष्म शरीर का द्योतक है।

यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि हम सब लोग हनुमान जी को पवनसुत भी कहते हैं। सुत का एक अर्थ पुत्र होता है तो दूसरा अर्थ होता है सूत्र । सूत्र अर्थात फार्मूला। सूत्र का एक और अर्थ होता है रस्सी। यह सूत्र लंबाई नापने के काम आती है । योग की दृष्टि से पवन सुत का तात्पर्य इन सांसों की लंबाई से संबंधित है। हमारी सांसे जितनी अधिक लंबी होगी उतना अधिक हम इस भौतिक जगत की ओर प्रवेश करेंगे और इसके ठीक विपरीत हमारे सांसों की लंबाई जितनी कम होगी उतना हम अपने शरीर के भीतर आध्यात्मिक जगत की ओर प्रवेश करेंगे। यही मुख्य कारण है जिसकी वजह से हनुमान जी ने अपने शरीर के वृहत और सूक्ष्म दोनों रूप का प्रदर्शन किया था ।

इस प्रकार जब हम इस भवसागर को पार करने के लिए ध्यान (मेडिटेशन) की अवस्था में बैठते हैं तो हमारे प्राण वायु की लंबाई जोकि काफी बड़ी होती है वह धीरे-धीरे सूक्ष्म रूप में परिवर्तित होती जाती है और अंदर जाकर वह अपनी आत्मा को देख लेती है। अपनी उस गुप्त आत्मा के दर्शन ही सीता जी के दर्शन है जो केवल हनुमान जी ही कर सकते हैं । सीता जी अर्थात अपनी ही आत्मा के दर्शन के उपरांत इस भौतिक जगत की स्वर्णमयी लंका का विनष्टीकरण होना भी स्वाभाविक रूप से अनिवार्य है । इस यही कारण है कि हनुमान जी ने लंका के भीतर सुंदर से दिखने वाले वाटिका,भवन अट्टालिकाओं आदि को पूर्णतः जला दिया था ।

वास्तव में लंका जाकर मां सीता जी को खोजना एक बेहद कठिन साधना है जो कि ईश्वर कृपा के बिना संभव ही नहीं हो सकता है। साथ ही यह भी ध्यान रखें कि लंका में ऐसा कोई कार्य नहीं है जो प्रभु की इच्छा और प्रेरणा के बगैर हुआ हो। उदाहरण के तौर पर देखें कि हनुमान जी की पूंछ में

रावण द्वारा आग लगवाने और आग लगने के बावजूद भी हनुमान जी को कोई नुकसान नहीं पहुंचना, यह स्पष्ट प्रदर्शित करता है कि भगवान अपने भक्तों का पूरा ख्याल रखते हैं। इस संकेत को तुलसीदास जी ने अपने इन चौपाइयों में कुछ इस तरह अभिव्यक्त किया हैः-

ताकर दूत अनल जेहिं सिरिजा। जरा न सो तेहि कारन गिरिजा।।

अर्थात जिस ईश्वर ने अग्नि का सृजन किया है भला उसके खुद का दूत उसकी ही अग्नि से कैसे जल सकता है। इसके साथ यह भी देखिए कि जब हनुमान जी लंका जला रहे थे तब ईश्वर की ही प्रेरणा से 49 प्रकार की वायु चलने लगी।

हरि प्रेरित तेहि अवसर, चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा ,कपि बढ़ि लाग अकास।।

कृपया ध्यान रखें कि ज्ञानी और भक्त में केवल यही अंतर होता है कि ज्ञानी कैवल्य पद पाकर इस भवसागर के पार हो जाता है और वापस नहीं आता लेकिन भक्त बारंबार इस धरा पर लौटकर आता है और अपने प्रभु के कार्य को करने में अत्यंत आनंद का अनुभव करता है।

अब हम हनुमान जी की उन विशिष्ट क्षमताओं के बारे में भी तनिक चर्चा कर ले जिसकी वजह से वह समुद्र को लांघने में सफल हुए। समुद्र-लंघन में सर्वप्रथम हनुमान जी का सामना सुरसा नामक नागों की माता से पड़ता है। सुरसा देवताओं के अनुरोध पर हनुमान जी की परीक्षा लेने उपस्थित होती है सुरसा एक साधक के सात्विक गुण एवं आध्यात्मिक ऊंचाईयों को दर्शाती है। यद्यपि किसी भी व्यक्ति के भीतर सात्विक गुण का होना एक बहुत अच्छी बात मानी जाती है लेकिन किसी साधक में सात्विक गुण का होना भी उसके आध्यात्मिक पथ में एक बहुत बड़ी बाधा की तरह है, क्योंकि ईश्वरीय मार्ग में उस साधक को अंततः गुणातीत अवस्था प्राप्त करनी होती है ।

अतः इस त्रिगुणात्मक प्रकृति में यदि उस साधक में तनिक भी सात्विक गुण शेष रह जाए तो वह भी साधक के लिए एक सबसे बड़ा आध्यात्मिक रोड़ा सिद्ध होती है। चूंकि देवता सात्विक प्रकृति के होते हैं और उनकी अभिरुचि सुंदर-सुंदर रसों में होती है इसीलिए सांकेतिक तौर पर सुरसा को हनुमान जी की परीक्षा के लिए भेजा गया था। सुरसा की कथा एक बेहद विस्तृत कथा है जिसके बारे में मैंने पृथक से एक शोधपत्र लिखा है। अतः उसकी यहां पुनरावृत्ति करना उचित प्रतीत नहीं है।

अब हम समुद्र लांघने की कथा में सुरसा प्रसंग के आगे चलते हैं। तत्पश्चात हनुमान जी का सामना जब एक ऐसी राक्षसी के साथ होता है जो कि वायु के साथ आकाश मार्ग से जाने वाले साधक की परछाई को पकड़कर उसे खा जाती है। दरअसल यह साधक के भीतर राजसिक गुणों की उपस्थिति का संकेत करती है। साधक के भीतर राजसिक गुण का होना ,एक छिपा हुआ आत्म प्रशंसा का साधन है जो साधक को कब धर दबोच ले, यह उस साधक को कभी पता न चल सकेगा।

समुद्र पार करने के उपरांत लंका में प्रवेश के पहले एक तीसरी राक्षसी लंकिनी से जो कि तामसिक गुण की प्रतीक है, हनुमान जी से उसका सामना होता है और हनुमान जी ने अपनी एक मुष्टिका के प्रहार से ही उसको वहीं ढेर कर दिया।

अतः इस प्रकार केवल ईश्वर का भक्त ही सफलता पूर्वक इन तीन गुणों से निपट सकता है जबकि कोई ज्ञानी इन तीन गुणों के चक्कर में फंसकर अपने पद से विमुख हो सकता है । यही कारण है कि हनुमान जी सफलतापूर्वक लंका में प्रवेश कर गए और उसी प्रकार सफलतापूर्वक लौटकर भी वापस आ गये जबकि अंगद और जामवंत जी लंका जाने में अपने आप को असमर्थ अनुभव कर रहे थे।

जहां तक भौतिक रूप से समुद्र लांघने की बात है तो मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम ने सामान्य मनुष्यों की तरह ही इस भौतिक जगत के सभी नियम- कानून का विधिवत पालन करते हुए अपने सहयोगियों एवं दक्ष इंजीनियरों की मदद से रामसेतु का निर्माण कराया गया। इसके पश्चात ही वे अपनी सेना के साथ उस राम सेतु में पैदल चलकर लंका पहुंचे।

यहां यह भी उल्लेख करना आवश्यक होगा कि रामसेतु के निर्माण में जिन शिलाओं का उपयोग किया गया था उन सब में राम नाम अंकित किया गया था जिसके कारण वे सब आपस में पूरी मजबूती से संयुक्त हुए और उन्होंने एक ऐसा मजबूत रास्ता दिखाया जो कि हम सबको भी अपने जीवन में अवश्य ही देखना और उसका अनुपालन करना चाहिए।

3. निष्कर्ष

हनुमान जी भक्ति मार्गीय थे और उनसे बड़ा भगवान श्रीराम जी का कोई भक्त नहीं है । केवल ईश्वर का भक्त ही इस प्रकृति रुपी मायावी भवसागर के तीन गुणों से निपट सकता है इसलिए हनुमान जी का इस भवसागर से पार जाकर तथा वापस लौट आना संभव हुआ। जामवंत और अंगद जी समेत अन्य वानरगण ज्ञानमार्गीय वर्ग के साधक होने के कारण इस भवसागर से पार तो शायद चले भी जाएँ लेकिन तत्पश्चात वे कभी भी वापस नहीं आ सकते हैं , इन्हीं कारणोंवश जामवंत जी के द्वारा हनुमान जी को मां सीता जी को खोजने हेतु विशाल सागर को लांघने हेतु इन्हे लंका भेजा गया था ।

4. सन्दर्भ पुस्तकें

1. श्रीरामचरित मानस
2. पातंजलि योग दर्शन
3. वाल्मीकि रामायण

4. मेरे स्वयं के अनुभूत तथ्य

5. प्रमाणीकरण

मै संतोष कुमार मिश्र "असाधु" यह प्रमाणित करता हूँ की यह शोधपत्र मेरे द्वारा गहन अनुसन्धान उपरांत लिखा गया है जो कि अभी तक अप्रकाशित है।

सुंदरकांड के सुन्दर हनुमान

ISBN: 978-1-960627-06-3

Ameeta Gupta
(ameetagupta12@gmail.com)

हनुमान पवन हैं, पवनपुत्र हैं, पूरी सृष्टि में व्याप्त हैं. पूरी सृष्टि पवन में व्याप्त है। इस सृष्टि में पैदा हुई हर वस्तु , चर अचर , जल चर , स्थावर जंगम के शवास में हनुमान हैं। उनके बिना जीवन हो नहीं सकता ।वो हर जीव के इतना निकट हैं, जितना वेदों में वर्णित ब्रह्म तत्व है। ब्रह्म तत्व को समझना, जानना प्राप्त करना हर जीवन का लक्ष्य है। पर वहाँ तक पहुंचने के लिए प्राणवायु ही एक मार्ग है । जिसे हम हनुमान कह रहे हैं। हनुमान हमारे रोम रोम में उपस्थित हैं। ब्रह्म बने बिना ब्रह्म का अनुमान नहीं लगा सकते, परन्तु हनुमान का अनुमान , पल पल, क्षण क्षण , हर श्वास प्रश्वास मे महसूस कर के ब्रह्म का अनुमान लगा सकते हैं।

हिंदू धर्म में वर्णित अनगिनित कथाओं से , रास्तों से , हनुमान की उत्पत्ति, जन्म का सार पता चलता है। वे पवन पुत्र हैं । वे ईश्वर नहीं हैं। वे मनुष्य भी नहीं हैं। वे वनचर हैं। वे स्वयं को शाखामृग कहते हैं।सुन्दर कांड में वह
विभीषण से कहते हैं:

"कहहूं कवन मै परम कुलीना ।
कपि चंचल सब ही विधि हीना ॥"

"प्रातः लेइ जो नाम हमारा ।
तेहि दिन ताहि न मिले अहारा ॥"
सुन्दर कांड दो हा 6.12-14

श्री राम से कहते हैं
"प्रभु प्रसन्न जाना हनुमान ।
बोला बचन बिगत अभिमाना ॥"

"शाखामृग के बड़ि मनुसाई ।
साखा तें साखा पर जाई ॥"
सुन्दर कांड दो हा 32.11-14

जहाँ राम हैं, वहाँ हनुमान होंगे ही। वह भक्त हैं, वह सेवक हैं। राम ब्रह्म हैं। वेदों में वर्णित, चित्रित सतयुग के गुणों को पृथ्वी पर स्थापित करने के लिये मनुष्य के रूप में अवतरित हुए हैं । और साधारण मनुष्य की तरह उन्होंने इन गुणों को जिया और सर्वसम्मत को सिखाया है। उन्हीं सद्गुणों को हनुमान ने मानस के सुन्दर कांड में अक्षरक्षः हमें सिखाया। चाहे हम इसे रामायण में इतिहास के रूप में देखें या रामचरित मानस में भक्ति के रूप में देखें, इस कथा में एक राजा राम हैं, एक सीता रानी हैं, एक रावण भी हैं।और हजारों पात्र हैं। पात्र भी ऐसे कि पहाड़, पत्थर, कन्दरा, वृक्ष, जंगल बानर, भालू. राक्षस मानो पूरी सृष्टि इस कथा में सम्मिलित है।और इस पूरे प्रसंग मे हनुमान एक सूत्रधार के रूप में प्रकट होते हैं।वह पवन रूप हैं। वे इस कहानी के श्वास हैं, जिसके बिना कोई जीवित नहीं रह सकता ..

श्रीराम जो नारायण हैं, अद्भुत गुणों को धारण करते हैं वही सब सद्गुण हनुमान नामक वानर में बखूबी दिखाई देते हैं। जीवन जीने का तरीका, जीवन के हर मोड़ पर हनुमान दिखाते हैं और सिखातें है की कैसे बात करें, क्या बात करें, कब चुप रहें, कब उठें, कब बैठें, कब छोटे हो रहें , कब विशाल रूप धारण करें।

मैनाक पर्वत का केवल स्पर्श करके अपनी कृतज्ञता बताते हैं। सिहिंका को अपनी बुद्धि का परिचय देते हैं। निशचरी के छल को देखकर उसे मारते हैं। छोटा रूप धरकर लंका में प्रवेश करते हैं। ब्राह्मण के रूप में विभीषण से मिलते हैं। हर कदम पर श्री राम को हृदय में धर कर बुद्धि से निर्णय लेते हैं, और कहते हैं

"सो सब तब प्रताप रघुराई।
नाथ न कछु मोरी प्रभुताई ॥"
सुंदरकांड दोहा 32.17-18

लोग कहते हैं, सुन्दर कांड में नारी को ढोल गंवार शूद्र और पशु के सम्कक्ष खड़ा किया है। परन्तु हनुमान का पूरा व्यक्तित्व नारी के प्रति आदर सम्मान प्रेम श्रद्धा और सेवा से परिपूर्ण दिखता है। सीता माता की खोज में निकले हनुमान, स्वयं को छुपाकर उचित समय की प्रतीक्षा करते हैं..

"तरू पल्लव महूं रहा लुकाई।
करई बिचार करौं का भाई ॥"
सुंदरकांड दोहा 8.1-2

वह सीता माता के कष्ट को, उनकी विवशता को भावनात्मक रूप से परिपक्व मनुष्य की तरह महसूस करते हैं। वह अपने वानर रूप की सीमा भी समझते हैं। उनसे सीता माता का दुख देखा नहीं जाता। तब वह राम नाम की मुद्रिका सीता माता के सामने गिरा देते हैं। वह जानते हैं की राम नाम मन में आते ही दुखों का नाश हो जाता है। इसी राम नाम की मुद्रिका से वे इतना बड़ा समुद्र पार कर आये थे। उसी का एक अवलंबन उन्होंने सीता माता को दिया।

कपि करि हृदय विचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ ॥
सुंदरकांड सोरठा 12

हनुमान भक्त हैं। उन्हें राम की कथा कहना और सुनना सबसे प्रिय है। वह वही मधुर वाणी में कहना शुरू करते हैं।

रामचन्द्र गुण बरनै लागा।
सुनतहि सीता कर दुख भागा ॥
सुंदरकांड सोरठा 12.9-10

सीता माता के प्रति वे संवेदनशील हैं। वे उन्हें ढांढस बंधाते हैं। वे उन्हें श्रीराम के मन में, उनके प्रति प्रेम का भरोसा दिलाते हैं। वह सीता माता के श्री राम के प्रति विश्वास को दृढ़ करते हैं। यह सब श्री राम ने उनसे नहीं कहा था। पर उनका नारी के प्रति व्यवहार,आदर,संवेदनशीलता जैसे गुण यदि एक वानर में दिखते हैं तो क्या वे मनुष्य जाति के लिए एक उदाहरण नहीं हैं?

सीता माता के दर्शन के बाद वह समझ जाते हैं कि सीता माता आदि शक्ति हैं। राम ब्रह्म हैं। स्वरूप में अलग दिखते हुए भी ये कभी अलग नहीं हो सकते हैं। इसलिए हनुमान ने फिर कभी श्रीराम को श्री राम नहीं कहा। उनकी जिह्वा पर सियाराम का मंत्र बस गया।

श्रीराम के कार्य संपूर्ण करते हुए, दिन रात सियाराम का जप करते हुए हनुमान राम मय हो गए। वह अपने

ईष्ट का स्वरूप ही पा गए। परन्तु अहम ब्रह्मास्मि, हनुमान का उद्देश्य नहीं था। वह तो भक्ति के रस में सरोबार, दास का ही रूप चाहते हैं। वे न ईश्वर बनना चाहते हैं, न मनुष्य , पर अपने ईष्ट की भक्ति ही हनुमान का लक्ष्य है।

नाथ भगति अति सुखदायिनी।
देहु कृपा करि अनुपायनी ॥
सुन्दर कांड दोहा नंबर 33.1-2

श्रीराम की सेवा करते हुए ही वे ब्रह्म के समान पूरी सृष्टि में व्यापक हो गए।

एक ऐसा प्रसंग आता है जब सीता माता पृथ्वी में समा चुकी थी, लक्ष्मण भी जा चुके थे, लव और कुश कुशलता से राज़ कर रहे थे, तब राम भी अपने मुक्ति चाहने लगे। परन्तु हनुमान के होते हुए यम भी द्वार नहीं लांघ पाए और अयोध्या में प्रवेश नहीं कर पाये।

"रामद्वारे तुम रखवारे होत न आज्ञा बिन पैसारे" हनुमान चालिसा

तब राम ने अपनी अंगूठी धरती पर गिरा दी। राम के हर कार्य को करने को आतुर हनुमान तुरंत उसकी खोज में पाताल लोक लोक तक गए। वहाँ वासुकी नाग उनसे रामकथा कहने को कहते हैं। हनुमान को रामकथा बहुत प्रिय है।वे पूरी भक्ति और तन्मयता से राम कथा कहते हैं। फिर राम की अंगूठी के विषय में पूछते हैं। वासुकी नाग उन्हें राम नाम की सैंकड़ो जगमगाती हुई अंगूठियों का ढेर दिखाते हैं। हनुमान अचंभित हो जाते जाते हैं। और समझ जाते हैं, कि हरि अनंत हैं। अनंत समय से हैं। आदि से अंत तक हैं। वे अंतहीन हैं।

एक वानर होकर वे समझ जाते हैं कि ऐसा कोई समय नहीं था जब राम नहीं थे या नहीं होंगे, और ऐसा कोई समय नहीं था जब हनुमान नहीं थे और नहीं होंगे।

जब जब यह सृष्टि जागेगी, त्रेता युग शुरू होगा तब लक्ष्मी सीता के रूप धरती से उठेंगी ओर विष्णु राम की तरह अवतरित होते रहेंगे। जिससे मनुष्य यह सीख सके कि श्रद्धा और विश्वास से बुद्धि और हृदय विशाल हो जाता है। चित्त निर्मल हो जाता है और हम ईश्वर के करीब आ सकते हैं।

अंत में राम हनुमान से पूछते हैं “Monkey what are you?” and Hanuman answers, “when I don’t know who I am, I serve you. When I know who I am, I AM YOU”

क्या हम सब इसी स्थिति मे नहीं है ? हनुमान का अर्थ है हनु + मन।

अर्थात मन का वध करना।

इस अर्थ में हनुमान उस स्थिति को कहेंगे जब व्यक्ति मन का हनन करके हनुमान जी के समान शक्तिशाली बन जाता है। क्योंकि मन सदैव ही एक वानर की भाँति विषयों में दौड़ता रहता है। इसी प्राण वायु को जब हम प्राणायाम के द्वारा सुषुम्ना में प्रवाहित कर के धीरे धीरे सशक्त और शांत अवस्था में लाते हैं तब हम हनुमान जी के समान शक्तिशाली बन जाते हैं। और वज्र के जैसे मानसिक बल को प्राप्त करते हैं। हनुमान जी हमें बल बुद्धि और विद्या प्रदान करते जो कि एक एकाग्रचित मन हमें प्रदान करता है।हनुमान जी हमें बल बुद्धि और विद्या प्रदान करते हैं जो कि एक एकाग्रचित मन हमें प्रदान करता है।

अंत में राम हमारे हृदय आकाश हैं, सीता हमारे भीतर का सत्व हैं, और हनुमान हमारी प्राण वायु हैं। इसलिए कहते हैं हृदय चीर के राम सिया के दर्शन दिया कराय हनुमत ईश्वर की कृपा से हम सब को हनुमान जी का आशीर्वाद मिलें।

ग्रंथ सूची

1. तुलसीदास कृत रामचरितमानस
2. सुंदरकांड
3. हनुमान चालिसा
4. देवदत्त पटनायक “सीता”

जनक और जानकी: पिता-पुत्री की अप्रतिम मिसाल

ISBN: 978-1-960627-06-3

नीलम झा
APS INDIA
(njforexamcell18@gmail.com)

हमें स्वधर्म का निर्वाह करना सिखाती,
रामायण कथा शुभाचरण करना बताती

प्रेम की अनकही भाषा में, पिता और पुत्री के बीच का रिश्ता जितना गहरा होता है, उतना शायद ही कोई और रिश्ता हो। यह समर्पण, मार्गदर्शन और अटूट समर्थन के धागों से बुना हुआ रिश्ता है। भारतीय संस्कृति में मानवीय गुणों के अंतर्गत प्रेम, त्याग, करुणा, समर्पण आदि का बहुत महत्व है ।इन गुणों को चरित्र का हिस्सा बनाने में पिता की महती भूमिका होती है। रामकथा में मिथिला के राजा जनक की भूमिका महत्वपूर्ण है। वे माता सीता जी के धर्म पिता तथा श्री राम के ससुर थे। सीता जी उन्हें भूमि से प्राप्त हुई थी। इस पुत्री का लालन-पालन जनक जी ने जिस तरीके से किया, वो वर्तमान परिपेक्ष्य में अनुकरणीय और प्रासंगिक ही नहीं, प्रेरक भी है ।

1. प्रस्तावना

राजा जनक एक आध्यात्मिक पुरुष थे । राजा जनक ने सीता जी को श्रेष्ठ संस्कार दिए ।

सीता जी जितनी करुणा की सागर थीं, उतनी ही प्रशिक्षित योद्धा भी थीं। वह अर्थशास्त्र (राजनीति विज्ञान) के ज्ञान में जितनी निपुण थीं, उतनी ही ब्रह्मांड के ज्ञान में भी निपुण थीं। वह श्री राम की मुख्य सलाहकारों में से एक थीं। सीता जी ने भले ही त्याग का जीवन चुना हो, लेकिन यह निर्णय उन्होंने स्वेच्छा से लिया था। प्रश्न उठता है इन महान गुणों का बीजारोपण उनके व्यक्तित्व में किसने और कैसे किया...

2. विस्तार

आज आदर्श पुत्री के रूप में सीता जी का उदाहरण देना इंद्रधनुष में एक और सुंदर रंग को चित्रित करने के समान है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सीता जी के चरित्र में श्रेष्ठ मानवीय गुणों का समावेश अपने पिता द्वारा दिए गए श्रेष्ठ संस्कारों के कारण ही हुआ।

राजा जनक ने सीता जी को ये शिक्षाएं दीं -

1. पितृत्व और प्रेम

राजा जनक ने सीता जी को राजसी विशेषताओं, धार्मिकता, साहस और आत्म-स्वीकृति की शिक्षा दी। वे अपना कर्तव्य सीता जी को केवल शारीरिक और मानसिक सुरक्षा प्रदान करना ही नहीं, बल्कि उनके आध्यात्मिक विकास में सहायक होना भी मानते थे।

2. शिक्षा और स्वतंत्रता

राजा जनक ने सीता जी को उच्च ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया, जिससे वह समय की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बन सकें। जनक जी ने गार्गी जैसी महिला ऋषि को उनकी गुरु बनाया।

3. **धर्म और आदर्श -** राजा जनक ने उन्हें बताया कि सत्य और धर्म का पालन हमेशा करना चाहिए, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों। उन्होंने बताया कि असत्य के मार्ग में चलना सदैव अस्वीकार्य है। हम पाते हैं कि इन दोनों का संबंध पिता और पुत्री के पारंपरिक संबंध से कहीं अधिक एक आध्यात्मिक और नैतिक संबंध का प्रतीक है।

4. समाज में भूमिका

उन्होंने बताया कि न केवल एक पत्नी बल्कि एक बेटी, एक शिक्षित महिला और एक देवी के रूप में भी सीता जी की पहचान महत्वपूर्ण है। इस प्रकार राजा जनक का अपनी पुत्री के प्रति स्नेह और मार्गदर्शन ने सामाजिक विचारधारा को प्रभावित किया।

जब सीता जी के जंगल में जाने की बात आई तो राजा जनक ने उनके निर्णय का समर्थन किया।

5. माता-पिता के रूप में चिंतन

राजा जनक ने कठिनाइयों में सीता जी का सहारा बनने की भी कोशिश की। जब सीता जी को 'अग्निपरीक्षा' से गुजरना पड़ा, तब राजा जनक ने न केवल अपनी बेटी पर विश्वास किया, बल्कि यह भी सुनिश्चित किया कि उसका मान-सम्मान सुरक्षित रहे।

6. **संकट के समय धैर्य बनाए रखना*:** राजा जनक ने अपनी पुत्री को सिखाया कि संकट के समय धैर्य बनाए रखना आवश्यक है। उन्हें यह विश्वास दिलाया कि कठिनाइयों का सामना करके ही व्यक्ति अपनी असली शक्ति को पहचान सकता है।
7. **समानता और सम्मान:** राजा जनक ने उन्हें यह भी सिखाया कि हर व्यक्ति को समानता और सम्मान के साथ देखना चाहिए। उन्होंने उनके सामने यह उदाहरण रखा कि प्रेम और विश्वास हमेशा परस्पर होते हैं। ये बुनियादी तत्व ही किसी भी रिश्ते की नींव होते हैं।
8. आत्मविश्वासपूर्वक कर्तव्य का पालन करना - राजा जनक ने सीता जी से कहा कि न केवल एक पत्नी बल्कि एक पुत्री और एक व्यक्ति के नाते भी अपने कर्तव्यों का पालन करना अनिवार्य है।
9. सीता जी को विदा करते समय पिता के रूप में जनक जी ने बिटिया से कहा,

"तुम पुत्री से नारी बन गई हो, कोई ऐसा आचरण नहीं करना जिससे अगले कुल की मर्यादा को ठेस पहुँचे ।"

बहु बिधि भूप सुता समुझाई , नारि धरम कुल रीति सिखाई

परंतु विदेह कहलाने वाले राजा जनक की धीरता भी पुत्री को विदा करते समय खत्म हो गई - ये वो राजा हैं, जिनके बारे में कहा जाता है कि काभी-कभी उनका एक हाथ पुष्प पर रख दिया जाता था और दूसरा अग्नि पर और उसके बाद उनके नेत्र बंद कर दिए जाते थे, तो उन्हें अनुभव ही नहीं होता था कि उनका कौन सा हाथ पुष्प पर है और कौन सा अग्नि पर। उन्हें दोनों हाथों पर समान अनुभूति होती थी। ऐसे परम विरागी कहे जाने वाले राजा जनक भी अपनी पुत्री को विदा करते समय भाव विह्वल हो गए।

सीय बिलोकि धीरता भागी , रहे कहावत परम बिरागी
लीन्हि राय उर लाइ जानकी, मिटी महा-मरजाद ज्ञान की।

अब बिटिया का आचरण भी देखिए

जब पुष्प वाटिका में सीता जी ने श्री राम जी को देखा तो उनके नेत्र पुलकित हो गए, वे अपलक उन्हें देखने लगीं। परंतु उन्होंने उस प्रेम को अपने हृदय में धारण कर लिया और वहाँ से वापस आ गईं। स्वयं प्रणय निवेदन नहीं किया। न ही सभा में अन्य राजाओं द्वारा धनुष न टूटने पर पिता को विचलित होते देख यह कहा कि मैंने अपने वर का चयन कर लिया है,आप चिंता न करें क्योंकि वे पिता की मर्यादा का पालन करते हुए अपने पिता के वचन के पूर्ण होने का इंतजार कर रही थीं।

विवाह के बाद पिता-पुत्री की मर्यादा देखिए

वनवास की बात सुनकर जब जनक जी पुत्री से मिलने पहुँचे तो देखा कि उनकी पुत्री तपस्विनी के वेश में है, उनका प्रेम यह देखकर और बढ़ गया। उन्होंने कहा – "बेटी! आज तुम्हें इस वेश में देखकर मुझे समझ में आ गया कि तुमने दोनों कुलों को पवित्र कर दिया। बचपन में डाले गए संस्कारों को तुमने पुष्पित- पल्लवित कर मुझे गौरवान्वित किया है।"

यह सुनकर सीता जी ने सोचा कि कहीं उनका मन इतनी मीठी और प्रेम भरी वाणी सुनकर बदल न जाए। और वो अपने कर्तव्य पथ से तनिक भी विचलित नहीं हुईं।

सीता जी ने अपने अपूर्व धैर्य का परिचय उस क्षण भी दिया, जब चित्रकूट में जनक और सुनयना उनसे मिलने गए। एक पुत्री जो महल के तमाम सुखों को ठुकराकर पति के साथ स्वेच्छा से वन में निवास करती हैं। अपने व्यवहार से हर किसी को सन्तुष्ट रखती हैं। वही पुत्री जब अपने माता-पिता से मिलती हैं, प्रेम की विह्वलता के बावजूद अपने सूक्ष्म कर्त्तव्यबोध और अपार धैर्य का परिचय देती हैं।

एक पिता के रूप में जनक ने सीता जी को जो मनोबल प्रदान किया, वह द्रष्टव्य है—

तापस बेष जनक सिय देखी । भयउ पेमु परितोषु बिषेषी।।
पुत्री पबित्र किए कुल दोऊ । सुजस धवल जगु कह सबु कोऊ।।(अयोध्याकांड, दोहा 286, पृ. 533)
प्रायः ऐसा देखा गया है कि पुत्र हो या पुत्री उसमें माता-पिता के गुण आते ही आते हैं।

सीता माता में पालक पिता महाराज जनकजी के दो गुण आए हैं
समस्त क्लेशों को दूर करना और
सभी का कल्याण करना

श्रीरामचरितमानस में सीता

श्रीरामचरितमानस में सीता जी का प्रवेश पुष्पवाटिका प्रसंग से होता है, जहाँ सखियों के साथ वे गिरिजा-पूजन के लिए जाती हैं। राम और सीता का प्रथम दर्शन भी इसी स्थान पर होता है। सर्वप्रथम सीता जी का चरित्र एक व्रतचारिणी नवयुवती के रूप में सामने आता है, जो नित्य-प्रति माता की आज्ञा से गौरी-पूजन के लिए जाती है। एक सखी द्वारा पुष्पवाटिका में राम की उपस्थिति एवं उनके रूप की प्रशंसा सुनकर सीता उनके दर्शन हेतु व्याकुल हो उठती हैं—

तासु बचन अति सियहि सोहाने। दरस लागि लोचन अकुलाने।। (बालकाण्ड, पृ.196)

विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम जब धनुष तोड़ने के लिए उठे, उस समय सीता जी की व्याकुलता द्रष्टव्य है—

देखी बिपुल बिकल बैदेही। निमिष बिहात कलप सम तेही।। (बालकांड, पृ.221)

राम ने सीता की व्याकुलता ऐसी देखी, जैसे सीता के लिए एक-एक क्षण, कल्प के सामान बीत रहा हो। प्रेम की यह व्याकुलता मन के भीतर जो भी हो, परन्तु बाहर से बड़ा ही मर्यादित दिखाई देता है। दोनों एक दूसरे को नेत्रों की भाषा से ही परखते हैं; सीता ने मन ही मन राम को पति रूप में वरन करने के लिए निश्चय कर लिया —

प्रभु तन चितई प्रेम तन ठाना। कृपानिधान राम सबु जाना।। (पृ.220)

कहीं भी प्रेम अमर्यादित नहीं दिखता। सीता की चारित्रिक दृढ़ता का सबसे सशक्त पक्ष *राम-वन-गमन* प्रसंग में दिखाई देता है। सीता सोचती है —

चलन चहत बन जीवन नाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू।।

की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतबु कछु जाई न जाना।।(अयोध्याकाण्ड पृ.353)

प्राणनाथ वन जाना चाहते हैं, ऐसे समय में प्राण से अलग रहकर क्या मेरा शरीर यहाँ रह पाएगा? यह विचार सीता की अपूर्व दृढ़ता एवं आत्मबल का परिचायक है।

सीता जी के चरित्र का एक पक्ष चित्रकूट प्रसंग में भी दिखाई देता है। घर, परिजन सबकी स्मृति भुलाकर सीता राम के साथ सुख-पूर्वक रह रही थीं। वन के जीव ही उसके परिवार थे। कन्द-मूल और फल उसके भोजन । राजमहल की शैय्या छोड़कर चटाई की शैय्या थी। भरत और परिवार के अन्य सदस्यों के चित्रकूट आगमन पर सीता ने सबका यथोचित सत्कार किया, गुरुजनों की चरण-वन्दना की। सबकी सेवा करती की। भरत को आशीर्वाद दिया, सारे कुटुम्ब-जनों से यथा-योग्य व्यवहार किया।

प्रिय परिजनहि मिली बैदेही । जो जेहि जोगु भाँति तेहि तेही।।(अयोध्याकाण्ड, पृ.532)

सीता जी ने अपने अपूर्व धैर्य का परिचय उस क्षण भी दिया, जब चित्रकूट में जनक और सुनयना उनसे मिलने आए। एक पुत्री जो महल के तमाम सुखों को ठुकराकर पति के साथ स्वेच्छा से वन में निवास करती हैं। अपने व्यवहार से हर किसी को सन्तुष्ट रखती हैं। वही पुत्री जब अपने माता-पिता से मिलती हैं, प्रेम की विह्वलता के बावजूद अपने सूक्ष्म कर्त्तव्यबोध और अपार धैर्य का परिचय देती हैं—

सिय पितु मातु सनेह बस बिकल न सकी सँभारि।

धरनिसुताँ धीरजु धरेउ समउ सुधरमुबिचारि।। (अयोध्याकाण्ड, पृ.533)

सीता जी की अतुलित बुद्धिमत्ता का परिचय उनके हरण-काल के धैर्य और चतुराई में भी दृष्टिगोचर होता है। अपहरित सीता जी को जब रावण वायु-मार्ग से ले गया, तो उन्होंने रास्ते में अपने आभूषण फेंक दिया। यह उनकी दूरदर्शिता का संकेत है। उन्हें विश्वास था कि उनके प्रियतम राम एवं देवर लक्ष्मण, इस निशान के सहारे निश्चय ही उनको ढूँढ लेंगे। इसी तरह अशोक-वाटिका में जब उनके सामने रामभक्त हनुमान ने राम की अँगूठी गिराई, तो सहजता से सीता जी ने उस पर विश्वास नहीं किया। पूरी तरह परीक्षा लेने के उपरान्त ही उन्होंने हनुमान पर विश्वास किया। सीता जी की चारित्रिक दृढ़ता का एक पक्ष अशोक-वाटिका में भी दिखाई पड़ता है। रावण द्वारा कई तरह से भयभीत किए जाने के बावजूद वे उसकी ओर नहीं देखतीं बल्कि प्रतिकार करती हुई कहती हैं—

सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।। (सुन्दरकाण्ड, पृ.665)

सीता जी द्वारा यह प्रतिकार उनकी राम के प्रति आस्था और दृढ़ता का परिचायक है। इस प्रकार सीता जी का चरित्र समस्त मानस में प्राणवान एवं गतिमान है, जो सम एवं विषम परिस्थितियों में भी धैर्य एवं बुद्धिमत्ता का परिचायक है।

3. निष्कर्ष

पिता के रूप में राजा जनक ने सीता जी की इच्छाओं, लक्ष्यों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का सम्मान किया और एक आदर्श पिता-पुत्री संबंध को स्थापित किया। उनके प्रेम और समर्थन ने सीता जी को न केवल एक आदर्श बेटी बनाया, बल्कि एक प्रेरणादायक नारी भी। राजा जनक की शिक्षाओं और सीता जी की जीवन यात्रा ने हमें यही सिखाया है कि एक सशक्त और शिक्षित महिला समाज की धुरी होती है। राजा जनक और सीता जी की जीवन यात्रा को देखकर हमें ऐसा भी लगता है कि एक पिता अपनी पुत्री के जीवन को कैसे सम्पूर्ण बना सकता है। ये शिक्षाएँ आगामी पीढ़ियों के लिए भी मार्गदर्शक बनी रहेंगी।

4. संदर्भित ग्रंथ

1. वाल्मीकि रामायण
2. श्रीरामचरितमानस
3. उदयभास्कर
4. सीता स्वयंवर

The Difference between the Ramayana and Mahabharata

ISBN: 978-1-960627-06-3

Kajari Guha
(kajariguha@gmail.com)

India abounds in cultural heritage. The two great epics The Ramayana and The Mahabharata, are not an exception to this. We all might have the notion that these two epics are just ancient tales, but if we delve deep into the past, we find that they captured the zeitgeist of the age when they were written. It has been found that the two epics educate us about the ambivalence and significance of righteousness and wickedness, peace and war and selflessness and selfishness. With an apology to Devdutt Pattanaik, "While the Ramayana tells us what we ought to be, the Mahabharata tells us what we are." Bhagwan Gidwani opines that these epics reveal the essence of religion that is "fraught with complexities." Sometimes even the righteous have to meet difficult challenges and suffer from angst, not finding an answer to their questions. The two epics depict various aspects of life. Let us have an account of them through a meticulous review. We have undergone many versions and adaptations over ages, it has been accepted that the Ramayana was composed around 5th to 4th century BCE by the Sage Valmiki. Sage Vedvyasa is supposed to have composed the Mahabharata, one of the longest epics in world literature over centuries, around 400BCE and 400 CE, evolving over time.

1. Theme and the Characters

Prince Rama is the protagonist of the Ramayana. He is the seventh incarnation of God Vishnu. The epic describes his journey to rescue his wife, Sita, from Ravana, the demon king, throwing light on the concepts of duty, morality, loyalty and sacrifice. The other main characters that have added flavor to the story are Lakshmana and Hanuman. This epic focuses on the personal journey of Rama, covering his exile, Sita's abduction, and her eventual rescue. It also includes gods, demons and supernatural powers, but relatively depicts a few central characters and their relationships.

The Ramayana is primarily based on the concept of idealism. Every individual here tries to fulfill his moral duties. Rama is described as "Maryada Purushottama. Sita is the embodiment of virtue, patience and loyalty. Hanuman who has a significant role to play is the incarnation of loyalty.

Having explored a broader and more intricate spectrum of emotions, ethical dilemmas and philosophical questions, the Mahabharata deals with grave discussions on duty, righteousness, wealth, desire and salvation. The longest epic has around one lac verses encompassing mythology, history, theology and philosophy.

The Mahabharata has Lord Krishna, Arjuna, Bhishma, Draupadi, Duryodhana and Karna as its major characters who are instrumental in exposing the complexities of human mind. This tells us about the conflict between two royal families—-the Pandavas and the Kauravas that leads to the great Kurukshetra war. The theme revolves around the political, moral and philosophical principles including the discourse between Prince Arjuna and Lord Krishna in the great Bhagwan Gita.

2. Religious and Cultural Impact

In Hindu tradition, the Ramayana plays a much more vital role in religious rituals. The story is celebrated in various festivals like Dussera and Diwali. The characters like Ram and Sita are considered divine beings and their idealism is worshipped by the devotees. Ramlila is included in the theatrical performances to popularize the Indian culture.

The Mahabharata is known for the Bhagavad Gita, which is much more popular for its philosophical and historical implications. Bhagavad Gita is a part of the Mahabharata. This is one of the most important texts in Hinduism that educates us about how to live a righteous life navigating ethical dilemmas and comprehending the challenges and how to meet them by observing the nature of reality and divine guidance.

3. Morality

The Ramayana has a moral tone that is relatively simpler than the Mahabharata. The heroes are clearly defined by their values and virtuous actions whereas the villains are themselves conspicuous by their evil deeds. Lord Rama is the paragon of virtue while Ravana has been portrayed as the manifestation of imperfections. The values highlighted in this epic try to explain idealized virtues, making it easier to distinguish between good and evil.

However, the moral tone of the Mahabharata is more ambiguous. The characters are more like the human beings who are a mixture of virtues and vices, making it difficult to classify them under the categories of morality. The fiery spirit of Draupadi whose actions shaped the destiny of the entire Pandav's clan can never be found in Sita, Rama's wife who is as submissive as a lamb to her husband's desires. Bhishma, a noble warrior, fights for the Kauravas who are morally questionable. Duryodhan,

who has been the root cause of the war, and has been portrayed as a trickster and the catalyst bringing an end to the Hastinapur dynasty, was named Suyodhan by his father Dhritrashtra, affectionately. His name Duryodhan suggests "someone who is extremely difficult to wage war against". He shares all the responsibilities of his ninety-nine siblings and the mother Gandhari who used a blindfold to show her immense love and respect to her blind husband. In a nutshell, Duryodhan has all the qualities of a good soul, but sibling rivalry and the influence of his wicked maternal uncle Shakuni changed his mindset that posed him as a villain, hence the moral tone lagging behind.

Karna has been posed as a tragic hero, but he fights against his own brothers. The Mahabharata offers the clue to life's complexities. In this epic we find that morality often involves strange situations where it is difficult to choose as the choices are paradoxical.

4. Supernatural phenomena

The Ramayana introduces supernatural beings like gods, demons, and magical creatures. This is a heroic narrative where Rama as the avatar of Vishnu and characters like Hanuman possess divine powers.

The Mahabharata features Krishna as an incarnation of Vishnu with his divine intervention and supernatural occurrences. There are many celestial weapons and beings that are more intricately tied to the philosophical intrigues. Lord Krishna reveals his cosmic form to Arjuna in the Bhagwan Gita. This is deeply symbolic as it explains the complications, problems, entanglements and emotional traumas of human life and the universe along with the divine truth itself.

The final note

The Ramayana and the Mahabharata are both revered epics about India's cultural heritage. The Ramayana carries the seeds of ideal conduct and relationships, but the Mahabharata focuses on morality and the intricacies of human mind and heart. It is a sprawling exploration of human nature.

Respected C. Rajagopalachari said, "In the Mahabharata, one finds not just war and conflict but the internal battle of human emotions, choices and dilemmas." The Mahabharata exposes the encounter between heart and mind, struggling to create a poise between reason and romance that is nearer to human character, committing mistakes and trying to amend them whereas the Ramayana has a divine status that points out the follies and gives a warning to all about how to prevent them.

सुंदरकांड की सुंदरता

ISBN: 978-1-960627-06-3

संजना मिश्रा
HLY Degree College
(sanjanamisra09@gmail.com)

सुंदर या सुंदरता केवल हमारी इंद्रियों को संतुष्ट करने तक ही सीमित नहीं ं है।जब हम वास्तविक सुंदरता की बात करते हैं यतो उसका अर्थ होता है ऐसी सुंदरता जिसमें हम डूब जाए और रोम.रोम से सुंदरता की आभा प्रस्फुटित हो । सुंदरकांड एक ऐसा काण्ड है जिसमें कहीं भी प्रभु राम सशरीर उपस्थित नहीं है फिर भी हर घटनाए हर क्षणए हर घड़ी एहर पल एउनसे ही उपजी है और उन्हीं में समा रही है।इसमें मात्र कथात्मक सुंदरता नहीं है एबल्कि भक्तिए अध्यात्म एबुद्धिए संप्रेषण आदि अनेकों प्रकार की सुंदरता छिपी हुई है। यह सबसे लोकप्रिय कांड है ।आनंद की बात यह है कि यह वियोगए अत्याचार एआसुरी शक्तियों को दर्शाता है फिर भी लोग इच्छा पूर्तिए मनौतियों और अचूक उपाय के रूप में सबसे अधिक इसी कांड को पढ़ते हैं। जहां कीचड़ में भी सुंदर कमल खिल रहे हो वह हैय सुंदरकांड ।सुंदरकांड ऐसा मानस भवन है जिसमें चार परकोटे सुशोभित हो रहे हैं प्रेम एज्ञान औरअध्यात्म एभक्तिएकर्म जो सुंदरता को बढ़ा रहे हैं ।सुंदरकांड की अगर सुंदरता पर विचार करते हैं तो जो प्रत्यक्ष रूप से सुंदर दिख रहा है यानी कि लंका नगरी जो स्वर्ण नगरी है।वह मात्र सुंदरता का भौतिक स्वरूप है।सुंदरता को बढ़ाने वाला मुख्य तत्व है प्रेम ।आश्चर्य की बात यह है कि राम यहां पर अपने शरीर से उपस्थित नहीं है परंतु श्री हनुमान जी राम के प्रेम रस में डूबकर लंका गए तो हर क्षणए हर कणए में राम ही राम थे। लंकिनी के ऊपर जब प्रहार किया तब राक्षसी ने कहा कि मेरे बड़े पुण्य है कि मैं श्री राम जी के दूत को नेत्रों से देखा। वह जब लंका के अंदर प्रवेश करते हैं तो प्रभु राम को ही अपने हृदय में धारण करते हैं। प्रेम की वर्षा तब होती है जब विभीषण हनुमान जी से मिलते हैं। सुंदरता यह है किअसुर वंश का होने पर भी विभीषण में कोई लक्षण नहीं दिखाई देता है। यह ऐसा प्रेम है जो व्यक्ति को निर्भीक बनता है जिन्होंने अपने घर पर राम जी के आयुध अंकित कर रखे हैं हनुमान जी जब राम जी के बारे में बताते हैं तो दोनों के प्रेम का वर्णन ही नहीं करते बनता है य विभीषण कहते हैं कि मुझे भरोसा हो गया है कि अब मुझे हरि मिल जाएंगे। दोनों के नेत्रों में प्रेमाश्रु भर आते हैं य यह है सुंदरता। परंतु प्रेम की वर्षा अभी रुकी नहीं है यजब हनुमान जी अशोक वाटिका पहुंचते हैं यतो माता सीता के सिर पर जटाओं की एक वेणी है जो प्रदर्शित कर रही है कि वह दूर रहकर भी राम में ही एकाकार हैं। निरंतर राम जी को याद कर रही हैं। उनके चरण कमलों में लीन हैं।जिन हनुमान जी ने उन्हें कभी नहीं देखा वह उनके दुख से दुखी हो गए। यह प्रेम नहीं तो और

क्या हैघ् और जब वह माता सीता से मिलते हैं तो प्रभु का सेवक जानकर उनकी आंखों से अश्रु गिरने लगते हैं। सीताजी की दशा वियोग में भी संयोग को दर्शा रही है।रामके दूत हनुमान जी केनेत्रों में भी जल है ।प्रेमरस में सबआकंठ डूबे है। यह है सुंदरकांड की सुंदरता जहां आपस में रक्त संबंध ना होते हुए भी एक दूसरे के प्रति बस प्रेम ही प्रेम ।

सुंदरकांड में आध्यात्मिक सुंदरता भी देखने को मिलती है ।अध्यात्म एक दर्शन है एचिंतन हैए विद्या हैए सरल होकर कठिन लक्ष्य साधना और पुनः अपने स्वरूप में लौटना । हमारा स्वभाव में लौटना ही जीवन की सुंदरता है यक्योंकि हमारी सफलता हमें विनम्रता का गुण देती है।हम में अहम नहीं उत्पन्न करती है। हनुमान ने सुरसा के मुख में प्रवेश किया और रूप विशाल कियाऔर पुनः रूप छोटा करके निकल आए। हमारा मन असंख्य इच्छाओं का समूह है जो हमें अपनी और आकर्षित करता है पर हनुमान का छोटा रूप सीमित आवश्यकताओं काबोध कराता है। सुंदरकांड की सुंदरता हनुमान जी के सुंदर भाव में निहित है यवह कर्ता भाव से कार्य नहीं कर रहे हैं यबल्कि निर्भय होकर कर्तव्य वहन कर रहे हैं परंतु यदि ईश्वर का सहारा हो और स्वयं पर विश्वास हो तो भवसागर में भी भवसागर का सृजन होता है ।विभीषण और त्रिजटा की सौम्यता और प्रभु राम में आस्था यह दर्शाती है कि विपरीत परिस्थितियों में भी यदि भाव सुंदर हो तो जीवन का लक्ष्य स्वतः ही सुंदर हो जाता है ।लक्ष्य सुंदर है तो सफलता का स्वरूप भी सुंदर होगा। इसी प्रकार हनुमान जी द्वारा रावण को समझाए जाने पर क्रोध से भर उठना और उस स्थिति में हनुमान का मंद मंद मुस्कुराते रहना रौद्र और शांत रस का यहां पर सुंदर मेल देखने को मिलता है। यही भावों की धूप छांव हर जगह दिखाई देती है। जब प्रभु समुद्र से रास्ता मांगते हैं और वह देने से मना करते हैं तो प्रभु अपनी धनुष चढ़ाते हैं। समुद्र भयभीत हो जाते हैं । और क्षमा मांगते हैं।अतः समय परिस्थिति और घटना के अनुकूल व्यवहार करना हमारे विचारों को सुंदर कर देता है और उनके परिणाम भी सुंदर होते हैं।जब मूढ़ता के पंक में भी ज्ञान का पंकज खिल जाए तो वह सुंदरता बढ़ा देता है।

यदि हम आगे देखें तो सुंदरकांड में सुंदरता को भक्ति के रंग ने

बढ़ाया है। भक्त हो कैसा हनुमान जी जैसा ।भक्तिभाव की पताका को लेकर कठिन से कठिन डगर पर चलने की चुनौती को स्वीकार किया। अपनी भक्ति की

शक्ति के द्वारा ही रावण की लंका को भेदा है। हनुमान जी मच्छर के समान छोटा रूप धारण करके मात्र प्रभु नाम का स्मरण करके लंका को जाते हैं। हनुमान जी की भक्ति निष्काम है जिसमें कभी भी किसी भी प्रकार की इच्छा या लालसा नहीं है। हनुमान जी कीराम के प्रति भक्ति पूरी रामचरितमानस में एक मणि की भांति सुशोभित हो रही है। कभी भी वह स्वयं के लिए कुछ नहीं मांगते बस

प्रभु के चरणों में स्थान मांगते हैं। राम के ह्रदय में सीता निवास करती हैं और हनुमान जी के ह्रदय में राम निवास करते हैं जो श्रीराम केचरणों में अपना स्थान मानते हैं ।एक दूसरे को जानते नहीं कभी देखा नहीं फिर भी माता .पुत्र का सुंदर रिश्ता दिखाई देता है।प्रकृति में हनुमान जी चंचल हैंए वीर है एपरंतु महावीर कहलाते हैं क्योंकि उनकी हर युद्ध में विजय होती हैं पर उन्होंने स्वयं को रघुवीर के चरणों में समर्पित किया है ।अद्वितीय सुंदरता का उदाहरण है। सुंदरकांड की सुंदरता में हनुमान जी के गुणों और कर्मों ने एक से बढ़कर एक नगीने जड़े हैं ।उनके कार्यशैली बताती है कि केवल भक्ति से ही काम नहीं चलता है बल्कि बुद्धि के साथ विवेक का होना भी आवश्यक है ।हनुमान जी के मार्ग में बहुत सी बाधाएं आई परंतु अपनी बल बुद्धि के चातुर्य से उन्होंने स्थिति के अनुकूल व्यवहार किया अर्थात समय एव्यक्ति व परिस्थिति के अनुकूल कार्य करना ही सच्ची शिक्षा है। हनुमान जी का आत्मविश्वास यानी कि ईश्वर पर विश्वास। हनुमान जी मात्र भाव निष्ठ नहीं है वह कर्तव्य निष्ठ भी है ।मन के भाव ईश्वर की भक्ति के रंगों में डूबे हों और हाथ में सत्कर्मों की तूलिका हो तो सुंदरकांड स्वयं ही रच जाता है ।सुंदरकांड की सुंदरता में हनुमान जी का संवाद कौशल भी घटनाक्रमों को रोचक बनाकर चार चाँद लगा रहा है ।चाहे वह सुरसा से संवाद हो या रावण से संवाद किया हो या फिर माता सीता को राम का संदेश सुनाया हो हर जगह उन्होंने सोच समझकर बात की है।अतः सुंदरकांड इसलिए सुंदर है क्योंकि श्री हनुमान जी के गुणों से सुशोभित हो रहाहै ।यह गुण यदि हम धारण करें तो स्वयं ही सुंदर हो जाएंगे ।यदि अहम को चकनाचूर कर दें तो मन में स्वयं ही भगवान की मूरत गढ़ जाती है तब मुख से निकलता है राम य जो सुंदरता का आदि और अंत है।हनुमान समस्या नहीं समाधान हैं। हनुमान हर शत्रु के ऊपर बिजली की गति से वार करते हैं विभीषण के आगे वह हाथ जोड़ खड़े हैं ऐसे विनम्र हैए हनुमान माता सीता के आगे शिशु के समान भोले हैं तो वाटिका उजाड़ने में चंचल वानर हैं । कोई भी प्रभाव उनके स्वभाव से दूर नहीं ले जा पायाहै ।सही समय पर सही स्थान पर सही कार्य की योजना बनाने वाले कुशल प्रबंधक है हनुमान।अतः उनके अद्भुत गुणों का सुंदरकांड को सुंदर बनाने में बहुत योगदान है।

सुंदरकांड भक्ति एशांत एरौद्रए संयोग व वियोग श्रंगार एहास्य और वात्सल्य आदि कई रसों का सागर है। इस कांड में सुंदर शब्द कई बार नए अर्थ लेकर प्रयुक्त हुआ है। ब्रह्म का अर्थ है सत्य अर्थात राम और राम को शिव प्रिय हैं अगर शिव हैं तो कल्याण अवश्य होगा और जब कल्याण होगा तो वह सुंदरी ही सुंदर होगा।

मानस के सात सोपान - रूप से स्वरूप की यात्रा

ISBN: 978-1-960627-06-3

पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु'
पूर्व उपमहानिदेशक, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण
(purupurujaipur@gmail.com)

वासना के वशीभूत और नाम उपाधि के भ्रम जाल में फंसा जीव अनादि काल से जन्म-मृत्यु के फेर में पड़ा है। रामजी के चरित्र के विभिन्न पक्षों के सूक्ष्म विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि त्रेतायुग में रामावतार का एक उद्देश्य यह भी रहा कि साधक को कैसे एक आदर्श मर्यादित जीवन जीते हुए अपने परम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति हो, को चरितार्थ करके दिखाया जाए। मानस की ग्राम भाषा में अनेक गूढ़ार्थ छुपे है। स्वयं तुलसीदासजी संकेत करते हैं-

"सूझहिं राम चरित मनि मानिक। गुपत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।। (4/1 बा. कां)।

तुलसीदासजी ने लिखा कि मानस के सात सोपान मानसरोवर की सात सीढ़ियाँ हैं जिन्हें चढ़ कर परमार्थ प्राप्त किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध पत्र में जीव (रूप) से स्वरूप (ब्रह्म स्वरूप) प्राप्ति की यात्रा के विभिन्न सोपानों का, मार्ग की बाधाओं का और उनके मानस सम्मत निराकरणों का उल्लेख करने का प्रयास किया गया है।

1. प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय के अनुसार और तुलसीदास जी ने भी मानस में लिखा है कि जीव को मानव देह चौरासी लाख योनियों के बाद प्राप्त होती है। और वह भी प्रभु कृपा हो तो। मनुष्य योनि के इतर बाकी सभी योनियाँ भोग योनियाँ हैं जहाँ पूर्व में किये कर्मों के फल भोगने होते हैं। जबकि मनुष्य योनि में नवीन कर्मों के करने का अधिकार भी प्राप्त है। मानव शुभ कर्म करके अपनी उन्नति कर सकता है। जीव की मुक्ति की यात्रा का प्रथम सोपान मनुष्य जीवन पाना है। मानस में प्रभु ने स्वयं कहा है:

"बड़े भाग मानुष तन पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा, पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥ 4/43, उ. कांड ॥"

लेकिन मनुष्य देह प्राप्ति के बाद भी जीव अन्य योनियों के जीवों की भांति आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन जैसी वृत्तियों में ही जीवन भर लगा रहता है। कारण गीता में कृष्ण बताते हैं :

"दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ॥ गीता 7.14 ॥"

प्रभु की गुणमयी दैवी माया बड़ी दुरत्यय है अर्थात् इससे पार पाना बड़ा कठिन है। यह माया का ही प्रभाव है कि अधिकतर जीव जो अपने आपको आध्यात्मिक मानते हैं वो भी परम सत्ता से सांसारिक सुख की प्राप्ति या दुख की निवृति भर चाहते हैं। ऐसे भोग की कामना वाले तो स्वर्ग में दीर्घकाल तक भोग भोगकर पुन: धरती पर जन्म ले लेते हैं। गीता में कृष्ण कहते हैं :

"मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ॥
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ गीता 7/3 ॥ "

हजारों मनुष्यों में से कोई एक ही सांसारिक सिद्धि के इतर स्वरूप सिद्धि के लिए प्रयत्नशील होता है और इस तरह सिद्धि की प्राप्त के लिए प्रयास करने वालों में से कोई विरला ही मुझे वास्तव में जान पाता है।

ऐसे ही किसी पुण्य शील और प्रभु कृपा प्राप्त जीव को मनुष्य जीवन में भोगों की अनित्यता, निर्भरता, निस्सारता की अनुभूति होती है। उसमें विरक्ति का भाव उदय होता है। वह यह जानने में रुचि रखता है कि क्या कोई ऐसा सुख है जो शाश्वत है, निरपेक्ष है और निराधार भी। यदि है तो कैसे मिलता है इसी की खोज में वह सांसारिक विषय से अलग आध्यात्म की ओर आकर्षित होता है। जानना चाहता है कि आत्मा क्या है, शरीर क्या है और परमसत्य क्या है। इस तरह की रुचि का जाग्रत होना अर्थात मुक्ति प्राप्त करने की इच्छा जाग्रत होना दूसरा महत्वपूर्ण सोपान है।

ऐसी अति तीव्र इच्छा रखने वाले और अनवरत प्रयास करने वाले मुमुक्षु साधक साधना के बल पर ऐश्वर्य, बल, सत्ता ही नहीं सर्वोच्च उपलब्धि प्रभु के दर्शन तक प्राप्त कर सकते हैं। पर माया का प्रभाव देखिए कि बहुधा प्रभु के दर्शन बाद भी जीव में कामना वृति पूर्णतया समाप्त नहीं होती, कहीं ना कहीं क्षीण ही सही, कामनाएँ शेष रह जाती हैं जो उसे परम श्रेय मार्ग से स्खलित कर देती हैं। यथा विश्वामित्र मेनका के प्रेम में , जड़

भरत मृग शावक के नेह मे फंस जाते हैं और साधना की ऊँचाईयों से च्युत हो जाते हैं। मनु - शतरूपा को भी देखिए जो अति कठोर तपस्या के फल रूप भगवान के दर्शन तो पा जाते हैं।

"भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना॥ 4/146 बा.कां. ॥"

पर फिर भी उनमें प्रभु जैसे पुत्र पाने की इच्छा जाग्रत शेष रहती है।

"दानि सिरोमनि कृपानिधि नाथ कहउँ सतिभाउ।
चाहउँ तुम्हहि समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ॥ 149 बा.कां ॥"

वे कहते हैं कि हे कृपानिधान ! हे नाथ ! मैं अपने मन का सच्चा भाव कहता हूँ कि मैं आपके समान पुत्र चाहता हूँ। प्रभु से भला आपसे क्या छिपाना!

कुछ अन्य अतिश्रेष्ठ तपस्वी जिनको अपने ईष्ट के दर्शन हो गये उनमें भी दो तरह के भाव होते हैं। एक जिन्हें द्वेत भाव में रह कर जन्म - जन्म ईष्ट का स्मरण करते रहना प्रिय है जैसे भरत जी, नारद जी, हनुमान जी, सनत कुमार आदि। दूसरे अद्वैत मार्गी मुमुक्षु जिनका एक मात्र अभीष्ट लक्ष्य निज स्वरूप (ब्रह्म स्वरूप) में स्थित होना है। जैसे नचिकेता आदि। इसी कारण से नचिकेता ने अपने तीसरे वरदान में *"प्रसिद्ध संदेह कि मृत्यु के बाद मनुष्य की क्या गति होती है - कुछ कहते हैं कि वह मर जाता है और कुछ कहते हैं कि वह नहीं मरता"* के बारे में निश्चित और श्रेय ज्ञान प्राप्त करना चाहा जिससे आवागमन का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाय अर्थात निज स्वरूप में स्थिति हो जाए

"येयं प्रीते विकिकित्सा मनुष्येऽस्तित्येके नायमस्ति कैइके।
एतद्विद्यामनुष्यस्त्वयाऽहं वर्णनमेष वरस्तितीयः॥ कठोपनिषद 1.1. 20) ॥"

इस प्रत्र में नचिकेता जैसे मुमुक्षु जो निज स्वरूप में ही स्थित होना चाहते हैं और जो अभी साधना के पथ पर अग्रसर हैं वो कैसी जीवन पद्धति अपना सकते हैं उस पर कुछ विचार रखे गए हैं।

2. विस्तार

जीव (रूप) से स्वरूप (ब्रह्म रूप) की यात्रा के विभिन्न पड़ाव, उनकी पहचान, मार्ग की बाधाएं उनका निराकरण और स्वरूप में स्थित होकर जगत में व्यवहार करने का तरीका मानस के सातों सोपानों में रामजी के चरित के कुछ प्रसंग लेकर करने का उपक्रम निम्नानुसार किया गया है।

बालकाण्ड

यहां रामजी के चरित का उदाहरण लेकर रूप से स्वरूप की यात्रा समझने का प्रयास है इसीलिए यह स्मरण रखना आवश्यक है कि रामजी तो स्वंय ब्रह्म हैं इसलिए उनकी मानव लीला का ही आधार लिया गया है जिसका अनुसरण संभव है। मुमुक्ष (स्वरूप अभिलाषी) का जन्म उसके पूर्व में किए पुण्यकर्मों का फल है जबकि ब्रह्म रामजी का जन्म का कारण उनका कोई कर्मफल या इच्छा नहीं वरन उस समय के पीडित समुदाय की करूण पुकार का प्रतिफल था।

"बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥ 192 बा. कां ॥"

मानस में यद्यपि राम जन्म के उपरोक्त कारण बताए हैं फिर भी राम ब्रह्म हैं और परम स्वतंत्र है इसीलिए बस ये ही कारण हैं ऐसा नहीं कहा जा सकता।

"सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाए। बिपुल बिसद निगमागम गाए॥
हरि अवतार हेतु जेहि होई। इदमित्थं कहि जाइ न सोई॥ 1/121, बा.कां ॥"

रामजी जीव के लिए उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं कि देख मुमुक्ष्, स्वरूप में स्थित चेतना को बालकाल से ही अपनी इच्छा के लिए नहीं वरन् जगत कल्याण के लिए कार्य करना होता है। उदाहरणार्थ जो सुख के पुंज, मोह से परे तथा ज्ञान, वाणी और इंद्रियों से अतीत हैं, वे भगवान दशरथ-कौसल्या के अत्यंत प्रेम के वश होकर ही पवित्र बाललीला कर रहे हैं।

"सुख संदोह मोहपर ग्यान गिरा गोतीत।
दंपति परम प्रेम बस कर सिसुचरित पुनीत॥ 199 बा.कां ॥"

इस तरह संपूर्ण जगत् के माता पिता रामजी अवधपुर के निवासियों को भी सुख देते हैं। जिन्होंने राम के चरणों में प्रीति जोड़ी है, हे भवानी! उनकी यह प्रत्यक्ष गति है कि भगवान उनके प्रेमवश बाललीला करके उन्हें आनंद दे रहे हैं।

"एहि बिधि राम जगत् पितु माता। कोसलपुर बासिन्ह सुखदाता॥
जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी। तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी॥ 1/200 बा.कां ॥"

एक बार उन्होंने माता को अपना अखंड अद्भुत रूप भी दिखलाया, जिसके एक-एक रोम में करोड़ों ब्रह्मांड लगे हुए हैं।

"देखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड॥ 201 बा.कां ॥"

आगे रामजी मुमुक्षु को ज्ञान प्राप्त करने का सही मार्ग 'गुरु परंपरा है' बता रहे हैं और गुरु की महत्ता बता रहे हैं। इसके लिए वो सर्वज्ञ रामजी मुनि विश्वामित्र के आश्रम कुमारावस्था में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाते हैं और विद्या प्राप्त करते हैं।

"गुरु ग्रह गए पढ़न रघुराई, अल्प काल विद्या सब आई' ॥ 2/204 बा.कां ॥"

हे मुमुक्षु देखिए रामजी व लक्ष्मणजी ने यज्ञ की रक्षा के लिए पिता को भी छोड़ दिया था। वाल्मीकि जी के यज्ञ अनुष्ठानों को असुर बार-बार नष्ट कर देते थे। इससे व्यथित यज्ञों की सुरक्षा हेतु मुनि राजा दशरथ से राम और लक्ष्मण की मांग करते हैं। गुरु वशिष्ठ के समझाने पर व्यग्र मन से दशरथ जी दोनों पुत्रों को मुनि के संग भेज देते हैं।

"पुरुष सिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि भय हरन।" 208(ख) बा.कां ॥"

"स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। बिस्वामित्र महानिधि पाई ॥

प्रभु ब्रह्मन्यदेव मैं जाना। मोहि निति पिता तजेउ भगवाना॥2/209 बा.कां ॥"

मार्ग में मुनि ने ताड़का को दिखाया। शब्द सुनते ही वह क्रोध में दौड़ी। रामजी ने एक ही बाण से उसके प्राण हर लिए और दीन जानकर उसको दिव्य स्वरूप दिया।

"चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई॥

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ॥ 3/209 बा.कां ॥"

हे मुमुक्षु यहाँ विश्वामित्र मुनि दिखा रहे हैं कि स्वरूप यात्रा में दुराशा (ताड़का) प्रथम बड़ी बाधा है इसे सबसे पहले मारना चाहिए। (अभिप्राय गुरु मोरारी बापू)। फिर रामजी ने सुबाहु को अग्निबाण मारा और लक्ष्मणजी ने राक्षसों की सेना का संहार कर डाला। इस प्रकार श्री रामजी ने राक्षसों को मारकर ब्राह्मणों को निर्भय कर दिया। तब सारे देवता और मुनि स्तुति करने लगे।

"पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु सँघारा ॥

मारि असुर द्विज निर्भयकारी। अस्तुति करहिं देव मुनि झारी॥3/210 बा.कां ॥"

अर्थात मुमुक्षु साधना के पथ की दूसरी बड़ी बाधा ऐसी वृतियाँ हैं जो स्वयं के दोषों का अदर्शन (सुबाहु) और दूसरों के दोषों का अनगिनत बार दर्शन (सुबाहु सेना) करती हैं। ऐसी वृतियों का तुरंत और समूल नाश सत्य (राम) के बाण और वैराग्य (लक्ष्मण) की अग्नि में कर देना चाहिए (बकौल बापू)। ताड़का वध का समाचार सुन उसका पुत्र राक्षस मारीच अपने सहायकों को लेकर दौड़ा। श्री रामजी ने बिना फल वाला बाण उसको मारा, जिससे वह सौ योजन के विस्तार वाले समुद्र के पार जा गिरा।

"सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही ॥

बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा॥2/210 बा.कां ॥"

मोरारी बापू का अभिमत है कि मुमुक्षु के राह की तीसरी बाधा प्रारब्ध जनित दुख: (मारीच) है जिसे मारा तो नहीं जा सकता पर साधना के काल में कुछ समय के लिए दूर कर देना चाहिए। आगे चलने पर मुनि विश्वामित्र रामजी को गोतम मुनि की शापवश पत्थर की देह सी पडी स्त्री अहल्या को दिखा कर कहते हैं कि यह आपके चरणकमलों की धूलि चाहती है। हे रघुवीर! इस पर कृपा कीजिए।

"गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।

चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर ॥ 210 बा.कां ॥"

भावार्थ है कि ताड़का वध के बाद विश्वामित्र राम को समस्त अस्त्र-शस्त्र, आध्यात्मिक ज्ञान, अलोकिक दैवीय शक्तियां सब प्रदान कर देते हैं। फिर जनकपुर (ज्ञान मार्ग) जाते समय राम (स्वरूप निष्ठ) को राह में अहिल्या (श्रापित देह) मिलती है जिसका उद्धार वह तबतक नहीं करते जबतक गुरु आदेश ना दे। अर्थात शक्ति सम्पन्न मुमुक्षु को जो निज स्वरूप प्राप्ति की साधना में रत है अपनी इच्छा से स्वयं सक्रिय नहीं होना चाहिए भले ही सत्कर्म प्रसंग क्यों ना हो।

विश्वामित्रजी (गुरु), रामजी (स्वरूप निष्ठ) को लेकर जनकपुर (ज्ञान का निवास) पहुंचते हैं। यह बहुत रमणीय स्थान है जहाँ भाँति भाँति के सुमधुर, अमृत तुल्य (ज्ञान के) फल लगे हैं, अमराई है। पुष्पवाटिका में गुरु मनोरथ से ही रामजी (स्वरूप निष्ठ) की सीताजी (भक्ति) से भेंट होती हैं। धनुष यज्ञ के माध्यम से दिखाया गया है कि असुर (अहंकार व कामवासना वृति शेष रहते) कभी भक्ति को प्राप्त नहीं किया जा सकता। भक्ति सदैव सत्य, निर्विकार (रामजी) का ही चुनाव करती है रामजी को ही समर्पित होती है।

हे मुमुक्षु गीता में प्रसंग आया है कि स्वरूप से च्युत व्यष्टि अहंकार से बाधित जीवों के उद्धार के लिए संसार में सृष्टि का यज्ञ अनंत काल से अनवरत चल रहा है।

"सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ गीता 3.10 ॥"

हर जीव का व्यष्टि अहंकार ही हर कर्म के केंद्र में है। यह व्यष्टि अहंकार सत, रज, तम तीनों गुणों की परिधि में बंधकर कामनाओं की पूर्ति में ही सुख

है, इस अविद्या (मिथ्या ज्ञान) से ग्रसित हो अनंत काल से जन्म मृत्यु के फेर में पड़ा है। मुमुक्षु इस व्यष्टि अहंकार के परे जाकर ही तुम अपने मूल स्वरूप को प्राप्त कर सकते हो। इस धनुष यज्ञ में समष्टि के अहंकार के प्रतीक शिव का यह धनुष है। हे मुमुक्षु यदि तुम चाहो कि कामनाओं के शेष रहते समष्टि अहंकार के प्रतीक शिव धनुष को तोड़ पाओगे और भक्ति का वरण कर लोगे तो यह असंभव है। सभी असुर मन में कामना लिए धनुष तोड़ना चाहते थे, इसलिए वे सब असफल रहे। रामजी इस धनुष यज्ञ मे निर्विकार भाव से बैठे जगलीला देख रहे हैं। उन्हें व्यक्तिगत हित हेतु धनुष तोडने की कोई कामना नहीं है। वो तो जब गुरुजी आदेश देते हैं कि

"उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनक परितापा॥3/254 बा.कां ॥"

तब वह गुरु के वचन सुनकर गुरु चरणों में सिर नवा कर धनुष की तरफ बढ़ते हैं।

"सुनि गुरु बचन चरन सिरु नावा। हरषु बिषादु न कछु उर आवा॥ 3/261 बा.कां॥

उस समय उनके मन में न हर्ष था ना विषाद। हे मुमुक्षु देखें स्वरूप अवस्था कैसी होती है। स्वरूप अवस्था में स्थित चेतना को सब कुछ स्वत: प्राप्त है उसे कुछ भी पाना शेष नहीं है। दूसरे शब्दों में कहे तो, वही तो सबमें व्यापत है, फिर क्या खोना क्या पाना। रामजी और सीताजी लीला की दृष्टि से अलग-अलग दिखते हैं अन्यथा वो दो भिन्न-भन्न इकाईयां हैं ही नहीं। तभी तुलसी दास जी लिखते हैं

"गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।

बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥ 18/बा.का. ॥"

धनुष यज्ञ सीता राम के विवाह के साथ सम्पूर्ण से हो जाता है। हे मुमुक्षु, राम दिखा रहे हैं कि जहाँ ज्ञान और भक्ति अविच्छिन्न भाव से एकाकार हैं वही परम सत, चैतन्य और आनंद की स्थिति है अर्थात स्वरूपावस्था है। इस अवस्था में रह कर जीवन कैसे जिया जा सकता है, जीवन में आनेवाली हर स्थिति में कैसे व्यवहार किया जाए राम स्वयं आगे चरितार्थ करके मुमुक्षुओं का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

अयोध्या कांड

मुमुक्षु को आत्म स्वरूप के लक्षणों की सैद्धान्तिक जानकारी होना, उस स्थिति को प्राप्त करने की अति तीव्र इच्छा होना एक बात है फिर उसे प्राप्त करने के लिए अंत-बाह्य शुद्धि के लिए दृढ़ निश्चयपूर्वक अनवरत प्रयत्न करना दूसरी बात है। फिर एक बार स्वरूपावस्था की अनुभूति होना तीसरी बात है। तत्पश्चात विरुद्ध परिस्थितयों में भी साधना बनाए रखना और किसी संपदा या पद यहाँ तक कि ब्रह्मा के पद तक में लाभ ना देख कर निज स्वरूप मे स्थिति को ही महत्व देना है चौथी अंतिम अतिमहत्वपूर्ण बात है। यह सब कैसे किया जा सकता है प्रभु राम ने मानवीय लीला के माध्यम से चरितार्थ करके मुमुक्षुओं को दिखाया है। उदाहरणार्थ राम राजा बनने वाले थे कि उन्हें अचानक चौदह वर्ष का वनवास दे दिया गया।

"सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का। देहु एक बर भरतहि टीका॥1/29 अयो. कां. ॥"

"तापस वेष बिसेषि उदासी, चौदह बरिस रामु बनबासी॥ 2/29:अयो. कां. ॥"

ऐसी विकट परिस्थित में भी संपदा, पद, राज्य और निकटस्थ सभी संबंधों के छीन लिए जाने के बाद भी कैसे निर्लिप्त भाव से स्वरूप में बना रहा जा सकता है, रामजी ने सबको करके दिखाया। स्वरूप में स्थित होने पर कोई संपदा, कोई राज अथवा कोई संबंध स्वरूप को प्रभावित नहीं करना चाहिए और अपनी किसी भूल के बिना भी मिले अति दुख को स्वीकार कर कैसे आदर्श व्यवहार किया जाये यह करके बताया। जिस माता से वनवास मिला उनसे राम कहते हैं कि हे माता! सुनो, वही पुत्र बड़भागी है, जो पिता-माता के वचनों का पालन करने वाला है। माता-पिता को संतुष्ट करने वाला पुत्र, हे माँ! सारे संसार में दुर्लभ है :

"सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी॥"

"तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा॥ 4/41अयो. कां॥

और फिर वन में विशेष रूप से मुनियों का मिलाप होगा, जिसमें मेरा सभी प्रकार से कल्याण है। उसमें भी, फिर पिताजी की आज्ञा और हे जननी ! तुम्हारी सम्मति है।

"मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर।

तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर॥ 41 अयो. कां. ॥"

रामजी ने माता कौशल्या से विदा लेते हुए अत्यंत कोमल वाणी से कहा- हे माता! पिताजी ने मुझको वन का राज्य दिया है, जहाँ सब प्रकार से मेरा बड़ा काम बनने वाला है। आपदा का भी सदुपयोग करने का मार्ग दिखाया।

"धरम धुरीन धरम गति जानी। कहेउ मातु सन अति मृदु बानी॥

"पिताँ दीन्ह मोहि कानन राजू। जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू॥3/53 अयो. कां. ॥

रामजी के साथ वनवास में जाने के लिए सीताजी व लक्ष्मणजी ने बहुत अनुरोध किया। रामजी ने देखा कि सीताजी शरीर से वियोग की बात तो अलग रही, वचन से भी वियोग की बात सुनकर वे अत्यन्त विकल हो गईं। उनकी यह दशा देखकर श्री रघुनाथजी ने अपने जी में जान लिया कि हठपूर्वक इन्हें यहाँ रखने से ये प्राणों को न रखेंगी।

"अस कहि सीय बिकल भइ भारी। बचन बियोगु न सकी सँभारी॥

देखि दसा रघुपति जियँ जाना। हठि राखें नहिं राखिहि प्राना॥1/68 अयो. कां॥"

रामजी के मना करने पर लक्ष्मणजी अनुरोध करते हुए कहते हैं कि धर्म और नीति का उपदेश तो उसको करना चाहिए, जिसे कीर्ति, विभूति (ऐश्वर्य) या सद्गति प्यारी हो, किन्तु जो मन, वचन और कर्म से चरणों में ही प्रेम रखता हो, हे कृपासिन्धु! क्या वह भी त्यागने के योग्य है ?

"धरम नीति उपदेसिअ ताही। कीरति भूति सुगति प्रिय जाही॥

"मन क्रम बचन चरन रत होई। कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई॥ 4/72 अयो. कां॥"

तब रामचन्द्रजी ने सीताजी व लक्ष्मण जी से कहा कि अब सोच छोड़कर मेरे साथ वन को चलो॥

"कहेउ कृपाल भानुकुलनाथा। परिहरि सोचु चलहु बन साथा॥

"नहिं बिषाद कर अवसरु आजू। बेगि करहु बन गवन समाजू॥2/68 अयो. कां॥"

वनवास में सीता और लक्ष्मण के साथ चलने के अनुरोध व विनती को स्वीकार करते हुए प्रभु बता रहे हैं कि हे मुमुक्षु स्वरूप यात्रा पथ पर भक्ति व वैराग्य को साथ लेकर ही बढ़ना है। वनवास में एक बार निषादराज गुह ने देखा कि रामजी और सीताजी जमीन पर सो रहे हैं तो उन्हें बड़ा विषाद हुआ।

"भयौ बिषादु नषादिहि भारी। राम सेय मही सयन निहारी॥ 1/92 अयो. कां॥"

तब लक्ष्मणजी गुह के माध्यम से सभी मुमुक्षुओं को समझा कर कह रहे हैं कि हे भाई, वास्तव में कोई भी किसी दूसरे के सुख या दुख के लिए उत्तरदायी नहीं है। ये सब उसके अपने 'कर्मों' का परिणाम है।

"काहु न कोउ सुख दुःख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सबु भ्राता॥2/92 अयो. कां॥"

हमें क्या मिलता है या हम किससे वंचित रह जाते हैं, जो भी अच्छा, बुरा या तटस्थ प्रकार का भाग्य हमें मिलता है वह कुछ भी नहीं बल्कि भ्रम है।

"जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम ब्रह्मा फंदा॥ 3/92 अयो. कां॥"

''जन्म, मृत्यु या संसार में 'कर्म,' भूमि, घर, जन्म या निवास की संपत्ति और स्थान और परिवार, स्वर्ग और नरक आदि सब, भ्रामक है और समझ में, निहित हैं। मोह, झुकाव और प्राथमिकताओं के कारण वास्तविकता को देखने नहीं देता है। पूर्ण सत्य, अस्तित्व का सार, परम वास्तविकता उद्देश्य स्वरूप साधना है। फिर कहते हैं "जैसे कोई व्यक्ति भिखारी से राजा बन जाता है या एक संपत्तिहीन व्यक्ति स्वप्न में सम्राट बन जाता है, लेकिन जब वह जागता है तो उसे हानि या लाभ जैसा कुछ नहीं होता है, उसी प्रकार संसार के व्यवहार को भी जानना चाहिए जो वास्तविकता से परे जो स्वप्न के समान ही है।"

"सपनें होइ भिखारी नृप रंकु नाकपति होइ।

जागेन लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियं जोइ॥ 92॥ अयो. कां॥"

लक्ष्मणजी अर्थात (वैराग्य ज्ञान) का संकल्प केवल अपने भाई श्री राम अर्थात सत्य का अनुगामी बन, परमेश्वर की सेवा करने का था। हे मुमुक्षु तुम वैरागी होकर केवल ऐसे सांसारिक कर्तव्यों का निर्वहन करो जो तुम्हें भगवान की सेवा में बने रहने की अनुमति दे।

रामजी और भरतजी में अप्रतिम प्रेम है। फिर भी चित्रकूट में भरत जी के अतिशय प्रेम से भरी वापिस अयोध्या लोटने की विनती को रामजी कर्त्तव्य, पिता वचन और अस्तित्व की भावी योजनाऑ को ध्यान में रखते हुए स्थगित करने की सलाह देते हैं और पादुका देकर विदा करते हैं।

"जानहु तात तरनि कुल रीती। सत्यसंध पितु कीरति प्रीती॥ 1/305 अयो. कां. ॥"

"तुम्हहि बिदित सबही कर करमू।आपन मोर परम हित धरमं॥ ।2/305अयो. कां. ॥'

"सो अवर्लब देव भोहि देई।अवधि पारु पावों जेहि सेई॥ 4/307 अयो. कां. ॥

यहाँ स्वरूप प्राप्ति के अभिलाषी मुमुक्षुओं को संदेश है कि साधना के पथ पर चलते हुए निर्लिप्त व निस्पृह होकर कर्त्तव्य पथ पर बढ़ते जाना है। राम जी ने वनवास का अधिकतम भाग चित्रकूट में ऋषि मुनियों के साथ आध्यात्मिक प्रसंगों में बिताया। आखिरी के लगभग दो वर्ष संतो, मुनियों के आश्रम में, राह में वंचितो के उद्धार हेतु और रावण जैसे असुरों से पृथ्वी को मुक्त करने व धर्म और सत्य की पुनर्स्थापना में बिताया। यहाँ भी मुमुक्षुओं को संकेत है कि जो आप निज स्वरूप से च्युत होकर जीवन रूपी वन में वास कर रहे हैं उसका अधिकतम समय अपने स्वरूप (जिसे संस्कृत में चित्र अर्थात अशोक और कूट अर्थात शिखर, जहाँ कोई शोक नहीं हैं) में रहने की साधना में बिताना चाहिए। शेष समय को जब आवश्यक हो तब समष्टि के मंतव्यों को पूरा करने में बिताना चाहिए।

अरण्यकाण्ड

हे मुमुक्षु देखिए रामजी ने मानस में अपवाद छोड़कर सब जगह मनुष्य रूप में ही लीला की है। अधिकांश लोग उन्हें एक मानव रूप में ही जानते हैं। सिर्फ कुछ ऋषियों ने उनके परमात्मा रूप को पहचाना और कहीं-कही वर्णन भी किया। ऐसे ही जब रामजी चित्रकूट से प्रस्थान करके अत्रि मुनि के आश्रम पहुचें तो अत्रिजी ने उनके वास्तविक स्वरूप रूप का वर्णन करते हुए कहा :

आप एक (अद्वितीय), अद्भुत (मायिक जगत् से विलक्षण), प्रभु (सर्वसमर्थ), इच्छारहित, ईश्वर (सबके स्वामी), व्यापक, जगद्गुरु, सनातन (नित्य), तुरीय (तीनों गुणों से सर्वथा परे) और केवल अपने स्वरूप में स्थित हैं ॥ 9 ॥

"तमेकमद्भुतं प्रभुं । निरीहमीश्वरं विभुं ॥
जगद्गुरुं च शाश्वतं । तुरीयमेव केवलं ॥ 9/4अरण्य.कां ॥"

अत्रि पत्नी अनुसुइयाजी माता सीता को दिव्य वस्त्र और आभूषण देती है जो नित्य निर्मल व सुहावने बने रहते हैं। वस्त्र का एक अर्थ आकाश भी है। ऋषि पत्नी आशीष देती हैं कि सीता तुम्हारा घटाकाश और कांत स्मरण रूपी आभूषण सदैव निर्मल और सुहावने बने रहें।

"दिब्य बसन भूषन पहिराए। जे नित नूतन अमल सुहाए ॥ 2/5 अरण्य.कां ॥"

यह भी बता रही हैं कि धैर्य, धर्म, मित्र और नारी यानी पत्नी की परख आपत्ति के समय ही होती है। वास्तव में आपद काल में ही सीता (भक्ति) की परीक्षा होती है।

पंचवटी कुटी में लक्ष्मणजी के प्रश्नों के उत्तर में रामजी ने समस्त ज्ञान को सूक्ष्म और सरल रूप में सब साधकों के लिए रखा। रामजी ने कहा :

1. मैं और मेरा, तू और तेरा, के भाव से भेद करना ही माया के वश होना है। 2. इंद्रिय और मन के ग्राह्य सभी विषय माया है। 3. अज्ञान (अविद्या) जीव के बंधन का कारण है। 4. हे मुमुक्ष अपने अस्तित्व को जो तुम अपरोक्ष रूप से अनुभव करते हो उसको ही सब जीव में देखना ज्ञान है। 5. मेरे अधीन मेरी ही त्रिगुणमयी शक्ति जिससे समस्त सृष्टि की रचना हुई है वह माया है जिसे विद्या भी कहते हैं। उसका अपना अलग अस्तित्व कुछ भी नहीं है। 6. अस्तित्व एक ही है। जब वह अविद्या (अज्ञान) के कारण स्वयं को एक अलग इकाई के रूप में देखता है तो जीव कहलाता है और जब माया शक्ति के अधिष्ठाता के रूप में एक समष्टि अस्तित्व को देखता है तो वह ईश्वर कहलाता है। विभाग हीन अस्तित्व जो दोनों जीव व ईश्वर में समरूप में विद्यमान है वह ब्रह्म है अर्थात तुम्हारा स्वरूप।

"मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया ॥ 1/15 अरण्य. कां ॥"
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई ॥
"तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ ॥2/15 अरण्य. कां ॥"
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा ॥
"एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें ॥ 3/15 अरण्य. कां ॥"
"ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माहीं ॥ 4/15 अरण्य. कां ॥"
"अविद्योपाधि: सन् आत्मा जीव इत्युच्यते,मायोपाधि: सन् इश्वर इत्युच्यतो ॥ तत्त्व –बोध ॥"

रामजी ने स्वरूप में स्थिति के लिए जो साधना बताई वह है: धर्म के आचरण से वैराग्य, और योग से ज्ञान, जो मोक्ष अर्थात स्वरूप में अवस्थित कर देता है। यह दुर्गम पथ है।

"धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना ॥"
"जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई ॥ 1/16अरण्य. कां ॥"

रामजी इसके अतिरिक्त एक सरल मार्ग, भक्ति मार्ग बता रहे हैं जिसका क्रम इस प्रकार है। पहले ब्राह्मणों के चरणों व आचरणों में प्रीति व विश्वास, फिर स्वधर्मानुसार कर्म जिसके फल से वैराग्य जाग्रत होगा और भागवत धर्म में प्रेम जगेगा। इस उपक्रम से श्रवण आदि नो भक्तियाँ दृढ़ होगीं और भगवत लीला में और संतो में अत्यन्त प्रेम होगा। इससे मन, वचन और कर्म से भजन दृढ़ होगा और साधक मुझको ही अपना सबकुछ मानने लगेगा। वह अपना निज मान, मद, दंभ छोड़कर सिर्फ मेरे में निवास करेगा और निष्काम भाव से जीयेगा। हे मुमुक्षु देखिए अपना जीवत्व भूलकर मेरे में ही रहना दूसरे शब्दों में स्वरूपावस्था है।

"प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती ॥
एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा ॥
श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं ॥
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा ॥
"गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जाने दृढ़ सेवा ॥ 3-6/16 अरण्य. कां ॥"

हे मुमुक्षु स्वरूप प्राप्ति का मार्ग जान लेना मात्र् पर्याप्त नहीं है। इस मार्ग के राही को पग-पग पर परीक्षा देकर उसमें सफल होकर अपनी अव्यभिचारणी निष्ठा को सिद्ध करना होता है।

शूर्पणखा प्रसंग यही है। मोरारी बापू (भावार्थ रामायण) कहते हैं शूर्पणखा आसक्ति है। रूप, धन, प्रतिष्ठा, काम किसी रूप में भी हो सकती है। माया स्वरूपा है, रूप बदलकर आती है। यहाँ रामजी (सत्य) और लक्ष्मणजी (वैराग्य) को वश में करना चाहती है पर दंडित होकर बदले की भावना से असुर खर-दूषण भाईयों के पास जाती है। दोनों भाई राम के हाथों मारे जाते है। शूर्पणखा रावण के पास गुहार लगाती है, उसकी शक्ति का उपहास

करके उसे रामजी के विरुद्ध लड़ने को उकसाती है। रावण अपने समान बलशाली खर-दूषण के मारे जाने को जानकर विचार करता है कि इन्हें तो भगवान के अतिरिक्त कोई नहीं मार सकता था तो क्या ये भगवान हैं, और यदि ऐसा है तो, मैं तो तामसी देह के कारण भजन नहीं कर सकता, तो क्यों न इनसे बैर करके युद्ध करूँ। यदि ये सामान्य मानव हुए तो मारे जायेंगे और भगवान हुए तो इनके द्वारा मरने में ही मेरा कल्याण होगा। हे साधक, रामजी चाहते हैं कि किसी भी रूप में जीव उनसे जुड़े। तुलसीदास ने कहा है :

"भायँ कुभायँ अनख आलस हूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ॥ 1/28 बा. कां. ॥"

अच्छे भाव (प्रेम) से, बुरे भाव (बैर) से, क्रोध से या आलस्य से, किसी तरह से भी नाम जपने से दसों दिशाओं में कल्याण होता है। इससे आगे स्वरूप निष्ठ रामजी और सीताजी विशेष मानव लीला के माध्यम से ना सिर्फ असुरों का विनाश के लिए उद्दत होते हैं वरन् मुमुक्षुओं को सचेत भी करते हैं कि वे स्वरूप निष्ठा की अनेक परीक्षाएँ होती हैं उसके लिए वे तैयार रहें। रावण, मारीच (प्रारब्ध फल का पुन: उदय) को स्वर्ण मृग के रूप में भेजता है जो लीला कर रही छाया सीताजी को लोभ में फंसा लेता है और सीताजी स्वर्ण के लोभ में पहले रामजी (सत्य) को दूर भेज देती हैं फिर अपने (भक्ति) रक्षक लक्ष्मणजी (वैराग्य) को भी दूर कर देती हैं। आसुरी शक्तियों को और क्या चाहिए ! वे सत्य और वैराग्य से परे हुई भक्ति को अपने छल से अपने पक्ष में वासना की कैद में करने का कुत्सित प्रयास करती हैं। वासना सिक्त रावण सीताजी (भक्ति) को साधुवेश में आकर छल से हर लेता है और अपनी लंका में कैद कर लेता है। भावार्थ यह है कि हे मुमुक्षु, भक्ति की ज्योत भी कभी एक तो कभी दूसरी अन्य एषणाओं में फंसकर एक बार फिर दस द्वार (दस मुखी) वाली देह रूपी लंका मे पुन: कैद हो जाती है और प्रबल वासना रूपी रावण उस पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहता है। इस तरह साधक अपने उच्च स्थान से गिर जाता है।

सीताजी के वियोग में दुखी रामजी वन में चलते चलते, गुरु के वचनों पर एकनिष्ठ हो रामजी के आगमन की प्रतीक्षा कर रही, शबरी के आश्रम पहुंचते हैं, उसका उद्धार करते हैं और शबरी के माध्यम से संपूर्ण जगत को नवधा भक्ति क्या है वह बताते हैं। पहली भक्ति है संतों का सत्संग और दूसरी भक्ति है मेरे कथा प्रसंग में प्रेम।

"प्रथम भगति संतन्ह कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥ 4/35 अरण्य. कां॥"

तीसरी भक्ति है अभिमान से मुक्त होकर गुरुजनों की सेवा करना और चौथी भक्ति है कपट को छोड़कर मेरे गुण समूहों का गान करना।

"गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान॥ 35 अरण्य. कां॥"

भगवान के नाम का जप करना और उनके प्रति दृढ़ विश्वास रखना पांचवीं भक्ति है। छठी भक्ति इंद्रियों का निग्रह शील (अच्छा चरित्र), बहुत कार्यों से वैराग्य और निरंतर संत पुरुषों के धर्म में लगे रहना है।

"मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा।
छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा॥ 1/36 अरण्य. कां॥"

सातवीं भक्ति संपूर्ण जगत को समभाव से मुझमें ओतप्रोत देखना और संतों को मुझसे भी श्रेष्ठ मानना है. आठवीं भक्ति है जो कुछ भी मिल जाए उसमें संतोष करना और सपने में भी पराए में कोई दोष न देखना।

"सातवं सम मोहि मय जग देखा, मोतें संत अधिक करि लेखा।
आठवं जथालाभ संतोषा, सपनेहुं नहिं देखइ परदोषा॥ 2/36 अरण्य. कां॥"

नौवीं भक्ति सरलता और सबके साथ कपटरहित बर्ताव करना है. हृदय में मेरा विश्वास रखना और किसी भी अवस्था में हर्ष और दैन्य का न होना. इनमें से जिसके पास एक भी होती है, वह स्त्री-पुरुष, जड़-चेतन कोई भी हो हे भामिनि ! मुझे वही अत्यन्त प्रिय है।

"नवम सरल सब सन छलहीना, मम भरोस हियं हरष न दीना।
नव महुं एकउ जिन्ह कें होई, नारि पुरुष सचराचर कोई॥ 3/36 अरण्य. कां॥"

किष्किन्धाकाण्ड

हे मुमुक्षु रामजी से विमुक्त भक्त को फिर परमात्मा से भेंट कोई ऐसा गुरु ही करवा सकता है जो परमात्मा को पहचान सके, उनसे मिला हो, अटूट श्रद्धा व निष्ठा रखता हो।

"प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना......... ॥3/2 किष्कि.कांड॥"

हनुमानजी ऐसे ही गुरु हैं जो रामजी को पहचान कर सुग्रीव (आर्त जीव) से उनकी भेंट करवाते हैं और सुग्रीव की रक्षा का सारा भार राम पर डाल देते हैं। सुग्रीव से इतनी ही अपेक्षा है कि वे किसी खोई सीताजी (भक्ति) को रामजी से मिलवाने में सहयोग करें।

विलुप्त सीताजी (भक्ति) की खोज सुग्रीव (जीव) की अध्यक्षता में सभी वानर (वृत्तियाँ) अपने बल पर अपने तरीके से कर-कर के जब हार गए तब हनुमानजी (गुरु) ने पहाड़ की चोटी (प्रज्ञा शिखर) से देख कर बताया कि तुम बाहर नहीं मन की गुफा में जाओ और वहाँ स्वयं प्रभा (संसार की

अज्ञान- अविद्या से परे शुद्ध-स्वविवेक) के बताए अनुसार साधना करो तो भक्ति तक पहुँच जाओगे। स्वयं प्रभा ने कहा तुम सब वानर (वृत्तियाँ) आँखे (संसार से) मूंद लो और गुफा (देह) से बाहर आ जाओ अर्थात् देह भाव को त्याग दो तो तुम स्वयं सीता (भक्ति) को पा जाओगे।

"मूदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू॥
नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें तीरा॥ 3/25 किष्कि.कांड॥"

वानरों ने आँखे खोली तो देखा कि समुद्र (संसार सागर) के किनारे तक पहुँच गये थे पर सीता (भक्ति) नहीं मिली थीं। सीता का पता सम्पाती (दिव्य दृष्टि युक्त गीध) सेवक ने बताया कि सो योजन दूर त्रिकूट पर्वत पर बसी लंका के अशोक उपवन में सीता बैठीं हैं। पर सागर पार कर वहाँ कैसे पहुँचा जाए। कोई भी वानर या रीछ इतने सामर्थ्यवान नहीं था कि सो योजन सागर लांघ सके। तब जामवंत जी ने हनुमान जी को याद दिलाई कि आपका जन्म ही राम काज के लिए हुआ है, तो वो पर्वताकार हो गये।

"राम काज लगि तव अवतारा सुनतहिं भयहु पर्बताकारा॥ 3/30 किष्कि.कांड॥"

भावार्थ है कि गुरु का काज जीव को ईश्वर से मिलाना है पर उसके लिए मुमुक्षु को ही गुरु के समक्ष अपनी अति तीव्र जिज्ञासा रखनी होगी। जामवंतजी ने हनुमानजी से कहा बस आप जाइए और सीता का पता व खबर लेकर आ जाइये।

सुन्दरकाण्ड

सीताजी (भक्ति) की खोज के लिए हनुमानजी (गुरु) सागर पार करके लंका जा रहे हैं। भक्ति जीव की देह रूपी लंका में, काम, क्रोध, मद, मत्सर, दंभ, द्वेष आदि अनगिनत वासनाओं के मध्य कहीं कृषकाय हो पड़ी रहती है। उसे ढूंढना और असुर वृतियों से बचा कर पल्लवित और पोषित करना साधक के लिए स्वयं करना बड़ा दुष्कर कार्य है। यह कार्य भक्ति की आर्त पुकार से द्रवित हो रामजी की प्रेरणा से किसी गुरु की शरण में जाने से फिर उसकी कृपा से ही संभव हो पाता है। सच्चे शुद्ध भाव से शरणागत जीव का गुरु जल्दी से जल्दी उद्धार करता है।

"राम काज कीन्हे बिनौ मोहि कहाँ विश्राम॥ 1 सु.कां॥"

हनुमानजी रामजी को हृदय में रखकर (रामजी के बल से) लंका में प्रवेश करते हैं और एक-एक महल की खोज करते हैं पर सीताजी (भक्ति) नहीं मिलती। सब जगह असुर राज कर रहे हैं।

"प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥ 1/5 सु.कां.॥"
"मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा। देखे जहँ तहँ अगनित जोधा॥ 3/5 सु.कां.॥"

बस एक महल विभीषणजी का मिलता है जहाँ दीवारों पर रामायद्ध अंकित हैं और रामजी के नाम का स्मरण सुनाई पड़ता है। हे मुमुक्षु भावार्थ है कि गुरु साधक के देह के भीतर मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार सभी की जांच करता है कि भक्ति कहाँ आवृत है। साधक के चित्त में जहाँ कहीं भी कोई एक विभीषण रूपी शुभ भाव, सत्य के लिए आग्रह और समर्पण भाव मिलता है वहीं से भक्ति मिलने का मार्ग प्रशस्त होता है। विभीषणजी से जानकीजी का पता लेकर हनुमानजी जानकीजी के पास मसक रूप में ही पहुंचे। सीताजी का रामजी के वियोग में कृषकाय शरीर देखकर हनुमानजी को बहुत क्षोभ हुआ। सत्य और भक्ति के बिना जीव की यही दशा होती है। रावण उसी समय वहाँ आया और सीताजी को धमकाकर चला गया। आशंकित सीताजी के सामने हनुमानजी ने मुद्रिका डालकर अपना परिचय देकर और रामजी की कुशलता सुनाकर ढाढस बनाया। सीताजी की अनुमति लेकर अशोक वाटिका के फल खाये। वाटिका उजाड़ कर रावण के सामने अपनी उपस्थिति और चुनोती रखी। वाटिका के पहरेदार असुरों और उनकी रक्षा के लिए आये रावण पुत्र अक्षय कुमार का वध भी कर दिया। रावण का ज्येष्ठ पुत्र इंद्रजीत ब्रह्मास्त्र के बल पर हनुमानजी को बंधी बनाकर रावण की सभा में ले गया। हनुमानजी ने रावण को रामजी के शरण में जाने का हितकारी परामर्श दिया। रावण ने अहंकार के मद में ना सिर्फ उसे ठुकरा दिया अपितु दंड स्वरूप हनुमानजी की पूछ में आग लगा दी। उस आग से हनुमानजी ने पूरी लंका जला दी। फिर सीताजी से निशानी के रूप चूड़ामणि पाकर और विदा लेकर पुन: रामजी के पास लौट आए।

भावार्थ है कि गुरु को जीव की संसार में दुर्दशा देख कर बहुत क्षोभ होता है। वह अपने अस्तित्व व ज्ञान का परिचय देकर प्रारम्भ में सूक्ष्म (मसक) रूप से ही जीव के जीवन को सुधारना शुरू कर देता है। गुरु जीव को रामजी निश्चित मिलेंगे यह विश्वास दिलाकर और कैसे मिलेंगे वह मार्ग बताकर उसकी राह में पड़ने वाली बाधाओं को भस्म करके उसे रामजी का स्मरण करते हुए उनके आने की प्रतीक्षा करने की सलाह देकर ही वापिस होते हैं।

लंकाकाण्ड

मोरारी बापू कहते हैं मानस दृष्टियों का ग्रन्थ है। लंका में प्रमुखतया भोग की प्रधानता है पर यह यज्ञ, उपासना और ध्यान की नगरी भी है। रावण यज्ञ, और शिव की उपासना करता है। वेद पाठी भी है। लंका में माता जानकी सदैव श्रीराम के चरणों के ध्यान में रहती हैं। हमारी देह में भी लंका के समान सभी तरह की प्रवृत्तियाँ होती रहती है पर बाहुल्य किसका है और किस कामना से कर्म किये जा रहें वह जीव की गति का निर्धारण करता है। रावण के सात्विक कर्म भी असीमित भोग की कामना से प्रेरित हैं। उसकी भोगवृति इतनी प्रबल है कि उसकी पूर्ति के लिए वह किसी भी हद तक किसी का भी शोषण-दमन, हरण और वध तक कर देता है। तभी तो उसने सृष्टि के पालक-पोषक देवताओं तक को बंधी बनाकर रखा है। अपने पराये किसी की भी शिक्षा, सलाह, नीति, विचार का उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यहाँ तक की अपने भाई विभीषण की हितकारी राय को ना

सिर्फ अनसुना करता है वरन् क्रोधित हो कर उसे त्याग देता है। ऐसी मनोवृति वाली किसी भी देह रूपी लंका को ढहाना अस्तित्व का प्रण है। जब किसी भी समझाइश से अज्ञानी अहंकारी रावणी प्रवृत्ति देहाभिमान नहीं छोड़ती, भक्ति का महत्व नहीं समझती तो उसके कल्याण हेतु उसकी वृत्तियों के विनाश के लिए युद्ध अनिवार्य हो जाता है। रामजी यही करने जा रहे हैं। लंका रूपी देह में वासनाओं का सागर लहराता रहता है उसके मध्य बैठी सीताजी (भक्ति) तक पहुँचने के लिए सेतु की आवश्यकता है। अहंता और ममता वृत्तियों के प्रतीक दो वानर नल और नील को सेतुबंध का कार्य मिला है। किसी भी शुभ काम में यह दो वृतियाँ ही विक्षेप करती हैं। पूर्व में एक वरदान द्वारा इनको शुभकर्म में सहायक होने के लिए दीक्षित किया गया था इसीलिए इनके सहयोग से सागर पर सेतुबंध हो सका।

"नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसिष पाई॥
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे॥ 1/60 सु.कां॥"
"देखि सेतु अति सुंदर रचना। बिहसि कृपानिधि बोले बचना॥ 1/2 लं.कां॥"
"जे रामेस्वर दरसनु करिहहिं। ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं॥ 1/3 लं.कां॥

रामजी ने सागर तट पर सदैव मंगलकारक शिवजी की स्थापना की और अपने इष्ट रामेश्वरमजी की महिमा बताई। यहाँ रामजी ने उस समय शिव और वैष्णव सम्प्रदायों के मध्य प्रचलित मिथ्या मान्यता को समाप्त करते हुए एक और सेतुबंध किया। कहा:

जिनको शिव जी प्रिय हैं, किंतु जो मुझसे विरोध रखते हैं; अथवा जो शिवजी से विरोध रखते हैं और मेरे दास बनना चाहते हैं, मनुष्य एक कल्प तक घोर नरक में पड़े रहते हैं। अतएव श्री शंकर जी में और श्री राम जी में कोई ऊँच-नीच का भेद नहीं मानना चाहिए।

"संकर प्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि, घोर नरक महुँ बास॥ 2 लं.कां॥"

रावण को एक और अंतिम अवसर देने के लिए अंगदजी संधि प्रस्ताव लेकर गये जिसे रावण ने ठुकरा दिया। जीव कहाँ अपने अहंकार के आगे सत्य-असत्य में भेद कर पाता है। युद्ध अनिवार्य हुआ।

रावण पक्ष के योद्धा रथ पर सवार हैं और रामजी पैदल। इससे शंकित विभीषणजी रामजी को भी रथारूढ होने को कहते हैं। रामजी जीवन के युद्ध में विजय के लिए आवश्यक रथ का रूप बताते हैं :

"सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
"बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥ 3/80 लं.कां॥"

शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिए हैं। सत्य और शील (सदाचार) उसकी मजबूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम (इंद्रियों का वश में होना) और परोपकार- ये चार उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, दया और समता रूपी डोरी से रथ में जोड़े हुए हैं।

"ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥
"दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥ 4/80 लं.कां॥"

ईश्वर का भजन ही सारथी है। वैराग्य ढाल है और संतोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है, श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है।

"अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
"कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥ 5/80 लं.कां॥"

निर्मल और अचल मन तरकस हैं। शम, यम और नियम- ये बहुत से बाण हैं। ब्राह्मणों और गुरु का पूजन अभेद्य कवच है। जो मनुष्य ऐसे गुण रुपी रथ को धारण करता है, उसे कोई भी शत्रु पराजित नहीं कर सकता। युद्ध आरंभ हुआ :

"निसिचर कीस लराई बरनिसि बिबिध प्रकार।
"कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संघार॥ 67 ख उ.कां॥

राक्षसों और वानरों के बीच अनेकों प्रकार से भीषण युद्ध हुआ। कुंभकर्ण अति तामसिक बल, मेघनाद मायावी बल, का विनाश हुआ।

"खैंचि सरासन श्रवन लगि छाड़े सर एकतीस।
रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस॥ 102 लं.कां॥

कानों तक धनुष को खींचकर रामजी ने इकतीस बाण छोड़े। वे राम के बाण ऐसे चले मानो कालसर्प हों।

"सायक एक नाभि सर सोषा। अपर लगे भुज सिर करि रोषा॥
"लै सिर बाहु चले नाराचा। सिर भुज हीन रुंड महि नाचा॥1/103 लं.कां. ॥

एक बाण ने नाभि के अमृत कुंड को सोख लिया। दूसरे तीस बाण कोप करके उसके सिरों और भुजाओं में लगे और रावण मृत्यु को प्राप्त हो गया।

हे मुमुक्षु इस प्रकार रामजी ने रावण को स्थूल शरीर की दसो इंद्रियों उनके विषय, सूक्ष्म शरीर के मन, बुद्धि चित्त, अहंकार और जीव भाव के अनादि कुण्ड को सोखकर उसे अपने स्वरूप में मिला लिया। इस अवस्था की प्राप्ति ही तो रूप से स्वरूप की यात्रा का लक्ष्य है। यही लंकाकाण्ड का सारांश है।

उत्तरकाण्ड

अयोध्या पहुँच कर राज्याभिषेक के कुछ समय बाद रामजी ने सभी विभीषण, अंगद, सुग्रीव आदि नायकों और अन्य सभी साथियों को विदा करते हुए कहा :

"अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम॥ 16 उ.कां.॥

हे सखागण! अब सब लोग घर जाओ, वहाँ दृढ़ नियम से मुझे भजते रहना। मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका हित करने वाला जानकर अत्यंत प्रेम करना अर्थात हे मुमुक्षु परमात्म तत्त्व की प्राप्ति के बाद प्रारब्ध वश बचा शेष जीवन जग हित कार्यों और प्रभु स्मरण में लगाना। स्वयं के लिए कोई नयी प्रवृति में नहीं। भरतजी के प्रश्न के उत्तर में रामजी द्वारा बताए संत असंत के लक्षण साधकों को अपनी आध्यात्मिक स्थिति का सही मूल्यांकन करने में महत्वपूर्ण मापक हैं।

जैसे इस प्रत्र के प्रारंभ में बात आई थी कि मानव देह मिलना एक बहुत ही बड़ी उपलब्धि है। रामजी भी कह रहे हैं यह सारा संसार मेरी माया से उत्पन्न है। इसमें अनेकों प्रकार के चराचर जीव हैं। वे सभी मुझे प्रिय हैं, किंतु मनुष्य मुझको सबसे अधिक अच्छे लगते हैं। क्योंकि यही एक योनि हैं जहाँ साधना करके परमात्मा को पाया जा सकता है।

"सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए॥ 2/86. उ.कां.॥"

इसीलिए वह एक बार गुरुओं व प्रजा के सामने मानव शरीर का महत्व बता रहे हैं कि बड़े भाग्य से मिला यह मनुष्य शरीर साधना करके स्वरूप में स्थित होने (मोक्ष प्राप्ति) का अवसर है।

"बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा॥
"साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा॥ 4/43 उ.कां.॥"

यह अवसर गंवा दिया तो परलोक में दुःख और पछताना होगा। यह जान लो और व्यर्थ में अपना दोष काल पर, कर्म पर और ईश्वर पर ना लगाना।

"सो परत्र दुःख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताई।
सो परत्र दुःख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताई॥ 43 उ.कां.॥"

भावार्थ है कि हे मुमुक्षु ध्यान रहे स्वर्ग तक के भोग बहुत थोड़े और अंत में दुःख देने वाले हैं। अतः मनुष्य शरीर को भोगों में खपा देना अमृत के बदले विष पीने जैसा है। अगर अवसर चूक गये तो फिर से चौरासी लाख योनियों में भटकना पड़ेगा।

"एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥
"नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥ 1/44 उ.कां.॥"
"आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी॥ 2/44 उ.कां.॥"

भावार्थ है कि यह मनुष्य का शरीर भवसागर को पार करने के लिए एक जहाज है। मेरी कृपा ही अनुकूल वायु है। सद्गुरु जहाज के खेने वाले हैं। भगवत्कृपा से तुम्हें यह दुर्लभ मिले हैं।

"नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
"करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥ 4/ 44 उ.कां.॥"

हे मुमुक्ष, ऐसे साधन पाकर भी भवसागर से न तरे, वह कृतघ्न और मंद बुद्धि है और आत्महत्या करने वाले की गति को प्राप्त होता है॥44॥

"जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ॥ 44 उ.कां.॥"

फिर रामजी ने भवसागर पार करने के लिए ज्ञान मार्ग को कठिन और भक्ति मार्ग को सहज बताया भक्ति स्वतंत्र है, सब सुखों की खान है, परंतु सत्संग से ही इसे पा सकते हैं। लेकिन पुण्य समूह के बिना संत नहीं मिलते। पुण्य है मन, कर्म व वचन से कपट त्याग कर ब्राह्मणों व विद्जनों की सेवा करना।

"भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
"पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥ 3/45 उ.कां.॥"

भक्ति करना सरल इसलिए बताया कि इसमें यज्ञ, जप, तप, उपवास किसी की आवश्यकता नहीं है। जरूरत है तो सरल स्वभाव की, संतोषी मन की, मुझ पर दृढ़ विश्वास की, बिना आशा या भय के, ममता व अहंता से रहित हो कर निष्काम कर्म की, शिव भजन की, संत जनों के संग की, और रामजी के गुणसमूहों के और नाम के पारायण होकर जीवन जीने की। इससे हे साधक तुम भवसागर आसानी से पार कर लोगे।

उत्तरकाण्ड के अंत में काग भुशुंडिजी गरुड़जी को ज्ञान मार्ग व भक्ति मार्ग दोनों की विस्तृत व्याख्या करते हैं। हे मुमुक्षु दोनों मार्गो से परमतत्त्व की प्राप्ति होती है। अंत में दोनों मार्ग एक ही लक्ष्य तक पहुंचाते हैं। ज्ञान में मुमुक्षु स्वयं के स्वरूप को पहचान लेता है और भक्ति मार्ग वाला अपने जीव भाव को ही अपने इष्ट में जो केवल एक ही सत्ता है, एक ही अस्तित्व है, उसमें लय कर देता है अर्थात वह भी अपनी स्वरूपावस्था को प्राप्त कर लेता है।

3. निष्कर्ष

देहधारी पर निज स्वरूप (ब्रह्म स्वरूप) अभिलाषी मुमुक्षु जीव को जीवन में ब्रह्म स्वभाव यथा निरपेक्ष, निष्क्रिय और सचेत चैतन्य भाव अपनाना चाहिए। उसे अच्छाई , बुराई, मोह, आकांशा से परे एक दृष्टा भाव से जीवन जीने का प्रयास करना चाहिए। ऐसे मुमुक्षु को संकल्प-विकल्प विहीन जीवन जीना चाहिए। उसके जीवन के संपूर्ण क्रियाकलाप अपनी किसी कामना का परिणाम नहीं अपितु अस्तित्व के विधान और मंतव्य के अनुकूल होने चाहिए। जब इस परिप्रेक्ष्य में राम जी के जीवन का अवगाहन करते हैं तो पाते हैं कि राम जी ने पूरे जीवन मे कोई एक भी काम अपनी इच्छा पूर्ति के लिए नहीं किया। उनकी कोई निज इच्छा थी ही नहीं। वो सदैव अपने स्वरूप में ही स्थित थे। उनकी सभी क्रियाओं का उत्प्रेरक समष्टि चेतना की आवश्यकताओं की पूर्ति करना मात्र था।

स्वरूप प्राप्ति का अभिलाषी, मानस के राम के चरित्र से सीख कर तुम रूप से स्वरूप की यात्रा पूरी कर सकते हो। इसीलिए आओ मुमुक्षु निष्काम भाव से जीयें क्योंकि :

"पापों की या पुण्य की, गठरी तो है बोझ।
आ निष्काम मार्ग चलें, छोड़ व्यर्थ के बोझ॥ "पुरु सतसई॥

अतः हे मुमुक्षु संसार में निस्पृह रह कर एक दृष्टा की भांति जी कर अपने स्वरूप की ओर गति करें।

4. संदर्भ

1. तुलसीदास, संवत् २०८१, राम चरित मानस, गीता प्रेस, गोरखपर।
2. भगवत गीता, संवत् २०५४, गीता प्रेस, गोरखपर।
3. कठोपनिषद , संवत् २०७३, गीता प्रेस, गोरखपर।
4. मोरारी बापू, भावार्थ रामायण।
5. स्वामी शंकरानन्द, व्याख्याकार, 2017, तत्व बोध, सेन्ट्रल चिन्मय मिशन ट्रस्ट।
6. मोरारी बापू, 1999, मानस धर्मरथ, संतकृपा सनातन संस्थान, नाथद्वारा।
7. मोरारी बापू, 2001, मानस श्री लंका, श्री सीताराम सेवा ट्रस्ट, मुम्बई।
8. पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु' 2022, चलें नित्य की ओर, स्वयं प्रकाशक, मानसरोवर, जयपुर।

Ramayana Heritage in Tamil Nadu

ISBN: 978-1-960627-06-3

Sriraman Chandramouli
S Vijaykrishnan
Private Sector
(sriramancva@live.com)
(svijaykrishnaniyer@gmail.com)
Kum. Sriranjani Sriraman
Student, Std V (Vidya Mandir, Chennai)
(Sowmya.sharma@outlook.com)

Delving into some unique Heritage practices and historical sites across The Tamil lands associated with the valmiki Ramayana and how important Rama is in Tamil Nadu.

1. Introduction

Ulagam yaavaiyum thaamuLavakkalum Nilai perutthalum Neekkalum Neengala
Alagila vilayaattudaiyaaravar Thalivar annavarkke saran Naangale

Thus Spake Kamban, the Maha Kavi who rendered the story of Rama in Tamil in 10000 stanzas, which still stands as one of the greatest epics of Tamil. This is also the 2nd oldest rendition of Ramayana available to us today post the Valmiki's Rachanam.

But Kamban himself says that he considered which of the 3 available versions to rewrite and that, he took Valmiki's version, showing us that there were 3 versions of the Ramayana prominent across the Tamil Landscape in the 10th / 11th century CE.

In true testament to Brahmadeva's promise to Sage Valmiki at the start of the Epic, the Ramayana is both a spiritual and cultural text that encompasses whole of Bharata Desha, nay the whole world. Rama or Ramayana was not new to Tamil people before Kamban and you can see numerous references to the Epic from the time of the Sangam literature (Historically dated to the 4th Century BC/ Before) and post that in the Bakthi Kavyas of great Nayanmar and Aazhwar saints.

The Rama Kavya has been etched and entwined with the lives of all people across Bharatha Desa and especially in the Tamil Lands in all aspects of life and society including literature, art, music, dance and cultural mores. There are scores of temples that tell the story of Shri Rama through breathtaking sculptures; the list is endless.

Here, we thought to showcase how Rama is entwined in the Tamil Lives in 5 different ways, from this vast Ocean. We will look at unique practices that are still followed in Tamil Nadu (or in some cases, exclusively in Tamil Nadu) for celebrating Rama.

As Kamba says, we want to try and lick the Milk from the Ocean of Milk like a Cat. But I think we cannot even touch that ocean, and we would just attempt to lick or may be smell the milk.

We will look at some important places across Tamil Nadu that have either found a mention in the Moola Grantha of Valmiki or have been referenced in other puranas (including Tamil Kavyas) as being associated with Lord Sri Rama. Further, the practices of Seetha Kalyanam that are exclusively practiced in Tamil Nadu in Bajan Sandhyas, Events organized by Kamban Kazhagams (Groups) Parayanam of Ramayanam in Various ways of Valmiki / Kambar / Other great bakthas and finally the Literary Ramayana works in the form of Natakas/ Poetry/ Prose.

Ramo Ramo Rama Ithi Prajanam Abhavan Katha:
Raamabhootham Jagatboodrame raajyam prashaasathi

Valmiki says, when Rama Ruled, every talk was about Rama, Rama & Rama and the world was centered around Rama.
Lets see how this part of the World Became Rama's World.

2. Rama's Ayana - Heritage Walk

The Story of Rama - The Ramayana by itself means the path that Rama took – Rama's Ayana. There are innumerable sites across the Bharatha Desha that Rama, along with Lakshmana and Seetha traversed by foot and made those Lands Fertile. Here we are going to walk along five such places exclusively in Tamil Nadu, that have either been described in Valmiki's epic or in various historical recordings/ puranas. We have consciously avoided some of the architectural wonders which has the Ramayana etched in Stone or paintings and their histories here as we feel that, it would be a separate paper all together for another occasion. We have also not included the places which are now not in the State of Tamil Nadu.

1. Rama Sethu / Rameshwaram

Yatha cha Kaaritha: Sethu Raavanascha Ythaa Hathah ||

Lord Rama, tells Hanuman what he has to tell Bharatha, when he meets him, in the Yuddha Kanda of Valmiki Ramayana. And one of the most important things that he wants to be told is on how they Built the Sethu.

When we fly across the ocean from danushkoti towards Thalai Mannar (in Sri Lanka), you can still see a wonderful Limestone shoal formation which exactly looks like a bridge – a floating bridge of stones. A man made wonder. It is not Pumice stones that usually float, but Lime stone Shoals which only float in water here. You can lift it, thinking it would be light, as it floats.

Rama, with his army of 10 crore vanaras (and as Kulasekara Azhwar said), with Squirrels and other beings aiding him, built a wonderful bridge 100 Yojanas long across the Ocean, which is called as the Sethu – The Rama Sethu.

RAMESHWARAM is a very special place in the Ramayana as this is where Rama and his Vanara sena worshiped lord Shiva and started to Lanka. It has a wonderful temple with the world's largest corridor, also housing intricate paintings now for Lord Siva. And as a place where Rama and Sita worshipped Lord Shiva, it is one of the most important pilgrimage sites across Bharatha. It also has a unique custom of people bathing in the sea and 21 different wells, before seeing the Lord, with wet clothes on.

Rama and his Vanara sena worshiped lord Shiva and started to Lanka from the land of Danushkodi, the edge of India (now demolished by a cyclone on 18 December 1964). The place is known as Danushkodi because that is where Rama placed his bow first when he entered Rameswaram. Rameshwaram, the name comes from the temple of lord Shiva as that Shiva linga was made in sand by Mata Sita and worshipped by Rama as they came back from Lanka after the war though it was made of sand it is still hard. Hence, the Shiva linga and the city was named after this incident.

The City of Rameswara is laden with various heritage sites associate with the Lord. There is a Kodanta Ramaswamy temple in the Ocean shore, where it is said, Rama first performed the Pattabisekam of Vibishana, before doing the actual one in Lanka.

Further down there is Thirupullaani Adi Jagannatha Perumal Temple – This temple, located close to Rameshwaram has a direct link to the Setu Bandhana and Shri Rama's worship of Varuna Deva for three days and nights on a "bed of holy Kusha grass" (hence the name *Thirupullaani,* where ***"pul"*** in Tamil refers to grass. This is also the place considered to be where Dasharatha came to before doing the Putra Kameshti Yaaga, to perform rituals for his ancestors.

2. Madurai Vrishaba Malai

Lets move further west from Rameswaram, and reach the ancient city of Madurai. This is the city of Meenakshi and Sundareswara. The City where the Lordess Parvathi herself manifested as Devi Meenakshi and ruled as the Pandya Queen along with Soundara Pandya (Sundareshwara).

The Thiruvilayadar Puranam, a Tamil epic describing various acts of Lord Shiva, that he did across Madurai, talks av=bout How this place got associated with Rama.

There is a hill known as Vrishaba Malai near Madurai. (Now Housing the Famous Kallazhagar / Sundararajar Perumal Temple and Pazhamudhir Cholai Muruga Temple). This is now famously called as the Azhagar Malai.

When Rama was passing towards Rameswaram, he stayed for a night at the Azhagar malai where Agasthya Muni met him and advised him to pray to Meenakshi and Sundareshwara, for a safe return along with Seetha. Sure Enough, As Rama returned Triumphant with Maa Seetha, he took an Occasion to visit this holy city along with her and prayed and paid his obsiences to Lordess Meenakshi the Queen and Lord Sundareshwara – the Most Handsome One.

Madurai is the Place where everything and Everyone is Beautiful. The Lordess is Meenakshi / Angaiyar kanni - The Beauty with the eyes of a Fish. The Lord is Sundara – The Most Handsome. The Vishnu is Soundara Raja – The King among those who are Handsome. Then what is the Wonder in the Handsome Rama and the Beauty Seetha paid their obsaiences in this beautiful place!

3. Srirangam – Ranganathaswamy

"*Let me be Born as dust or a stone in the Holy Sri Ranga – where the bakthas feet would rest on me*" prays an azhwar. The Term Koil in Tamil, generally refers to a Temple. But in the Tamil Srivaishnava Sampradaya, if someone says Koil, The First thing it referes to is the Sri Ranganatha Swamy Temple in Srirangam.

Lets now visit this holy shrine in the Center of Tamil Nadu. It is the Largest Functioning Hindu Temple Complex inbetween 7 prakaras in an island formed by the Rivers Kaveri and Kollidam in Tamilnadu. It has been sung in praise by nearly all the azhwars, and it is the Place where the Great Kamban performed the arangetram of his Ramayanam.

Lord Rama while giving away gifts to those who visited his Pattabisheka – told Vibeeshana that, he has nothing else worthy to offer him, except himself – and so offers to him, his Kula Devata, who had been worshipped for millenias by his ancestors, including Bramha – Ranganatha.

Vibeeshana carries that Ranganatha towards Lanka, when various Rishis pray that the Ranganatha should stay within the boundaries of the main land of Bharatha Desha.

To ensure this happened, Lord Ganesha takes the form of a little Boy to support Vibeeshana in carriying the Ranagantha for a few minutes until he completes his anushtana, But keeps it down in this island and runs off – when there had actually been a condition that the Idol will rest where it is placed down first.

Finally Vibeeshana understands that it is the Gods will and accepts that the reclining Lord will be witnessing the Direction of Lanka (South) and will continue to bless his land always.- This Story occurs in the Padma purana.

Even today, there are some Rajputs/ Surya Vamshi Kshatriyas, who claim that this Lord is their Kula Devata, as he was the Kula Devata of Rama. There were various Kings across India (and Abroad), who saw Ranganata as their ishta Deivam , and Named themselves as Rama rulers (Like Trivandrum , Thailand, Sethupathi Kings in Ramnad among others)

4. Thiruneermalai Neervanna Perumal Temple

A unique shrine that links the Aadi Kavi Maharishi Valmiki Himself. It is said that at this kshetram, the sage received a vision of Shri Rama along with Mata Sita, Hanuman and his brothers, in testimony to his completion of the Epic.

Famed as *Thoyagiri*, in the Puraanas (*Thoya* – water; *Giri* – hillock), this kshetram at the outskirts of Chennai is unique for the fact that Bhagavan Vishnu blesses Bhaktas in four poses – *Nindraan* (standing) *Kidanthaan* (reclining), *Irunthaan* (sitting) and *Nadanthaan* (walking). The connect to the Ramayana? This is the shrine where once Sage Valmiki worshipped Sriman Narayana in three forms – Sri Ranganatha in a reclining posture, Sri Narasimha in a sitting position, and Sri Trivikrama in the walking pose- yet he still felt that he was missing something.

As he descended the hill, the sage realized his heart's desire. The sage appealed to Shri Rama to grant him darshan, mentioning that he had completed the epic Ramayana on Him and accordingly the Lord fulfilled his wish by granting him a vision as *Neervannan* (the Lord with the hue of "*neer*" or water) along with Mara Sita, Lakshmana, Shatrughna, Bharatha, and Hanuman, and in some versions, with even Sri Ganesha appearing as Sugreeva.

Noted Vedic scholar, author and speaker Shri Dushyant Sridhar mentions in his recent book, Ramayana, that it is this Lord Neervanna Perumal, who was also the kula devata (family deity) of Maharishi Valmiki, whom the Sage worshipped as Sri Jalaadhivarna.

5. Mudikondan Kodanda Rama

On his return journey to Ayodhya, Rama visited the Sage Bharadwaja again, as he had promised. Sage Bharadwaja wished that he see the Lord in Pattabisheka Kola (That is being crowned with the Holy Crown designed by Bramha) then and there as he would not be able to be present to witness that celestial event.

To Bless the sage, The Lord Showed himself dressed as a king along with the holy crown on his head at this place in the thiruvarur district of Tamil Nadu, giving the place the name Mudikondan (meaning – Person with the Crown).

This is the Tale of the village of Mudikondan according to Sthala Purana and this place has a unique worship of Hanuman with Curd Rice, as it is said Hanuman was very hungry, when Maa Seetha provided him with Curd Rice here.

This sthala is also one among the Pancha Rama Kshetras in Tamil Nadu – or the 5 Holy Temples associated with Rama in the Thiruvarur District of Tamilnadu.

Now that we walked across some interesting places from South to North of Tamil Nadu, lets also look at some of the other cultural practices showcasing the Heritage of Rama across this Devine Land.

3. Seetha Kalyana Vaibogame

Pavana ja Sthuthi Patra Pavana Charitra
Ravi Soma Vara Nethra Ramniya Gathra
Seetha Kalyana Vaibhogame
Rama Kalyana Vaibogame

Saint Thyagaraja who lived in Thiruvayyaru in Tamil nadu and had Rama as his ishta Devatata composed this wonderful hymn in Telugu, which is still sung in most of the South Indian Weddings, invoking Lord Rama and Seetha.

But there is a practice in this state celebrating the holy matrimony of the Lord and Maa Seetha by enacting it in various forms, and rejoicing over the event considering as if kids in their own family have been married.

Let us see some of these holy matrimonies – Kalynana Manjari.

1. Seetha Kalyanam in the Bhajana Sampradaya

Under this unique tradition of Naama-Sankeertana established in the South of India by great saints such as Sri Bodhendra Saraswati Swamigal, Sri Sridhara Aayaavaal, Pudhukkottai Gopala Krishna Bhagavathar and Marudaanallur Sri Sadhguru Swamigal, the Bajan Sandhyas in the state are occasions when Seetha and Rama are married to each other or Radha and Krishna.

Every Village in the state either hosts a Seetha kalyanam post Rama Navami until the month of Ashada or Radha Kalyanam from Margaseersha Month till Rama Navami.

In a Seetha Kalyanam, singers, known as "Bhaagavathars" actually re-enact the wedding of Radha and Krishna or Seetha and Rama by assigning parents to each side and reading the Lagnashtakam, pravaram of the Lord and the Godess and Chornikai and even tying of the Mangal Sutra.

The Geeta Govinda of Jayadeva (24 Songs) are sung traditionally post which various songs by great saints are sung. A deepa Pradakshina (/ circumbulating the Deepa) by singing Bhajans for the whole night (Jaagran) is performed. On The morning of the wedding, events similar to human wedding are enacted like Mutthu kutthal and exchange of garlands post which the tying of the mangala sutra happens.

The Holy wedding is complete with a feast for all participants and also a Kelikkai (Play ful games in the form of songs) similar to human weddings.

2. Seetha Kalyanam in Upanyasams

Kamba Varidhi Ilangai Jayraj – an exponent of Kamba Ramayanam describes days of Yore at now half destroyed city of Yazhpanam (Jaffna in Sri Lanka where Tamils Live) – where Thirukalynam in Upanyasams were celebrated similar to how they would come to the weddings of a close associate.

When the Story Tellers in Tamil Nadu say the Story of the Wedding of Rama and Seetha, you can see people dressed up and Decked up to visit the Wedding of the Lord taking along with them gifts of Fruits, Flowers and Sweets to the Lord, exchanging them with others and praying for Weddings at their homes or for overally human wellbeing.

3. Seetha Kalyanam in the Temple

Thirukalyana Mahotsava is a part of the 10 day festival in most Tamil and Andhra Temples. You can see the Images of The God and Godess taken in procession in various mounts (called Vahanams) ranging from Hanuman for Rama to Deer, Serpent, Garuda, Elephant, Horse and Lion. Decked up Moorthys of Rama Seetha, Lakshmana and Hanuman are taken in a procession around the temples.

There would also be a famous Rathotsava and finally the Celesital Wedding is enacted to the Moorthys with complete vedic rituals and Yagyas, similar to how human weddings are conducted, concluding with Blessings to the devotees (Mangala Akshatha).

You can see this wonderful event in 1000’s of places across Tamil Nadu but the most famous Seetha Kalyanam happens in the Badrachalam Temple in Telangana on the Occasion of Sri Rama Navami.

4. Kamban Veettu Kattu Thariyum Kavi Paadum

Even the moat that is used to tie the cow, sings at the house of Kamba, goes a saying – “*Kamban Veettu Kattu Thariyum Kavi Paadum*”

Would the people of this land fail to celebrate the poet who gave them the Ramavathara.

There is a unique tradition called Kamban Kazhagams happening across places where Tamils live, celebrating Kamban and his Hero, Rama called the **Kamban Kazhagam.**

Kazhagam means a Group. The Kamban Kazhagam is a society formed to propagate the works of Kavi Chakravarti Kamban, the 12th century saint-poet, who composed the *Iraamavathaaram, or Kamba Ramayanam*, the Tamil rendition of Sage Valmiki’s Epic. The Kazhagam aims to promote awareness of the poet Kamban’s works, especially through annual conferences across various parts of the world, which prominently feature debates on various aspects of the epic.

You can see a unique tradition where people in high positions in the society pick up topics from the Ramayana and debate on the Positives and Negatives / what is right and what is wrong – with a neutral jusge usually eloquent with the Ramayana giving a verdict (which usually would be neutral – never aying who was right or who was wrong.

The Famous Topics debated are “ Was Rama Right in Killing Vali”, “Did Rama do Injustice to Sita by asking her to do Agni Pravesha?” , “Who Was Worse – Kaikeyi / Mantra/ Soorpanaka” “Who is a Better Ruler/ City, Dasharatha & Ayodhya / Ravana & Lanka” and various others.

Fierce debates are held on these topics where people passionately come and share their knowledge of Ramayana.

You can also often find comparison between Valmiki Ramayana and Kamba Ramayana Debated/ talked.

The society is doing a wonderful job in promoting and protecting Rama even among those millennials who claim to be agnostic or naasthik, ensuring Kamba and Rama live until Tamil Lives.

5. Ramayana Paarayana

Rama is the Lord – or is it Ramayana Itself? You will often find that Ramayana being worshipped as being bigger than Rama himself. Reason - Reading the Ramayana gives so much benefits.

Across Tamil Nadu there are various practices in reading the Ramayana of Valmiki / Kamba / Ezhuttacchan.

1. Navaha Parayanam

This is the practice of reading the complete Valmiki Ramayana (upto Yuddha Kaanda) within 9 days. Usually read during the vasantha Navarathri it is also performed during other times of the year.

2. Punarvasu Parayana Krama

This is a practice to read either Valmiki’s version / Kambans Version of Ramayana, starting from the day of the Punarvasu star and ending it on the day of the next punarvasu star (Rama’s Birt Star) – reading over 27 days. It is also practiced by reading over 3 Punarvasu Stars (54 Days).

3. Sundara Kanda Parayana

Reading of The Sundara Kaanda alone over 9/ 18/ 27/ 45/ 48 days for various benefits. Both Valmiki and Kamba Ramayana/ any other version of the Sundara Kaanda – whichever is comfortable is read.

4. Ramayana Maasam

Over the Month of Aadi (Kataka / Saavan), The entire Ramayana is read at various temples/ homes by induviduals in South Tamilnadu/ Kerala calling the month itself as the month of Ramayana. Usually the Malayalam version of the Ramayana by Ezhuttacchan is read during this time.

Usually various chapters of the Ramayana /slokas from the Ramayana are read for various benefits, like the Jananam for Begetting of kids, seetha rama vivaham for wedding in the family/ Sanjeevani sargam for good health among others.

6. Rama Nataka Keerthanai – Literary Traditions of Ramayana

We talked so much about Kamban. But Kamban was not the first nor the last to picturize Rama in Tamil Nadu. As stated earlier, there have been various references to Rama from Sangam Literature to the songs by Azhwars (the Poet Sints of Tamil vaishnavvisim) or Naynmars (The Poet Saints of Tamil Shaivisam). Here we are trying to portray 3 Literary traditions of the Ramayana excluding Kamban or the other writters who attempted to write the epic on the whole.

1. Thyagaraja Ramayana

Saint Composer Thyagaraja had his Ishta Devata as Rama and lived in Thiruvaiyaru village in Tamil Nadu. He had composed 1000's of hymns in Telugu and Sanskrit on Lord Rama and is considered one of the doyens of Carnatic Music. He lived in the 18^{th} Century and believed to have seen Lord Rama directly.

In Thyagaraja Ramayana, various compositions of Thyagaraja are picked up and arranged to form the Ramayana Story and sung to please our ears in Carnatic music.

2. Pasura Padi Ramayanam

The 12 Azhwar saints have sung extensively on Rama and have highlighted the story of Ramayana in various songs. Especially Kulasekara Azhwar, saw himself as a dasa of Rama and saw every Lord in every temple he visited as Rama.

The Various Pasurams (or Hymns) that the Azhwars sang are set in order to form the Ramayana story and thus forms the Pasura Padi Ramayanam.

3. Rama Nataka Keerthanai

Arunachala Kavirayar – a Tamil Composer from the 16^{th} Century wanted to create songs for Ramayana that could be performed as a Dance Drama. The Songs thus set by him and enacted regularly across the tamil Nadu in called as the Rama Naatka Keerthanai (or Songs of the Ramayana Dance Drama).

7. Conclusion

Rama Rama Rama – as mentioned in the sloka in the beginning, Rama lives in the souls and the practices of people across this nation. You can see that people sing rama/ talk on rama, enact the Ramayana. The Kings take his name and talk about setting up a Rama Rajya. So as Brahma said to Valmiki, this Ramayana will live until the Sun and The Moon and the Universe last.

When Talking on traditions and Heritage of Rama, how can we miss the most important one. Every Kambaramayana session starts with singing the hymn Ulgam yavaium quoted in the beginning of this paper and ends with the song from the Thiru Mudi Suttudhal / Rama Pattabhishekam.

Ariyanai Anuman Thanga Angadhan Udaivaal Yendha Bharathan ven Kudai Kavikka Iruvarum Kavari Patra
Virai Seri Kuzhali Onga Vennaiyur Sadaiyan Thangal Marabulor Kodukka Vaangi Vasittane Punaindhan Mouli

8. References

1. Srimad Valmiki Ramayana, translated and presented by Sri Desiraju Hanumanta Rao (Bala, Aranya and Kishkindha kanda), and by Sri K.M.K. Murthy (Ayodhya and Yuddha kanda) with contributions from Durga Naaga Devi and Vaasudeva Kishore (Sundara kanda) retrieved from http://www.valmikiramayan.net/.
2. https://www.valmiki.iitk.ac.in/
3. Srimad Ramayanam - Dharmalaya Edition
4. Thanjuvar Parampara.com
5. Kamba Ramayanam
6. Valmiki Ramayana App by Mithun Guddethotha
7. Srimad Valmiki Ramayana, Hindi Edition, Gita Press, Gorakhpur (2019)

Mystery of Sita: Revealing Her Past and Divine Purpose

ISBN: 978-1-960627-06-3

Manali Gandhar Newaskar
Self Employed- Artist
(manalimbagade@gmail.com)

Sita is the central figure of Valmiki Ramayana. She is depicted as devoted, faithful, and submissive in entire Ramayana. Her purpose of life, the sacred responsibility, and the power in destruction of Ravana along with all rakshasas is however neglected. Uttar-Ramayana discloses the past life of Sita as Vedavati. As the wife of Rama, the incarnation of Vishnu, we pray her as incarnation of goddess Lakshmi. However, the essential connection between goddess Lakshmi, Vedavati and Sita is lacking. The present paper makes an effort to clarify the mystery of Sita's birth and elucidate the power of Sita. It further describes her role in Ravana's annihilation

1. Introduction

The great text 'Shrimad Valmiki Ramayana', is one of the foundational texts in Hindu tradition. It imparts significance to society in terms of relationship, leadership, service, devotion, purity, ethical integrity, and moral excellence. The alternative terms for Ramayana is given by Valmiki himself.

Balakanda, Sarg 4, Shloka-7 says that-

kāvyaṃ rāmāyaṇaṃ kṛtsnaṃ sītāyāścaritaṃ mahat |
paulastyavadhamityevaṃ cakāra caritavrataḥ || 7 ||

Valmiki himself introduced Ramayana as the legendary saga, the Life-story of Sita. The another name given here is Paulastyavada- that is 'Slaying of Ravana'. This can also be interpreted as Sita's role in destruction of Ravana is significant. She is the reason. Sita is the central figure of Ramayana epic. She is often presented as an ideal lady in hindu society because of her devoted life for Shrirama, purity, and Nishpapa in whole Ramayana tale. Her divine purpose of life and power are still neglected.

tasmāttvayonijā sādhvī bhaveyaṃ dharmiṇaḥ sutā |
punareva samudbhūtā padme padmasamaprabhā || 35 ||
(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 35)

She is 'Ayonija' and her birth is enigmatic too. The present paper sheds light on mystery of Sita, revealing her past life to understand her significant role in death of Ravana and life purpose.

Uttarkanda of Ramayana is deeply enigmatic where past lives and history of Rakshasa are told by Agastya muni. Shrirama himself urged sage Agastya as he became more curious about history of Ravana's birth and power of Indrajita. In Sarga 17 of Uttarakanda, story of Sita's past life as Vedavati is mentioned. Its mentioned that Sita was Vedavati, a Brahman daughter in her past life. We all worship Devi Sita as Goddess Laxmi only. She is the Shakti of Lord Vishnu, and wife of Shrirama- the purnavatar of Shrihari. The connection of Goddess Laxmi, Vedavati and Sita is lacking and this creates ambiguity about Sita's origin. The present paper focuses to clarify Sita's past life, its connection with Goddess Laxmi and illuminate her sacred task in annihilation of Ravana.

2. Mystery of Birth of Sita in Valmiki Ramayana

As we all know Raja Janaka found Sita and called her as Bhumikanya i.e. daughter of mother Earth. But how she became Bhumikanya is itself a mystery. Uttarkanda, Sarga 17, Shloka 36 says that:

kanyāṃ kamalagarbhābhāṃ pragṛhya svagṛhaṃ yayau || 36 ||

Sita first took birth in a lotus. She has glory as Lotus. 'Kamala', 'padmini' are names of ShriLaxmi.

In Shrisukta, rucha-4, It is mentioned that-

kāṃ sosmitāṃ hiraṇyaprākārāmārdrāṃ jvalantīṃ tṛptāṃ tarpayantīm|
padmesthitāṃ padmavarṇāṃ tāmihopahvayeśriyam || 4||

Goddess Laxmi is named as 'Padmesthitam' Which means Laxmi is sitted on lotus. Sita emerged from the Lotus as Ayonija as incarnation of Goddess Laxmi.

Sita was exceptionally charming, Graceful and elegant. Once Ravana was roaming in the forest and saw this new born baby- Sita, on a lotus. He was amazed by her beauty and carried her to Lanka.

pragṛhya rāvaṇastvetāṃ darśayāmāsa mantriṇe |
lakṣaṇajño nirīkṣyaiva rāvaṇaṃ caivamabravīt || 37 ||
gṛhasthaiṣāṃ hi suśroṇī tvad vadhāyaiva dṛśyate |
etat śrutvā'rṇave rāma tāṃ pracikṣepa rāvaṇaḥ || 38 ||

(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 37-38)

His Mantri i.e. minister strongly opposed Ravana to keep the baby with him and warned if he keeps this baby girl in Lanka, she will be the reason for his death. So Ravana had tossed Sita into the deep ocean.

sā caiva kṣitimāsādya yajñāyatanamadhyagā |
rājño halamukhotkṛṣṭā punarapyutthitā satī || 39 ||(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 39)

However, Sita by her yogic powers travelled from earth and went to yagnya Bhumi of Raja Janaka.

This clearly reveals that Sita had already provided the clue to Ravana that she was born and will be the reason for his death. It was possible that she would have directly emerged from the lotus near to the yagnyabhumi of Raja janaka. But that was not the case. She went to Ravana's home just after her birth. Just as Kansa was warned about his death from Akashvani, she created the fear among Ravana and his Ministers right after her birth. So, if Shrirama took birth for killing Ravana, that is the Karya, the reason (Karana) – Goddess Laxmi incarnates as Devi Sita for Ravana's destruction.

3. Sita's Past Life and Connection with Ravana

Sarga 17, Also mentions the past life of Sita. Once Ravana was wandering in forest. He saw a radiant and enchanting lady in penance. Ravana felt drawn to her.

In shloka7-12, she introduced about her as follows:

kuśadhvajo nāma pitā brahmarṣiramitaprabhaḥ || 8 ||
sambhūya vāṅmyī kanyā nāmnā vedavatī smṛtā |
tato devāḥ sagandharvā yakṣarākṣasapannagāḥ || (Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 8 and 10)

She was daughter of Brahmarshi Kushadhwaja. Her name was Vedavati. She was so beautiful that Deva, Gandharva, Yaksha, Rakshasa all asked her father for her marriage. But Kushadhwaja had already decided to give Vedavati to Lord Vishnu only.

pitustu mama jāmātā viṣṇuḥ kila sureśvaraḥ || 12 ||
(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 12)

Once daitya shambhu went and give proposal for his marriage with Vedavati. As he refused to give his daughter, Daityaraj Shambhu killed Kushadhwaja. At the same time, her mother also left the world with her father's Shava. then she started the penance to please God Vishnu.

She said-

nārāyaṇo mama patiḥ va tvanyaḥ puruṣottamāt |
(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, sarga 17, shloka 18)

Narayana is my consort. I will not marry any other person except Purushottama.

Ravana proposed her for marriage and asked her to come with him instead of doing this hard penance. Also he uttered disrespectful words against Vishnu in response of which Vedavati sang the glory of Shrihari. At last, Ravana failed to please Vedavati and thus got angry and pulled her hair with his hands.

mūrdhajeṣu tadā kanyāṃ karāgreṇa parāmṛśat |
tato vedavatī kruddhā keśānhastena sā'cchinat || 28 ||(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, sarga 17, shloka 28)

That was insulting incidence for Vedavati. She cut down her hair where Ravana touched it with her sharp hands.

yasmāt tu dharṣitā cāhaṃ tvayā pāpātmanā vane || 31 ||
tasmāt tava vadhārthaṃ hi samutpatsye hyahaṃ punaḥ |
(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Ssarga 17, shloka 31-32)

She cursed Ravana that she will be the reason for his death. Vedavati merged with the sacred fire and was reborn as Sita in the lotus. Man's action decides its future. Before Vedavati, Ravana had already abused and forcibly attacked many beauties including apsaras. The story of Vedavati indicates that-, Sita had decided Ravana's destruction in past life only. She was able to destroy Ravana with her own penance power but it is said in Shloka 32-

na hi śakyaṃ striyā hantuṃ puruṣaḥ pāpaniścayaḥ || 32 ||
śāpe tvayi mayotsṛṣṭe tapasaśca vyayo bhavet |

It is not possible for lady to kill male by physical power. It is possible by inner power, tapa, siddhi. But if I kill you by my penance, it will be wasted and I won't be able to marry Narayana in next birth.

Ravana's devotion towards Shiva was so immense that his punya was first destroyed. So Prakruti herself decided to destroy his Punya first. That might be the second reason why Vedavati not cursed him and end his life at that point.

4. Vedavati Birth and connection with Godess Laxmi

Sarga 17, itself gives the fact that Sita was Vedavati in past life. Emerging from Lotus, she was Kamala too. Still, connection of Vedavati with Devi Laxmi is not cleared. To clear this, we have to look into Devi Bhagavat mahapurana. In skandha 9 Adhyaya 15- the story of Vrushadhwaja is mentioned.

Vrushadhvaja was great devotee of Shiva, and Shiva was serving as guard to him. Once, he said disrespectful words for Narayana. So, the Aditya Narayana got angry and cursed him that he will be Shri-hina that is devoid of Laxmi. Shiva got angry as Suryadeva cursed his devote and went towards him with trishula. Suryadeva take refuge in Vaikuntha at Shri haricharana. Shiva arrived and talked with Narayana first. Narayana told-

kālo'tiyāto daivena yugānāmekaviṃśatiḥ |
vaikuṇṭhaṃ ghaṭikārdhena śīghraṃ gaccha tvamālayam ||
(Shrimad Devi Bhagvat Mahapuran, 9th skandha, Adhyay 15, Shloka 46)

Time of Vaikuntha and time of mrutyuloka run differently. Though you feel its only half an hour, its many years on earth.

vṛṣadhvajo mṛtaḥ kālāddurnivāryātsudāruṇāt |
rathadhvajaśca tatputro mṛtaḥ so'pi śriyā hataḥ || 47||
tatputrau ca mahābhāgau dharmadhvajakuśadhvajau |
hṛtaśriyau sūryaśāpātsmṛtau paramavaiṣṇavau || 48
(Shrimad Devi Bhagvat Mahapuran, 9th skandha, Adhyay 15, Shloka 47-47)

Vrushdhwaja is nomore, and died as Shri-hina. His Son- Rathadhwaja was also Shrihina. He has two sons – Kushadhwaja and Dharmadhwaja. Both of them are Vishnu bhakta. Kushadhwaja and his wife Malawati are in penance to get Laxmi back. Vishnu assured Shiva that Kushadhwaja will get a daughter who will be partial incarnation of Goddess Laxmi only. By this way, Shiva calmed down and went to Kailasha.

kuśadhvajasya patnī ca devī mālāvatī satī|
sā suṣāva ca kālena kamalāṃśāṃ sutāṃ satīm ||3
(Shrimad Devi Bhagvat Mahapuran, 9th skandha, Adhyay 16, Shloka 3)

After completing penance, Kushadhwaja got Laxmi as his daughter.

vedadhvaniṃ sā cakāra jātamātreṇa kanyakā |
tasmāttāṃ ca vedavatīṃ pravadanti manīṣiṇaḥ ||
(Shrimad Devi Bhagvat Mahapuran, 9th skandha, Adhyay 16, Shloka 5)

The baby began to sing all Vedic hymns clearly just after birth and hence named as Vedavati.

Then the Akashavani said- O beautiful one, In your next birth Shrihari will be your husband. That time Kushadhwaja decided to give his daughter to Vishnu only and refuged all other devas, gandharvas, daityas.

This links the Vedavati- Sita- Goddess Laxmi and gives us clear idea of incarnation of Goddess Laxmi.

Agastya muni said that Vedavati already had decided the death of Ravana. Which means Sita had already decided death of Ravana in prior birth.

5. The Purpose of Devi Sita's Birth

Valmiki mentioned Ramayana as life story of Sita. She is the reason for death of Ravana.
Agastya Muni said-

pūrvaṃ krodhāhataḥ śatruḥ yayā'sau nihatastathā |
upāśrayitvā śailābhaḥ tava vīryamamānuṣam || 41 ||
evameṣā mahābhāgā martyeṣūtpatsyate punaḥ |
kṣetre halamukhotkṛṣṭe vedyāmagniśikhopamā || 42 ||
(Valmiki Ramayana, Uttarakanda, Sarga 17, shloka 41 and 42)

Vedavati already had killed Ravana by her curse. After that you actually killed him in war. First Goddess Laxmi incarnated as Vedavati in Satyayuga and next as Sita for destruction of Ravana.

This clearly mentions that destruction of Ravana was the divine purpose of Sita's birth.

6. Conclusion

In ajnana dasha, we consider Sita as a human figure whose life was full of sorrow. After deep thinking about Sita's glory, we found that it's actually her leela for killing Ravana. She is Padmaja, the one who born on Lotus, went to Lanka and later found by Raja Janaka. She is the foremost reason i.e. karana of Ravana's annihilation and whole Ramayana. But none is her Karana i.e. she is devoid of any Karana.

In Adhyatmaramayana, Balakanda, 1st sarga, Sita reveals her own nature to Hanumana as follows:

māṃ viddhi mūlaprakṛtiṃ sargasthityantakāriṇīm |
tasya sannidhimātreṇa sṛjāmīdamatandritā || 34 ||
tatsānnidhyānmayā sṛṣṭaṃ tasminnāropyate'budhaiḥ |
ayodhyānagare janma raghuvaṃśe'tinirmale || 35 ||

Sita is Mulprakruti who creates, preserve and destruct the whole universe just in proximity with Shrirama. Also She played the Ramayana act through various characters. She told Hanumana that though people think of Rama killed Ravana, Rama get the throne but the reality is Rama is achala. Shrirama is sthira and akarta here. She is the only one who lifted the heavy bow, who killed Tratika, who destroyed all Rakshasas including Ravana. Its her power by which demons were killed.

By this way, mystery of Sita's birth, her past life, her divine purpose and immense power are clarified in the present paper.

7. References

1. Shrimad Valmiki Ramayana, Uttarkanda and Balakand, http://satsangdhara.net, Version v1.5
2. The Adhyatma Ramayana, original Sanskrit stanzas with Marathi translation, Geetapress Gorakhapur, 3rd reprint
3. Shrimat devibhagawat Mahapuran, 2nd khanda, Geetapress Gorakhpur, 15th reprint, 2022.
4. Shri Suktam, Rigveda, 10th Mandala, 9th Sukta, sanskritdocuments.org, October 26, 2011

रामलीला

ISBN: 978-1-960627-06-3

आशा श्रीवास्तव
(asha.srivastava24@gmail.com)

'काव्येषु नाटकम् रम्यम्' इस पँक्ति से काव्य में नाट्यशीलता के महत्व का ज्ञान होता है। काव्य में नाटक ऐसी विधा है,जिससे मनुष्य सबसे अधिक समरस होता है। काव्यों का नाट्यविधा के रूप में प्रयोग होने का इतिहास इंद्र की सभा में आरम्भ हुआ, ऐसा कुछ विद्वानों का मानना है। कालान्तर में महाकवि कालिदास कृत 'अभिज्ञान शकुंतलाम्' इस विधा में एक मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इसी का लोक संस्करण हैउत्तर भारत की काशी में - लगभग450 वर्षों पूर्व तुलसीदास जी द्वारा आरम्भ की गई 'रामलीला'।

गोस्वामी तुलसीदास जी का भक्तिकाव्य 'रामचरितमानस' त्रेतायुग में जन्मे भगवान विष्णु के अवतार रघुकुल के श्रीराम के जीवन की गाथा महर्षि वाल्मीकि कृत 'रामायण' पर आधारित है। 'रामायण ' को इतिहास माना जाता है, इसकी प्रमाणिकता इसलिए भी है क्योंकि महर्षि वाल्मीकि भगवान श्रीराम के समकालीन थे।

गोस्वामी तुलसीदास जी का भक्तिकालीन कवियों और संतों में प्रमुख स्थान है। यह वह काल था जब सनातन धर्म पर मुग़लिया सल्तनत के द्वारा अनेकों प्रकार के प्रहार किए जा रहे थे। सनातनियों को धर्म परिवर्तन हेतु विवश किया जाता था और उनके ऐसा न करने पर उन्हें विभिन्न प्रकार की यातनाएँ देकर उनका मानमर्दन किया जाता था । जिससे हिंदुओं का मनोबल लगभग टूट चुका था।

ऐसे में सनातनियों के मनोबल को बढ़ाने के लिए गोस्वामी तुलसीदास जी ने कलयुग में त्रेतायुग के भगवान श्रीराम की जीवन गाथा को अपने भक्तिकाव्य 'रामचरितमानस' के रूप में उतारा। रामचरितमानस की कई विशेषताएँ इसे विलक्षण बनाती है। एक तो यह गेय काव्य है। ऐसा माना जा सकता है कि इसे गाते गाते लिखा और लिखते लिखते गाया गया होगा, क्योंकि 'मानस' कभी 'पढ़ी' नहीं गई । हमेशा गाई ही गई है। साहित्य और सङ्गीत की युगलबंदी इसे विलक्षण बनाती है। दूसरी विलक्षणता यह है कि हर काण्ड के मंगलाचरण के तथा कुछ अन्य स्थानों पर सँस्कृत के प्रयोग को छोड़ दें तो यह पूर्ण रूप से अवधी भाषा मे लिखी गई है। 'अवधी' उत्तर प्रदेश के 'अवध क्षेत्र' और पश्चिमी नेपाल के तराई क्षेत्र के कुछ इलाक़ों में बोली जाने वाली 'इंडो आर्यन 'भाषा कही जा सकती है।

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा 16वीं शताब्दी में लिखी गई 'राम चरित मानस' का जनमानस पर व्यापक प्रभाव पड़ा और उन्हें इसमें अपने अपने "राम" दिखाई देने लगे। उन्हें इसे लिखने में 2वर्ष, 7 माह और 26 दिन का समय लगा था और उन्होंने इसे सन 1576 के मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में राम विवाह के दिन पूर्ण किया था। इसे उन्होंने अयोध्या से लिखना आरम्भ किया और चित्रकूट, काशी इत्यादि स्थानों पर घूम घूम कर लिखा।

'रामलीला' का आरम्भ वाराणसी में 16वीं शताब्दी में हुआ, ऐसे प्रमाण मिलते हैं। इतिहासकारों की माने तो ये गोस्वामी तुलसीदास जी ही थे,जिन्होंने रामलीला की शुरुआत की। पहले रामकथा मंदिरों में कुछ कलाकारों द्वारा अभिनीत हुई। इस प्रकार रामचरित मानस में लिखी रामकथा जो अब तक 'सुनी' या 'गाई' जाती थी, 'दिखाई' देने लगी। बाद में यह खुले स्थानों और कभी कभी थिएटर में भी प्रदर्शित होने लगी।

कालान्तर में यह भारतवर्ष के अन्य प्रदेशों जैसे दिल्ली, राजस्थान, गुजरात आदि में भी 'खेली' जाने लगी। यहाँ एक बात ज्ञातव्य है कि रामलीला के मंचन को 'खेलना' कहा जाता रहा है। मानस के मूल दोहों,चौपाइयों के साथ हर स्थान की अपनी सङ्गीत,नृत्य और अभिनय शैली का भी प्रभाव दिखाई देता है। रामनगर, वाराणसी में खेली जाने वाली पारम्परिक रामलीला को 2008 में यूनेस्को द्वारा 'मानवता की सांस्कृतिक विरासत' के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। अयोध्या में राम लीला का मंचन कई स्थानों पर और कई रँगों में देखने को मिलता है। इसमें अयोध्या शोध संस्थान की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राजधानी दिल्ली के रामलीला ग्राउंड की रामलीला का 'भरत मिलाप' का प्रसङ्ग बहुत लोकप्रिय है। जिसे देखने दूर दूर से लोग आते हैं । उपरोक्त सभी स्थानों में खेली जाने वाली रामलीला में अधिकांश तुलसी कृत रामचरितमानस की चौपाइयों का प्रयोग कुछ खड़ी बोली के संवादों के साथ होता है। पर्वतीय क्षेत्रों कुमाऊँ और गढ़वाल में खेली जाने वाली रामलीलाओं में वहाँ की स्थानीय वेशभूषा, बोली, ठेठ पहाड़ी नृत्य शैलियों का समावेश है। इस प्रकार भारतवर्ष के विभिन्न स्थानों में वहाँ की स्थानीय शैलियों में खेली जाने वाली रामलीला का प्रचलन है।

विदेशों में रामलीला

जैसे जैसे भारतीयों की विदेशों में व्यवसाय और अन्य कार्यों में संलग्नता बढ़ी, वे अपने साथ अपनी सँस्कृति और विरासत को साथ लेकर चले गए। इसमें 'रामलीला' का विशिष्ट स्थान है। राम और रामकथा की सर्वव्यापकता इस बात से सिद्ध होती है कि रामलीला न केवल भारत में, अपितु एशिया

महाद्वीप के अन्य देशों नेपाल, इंडोनेशिया, मलेशिया में भी काफी लोकप्रिय है।

इसके अतिरिक्त यूके कुछ स्थानों.ए.एस.,कनाडा, यूनाइटेड किंगडम, अफ़्रीका तथा कैरेबियन देशों में भी रामलीला का प्रचलन है और लोकप्रिय भी है। विदेशों में होने वाली रामलीलाओं में भारतीयता और वहाँ की स्थानीय नाट्य शैलियों का अद्भुत सामंजस्य देखने को मिलता है।

दक्षिण अफ्रीका में रामलीला

त्रिनिदाद और टोबैगो में 'रामलीला' एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम होता है,जिसकी विभिन्न भूमिकाओं में भाग लेने वाले कलाकार भारतीय मूल के अफ़्रीकी होते हैं। ये वे भारतीय हैं,जिनके पूर्वज वर्षों पहले यहाँ आकर बस गए थे । वे अपने साथ अपना देश ' भारत' और 'भारतीयता' को लेकर आये थे,जिसे उनकी सन्तानों ने आज भी सहेजकर रखा है। इन रामलीलाओं में रामचरितमानस की कथा को कुछ दोहों और चौपाइयों के साथ स्थानीय गद्यात्मक और पद्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया जाता है।

सँयुक्त राज्य अमेरिका में 'रामलीला'

द आर्यन हेरिटेज फाउंडेशन की ब्रॉडवे रामलीला

अभिनय, सङ्गीत,नृत्य और वी एफ़ एक्स के प्रयोग से की जाने वाली अद्भुत रामलीला होती है। तीन घण्टों की यह रामलीला भगवान श्रीराम के प्रति भक्ति और समर्पण की गाथा कहती है। इसमें भाग लेने वाले कलाकार इंडो अमेरिकन होते हैं। किन्तु उनकी श्रद्धा अद्भुत होती है और ऐसी मान्यता है कि ब्रॉडवे रामलीला में भाग लेना किसी भी कलाकार के लिए एक गौरव शाली अवसर होता है।

ह्यूस्टन की रामलीला

श्रीमती कुसुम शर्मा के श्री नटराज स्कूल और कलाकृति परफार्मिंग आर्ट्स के सँयुक्त तत्वावधान में गत 14 वर्षों वर्ष -2011 से प्रत्येक वर्ष रामलीला का आयोजन किया जाता रहा है। यह रामलीला यू एस ए की सर्वश्रेष्ठ रामलीलाओं में से एक हैं। लेखिका से बात करते समय श्रीमती कुसुम शर्मा ने बताया कि उनकी संस्था रामलीलाओं में प्रयोग होने वाले कॉस्ट्यूम, आभूषण इत्यादि भारत से मँगवाते हैं। लगभग 4 से 6 महीने की तैयारियों के बाद प्रदर्शन किया जाता है। मंच पर प्रदर्शन के दौरान अधिकतर दृश्यों में वास्तविकता लाने का प्रयास किया जाता है। विशेषकर सीता हरण के दृश्यों में 'पुष्पक विमान' और लंका दहन में हनुमानजी की पूँछ में अग्नि लगाने जैसे दृश्यों को करते समय पूर्ण सुरक्षा की व्यवस्था विभिन्न एजेंसियों की मदद से की जाती है।

टोरंटो, कनाडा की रामलीला

सुश्री सौम्या मिश्रा की रेडियो ढिशुम संस्था द्वारा प्रतिवर्ष की जाने वाली रामलीला स्वयं में अद्भुत है। उनके कलाकार लगभग 4 से 5 महीने तक चलने वाली तैयारियों के दौरान पूरी सात्विकता का ध्यान रखते हैं। वे रिहर्सल में मांसाहार, मदिरा पान, धूम्रपान नहीं कर सकते। जूते चप्पल उतार कर ही रिहर्सल होती है, जो कि वहाँ के ठंडे मौसम को देखते हुए थोड़ी कठिन होती है, किन्तु वे स्वयँ और उनके कलाकार इन चुनौतियों का प्रसन्नता से सामना करते हैं। लेखिका से बात करते समय सौम्या जी ने बताया कि वे बाल कलाकारों के साथ काम करने में बहुत आनन्दित होती हैं। उनके बाल कलाकार सँस्कृत के श्लोकों का भी पाठ करते हैं। नौटंकी शैली में की जाने वाली रामलीला में सङ्गीत, नृत्य और वी एफ़ एक्स की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कॉस्ट्यूम और आभूषण भारत से आयात किये जाते हैं। कनाडा के विभिन्न शहरों में रामलीला का मंचन किया जाता है।

बाली की Kacak Dance Uluwatu -Legenda

Ramayana के नाम से की जाने वाली मुक्ताकाशी रामलीला अपनी तरह की अनूठी रामलीला है। इसमें किसी पात्र के कोई संवाद नहीं होते। सभी पात्र बहुत सुन्दर परिधानों में खुले मंच पर आते हैं और नृत्य नाटिकाओं की शैली में अभिनय करते हैं। साथ मे भूमि पर बैठे ढेरों कलाकार विभिन्न स्वर संगतियों में "चक् चक्" की ध्वनि करते हैं। एक सी पोशाकें पहने ये कलाकार ध्वनि करते हैं और साथ में कुछ वाद्ययंत्रों की भी ध्वनि के साथ कलाकार आते हैं, अपनी अपनी भूमिकाएं निभाते हैं और फिर नेपथ्य में चले जाते हैं। राम रावण युद्ध भी नृत्यात्मक शैली में होता है।

इंडोनेशिया के अन्य भागों में भी रामलीलाओं का आयोजन किया जाना इंडोनेशियाई इतिहास की विशेषता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि हमारे मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु राम का जीवन और चरित्र देशकाल की परिधि से परे सर्वमान्य और सर्वाधिक लोकप्रिय है। -यता के साथ सबको अपनायादरअसल उन्होंने अपने वनवास के समय जिस आत्मी,फिर चाहे वह भील थे, वनवासी थे, वानर थे, भालू थे या रीछ थे, वह अद्भुत था। ऐसा कोई भी उदाहरण सम्पूर्ण विश्व में कहीं नहीं है। इसीलिए उनकी लीलाओं को आज तक याद करके उन्हें जीवंत करने का प्रयास भारत के साथ हर उस देश मे होता है जहाँ भारतीय बसे हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का चरित्र 'रामलीला' के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व को भारत का अजस्र उपहार और अनुदान है।

पावन भूमि – जहाँ राम ने पग धरे

ISBN: 978-1-960627-06-3

सी. कामेश्वरी
(Kameswari.sahitya@gmail.com)

*'**राम नाम मणि दीप धरी जीह देहरी द्वार.....**,' मनुष्य के भीतर और बाहर चारों ओर अंधकार का नाश हो जाता है और उजाला फैल जाता है। अज्ञानता दूर हो जाती है और ज्ञान का प्रकाश फैलता है। अंतिम साँस लेते हुए भी जब कोई प्राणी राम नाम का स्मरण करता है तो उसका उद्धार हो जाता था। ऐसे राम के चरण जहाँ पड़ते हैं, वह भूमि पावन हो जाती है। अयोध्या से शुरू हुई उनकी यात्रा भारत के लगभग 200 से भी अधिक प्रांतों, पर्वत, पहाड़, नदियाँ, भूमि से चलते, चढ़ते, उतरते श्रीलंका तक पहुँचती है। कहा जाता है कि जहाँ-जहाँ उनहोंने अपने पग धरे, वहाँ की भूमि पवित्र हो गई। ऐसे ही कुछ प्रांतों (अरण्य कांड के संदर्भ में) की जानकारी देने का प्रयास इस प्रपत्र में देना चाहूँगी।*

मुख्य बिंदुः राम नाम, प्रांत, भूमि, पावन, पग।

1. प्रस्तावना

राम नाम की महिमा का बखान गिने-चुने शब्दों में करना असंभव है। वेद और श्रुतियाँ भी इनका गान करने में विफल हो जाते हैं। पिता की आज्ञा का पालन करते हुए राम जब वनवास जाते हैं तो अयोध्या से निकलकर बिना किसी जाति-पाँति, निम्न-उत्तम, वर्ग-भेद के लोगों से मिलते हैं, गुरुओं से आशीर्वाद और सीख प्राप्त करते-देते हुए, पशु-पक्षी, नीच, पतितों का उद्धार करते हुए शरणागत वत्सल कहलाते हैं और अपने नाम को सार्थक करते हैं।

2. विस्तार

श्रृंगेवरपुर से शुरू हुई उनकी यात्रा, अरण्य कांड के प्रारंभ में वे चित्रकूट में बसे दिखाई देते हैं। एक बार जब राम सुंदर फूल चुनकर गहने बनाते हुए सीता जी को पहना रहे थे तब देवराज इंद्र का मूर्ख पुत्र जयंत एक कौए का रूप धारण कर सीता जी के पैरों में चोंच मारकर भाग जाता है।

अति कृपाल रघुनायक सदा दीन पर नेह।
(अर.कां.दो.1)

उनके बल को जानकर जब वह उनके शरण में जाता है तो, उसे एक आँख से काना कर छोड़ देते हैं।

सभी पुरवासियों द्वारा पहचाने जाने के कारण वहाँ से निकलकर वे अत्रि मुनि के आश्रम में जाते हैं। अत्रि जी उन्हें अपने हृदय से लगा लेते हैं। आश्रम लाकर उन्हें कंद, मूल, फल खिलाते हैं। नाना प्रकार से प्रार्थना करते हुए वे कहते हैं कि जो राम का नाम स्मरण करता है, वह पुनः आवागमन के चक्कर में नहीं पड़ता है। उन्हें अपने कर्में अनुसार गति प्राप्त हो जाती है।

त्वदंघ्रि मूल ये नराः। भजंति हून मत्सकाः।
पतंति नो भवार्णवे । नितर्क वीचि संकुले ॥
विविक्त वासिनः सदा । भजंति मुक्तये मुदा ।
निरस्त इंद्रियादिकं । प्रयांति ते गतिं स्वकं ॥
(अर.कां.छं 7, 8)

अत्रि जी की पत्नी अनुसूया सीता को उत्तम, मध्यम, अधम पतिव्रता स्त्री के लक्षण बताती हैं और जानकी जी परम सुख पाकर उनसे आशीर्वाद लेकर राम, लक्ष्मण सहित दूसरे वन में रहने के लिए चल देती हैं।

रघुबीर चरित पुनीत निसि दिन दास तुलसी गावई।।
(अर.कां.दो. 5, छं)

नदी, वन, पर्वत, दुर्गम घाटियाँ, राम को रास्ता दे देते हैं। बादल छाया कर देते हैं।

सरिता बन गिरि अवघट घाटा । पति पहिचानि देहिं बर बाटा ॥
(अर.कां.दो.6, चौ.1)

रास्ते में जाते हुए उन्हें विराध राक्षस मिलता है, उसे राम तुरंत ही मार डालते हैं, वह दिव्य रूप धारण कर लेता है पर दुःखी दिखाई देता है तो प्रभु उसे परम धाम भेज देते हैं।

राम वन के रास्ते जाते हुए शरभंग मुनि श्रेष्ठ के आश्रम पहुँचते हैं। श्रीराम जी को देखकर मुनि के नेत्र खुशी से पूर्ण हो जाते हैं और अपने जन्म को धन्य मानते हैं। ब्रह्म लोक जा रहे, शरभंग विनती करते हैं कि मैं शरीर छोड़कर आप के धाम में आप से मिलूँगा और वे योग, जप, तप, यज्ञ सब कुछ राम को अर्पित कर हृदय से आसक्ति छोड़कर चिता रचकर, उस पर बैठ जाते हैं। योगाग्नि में अपने शरीर को जला कर राम की कृपा से वैकुंठ चले जाते हैं।

अस कहि जोग अगिनि तनु जारा। राम कृपाँ बैकुंठ सिधारा॥

(अर.कां. दो. 8, चौ.1)

वन में आगे बढ़ते हुए राम को मुनि श्रेष्ठों का समूह दिखाई देता है। हड्डियों के ढेर को देखकर उन्हें दया आ जाती है और वे मुनियों से पूछते हैं तो पता चलता है कि राक्षसों के दलों ने मुनियों को खा डाला, तब वे प्रण करते हैं कि पृथ्वी को राक्षसों से रहित कर दूँगा। सभी मुनियों के आश्रम जाकर वे सभी को सुख देते हैं।

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।

सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥

(अर.कां.दो.9)

मुनि अगस्त्य का सुतीक्ष्ण नाम का एक ज्ञानी शिष्य था जिसके मन में राम के प्रति प्रीति थी। अपने मन में निहित भक्ति, वैराग्य, ज्ञान को अपूर्ण जानकर वह सोचता रह जाता है कि राम उससे मिलेंगे या नहीं। जब कुछ नहीं सूझता तो गा-गाकर नाचने लगता है। भक्त की प्रेमदशा को देख राम प्रसन्न हो जाते हैं और अपना राज रूप छुपाकर अपना चतुर्भुज रूप प्रकट करते हैं और चंद्रमा की भाँति उनके हृदयाकाश में सदा निवास करने को कहते हैं।

वहाँ से वे मुनि अगस्त्य के आश्रम में जाते हैं। आनंद और प्रेम से पूर्ण होकर जब राम उनके ठहरने के लिए उचित स्थान सुझाने के लिए कहते हैं तो वे उन्हें परम मनोहर और पवित्र स्थान दण्डकवन में स्थित पंचवटी जाने को कहते हैं।

गीधराज सैं भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।

गोदावरी नकट प्रभु रहे परन गृर छाइ ॥

(अर.कां. दो.13)

राम जी के वहाँ रहने से सभी मुनि सुखी हो जाते हैं। पर्वत, वन, नदी, तालाबों में शोभा छा जाती है। पशु-पक्षी समूह आनंदित हो जाते है, भौंरे, मधुर गुंजार करने लगते हैं। जहाँ राम विराजमान हैं, उस का वर्णन सर्पराज शेष भी नहीं कर सकते हैं।

यही वह समय था जब शूर्पनखा वहाँ आती है और लक्ष्मण क्रुद्ध होकर उसकी नाक काट देते हैं। समस्त राक्षस सेना आकर राम को घेर लेती हैं, जिनमें मन्देह दैत्य प्रधान था। खर, दूषण, त्रिशिरा भी वहाँ उपस्थित हो जाते हैं। चील, कौआ, सियार, भूत, प्रेत, पिशाच, उन पर तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्रों से प्रहार करते हैं, शरीर छोड़ते हैं और मोक्ष पद को प्राप्त कर लेते हैं।

रावण को लगता है कि भगवान के अलावा कोई और मेरे समान बलवान भाइयों को नहीं मार सकता है। यदि उन्होंने स्वयं अवतार धारण किया है तो उनसे हठपूर्वक वैर करूँगा और प्रभु के बाण से प्राण छोड़कर भवसागर से तर जाऊँगा।

सुर रंजन भंजन महि भारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा ॥

तौ मैं जाइ बैरु पठि करऊँ। प्रभु सर तजें भव तरऊँ ॥

(अर.कां.दो.22, चौ. 2)

लछिमन गए बनहिं जब लेन मूल फल कंद।

जनकसुता सन बोले बिहसि कृपा सुख बूंद ॥ २३॥

(अर.कां.दो.23)

लक्ष्मण जब कन्द-मूल-फल लेने वन में गये, तब कृपा और सुख के समूह राम जी हँसकर जानकी जी से बोले -

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नरलीला ॥

(अर.कां.दो.22, चौ. 1)

मैं अब कुछ मनोहर मनुष्य-लीला करूँगा। इसलिये जब तक मैं राक्षसों का नाश करूँ, तब तक तुम अग्नि में निवास करो।

रावण जब मारीच को कपटी मृग का वेश धारण करने को कहता है तो राम के बाण संधान होने में अपना कल्याण मानकर वह सोने का शरीर धारण कर लेता है। राम जी के बाण के प्रहार से वह परम गति को प्राप्त कर लेता है जो मुनियों के लिए भी दुर्लभ है।

श्रीराम सीता की खोज में वन-वन जाते हैं। एक स्थान पर उन्हें गृधपति जटायु को पड़ा पाते हैं। उनके स्पर्श से ही उनकी पीड़ा समाप्त हो जाती है। राम को सब कथा बताकर अपना देह त्याग कर, हरि का रूप धारण कर लेते हैं। अखण्ड भक्ति माँगकर जटायु परमधाम को चले जाते हैं।

वन में जाते हुए राम जी की भेंट दुर्वासा ऋषि के शाप से ग्रस्त कबंध राक्षस से होती है, जिसके संहार करने से वह गंधर्व रूप पा जाता है और आकाश में चला जाता है।

श्रीराम जी कबंध को गति देकर शबरी के आश्रम में जाते हैं। शबरी का आतिथ्य पाकर नवधा भक्ति का ज्ञान देते हैं और सीता जी की कोई सूचना हो तो देने के लिए कहते हैं तो वे उन्हें पंपा सरोवर जाने को कहती है जहाँ सुग्रीव से उनकी मित्रता होगी और वे उनको आगे ले जाएँगें। ऐसे कहकर शबरी योगाग्नि से देह त्यागकर दुर्लभ हरि का पद पा लेती हैं।

पंपा के तीर पर जाकर सुंदर तालाब में स्नान कर राम-लक्ष्मण सहित सुख पाते हैं। वे स्वयं कहते हैं कि जो मेरी लीलाओं को गाते-सुनते हैं, वे बिना कारण दूसरों के हित में लगे रहते हैं। सरस्वती और वेद भी उनके बारे में कुछ नहीं कह सकते।

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला । हेतु रहित परहित रह सीला ।
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते । कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ॥
(अर.कां.दो.45, चौ.4)

3. निष्कर्ष

अरण्य कांड के आरंभ से लेकर अंत तक की समस्त कथा को विस्तार से देखने-सुनने के बाद हम सह सकते हैं कि श्रीराम जी अपने लीला पुरुषोत्तम रूप से शांत, निर्मल, संयम होकर पावन-पवित्र रूप युक्त समस्त प्राणी जगत को सुख पहुँचाते हैं। परमपद, परमधाम, मोक्ष प्रदान करते हैं और शांति कायम करते हैं।

एकु छत्रु एकु मुकुटमनि सब बरननि पर जोउ ।
तुलसी रघुबर नाम के बरन बिराजत दोउ ॥
(बा.कां.दो.20)

4. संदर्भ ग्रंथः

1. तुलसीदास कृत रामचरितमानस

Lord Hanuman, the Immortal Hope: A Journey from Myth to Modernity

ISBN: 978-1-960627-06-3

Puspita Mondal
Deshabandhu Mahavidyalaya, Chittaranjan
(puspitamondal999@gmail.com)

This paper intends to explore the psychological foundations behind the retellings of mythological stories. Lord Hanuman, transcends all the depictions and provide a symbol of hope, strength and humility. This paper is going to examine the psychological and cultural significance of retellings, focusing on how different writers are creating new ways of interpreting Hanuman. Hanuman embodies the 'archetype' of the Eternal Hero- a figure who emerge to save the world during the moment of crisis. Contemporary portrayals of Lord Hanuman are not depicting him only as a devotee of Lord Rama but also as an autonomous divine force. This paper explores how has Lord Hanuman's status as a Chiranjivi evolved and How does Carl Jung's theory of archetypes apply to modern reinterpretations?

Keywords: Retelling, Mythological stories, Cultural Significance, Archetype, Chiranjivi.

1. Introduction

Mythological Retellings always serve as a potential tool to bridge the gap between past, present and future, offering the insight how the historical consciousness and societal values evolving with time. In A Glossary of literary terms, Seventh edition, M. H. Abhrams notes, "That myth in classical Greek, mythos signified any story or plot, whether true or invented. In its central modern significance, however, a myth is one story in a mythology—a system of hereditary stories of ancient origin which were once believed to be true by a particular cultural group, and which served to explain (in terms of the intentions and actions of deities and other supernatural beings) why the world is as it is and things happen as they do, to provide a rationale for social customs and observances, and to establish the sanctions for the rules by which people conduct their lives" (Abhrams 171). This paper explores the psychological underpinning behind creating and rewriting myths by modifying it from new perspectives. Drawing from the theories of Carl Jung's Collective Unconscious that writers and individuals redefining myths and their characters emerge from universal archetypes- primal patterns of human experience and understanding. Reinterpretation of myths takes place or sometime, readers or writers creates their own version of meaning in order to cope with the situation of crisis. For Sigmund Freud, Myths and retellings serve as a way to accomplish or express the repressed desires and societal anxieties. According to Paul Ricoeur's concept of Narrative Identity suggests that people construct their own identities with the help of storytelling, it is like a psychological feeling for both the writers and audience to express their existence by challenging dominant ideologies that help reclaim their cultural identities as well as help processing past traumas. Joseph Campbell's Hero's Journey explores that myths help navigate life's psychological challenges and coping with uncertainties and existential anxieties in the face of adversity, reinforcing moral values or sometimes present hope. Leon Festinger proposed about the theory of Cognitive Dissonance- it talks about psychologically contradictory experiences that helps writer to create their version of story by remodifying the mythological stories to grapple with the contradictory traditional values and contemporary perspectives, using familiar stories as symbolic framework to process trauma, project aspirations and construct collective identities. Retellings often rise from the sense of lack, when people try to connect with their past to provide meaning for their existence, it's like a psychological need to connect and reconnect with the past, which could be linked with cultural nostalgia or collective trauma. During the time pf socio-political unrest, myth serves as a potential way to provide a sense of continuity and stability. By reimagining an ancient hero or God from our mythologies, a writer can explore personal or collective struggles, offering new insights to solve old struggles and conflicts and transforming traditional narratives into a powerful one. This study highlights that mythological retelling is not just a mere artistic endeavour but a deep-rooted psychological process, where individual and society at large reclaim their agency, identity, reframe their realities and envision new future for themselves.

2. Lord Hanuman and Various Retellings

Hanuman is the son of Anjani (a celestial nymph) and Kesari (a Vanara king). He is also considered as the spiritual son of Vayu, the Wind God, as 'Pavanputra' or 'Maruti', it is believed that Vayu transferred the divine energy of Lord Shiva to Anjani Devi, that leads to the birth of Hanuman. But there is a story behind, Anjani Devi was not a being from Vanara clan, initially she was an apsara, a celestial dancer in Indra's court, named Punjikasthala, one day while wandering in the garden of heaven or Indraloka, she disturbed a rishi named Brihaspati, while he was meditating and the rishi cursed her to be born as a vanara in her next life. While she was repentant for her mischievous behaviour, she begged for forgiveness, seeing her genuine remorse, the rishi got softened and added that she will be the mother of a divine son, a son from Lord Shiva and her curse will be lifted. In her next life as Vanara, she was reborn as Anjana and married to Vanara king Kesari, they lived in

forests, performing deep penance and seeking for divine blessings, moved by their devotion, Lord Shiva, blessed them with a child, who will be the incarnation of divine energy. At the same time in Ayodhya, Raja Dasharatha was performing a Yajna for the birth of his sons, when the sacrificial oblation or payasam was distributed to the queens, and a massive Eagle who actually was Garuda, took the last portion of the payasam from the palms of Sumitra and gifted it to Anjana. Thus, Hanuman is often called 'Rudraputra' or 'Rudraansh' (Son of Rudra or Shiva).

Hanuman is depicted as a Vanara — a being with a human-like body but the face and tail of a monkey. The Vanara in Sanskrit is often interpreted as forest dwellers Vana+Nara= Forest man, this suggests that Vanara described in Ramayana are not monkeys but forest dwelling warrior tribe lived in Kiskindha. Recently in a scholarly and cultural discussion Yashodeep Deodhar, emphasized that Hanuman was not literally a monkey but a human belonging to an indigenous tribe, adorned themselves with a monkey face masks and tails. This perspective challenges the traditional belief that Hanuman is a monkey. Yashodeep Deodhar also pointed out that when Hanuman swallowed the sun, 'the Indra's Vajra hit the baby monkeys square in the chin' (Vilas 21)- and *hanu* means chin, as his chin was distorted because of that attack, therefore he was named as Hanu-man.

He was gifted with the boon of Immortality by the God of Death, Yama, and his Chiranjivi status was mentioned and reinterpreted and retold in different texts, symbolising his eternal devotion and presence in the world. Hanuman's role in Valmiki's Ramayana was portrayed as loyal devotee of Lord Rama. His unwavering love for Rama always represented as a highest form of selfless devotion. In a folk tale 'The Red Monkey', delineates Hanuman's innocence and devotion towards Rama, when Hanuman asked Sita about the reason of her red vermilion mark in the parting of her hair, Sita answered "This red mark pleases Lord Rama! That's why I wear it". Hanuman painted himself with red colour only to please Rama- "I concluded that if a little red mark could please you so much, surely you would be pleased beyond imagination if I covered myself completely in red". (Vilas 187). He reminds the believers that faith and courage can overcome even the greatest obstacles. King Surat waged a war against Rama's army by capturing the sacrificial horse of Lord Rama, the king was given a boon of immortality by God of Death. Hanuman intervened in this matter himself by knowing the whole truth, that the king will not be liberated until Lord Rama comes, Hanuman willingly got tied within the hands of the king during warfare and started chanting the names of Lord Rama, and Rama appeared, both King Surat and Hanuman got freed from their bondage. Despite his powers, Hanuman remains humble, always attributing his abilities to Lord Rama's grace.

By applying the theory of Carl Jung, Hanuman can be interpreted as a symbol of the unconscious mind's capacity for loyalty and service to a higher purpose. Carl Gustav Jung, a Swiss psychiatrist, looked at myths and archetypes are connected with our unconscious mind, he suggests about the relation between collective unconscious and archetypal criticism. Myths in the Jungian perspective are "culturally elaborated representations of the contexts of the deepest recess of human psyche: the world of the archetypes" (Walker, 4). From the psychoanalytical lens, Hanuman can be viewed as an embodiment of the unconscious mind, his strength and shape-shifting abilities symbolise the untapped potential within every person, that each person has the ability to be achieve their highest self if they are able to understand their inner potentiality. Hanuman's unwavering devotion proved that, he overcame all the obstacles only by uttering the name of lord Rama. While building the bridge to cross the vast ocean towards Lanka, monkey soldiers were unable to build it, and in frustration Hanuman threw a stone by uttering the name of Lord Rama and it started floating, and after several attempts when he failed, he understood that the name itself will help to achieve the goal. When there was shortage of rocks to build the bridge, Hanuman plucked a whole mountain and eventually understood that it is "Govardhan, the king of Hills" (Vilas 133), and it is crying because he was unable to serve Lord Rama, after knowing his devotion Rama said "in his next incarnation as Krishna, he would bestow his blessings to this hill for its devotion" (Vilas 134). Hanuman's unwavering focus on Rama reflects the power of concentration and mindfulness. His leap across the ocean can be seen as an allegory for overcoming mental and emotional barriers, when nobody dared to cross the ocean, it was only Hanuman who was reminded of all the powers that he was blessed with. He also represents inner strength — mastering one's ego and channelling power for righteous causes.

Amit Mazumder provided various stories in his *The Later Adventures of Hanuman*, that suggests the arrival of Hanuman in Kali Yuga for several times to save the world from moments of crisis. "The False Lighthouse" projects Hanuman saving the world from continuous shipwreck, deliberately done by a flame-thrower demoness, who transform herself as a beachcomber girl, and showed false flashlight to the "Captains imagined that this light represented a safe harbour, and they piloted their ships directly into the rocks". (Majumdar 63). In another story Hanuman was saving the Somnath temple from demolishing, because of the curse given to a gandharva by Vishwanathan, to uplift the curse and to protect the temple and the rishis and monks Hanuman killed the Bull demon, son of Mahisasura, and in doing so Hanuman got hit on his head and forgot his memory and started behaving like child again, and regained his memory again when he mistook the sun as a ripe orange "He had been fooled like that before, too, millennia ago, as a toddler! As soon as he made that mistake a second time, everything came back to him" (Majumdar 100).

Retellings are actually like the bird Phoenix, rising time and again with its new vigour and intense desire to tell new story by modifying the existing one, burning brighter from the ashes of the past, infused with new meanings, new voices and new perspectives. According to Ramanujan's research "...Hanuman goes to the netherworld to pick up the ring that has accidentally fallen off Rama's finger. There, the King of Spirits offers thousands of identical rings on a platter and asks him pick 'your' Rama's ring. Hanuman is confused, at which point the King says: 'There have been as many Ramas as there are rings on this platter. When you return to earth you will not find Rama. This incarnation of Rama is now over. Whenever an incarnation of Rama is to be over, his ring falls down. I collect and keep them...". Devi Vandana in her paper for Union Christian University titled "Interpretations and Reinterpretations in Ramayana and the Scion of Ikshvaku" mentions, "The

Ramayana does not belong to any one moment in history for it has its own history which lies embedded in the many versions which were woven around the theme at different times and places. Not only do diverse Ramayanas exist; each Ramayana text reflects the social location and ideology of those who appropriate it."

In *Hidden Hindu*, Hanuman was given the responsibility to keep a check on Roopkund, while Nagendra was trying to destroy spiritual places to attain immortality. Hanuman was portrayed by the name Vrishkapi, he is not introduced as immediate figure emerging from his meditation to save the world, but as a hidden, powerful force influencing events in the background. Prithvi, the protagonist, eventually learns about Hanuman's continued existence and his knowledge of Indian History and lost spiritual wisdom. When Vrishkapi was trying to protect Roopkund, he was immensely injured "Brutally injured and barbarously bitten on his neck, Vrishkapi continued flying without realising that he was attracting the attention of many ordinary human eyes on his route back to Mount Kailash, giving them opportunities to capture him on their mobile phones as images and videos" (Gupta 142). This retelling presents us with the idea that the Chiranjivis are there somewhere, always protecting our world and giving us strength and hope during our moment of crisis. Vikram Singh (2017) has mentioned in his paper in IMPACT, "The mythical stories across cultures are viewed as an embodiment of beliefs, values and philosophies that serves the national interest of the people." The film Hanuman, directed by Prasanth Varma, also runs with the same idea of hope and how devotees of Lord Hanuman are still grappling with their critical situation and attaining peace upon their belief on the power of Hanuman "Wherever there is righteousness, Lord Hanuman prevails, wherever there is Hanuman, victory reigns", set in the fictional village on Anjanadri, Hanuman's presence is depicted in a symbolic and divine manner, where Hanuman is not a direct character, but His presence is so powerful, that the protagonist gains divine powers, when he came into contact with a mysterious gem associated with Lord Hnauman. In A Handbook of Greek Mythology, Rose states, "Myths, in the proper sense, are a somewhat primitive form of those mental processes which, further developed, give us both art and science. Of the two sides, the more active is what we may term the artistic or imaginative and visualizing process" (Rose 8).

3. Conclusion

Myths offer a safe space to explore existential fears — mortality, injustice, or chaos. People turn towards retellings to merge with the cultural heritage with our contemporary realities, Modern reinterpretations and modifications of mythological stories or characters serves to create purpose in living by reliving mythological stories again and again with the help of retellings. Hanuman as a saviour during dark time, and creating stories revolving around his chiranjivi status, reflects a desire to see hope and strength in relatable forms. "Mythos is thus a philosophical quest. It does not always give answers but it does extend a sense of purpose, meaning and validation to existence" (Chatterji 137). Retellings help author as well as readers to project their anxieties in modern times, when they are not able to find solution to their unending depression, turn into the familiar figures, allowing catharsis and a sense of control over the narratives. Various retellings of Hanuman in modern works can symbolise inner strength against personal struggles. Psychologically, retellings help processing the ideas of childhood, spirituality and connect with the known, that helps to reclaim authority over their imagination. Myth criticism equips writers from such an onslaught by bringing to them an awareness of imagery, its origin and the power associated with it. The writer of a myth then has access to possibilities. Contemporary retelling is a fructification of the adaptation of such possibilities and refinement. Contemporary retellings work with 'timeless' myths and adapt them to fit modern readership. (Chatterji 141). Myths often carry moral or ethical lessons, but retellings allow for those lessons to be reshaped according to modern values. For instance, heroic figures who were once celebrated for their strength or conquest might now be reimagined to emphasize empathy, inclusivity, or justice. Retellings keep the cultural heritage alive, rather than turn into oblivion and fade in obscurity, modern retellings and reinterpretations adapt them and realise them by infusing some personal ideas and individual understanding, ensuring they remain as a part of public consciousness. "Myth has its own world concerned with own laws and realities; archetypes create myths...that influence and characterize whole nations and epochs of history" (G.Jung 79). It is stated that myth always make sense about our existence, our identity has often evolved from our myths. Devdutt Pattanaik also gives a clear difference between truth and science. He says, "I always write my titles as 'My Gita', 'My Hanuman Chalisa', so there is clear intention behind it that it is my opinion. I have put down the truth and the proof, but it is my thought." This thought addresses the study of this research. The retellings and the reinterpretations are the opinions and truth of the different authors and writers who have written them. It is their version of the story. Societies rewrite myths to reflect changing values. By tracking how a myth evolves, we can predict how future generations might further adapt those narratives. Ultimately, myths are not frozen in time, they evolve with contemporary values as we reinterpret them time and again. The way we choose to retell or reframe myths today, it will signal what we value and how we want to envision our future.

4. Citations

1. Abhrams, M. H. A Glossary of literary terms. Seventh. United States of America: Heinle & Heinle Thomson Learning, 1999.
2. Campbell, J. (2008). The hero with a thousand faces (3rd ed.). New World Library.
3. Chatterji, S. (2015). Myth criticism and the retelling of myths. Impetus – Xavier's Interdisciplinary Research Journal, 4, 137–142.
4. Pttanaik D. (2019). Wisdom of the gods for you and me: My Gita and My Hanuman Chalisa. Rupa Publications India.
5. Festinger, L. (1957). A theory of cognitive dissonance. Stanford University Press.

6. G.Jung, Carl. Man, and his Symbols. Ed. Joseph L. Henderson, Jolande Jacobi, Aniela Jaffe M.-L. von Franz. New York: Anchor Press, 1988.
7. Gupta, A. (2022). The hidden Hindu 2. Penguin Random House India.
8. Majmudar, A. (2024). The later adventures of Hanuman. Penguin Random House India.
9. Ramanujan, A. K. (1991). Three hundred Rāmāyaṇas: Five examples and three thoughts on translation. In P. Richman (Ed.), Many Rāmāyaṇas: The diversity of a narrative tradition in South Asia (pp. 22–48). University of California Press.
10. Ricoeur, P. (1992). Oneself as another (K. Blamey, Trans.). University of Chicago Press.
11. Rose, H.J. A Handbook of Greek Mythology. London and New York: Routledge, 2005.
12. Singh, V. (2017). Modern Retelling of Indian Myths: A Study of Reshaping Mythology through Popular Fiction. IMPACT: International Journal of Research in Humanities, Arts and Literature, 6.
13. Stacchi, A. (Director). (2023). The Monkey King [Film]. Netflix.
14. Vandana, D. (n.d.). Interpretations and Reinterpretations of Ramayana and the Scion of Ikshvaku. Union Christian College, 3-6.
15. Varma, P. (Director). (2024). Hanu-Man [Film]. Primeshow Entertainment.
16. Vilas, S. (2016). The chronicles of Hanuman. Om Books International.
17. Walker, Steven F. Jung and the Jungians on Myth. New York: Garland Publishing,1995.3-15

अवतार के रूप में श्री राम एवं महर्षि परशुराम का वैशिष्टय: एक विहंगम दृष्टि

ISBN: 978-1-960627-06-3

मधु चतुर्वेदी
(madhuchaturvedi1@gmail.com)

हमारे यहाँ दशावतार की कथा, सृष्टि के सृजन स्थिरता एवं विनाश की लीलाओं से जुड़ी है। हमारे दशावतार मत्स्य, कूर्मा, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध एवं कल्कि की महती पौराणिक-ऐतिहासिक कथाएँ, धर्म की स्थापना के लिये अवतारों के रूप में ईश्वर के धरती पर अवतरण, आस्था की प्रतीक हैं। ये सभी श्री विष्णु के अवतार कहे जाते हैं।

अवतारों को लेकर उपलब्ध पौराणिक ग्रन्थों और साहित्य के अध्ययन करते-करते एक विचित्र संयोग दिखाई दिया कि श्री विष्णु के इन अवतारों में छठे अवतार परशुराम और सातवें अवतार श्री राम के मध्य ही ऐसा अद्भुत संयोग या कहें साम्य है कि दोनों अवतार महामना का नाम राम ही है, महाभारत में तो परशुराम को अनेक सन्दर्भों में बातचीत में अधिकांशतया केवल राम ही कहकर संबोधित किया गया।

कैसा अद्भुत साम्य या संयोग है कि दोनों ने एक दूसरे को उसी अवतार रूप में न केवल देखा बल्कि एक दूसरे को अपनी-अपनी शक्ति से परिचय भी कराया। ये भेंट एक बार नहीं तीन बार अलग-अलग स्थान और सन्दर्भों में होती है। लौकिक अर्थों में ये अवतार एक दूसरे की शक्ति से अनजान होने की लीला भी करते हैं। एक दूसरे के साथ ये भेंट हर बार बहुत नाटकीय ढंग से होती है।

भृगुवंशी, महर्षि जमदाग्नि के पुत्र परशुरामजी जन्म से ब्राह्मण हैं, वे शस्त्र एवं शास्त्र दोनों विद्याओं के गुरु हैं। उनमें ब्राह्मणत्व और क्षातृत्व का ओज और तेज दोनों ही अपरिमित हैं। उसके पीछे अनेक कथाएँ हैं।

अवतारों की जैसी कथाएँ हैं, इक्ष्वाकु क्षत्रिय राजवंशी श्री राम के अवतार का अभिप्रेत रावण सहित सभी आततायी राक्षसों से अपने आश्रमों, ऋषियों, जनपद वासियों को अभयदान दिलाना था। श्री राम का व्यापक स्वरूप मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में जन-जन के आदर्श-आस्था-आश्रय का आधार बना। मानव शरीर के रूप में उन्होंने जन्म तो लिया लेकिन जन्म के साथ ही उन्होंने अपनी माँ कौसल्या को अपने विष्णु स्वरूप के, अपने ईश्वरत्व के दर्शन कराये, कुछ लीलाएँ भी कीं लेकिन भयभीत कौसल्या के आग्रह पर श्री राम ने उसके बाद सारे कार्य मानव रूप में ही संपन्न किये। हम सब राम कथा जानते हैं, उनके ईश्वरत्व के दर्शन, उनके आचरण-व्यवहार-और परिणामों में दिखते रहे।

भृगुवंशी परशुराम जी के अवतार कथा के पीछे ऐसी कथाएँ आम जन की भक्ति के साथ उतनी व्यापक नहीं हुई। भगवान् उन्हें कहा गया, लेकिन लोग उनके साथ आस्था-भक्ति या उपासना के भाव से नहीं जुड़े। वे शस्त्र और शास्त्र दोनों के आचार्य-गुरु थे। अधकांश समय उन्होंने महेंद्र पर्वत पर एकाकी तपस्वी के रूप में बिताया। जन्म पर उनका वश नहीं था तो कर्म पर कैसे होता। भृगुऋषि और महर्षि ऋचीक के वंशज महर्षि जमदाग्नि-रेणुका के पुत्र परशुराम सामान्य तो थे ही नहीं। 'जमदाग्नि का पुत्र ब्राह्मण होकर भी क्षत्रियोचित आचरण-आचार और व्यवहार वाला होगा' ये बात भृगु ऋषि ने जमदाग्नि के जन्म से पूर्व ही उनके माता-पिता सत्यवती और महर्षि ऋचीक को बता दी थी।

पिता के जन्म के साथ ही परशुराम जी की क्षत्रिय कर्म की नियति तय हो चुकी थी। तेजस्वी सम्पूर्ण धनुर्वेद, शस्त्र-शास्त्रों से संपन्न जमदाग्नि-रेणुका से परशुराम जी का जन्म होता है।

परशुराम बिरले पुत्र हैं जो पिता के कहने से अपनी सबसे प्रिय माँ का गला काट देते हैं और पिता का क्रोध शांत होने पर ऋषि द्वारा वर मांगने पर अपनी माँ और सभी भाइयों का जीवन माँगते हैं, माँ को उनके पुत्र के द्वारा मारे जाने की स्मृति न रहे, ऐसी कृपा माता-पिता के प्रति संवेदनशील परशुराम माँगते हैं । पिता से उन्हें युद्ध में अजेय होने एवं बड़ी आयु का वरदान भी मिलता है।

कोई भी अवतार अकारण नहीं हो सकता। धर्मज्ञ, तपस्वी, निर्विकारी, निर्दोष पिता महर्षि जमदाग्नि की हत्या एवं आश्रम को मिट्टी में मिला देने के दुस्साहस पर परशुराम ने, न केवल कार्तवीर्य अर्जुन और उनके पुत्रों को, बल्कि सहायता करने वाले सभी क्षत्रिय राजाओं का वध किया। उन्होंने इक्कीस बार इस धरती को क्षत्रिय विहीन किया। यहाँ तक कि मृत क्षत्रियों की विधवाओं के ब्राह्मणों द्वारा विधि के अनुसार नियोग से जन्मे पुत्रों को भी फरसे से काट डाला। उनके रक्त से सामंतक पंचक क्षेत्र में पांच कुण्ड रुधिर से भर दिए। उन कुण्डों में भृगुवंशी पितरों का तर्पण किया।

कहते हैं साक्षात प्रकट होकर महर्षि ऋचीक ने उन्हें घोर कृत्य करने से रोका, परशुराम जी ने यज्ञ करके इंद्र को तृप्त किया, जीती हुई सारी पृथ्वी कश्यप मुनि को दान देकर, उन्हीं की आज्ञा से कि वे धरती को छोड़कर कहीं और निकल जाएँ, परशुराम महेंद्र पर्वत पर तपस्या के लिए चले गए।

ऐसे दुर्योग इस धरती पर अकस्मात होते हैं लेकिन परशुराम जी के अवतार की कथा तो उसी समय लिखी जा चुकी थी जब हैहय राज कार्तवीर्य अर्जुन ने मद और अहंकार में हर दिन ऋषियों, यक्षो और देवताओं को भी निरंकुश होकर रौंदते, अपने अत्याचारों में सीमा को लांघते हुए, शची के

साथ क्रीडा करते हुए इंद्र पर आक्रमण कर दिया। देवताओं के आग्रह पर इस घोरतम अपराध और दुस्साहस पर कार्तवीर्य को दण्डित करने के लिए भगवान विष्णु का धरती पर परशुराम के रूप में अवतार लेना तय हो जाता है।

महाभारत में दोनों का चरित्र देवताओं की श्रेणी में माना गया है। महिष्मती नगरी के राजा कार्तवीर्य अर्जुन की एक हजार भुजाएँ थीं। दत्तात्रेय मुनि की कृपा से, उन्हें अनेक वरदान प्राप्त थे, सम्पूर्ण पृथ्वी उनके आधीन थी।

श्री राम अपना कार्य इस संसार में पूरा होने के बाद सरयू में जल समाधि लेकर इस मानव देह को त्याग, अपने स्वरूप में वापस चले गए। परशुराम जी के लिए माना जाता है कि वे उसी शरीर में अब भी जीवित हैं। वे ही एक मात्र अवतार हैं जिन्होंने रामायण काल से लेकर महाभारत काल तक उसी स्वरूप में देखा ही नहीं गया, अपनी तपस्या के साथ धरती पर आकर कई-कई बार शस्त्र और शास्त्र दोनों का प्रदर्शन भी किया।

श्री राम से उनकी दो बार भेंट होती मानी गई है। रामचरित मानस की मानें तो तीन बार। श्री राम के पराक्रम की कथाएँ सुनकर, परशुराम शक्ति परीक्षण के लिए स्वयं अयोध्या आते हैं और यह समाचार पाकर दशरथ जी स्वयं राम को उनकी आगवानी के लिए सीमा पर भेजते हैं। धनुष-बाण हाथ में लिए राम को प्रथम साक्ष्य में ही वे चुनौती सी देते हैं, यदि धनुर्धर हो तो हमारे इस वैष्णव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाओ, जिससे मैंने क्षत्रियों का संहार किया है, राम विनम्र भाव से परशुराम जी को उनके अहंकार और आक्षेप को अशोभनीय बताते हुए उन्हें संयम से काम लेने के लिए आगाह करते हैं, परशुराम जी के ये कहने पर कि बातों से नहीं क्षत्रिय धनुष से उत्तर देते हैं। रोष में आकर श्री राम, क्षत्रियों का संहारक वैष्णव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा कर, फिर भी हंसकर उनसे पूछते हैं, अब आपका कौन सा कार्य करूँ, परिणामों से अनभिज्ञ परशुराम द्वारा बाण देते हुए संधान के लिए कहने पर क्रोध में आकर, पिता-पितामहों से प्राप्त कृपाओं के अहंकार और घमंड से भरे परशुराम को तिरस्कृत करते हुए उन्हें दिव्य दृष्टि देते हुए अपना असली ब्रह्म स्वरूप दिखाते हैं, सभी को चेतन रूप धारण किये हुए अपने स्वरूप को प्रत्यक्ष दिखाते हुए बाण छोड़ते हैं। सारी पृथ्वी बिना बादल की बिजली और उल्काओं से व्याप्त सी हो गई आंधी और तेज मूसलाधार वर्षा होने लगी, मेघ गर्जन, भूकम्प, से धरती डोलने लगी। श्रीराम जी की भुजाओं से प्रेरित वह बाण श्रृष्टि को बिना नुकसान पहुँचाए, परशुराम जी को व्याकुल करके, उनके तेज को छीनकर पुनः वापस लौट आया। तेजहीन, लज्जित परशुराम, राम जी से क्षमा माँगते हुए, उनकी आज्ञा लेकर महेंद्र पर्वत की और प्रस्थान कर, वहाँ तप में लीन हो जाते हैं।

वाल्मीकी रामायण में श्री राम जी और परशुराम जी की भेंट बहुत नाटकीय ढंग से श्री राम और सीता के स्वयंवर के बाद मिथिला से अयोध्या के प्रस्थान के मार्ग में होती है, विश्वामित्रजी श्री दशरथ से अनुमति लेकर, मिथिला से ही अपने आश्रम के लिए प्रस्थान कर जाते हैं। मार्ग में सहसा जोर से आंधी-तूफ़ान-धूल के बबंडर के साथ धरती पर अन्धकार छा जाना, भयंकर पक्षियों की बोलियाँ और पशुओं की आवाजें, अशुभ-शुभ लक्षण दशरथ जी को व्यथित और व्याकुल कर जाते हैं, बड़ी-बड़ी जटाओं के साथ, भयानक से दिखाई देने वाले, कंधे पर फरसा, हाथ में धनुष-बाण लिए हुए भृगुकुल नंदन, जमदाग्नि कुमार आते नजर आते हैं। दशरथ-वशिष्ठ मुनि सभी हैरान हैं क्यों कि क्षत्रियों को न मारने के संकल्प, इंद्र के समीप शस्त्र त्यागने की शपथ, कश्यप जी को समस्त पृथ्वी दान करके महेंद्र पर्वत पर आश्रम में तप साधना करने वाले तपस्वी का यहाँ आने का क्या कारण है? क्रोध से भरे परशुराम पिता दशरथ और गुरु वशिष्ठ जी की सर्वथा उपेक्षा करते हुए सीधे राम को ही ललकारते हैं, जिन्होंने शिवजी के धनुष को तोड़ा है। परशुराम, श्री राम को दुर्धर्ष वैष्णव धनुष को खीचकर इस पर बाण संधान करने की चुनौती देते हैं, ये धनुष स्वयं भगवान् विष्णु ने उनके पितामह ऋचीक ऋषि को धरोहर के रूप में दिया था। ये अब महर्षि जमदाग्नि पास सुरक्षित है। इस धनुष से मैंने इक्कीस बार धरती को क्षत्रियों से विहीन किया है

पिता और गुरु वशिष्ठ की अवहेलना और बार-बार चुनौती देने के अहंकार से कुपित श्री राम ने धनुष पर बाण चढ़ाकर कहा, अब इसका फल देखिये, आप ब्राह्मण हैं, गुरु विश्वामित्र के सम्बन्धी हैं, ये प्राण संहारक बाण आपके ऊपर नहीं छोड़ सकता, लेकिन आपके घमंड को चूर करने के लिए, आपकी शीघ्रतापूर्वक आने-जाने की गमन शक्ति, तपोबल से प्राप्त पुण्य फलों को ही नष्ट कर देता हूँ। शत्रुओं को पराजित करने वाला यह धनुष निष्फल नहीं जा सकता।। परशुराम जी का वैष्णव तेज निकलकर राम जी में मिल गया । वीर्यहीन परशुराम जी ने कहा, मधु दैत्य को मारने वाले, देवेश्वर विष्णु, आपके स्वरूप का भान हो गया है, आपके सिवा कोई और इस पर बाण चढ़ा ही नहीं सकता

"अक्षय्यं मधु हन्तारं जानामि त्वं सुरेश्वरं ।
धनुषोऽस्य परामर्शात स्वस्ति ते अस्तु परंतप ।।"

किसी भी स्थान पर तुरंत पहुँचने की मेरी गमन शक्ति को मुझसे मत छीनिए।

"तामिमां मद्गतिं वीर हन्तुं नार्हसि राघव ।
मनोजवं गमिष्यामि महेन्द्रं पर्वतोत्तम ।। "

कश्यप जी को समस्त पृथ्वी दान देते समय ही उन्होंने हमसे कहा था कि मुझे उनके राज्य में नहीं रहना चाहिए, उनकी आज्ञा का पालन करते हुए कभी रात को पृथ्वी पर निवास नहीं करता हूँ। मैं मन के समान वेग से महेंद्र पर्वत पर चला जाऊँगा, तपस्या से उपार्जित पुण्यलोकों, मेरे श्रेष्ठ फलों को आप अविलम्ब श्रेष्ठ बाण से नष्ट कर दें ।

आपके हाथों हुई पराजय मेरे लिए लज्जाजनक नहीं है; क्योंकि त्रिलोकीनाथ श्री हरि ने मुझे पराजित किया है।

श्री राम ने परशुराम का पूजन किया, परशुराम जी श्री राम की परिक्रमा करके अपने स्थान को चले गए।

रामचरित मानस में यह भेंट मिथिला नगरी में सीता स्वयंवर के समय शिवजी के धनुष टूटने के बाद होती है। यज्ञोपवीत; माला; मृगछाला; वल्कल वस्त्र; तरकश में दो बाण और धनुष के और परशुराम जी का यों अकस्मात आगमन सभी के हृदय में भय उत्पन्न करता है। वो प्रसंग हम सभी जानते हैं। राम-लक्ष्मण-विश्वामित्र सबके साथ परशुराम अनियंत्रित कठोर वाणीके लिए क्षमायाचना माँगते हुए, अपने विश्वास को पुष्ट करने के लिए उनसे साथ लाये धनुष पर बाण चढ़ाने के लिए कहते हैं, धनुष देने से पहले ही, वो श्री राम के पास पहुंचा देख, परशुराम सत्य को जान लेते हैं।

महाभारत काल में भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण तीनों से उनकी प्रत्यक्ष भेंट के प्रकरण मिलते हैं। वनवास काल में युधिष्ठिर व अन्य पांडवों को परशुराम के दर्शन भृगु तीर्थ में ही होते हैं।

अवतार कथा में दो अवतारों को सशरीर उसी रूप में मिलना अद्भुत प्रभु इच्छा है ! ईश्वरीय चमत्कार है!

उत्तरकाण्ड में श्री राम की जलसमाधि के प्रसंग में महर्षि वाल्मीकि के श्लोक

"त्रयाणांमपि लोकानां कार्यार्थं मम संभवः I
भद्रं ते तु गमिष्यामि यत एवाहमागतः II "

"तीनों लोकों के प्रयोजन के लिए ही मेरा अवतार हुआ था, अब वह उद्देश्य पूरा हो चुका है, जहाँ से आया था, उसी लोक को वापस लौट जाऊंगा।"

ऐसे श्री राम को नमन करती हूँ I

सन्दर्भ ग्रन्थ ---: वाल्मीकि रामायण, महाभारत मूल ग्रन्थ, राम चरित मानस

रामकथा में विभीषण का प्रसंग

ISBN: 978-1-960627-06-3

राम मल्लिक
सरस्वती मल्लिक
(rammmallik@gmail.com)

1. प्रस्तावना

विभीषण भगवान राम के परम भक्त और रामायण के महत्त्वपूर्ण पात्र हैं। राम और लंका के राजा रावण के युद्ध में इनकी अहम् भूमिका रही। इनके परामर्श और सहयोग से हीं रावण और राक्षसों का संहार और लंका विजय संभव हो पाया। मानस के अनुसार सीता की खोज में लंका गये हनुमान जी विभीषण से मिले और राम की शरण में जाने के लिए प्रेरित किया । विभीषण ने सीता का पता बताया और रावण के दरवार में सहायता की। राम ने विभीषण को लंका का राजा बनाया। विभीषण ऋषि पुलस्ति के पौत्र और ऋषि विश्रवा और राक्षस कन्या कैकसी के पुत्र थे और रावण के छोटे भाई थे। विभीषण ने कठिन तपस्या की और वरदान में रामभक्ति माँगा! । विभीषण भगवान का भक्त था और नीति के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति था। सीता की खोज में हनुमान जी लंका गये तो विभीषण से मिलकर सीता का पता लिया। हनुमान की प्रेरणा से विभीषण राम की शरण में आया और राम-रावण युद्ध में सक्रिय भूमिका निभाई। समाज में कुछ लोग विभीषण को देशद्रोही और भातृद्रेही मानते हैं । कुछ लोग कहते हैं कि विभीषण ने राज के लोभ में भाई रावण और अपने राक्षस समाज के विनाश में सहायक बना। वाल्मीकि रामायण में हनुमान लंका में विभीषण से नहीं मिलते हैं परंतु रामजी को बताते हैं कि बालीकी हत्या और सुग्रीव की राजगद्दी के बाद से ही विभीषण लंका का राजा बनने की कामना कर रहा था। रामने मिलते ही उसका राज तिलक किया और लंका का राजा घोषित कर दिया। श्री राम चरित मानस में भी कुछ ऐसी हीं कथा है।
भक्ति साहित्य में विभीषण राम का परम प्रिय भक्त माना जाता है और चिरंजीवी बन जाता है।

पूर्व कथा

विभीषण ने कठिन तपस्या की थी और वरदान में रामभक्ति माँगी थी। वाल्मीकि रामायण के अनुसार विभीषण वचपन से ही धार्मिक, स्वाध्यायनिरत, नियताहार तथा जितेन्द्रिय था।

राम कथा में विभीषण का प्रवेश सीता अन्वेषण में हनुमान के लंका आगमन पर होता है। हनुमान सीता की खोज में लंका में घूम रहे थे तब विभीषण का घर दिखाई पड़ा जिसमें हरि मंदिर भिन्न प्रकार का बना था। नवीन तुलसी के पौधे लगे थे और दीवार पर रामायुध के चिन्ह बने थे। विभीषण और हनुमान अत्यन्त स्नेह से मिले। हनुमान ने विभीषण को राम की महिमा बताई और उनकी शरण में जाने के लिये प्रेरित किया। विभीषण ने सीता का पता बताया और हनुमान को रावण के दरबार में मृत्यु दंड से बचाया ।लंका में सीता जी की देखभाल की लिये अपनी पुत्री त्रिजटा को रखा जो राम चरणसे प्रेम रखती थी और विवेक में बड़ी निपुण थी।

विभीषण की शरणागति

रावण की सभा में विभीषण अपने अपमान के बाद राम की शरणागति की कामना से सागर पार आया। वानरों ने उन्हें आते देखा तो उन्हें कोई विशेष दूत जाना। उन्होंने सुग्रीव को समाचार दिया। सुग्रीव ने राम को समाचार दिया कि रावण का भाई मिलने आया है। राम ने उसे अपने पास लाने को कहा। सुग्रीव ने कहा कि यह कपटी है और भेद लेने आया है। इसको बॉधकर रख देना चाहिये। रामजी ने कहा कि मेरा व्रत है, मेंरे जीवन की प्रतिज्ञा है कि जो कोई मेरी शरण में आयेगा उसका भय मैं छुड़ा दूँगा। जिसको कोटि ब्रह्महत्या का पाप लगा हो वह भी मेरी शरण में आयेगा तो उसको भी हम नहीं छोड़ेंगे। जो जीव मेंरे सन्मुख होता है उसके कोटि जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं। जो दुष्ट हृदय का होगा वह मेंरे सन्मुख आ ही नहीं सकता। और यदि रावण ने उसे भेद लेने के लिये भेजा है तो भी कोई भय नहीं है।संसार में जितने निसाचर हैं लक्ष्मण उन्हें एक क्षण में मार देंगे।'इसलिये उसे ले आओ।

वानर उन्हें अदरकें साथ रामके पास लाये। विभीषण ने अपना परिचय दिया कि वे रावण के भाई हैं। तामसी शरीर और पाप से प्रेम है।

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुवीर॥

ऐसा कहकर दंडवत् किया और राम विशेष हर्षित होकर उठ खड़े हुये। बॉहों में पकड़कर हृदय से लगा लिया उनको भाई के साथ अपने पास विठा लिया। लंकेश कहकर संबोधित किया और परिवार का कुशल पूछा। किस समाज और विपरीत परिस्थितियों में विभीषण रहता है उस पर भी चिंता व्यक्त की । विभीषण कहता है

अब मैं कुशल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे॥
तुम्ह कृपालु जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला॥

जिसका रूप बड़े - बड़े मुनियों के ध्यान में नहीं आता है, उन्हीं प्रभु ने आज हर्षित होकर मुझे अपने हृदय से लगाया है। राम अपने स्वभाव का वर्णन करते हैं। विभीषण को दुबारा लंकेश कहकर सम्बोधित करते हैं।

सुनु लंकेस सकल गुन तोरे। ताते तुम्ह अतिशय प्रिय मोरे॥

विभीषण कहते हैं हृदय में पहले कुछ वासना थी परंतु प्रभु के चरण के प्रेम की सरिता में वह बह गई।

राम ने राज्याभिषेक के लिये समुद्र का जल मंगाया। विभीषण से कहा कि यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है मेरा दर्शन अमोघ है - ऐसा कहकर भगवान् ने राज्याभिषेक कर दिया। इस प्रकार विभीषण ने राम की शरण में आकर उनकी पावनी भक्ति प्राप्त की और लंका का राजा भी बन गया।

विभीषण की शरणागति के विषय में वाल्मीकि रामायण की कथा इस प्रकार है। विभीषण वानर सेना के शिविर के पास पहुँचकर कहता है कि मैं रावण का छोटा भाई हूँ। उसने मेरा अपमान किया है और मैं राम की शरण में परिवार छोड़कर आया हूँ। सुग्रीव विभीषण को मार डालने का परामर्श देते हैं किन्तु राम शरणागत को अवध्य बताकर उसे शरण देते हैं। इसके बाद विभीषण रावण और उसकी सेना की शक्ति का वर्णन करता है और युद्ध में राम की सहायता करने की प्रतिज्ञा करता है। तब राम विभीषण का राज्याभिषेक करते हैं और उसे अपना प्रमुख परामर्शदाता बना लेते हैं।

राम रावण युद्ध - विभीषण का राम से सहयोग

शरणागति के बाद विभीषण राम का विश्वासपात्र मंत्री और सहायक बन गया। राम को लंका की गुप्त सूचनायें दिया करता था। लंका का प्रशासक रहने के कारण हर जगह उसकी पहुँच थी। इस प्रकरण के कुछ प्रसंगों की चर्चा -

1. राम को सागर पार करने के लिए सागर से प्रार्थना की सलाह

राम ने सागर पार करने का उपाय पूछा। विभीषण ने सागर से प्रार्थना करने की सलाह दी । सागर राम के कुलश्रेष्ठ है वह समुचित उपाय बतायेंगे। रामने विभीषण की सलाह मानकर कार्य किया और अंत में सेतु निर्माण करवाया।

2. सागर पार करने पर युद्ध की योजना में सहयोग

सागर पार कर राम ने वानर सेना के साथ सुबेल

पर्वत पर डेरा डाला। राम ने सब मंत्रियों से युद्ध व्यवस्था के बारे में सलाह माँगी। विभीषण ने लंका की सैन्य व्यवस्था की जानकारी दी और महत्त्वपूर्ण विचार दिये। बाद में रावण के गुप्तचरों को भी पकड़वाया ।

3. विभीषण-कुम्भकर्ण संवाद

रावण ने कुम्भकर्ण को जगाकर राम से युद्ध करने भेजा।युद्धभूमि में विभीषण उससे मिला। कुम्भकर्ण ने छोटे भाई को गले लगाया । विभीषण ने रावण के दरबार में अपने अपमान और राम की शरण में आने का वृतांत सुनाया। कुंभकर्ण ने उसकी प्रशंसा की। विभीषण को निशिचरकुल भूषण बताया।

4. मेघनाद के यज्ञ की राम को सूचना और यज्ञ विध्वंस में सहयोग

मेघनाद युद्ध में मुर्छित होकर बाहर हो गया। मुर्छा दूर होने पर वह पर्वत की कंदरा में अजय यज्ञ करने की ठानी। यह बात विभीषण को पता लगी और उसने राम को बताया। उन्होंने लक्ष्मण को वानर वीरों के साथ यज्ञ के विध्वंस के लिये भेजा। विभीषण की सहायता और सलाह से यज्ञ का विध्वंस हुआ और मेघनाद वहीं मारा गया ।

5. राम का विजय रथ और राम विभीषण संवाद, विभीषण गीता

मेघनाद बध के वाद रावण स्वयं राम से युद्ध करने आया। रावण रथ पर था और राम बिना रथ के थे। इससे विभीषण अधीर हो गया। राम ने इसपर विभीषण को उपदेश किया जिसे विभीषण गीता कहा जाता है। राम ने समझाया कि जिससे विजय होती है वह रथ दूसरा है। शौर्य और धैर्य उसके पहिये हैं। बल, विवेक, दम और परोपकार उसके चार घोड़े हैं जो क्षमा, दया और समता रूपी डोरी से रथ में जोड़े हुये हैं। ईश्वर का भजन हीं सारथी है, वैराग्य ढाल है और संतोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचंड शक्ति है, और श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है। निर्मल और अचल मन तरकस के समान है। शम, यम और नियम ये वाण हैं। ब्राह्मण और गुरु का पूजन अभेद्य कवच है। इसके समान विजय का दूसरा उपाय नहीं है। ऐसा धर्मरथ जिसके पास हो उसे कोई नहीं जीत सकता।

6. रावण के यज्ञ की राम को सूचना और यज्ञ विध्वंस में सहयोग

लक्ष्मण ने युद्ध में रावण के रथ को चूर चूर कर दिया और सारथी को मार दिया। सौ बाणों से रावण का हृदय बेध दिया। दूसरा सारथी उसे युद्ध भूमि से बाहर ले आया। रावण मुर्च्छा से जागकर यज्ञ करने लगा। विभीषण ने यह खबर राम को बताई कि रावण यज्ञ कर रहा है। जिसके सिद्ध होने पर वह सहज ही नहीं मरेगा। राम ने सेना भेजकर यज्ञ विध्वंस कराया।

7. रावण का विभीषण पर शक्ति प्रहार

राम रावण युद्ध में विभीषण बीच में आया। रावण ने क्रोधित होकर प्रचंड शक्ति छोड़ी। राम ने विभीषण को पीछे कर लिया और शक्ति स्वयं सह

लिया।

8. रावणबध में गुप्त सूचना और सहयोग

राम रावण से युद्ध में उसे बहुत प्रयास के बाद भी मार नहीं सके। विभीषण ने राम को बताया कि रावण के नाभि कुंड में अमृत है इस लिये वह नहीं मर रहा है । राम ने तीर मार कर अमृत को सुखा दिया और तीर मारकर रावण का बध कर दिया।

एक और कथा है कि रावण किसी भी अस्त्र शस्त्र से नहीं मर रहा था। विभीषण ने राम के कान में कहा कि ब्रह्मा ने रावण को एक ब्रह्मास्त्र दिया था। उसे केवल उसी अस्त्र से मारा जा सकता है। वह अस्त्र मंदोदरी के कक्षमें छिपाया हुआ है। राम ने हनुमान को भेजकर वह दिव्यास्त्र मँगा लिया और रावण का बध किया।

2. रावणबध के बाद का प्रसंग

राम की आज्ञा से विभीषण ने रावण का अंतिम संस्कार किया। लक्ष्मण ने लंका में विभीषण का राजतिलक किया। विभीषण राम के साथ अयोध्या आये । वहाँ उनका सत्कार हुआ। वापस आकर लंका पर राज करने लगे।

विभीषण के चरित्र पर टिप्पणी

विभीषण का चरित्र समाज में विवादास्पद रहा है। कहावत है - घर का भेदिया लंकाढाह। उसे समाजद्रोही, भातृद्रोही और विश्वासघाती तक कहा जाता है। दूसरी और उसे परम श्रेष्ठ रामभक्त माना जाता है। वाल्मीकि रामायण में हनुमान राम को बताते हैं कि बाली के बध और सुग्रीव के राजतिलक के बाद से ही विभीषण को लंका का राजा बनने की इच्छा हुई और उसके लिए प्रयास करने लगा। इसलिये लंका से प्रस्थान कर राम के पास आने पर राम सर्वप्रथम उसका राज तिलक करते हैं। विभीषण भी उन्हें लंका की सैन्य व्यवस्था का परिचय देता है और सहयोग की शपथ लेता है।

मानस में भी शरणागति के समय राम उसका राजतिलक करते हैं। विभीषण स्वयं बताता है कि उसे लंका के राज की वासना थी जो राम से मिलने पर समाप्त हो गई।

भक्ति काव्यों में विभीषण को एक आदर्श भक्त और धार्मिक के रूप में चित्रित किया गया है।

3. निष्कर्ष

1. भगवान राम उनके शरण में आये मनुष्य को कभी नहीं त्यागते।वे शरणागत के गुण दोष नहीं देखते हैं।
2. भगवान उपदेश करते हैं कि बरु भल बास नरक कर ताता । दुष्ट संग जनि देइ विधाता।।
3. शरणागति के बाद विभीषण कहता है

तब लगि कुशल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन विश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ लोक धाम तजि काम।।

4. संदर्भ

1. श्रीरामचरितमावस और विभिन्न टीकायें

Leadership Skills in Ramayana

Vaishali S
(authorvaishali.s@gmail.com)

ISBN: 978-1-960627-06-3

The word Ramayana means Rama's Ayana which means the journey of Rama. Ramayana is the divine saga of Shri Rama. It describes the journey that was taken by Rama. Ramayana beautifully describes every event that took place in the life of Shri Rama. Every event from his birth till he goes back to his heavenly abode – Vaikunta. There are various characters in the divine epic that play a vital role in moulding the story of Rama. Some of these vital characters are Sita, Lakshmana, Bharata, Shatrughna, Hanuman, Dasharatha, Kausalya, Sumitra, Kaikeyi, Jatayu, Sugreeva, Jambavan, Angada, Sampati, Ravana, Vibeeshana, Kumbhakarna, Surpanakha and Mandodari. Each character mark an impression in the minds of the listeners. Each character in the sacred saga teaches an important lesson. Some characters in the grand epic teach how exactly a person must conduct his life and certain other characters teach how exactly a person must never conduct his life. This paper is on the leadership skills that is taught by the various characters in the grand tale of the Paramatma. Most vital characters of Ramayana are analysed in this paper.

1. Introduction

Ramayana teaches *Dharma*. Dharma leads a person to the path of righteousness and *Adharma* leads a person to the path of ruin. It is always wise for a person to travel in the path of Dharma. In today's era, where morality and ethics are in decline, it is extremely important for everyone to differentiate between Dharma and Adharma and choose to follow the path of righteousness which will ultimately bring success.

Rama was a man of Dharma and was thus was known to the world as, "*Maryadha Purushottam*." Rama was ideal in all aspects. He was an ideal son, an ideal brother, an ideal husband, an ideal friend, an ideal king etc. Even during the times when he was tested by fate, he held on to the path of Dharma thereby bringing a success to himself and laurels to the line of Ikshvaku. Ramayana teaches that even during tough situations, one must adhere to the path of Dharma.

dharmo rakshati rakshitā

Dharma protects those who protect it.

If one adheres to the path of Dharma, that path itself will protect him from calamities.

About the birth of the Divine Epic

tapaẖ-svādhyāya-nirathaṁ tapasvī vāg vidāṁ varam |
nāradaṁ paripapraccha vālmīkir muni-puṅgavam ‖ 1 ‖

This is the very first *shloka* of Srimad Valmiki Ramayanam. This is the beginning point of the sacred saga. It speaks about the enquiry made by sage Valmiki to the celestial bard Narada. That is the point when Narada informs him about the greatness of Shri Rama. He also narrates the entire story of Rama which is called the *Moola Ramayana* or the *Sankshepa Ramayana*. Valmiki then goes to river Tamasa for his evening ablutions where he admires two crouncha birds mating. A *nishada* hunter shoots the male bird and the female bird cries out piteously. Seeing the lament of the female bird, Valmiki pronounces a curse on the hunter. Valmiki then goes back to his hermitage and ponders on the incident that had taken place. Lord Brahma appears before him and informs him that the incident with the hunter was just a part of his divine game. Valmiki also informs that the metre in which he had pronounced the curse was in fact in *Anushtup* metrical tense. Out of sorrow, a poetic verse has indeed taken birth. That is, out of *shoka*, a *shloka* has taken birth. Lord Brahma then commanded Valmiki to compose the sacred story of Shri Rama in the same metrical tense. Valmiki then begins to compose the sacred saga of Shri Rama and names it 'Ramayana.'

Sage Valmiki had two other names in mind for the sacred story – *Sita Charitram* and *Paulastya Vadham* meaning the life history of Sita and the death of Ravana.

There are almost 24,000 shlokas in the Ramayana written by sage Valmiki.

After having composed the entire epic, Valmiki wanted a person who could learn the story by heart. Valmiki taught the entire story to Lava and Kusha without revealing the fact that this was indeed the story of their parents.

Thus began the beautiful saga of Shri Rama.

2. Seven Kandas in Ramayana

Ramayana has seven *Kandas*, that is, the grand epic is divided into seven parts – Bala Kanda, Ayodhya Kanda, Aranya Kanda, Kishkindha Kanda, Sundara Kanda, Yuddha Kanda and Uttara Kanda.

As the name suggests, Bala Kanda contains the childhood times of Shri Rama. It contains the events that follow his birth, the events that took place during his childhood, his first adventure with sage Vishwamitra, his advent with *Rakshasi* Taataka, his encounter with Maricha and Subahu, the redemption of Ahalya from the curse of *Rishi* Gautama, his ability in lifting and stringing the mighty bow of Lord Shiva, his marriage with Devi Sita and his meeting with Lord Parshurama.

Ayodhya Kanda contains the incidents pertaining to the throne of Ayodhya. It contains the events that take place after the marriage of Shri Rama and Devi Sita. It speaks about the desire of Dasharatha who wanted to crown Rama as the king of Ayodhya and how the kingdom was mercilessly snatched away by Queen Kaikeyi under the influence of the evil Manthara. Ayodhya Kanda describes the events pertaining to the departure of Rama, Sita and Lakshmana to the forest, Dasharatha's sorrowful death and Bharata's nobility in placing Rama's sacred sandals on the throne of Ayodhya.

Aranya Kanda pertains to the incidents that take place in the forest. It contains Rama's meeting of various sages and saints in the forest, Rama receiving various weapons, powers and boons as a result of such meetings, his encounter with Viradha, slaying of fourteen thousand raakshasas lead by the terrible Khara, Dhushana and Trisiras, Ravana abducting Devi Sita, Ravana killing the noble Jatayu and Rama's sorrow on being separated from his better half.

Kishkinda Kanda contains the incidents pertaining to the kingdom of Kishkinda. It contains the events in which Rama kills Vali and crowns Sugreeva as the emperor of Kishkinda.

Sundara Kanda contains the adventures of Hanuman while on his search for Sita in Lanka, Hanuman discovering Sita, meeting her and giving her hope that Rama will come and save her, Hanuman burning down the entire Lanka and returning back to Rama to report to him on the whereabouts of Devi Sita.

Yuddha Kanda contains the battle between the army of Rama and the army of Ravana ending with Rama slaying the evil Ravana and going back to Ayodhya with Sita.

Uttara Kanda contains the events that took place after his coronation. It contains the events in which he sends a pregnant Sita to the hermitage of Rishi Valmiki where she gives birth to Lava and Kusha. Shatrughna killing Lavanasura. Sita's departure to the heavenly abode, Lakshmana's departure to the heavenly abode and finally the departure of Rama to his heavenly abode after having completed his divine incarnation.

3. Difference between a Leader and a Boss - Rama Leads but Ravana Commands

It makes a huge difference between being a boss and being a leader. A boss commands his team and expects it to follow his agenda; whereas an effective leader gently directs his team towards the path of success. A boss is arrogant of his power whereas a leader is humble. A leader serves his followers whereas a boss is always being served. A leader selflessly aims for the wellbeing of his entire team whereas a boss selfishly aims only for his own wellbeing.

This remarkable difference between a leader and a boss is reflected in the divine saga of Shri Rama. Shri Rama reflected the virtues qualities of an effective leader whereas Ravana reflected the demonic qualities of a cruel boss who was always hungry for power. He valued power over righteousness. He commanded his followers to work for his welfare. He failed to consider their wellbeing. His people followed his orders out of fear but not out of love and respect. Although he had conquered the three worlds, he abused his powers thereby ruining his life and also staking the lives of his people. His pride made him fall.

Shri Rama reflected virtuous and noble qualities that differentiated him from Ravana. Kindness is a language which the deaf can hear and the blind can see. Rama was an ocean of kindness and that made him unique. Kindness is a virtue that deserves appreciation. Kindness made Rama a leader and cruelty made Ravana a demon.

Shri Rama was never hungry for power. Although he was born as the son of a mighty emperor, he was humble enough to embrace a mere *Vaanara*, a puny bird and a simple tribal man. He valued nobility but not power. He was quick to forgive. He always considered the wellbeing of his followers rather than looking for his own wellbeing. He earned the love and respect of his followers by gently guiding them towards the path of righteousness rather than commanding them. People worked for him out of love but not out of fear.

In today's corporate era, to climb the ladder of success, one must learn to be a leader. A leader inspires his followers to be like him whereas a boss makes his subordinates work for him by inducing fear in their minds.

Rama teaches how exactly a leader should behave whereas Ravana teaches how not to behave.

Respect will be given only for those who deserve it but not for those who demand it. Leaders deserve respect whereas boss demands it but he does not deserve.

Bravery, Heroism and Confidence

Hanuman's bravery and heroism inspires courage and confidence in the minds of the listeners. Even while facing several challenging circumstances, Hanuman did not give up his hope.

Corporate leaders while trying to climb the ladder of success must learn from Hanuman on how to face adversity with a smile. Hanuman leapt across the mighty ocean to discover Sita in Lanka. He faced several obstacles on his way to Lanka. Mainaka mountain offered help and requested Hanuman to rest a while. But Hanuman was on an important mission and he was not distracted by the pleas of the mountains. He then had an encounter with Surasa. As the size of Surasa's mouth increased, the size of Hanuman's body also increased. Finally, Hanuman cleverly reduced his size to the size of a thumb and entered into her mouth and exited quickly. Later, he realized that she was Naga's maiden who tested Hanuman's abilities. Finally, a Raakshasi named Simhika caught Hanuman's shadow and stopped his progress. Hanuman felt as though an

unknown force was obstructing his path. Hanuman had an encounter with Simhika and slayed her. Finally, he reached the shores of Lanka successfully. This incident of Hanuman teaches perseverance. Hanuman did not lose confidence in himself and also in his abilities to leap across the mighty ocean although he endured several obstacles on his way. While climbing the ladder of success, we as humans may face extreme difficulties and challenges. We must not give up on our mission. We must perceive, just like how Hanuman perceived and face every difficulty that is on our path towards success.

After his entry into the golden island of Lanka, Hanuman reduced his size not bigger than that of a cat. He meets the guardian spirit of Lanka whose name was Lankini and cuts her upper jaw. The terrified Lankini then narrates to Hanuman that Lord Brahma had predicted that Lanka's destruction will begin when a monkey enters into the city.

Hanuman then searches the entire city. He makes an extremely thorough search. He could find many women laughing, dancing, sleeping, singing and merry making but none could fit his mental image of Sita. There was not even a space as small as a palm that Hanuman did not search. He once mistook Mandodari to be Sita but his instinct and also his intelligence made him understand that this woman could not be Sita. The mark of a genuine leader is to use his intelligence at the time of confusion and not be hasty in assuming facts.

Unable to find Sita, Hanuman has suicidal thoughts. Fear haunts Hanuman. But Hanuman does not succumb to his fears. He does not give up on his search for Sita. He does not quit.

The sign of a true leader is witnessed in his boldness. How courageously he faces his challenges determines what kind of a leader he is. A leader does not run away from difficulties nor does he succumb to depression. Although fear haunts him, an effective leader does not run away from his fears. He runs towards them. The mark of a courageous person is not when he does not feel fear. The one who is truly courageous will walk towards the fears despite his knees shiver and chills run down his spine.

Hanuman prays to Rama asking for divine guidance and searches for Sita with renewed hope. He finally spots Ashoka Vatika where Ashoka trees were in plenty. His hope increased as he saw the beautiful grove of Ashoka. He had not searched for Sita there. Hanuman realized that if Sita is ever alive in Lanka she must be in this beautiful Ashoka Vatika. Hanuman jumps down and makes a thorough search in the Ashoka Vatika also. He came across several rakshasa women there but none could fit with his mental image of Sita. He finally spots a forlorn and a lonely lady sitting sadly with dejection in her spirit and with tears in her eyes. He had no doubt in guessing who she was. He understood by her behaviour and attire that she was indeed the noble wife of Shri Ramachandra. Although, Hanuman was sure that she was indeed Sita, he wanted to make a confirmation on her identity.

Thus, we can clearly witness that Hanuman, although being sure had wanted to be confident before undertaking a task. He was not hasty in speaking to Sita. He waited for the right moment.

He witnessed Ravana threatening Sita. Hanuman waited for the demonesses to sleep. Finally, at the appropriate moment Hanuman started narrating the story of Rama in a husky tone. As Sita looked up, Hanuman got down from the tree and informed her that he was the messenger of Rama. He gave her the signet ring of Rama. Hanuman then caused havoc to the beautiful Ashoka Vatika, killed several demons and met Ravana face to face. Hanuman's tail was fired as a punishment but Hanuman in turn burnt down the entire city of Lanka and leapt back to Mahendra mountain. He finally met Rama and informed him that he had indeed discovered Sita.

In Kamba Ramayana, he says, "*Kanden Sitai yai*" Kamban calls him "*Sollin Selvan"*, meaning the one who is smart with words.

Thus, we can witness the bravery and heroism of Hanuman in every way possible. A true leader must be guided by his instincts, intelligence, courage and confidence. He must not succumb to distractions, anger and fear.

Nobility makes him an effective leader

Bharata is yet another leader in Ramayana. According to me, Bharata is the most noble of all brothers of Rama. Kamban says, "*Aayiram Raman Nin Kel Avaro*" which means even if thousand Ramas were put together, it may not be equal to the nobilities of one Bharata. Nobility is extremely important to be an effective leader. One cannot be a leader if he is not noble. Kaikeyi demanded the crown of Ayodhya for her son Bharata. At the time of Kaikeyi's wedding, Dasharatha had promised her father Ashwapati that Kaikeyi's son will be crowned king after his reign. That was the price which Dasharatha had paid to win Kaikeyi's hand in marriage. But the noble leader Bharata rejected the crown for himself although, according to the promise made by Dasharatha, the crown rightfully belonged to Bharata. Bharata wanted to bring back Rama to Ayodhya and therefore he marched to Chitrakoota and requested Rama to come to Ayodhya, but the divine Maryadha Purushottam did not heed to Bharata's request. Therefore, Bharata carried Rama's sacred sandals on his noble head and headed back to Ayodhya. He placed the sandals on the throne and ruled the kingdom as Rama's representative taking orders from the sacred sandals of Shri Rama. He lived away from a palace in a village called Nandigram. He lived there like a forest dweller wearing bark garments and matted locks, just like his elder brother Rama. He came back to Ayodhya only at the time of Rama's arrival. Thus, he proved to the world that he was a legend of loyalty. One can clearly witness a spirit of sacrifice in Bharata's character. Bharata was absolutely not greedy for wealth or power. This is one of the most important traits that a leader must possess. Hunger for wealth and power will make one lose his focus on the goal and it would never pave one to the path of righteousness.

Yet Another Legend of Loyalty

Lakshmana is yet another effective leader. He was a loyal brother, yet another legend of loyalty. He accompanied Rama to the forest for fourteen years. He walked behind Rama just like his shadow. When misery were to fall upon Rama, Lakshmana

would walk in front of Rama and take up the misery on himself. Serving Rama was the only goal of life that Lakshmana had. Even as a youth, Lakshmana accompanied Rama when he protected sage Vishwamitra's sacrifice. Lakshmana assisted Rama in killing the hordes of demons lead by Maricha and Subahu. While departing to the forest, Lakshmana's mother Sumitra advised him to serve Rama to such an extent that Rama does not miss the comforts of the palace. Over and over again, in the sacred saga, Lakshmana proved to be a legend of loyalty. At the time of slaying Indrajit, Lakshmana almost gave up his life. That was his dedication and faithfulness in serving Rama who was to destroy Adharma. Without Lakshmana, Rama would have been nowhere. Rama would not have fulfilled his objective without the loving services of Lakshmana. One must learn to be loyal to his duties, just like how Lakshmana was. Dedication and devotion to one's duties will definitely pave a man to the path of success. Lakshmana had one pointed focus on serving his elder brother. He removed every distraction from his path and aimed only on serving his brother selflessly. He left his wife, his mother, the comforts and luxuries of the palace and walked to the forest thereby proving that he was a loyal brother. Just like Lakshmana, one must remove every distraction from the path and focus only on the ultimate objective, thereby embracing success.

A Martyr

Jatayu is a noble vulture who teaches leadership attitude to the world at large. Jatayu obstructs Ravana's path as he abducts Sita to Lanka. Although Jatayu knew that he could be a no match to the evil Ravana, he tried his level best to rescue Sita from the clutches of Ravana. Ravana cuts one of his wings and legs. Although seriously injured, Jatayu fights bravely with his other wing and leg. Alas! Ravana cuts off the other wing and leg too. Jatayu falls down on the ground. Lying in a pool of blood, Jatayu starts gasping for breath. Although, he wants to give up, with an enormous amount of struggle, Jatayu holds on to life so that he may inform Rama that Sita was abducted by Ravana. Rama then meets Jatayu while searching for Sita. Jatayu tells him that Ravana abducted Sita and carried her towards the south. Jatayu then receives the blessing of taking his last breath in the lap of Shri Rama. Rama performs the last rites of Jatayu and travels towards the South in search of Sita. Jatayu displays remarkable leadership. A leader does not sit back and watch when a crime is being committed. He tries to stop the crime, difficult though it may be. A leader aims in stopping injustice. In today's era, plenty of injustice happens against everyone. People cheat, just to earn more wealth and dishonesty has almost become a trend. In work place too, ethics no longer exist. Injustice such as demanding huge amounts of bribe, sexual harassment in the workplace, religious discrimination and other forms of bullying have become very common. As an effective leader, one must learn from Jatayu, the spirit of morality. Jatayu tried his level best to prevent an injustice happening around him. Although, his attempt failed, he died a martyr's death, trying to prevent injustice with every drop of his blood. A person who lets a crime happen is as bad as the person committing the crime himself.

Never be Hasty

Many scholars in Ramayana have interpreted that Dasharatha promises in haste and regrets in leisure. Before we make a promise, we must analyse whether if it is possible for us to implement the same. Dasharatha gave two boons to Kaikeyi in haste and regretted it later in life. Although, he was a mighty ruler, in spite of being a great administrator he was hasty under certain circumstances. Hastily, he promised Ashwapati that he would crown Kaikeyi's son as the King of Ayodhya. This was yet another hasty promise that made him regret later in life. Promises should never be broken so we must make sure that we do not promise in haste for that is one of the most important traits of an effective leader.

Women Power

Sita is the feminine power. Sita bravely accompanied her husband to the forest, thereby proving to be an effective leader. She was neither addicted to luxury nor was she addicted to wealth but sharing her husband's exile awed the world. Devi Anasuya praises Sita for being a noble wife. When Ravana imprisons her in Ashoka Vatika, he threatens to kill her. He promises to make her the Queen of the three worlds and persists her to marry him. Sita does not succumb to his threats and offerings. She boldly kicks away the wealth offered by Ravana and waits for her husband to rescue her. When Hanuman meets Sita, she was not hasty in believing him. Only when Hanuman shows her the signet ring of Rama, Sita understands that Hanuman is indeed a messenger of Rama. A true leader does not blindly believe what he hears unless there is a valid proof evidencing the same. When Hanuman offers to carry her on his shoulders, Sita does not oblige. She wants only Rama to save her as that was a question of her honour. Sita honours Rama thereby waiting for him to rescue her. Every woman in today's era must learn from Sita about the greatness of being an effective leader.

Kaikeyi is yet another vital woman character who succumbs to temptations and fights for the throne. Kaikeyi demands the throne for her son and she also demands to send Rama to the forest for fourteen years. Although, she was a noble woman, greed overpowers her intelligence. Manthara corrupts her mind because of which she ruins the happiness of the royal family. Rama marches to the forest because of her unusual demand and Dasharatha dies out of sorrow. Kaikeyi teaches how exactly a woman must not behave.

Women must not succumb to fears and temptations but must focus only on their ultimate objective in life, just like how Sita did. The world needs more women that are empowered. The world needs strong woman like Sita. Women must receive education. Women must be treated with respect and dignity. Women must hold responsible positions in the society. Women must create a healthy feministic attitude thereby making sure that the society eradicates gender inequality. Men and women must be treated equally for that would be an ideal society. Women must make sure that they empower one another and make the world a better place for themselves and also for every woman out there.

Thus, every character in the divine tale teaches a vital lesson. We must learn from these characters on how to be an effective leader, how to avoid misery and how to implement the effective leadership traits and improve the quality of our lives and also the lives of those around us.

‘रावणः एक उत्कृष्ट प्रतिनायक’

ISBN: 978-1-960627-06-3

लीना सुनिल पांडे
रा.तु.म. नागपूर विद्यापीठ, नागपूर
(leenaspande@gmail.com)

'रावण' सभी के लिए एक परिचित भूमिका। रामायण की कई प्रमुख भूमिकाओं में से एक । शास्त्रीयदृष्टीसे रावण की भूमिका नायक प्रतिपक्षी है। नायक प्रतिपक्षी भूमिका को 'प्रतिनायक' कहा जाता है। इस प्रकार की विरोधी भूमिका के कारण ही नायक रूपकों में प्रभावशाली रूपमें उभरकर आते है और सामाजिकों के हृदयमें अपना स्थान पक्का कर लेते है। प्रतिनायक की भूमिका के इसी महत्त्व को सबके सामने रखनाही मेरे शोध प्रबंधका विषय है। हेतू है: रूपकों में स्थिती प्रतिनायक की भूमिका का महत्त्व सिद्ध करना। इस शोधपत्र में विवेचनात्मक अध्ययन पद्धतीका उपयोग किया गया है।

कूट शब्द - रावण, राम, भरत, प्रतिनायक, नायक इ.

1. प्रस्तावना

‘काव्येषु नाटकं रम्यम्’ ये लोकोक्ती सर्वश्रुत है। नाटक एक रूपक है, और रूपक दस है।[1] नाटक इस रूपक के बारे में भरतमुनि लिखते है।

“प्रख्यातवस्तुविषयं प्रख्यातोदात्तानायकश्चैव।
राजर्विवंश्यचरितं तथैव दिव्याश्रयोपेतम्।।
नानाविभूतियुक्तम् ऋद्धिविलासादिभिर्गुणैश्चैव।
अक्ङप्रवेशकाढयं भवति हि तन्नाटकं नाम।।”
(नाट्यशास्त्रम् 20/10,11)

जिसमें कथावस्तु विषय प्रख्यात इतिवृत्त रहे जिसका नायक प्रसिद्ध और उदात्त हो, जिसमें राजवंश में प्रसूत पात्र का वर्णन हो, जिसमें दिव्य आश्रय विद्यमान हो, जिसमें (अनेक) ऐश्वर्यगत सम्पन्नता हो, जो समृद्धि विलास आदि गुणों से युक्त हो, जिसमें उचित संख्या में अंक हो, तथा उपयुक्त ‘प्रवेशक’ (आदि) विद्यमान या संयोजित किये गये हो तो उसे नाटक समझना चाहिए।

भरतमुनि इस सन्दर्भ में आगे लिखते हैं -

‘‘युद्धं राज्यभ्रंशः मरणं नगरावरोधनश्चैव ।
न प्रत्यक्षाण्यकङे प्रवेश्कैः संविधेयानि ।।’’
(नाट्शास्त्रम् 20/21)

अर्थात युद्धं, राज्यभ्रंश, मरण, नगर का घेरा डालना (आदि) कार्य अंक में कभी प्रत्यक्ष नही दिखलाये जाते है - पर उन्हें ‘प्रवेशक’ के द्वारा अवश्य्य प्रस्तुत किया जाए।

इससे हम यह निष्कर्ष लगा सकते है कि, भरतमुनी को नाटक में युद्ध राजयभ्रंश आदि घअनाए अपेक्षीत है। और भरतमुनि के इन अपेक्षायों की पूर्ति होने के लिए रूपकों में एक प्रतिनायक जरूरी है। नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ के आधापर मै यहा प्रतिनायक के शास्त्रीय रूप और प्रतिनायक के महत्त्व का विश्लेषण प्रस्तुत कर रही हूँ।

भरतमुनिकृत ‘नाट्शास्त्रम्’ यह उपलब्ध प्रथम नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। समय के साथ अनेक नाट्शास्त्रीयों ने प्रतिनायक की विशेषताओं को अधिक स्पष्ट रूपसे परिभाषिक किया है।

1. भरतमुनि और प्रतिनायक

आचार्य भरतमुनि कृत ‘नाट्यशास्त्रम्’ प्रथम उपलब्ध नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। नाट्शास्त्र के प्रथम अध्याय के श्लोक संख्या 108 में आचार्य भरत ने धर्म, अर्थ और काम के अलावा हास्य, युद्ध और वध जैसे नायक के लिए बाधक भूमिका का उल्लेख किया है।

‘‘क्वचिद्धर्मः क्वचित्क्रीडा क्वचिदर्थः क्वचित्छमः।
क्वचिद्धास्यं, क्वचिद्युद्धं क्वचित्कामः क्वचिद्वध।।’’
(नाट्य.-1/108)

आचार्य भरत ने द्वंद्व, संघर्ष एवं प्रतिस्पर्धा इनजैसी नायक विरोधी भूमिका अपनाई है। इससे हम प्रतिनायक के प्रति उनके दृष्टिकोन को समज सकते है।

2. आचार्य धनंजय और प्रतिनायक

आर्चार्य धनंजय ने प्रतिनायक की भूमिका का स्पष्टरूपसे स्वीकार किया इतनाही नही तो उन्होने प्रतिनायक के लक्षण सबसे पहले बताये और उनकी विशेषतायो का भी वर्णन किया।

आचार्य धनंजय के अनुसार प्रतिनायक के लक्षण -

''लुब्धो धीरोद्धतः स्तब्धः पापकृद्व्यसनी रिपुः।।
'तस्य नायकस्येयंभूत प्रतिपक्षनायको भवति,
यथा रामयुधिष्ठिरयो रावणदुर्योधनौ।।''
(दशरूपकम् - 2/9, वृत्तिभाव)

आचार्य धनंजयने प्रतिनायक को 'रिपु' संज्ञा दि है। 'रिपु' संज्ञा के साथ साथ आचार्यने प्रतिनायक के विशोषणों में लुब्ध, स्तब्ध, पापकृद्, व्यसनी तथा 'धीरोद्धत' इन विशेषणो का भी अन्तर्भाव किया है। आचार्य धीरोद्धत नायक के बारे में लिखते है।

''दर्पमात्सर्यभूयिष्ठो मायाच्छद्मपरायणः।।
धीरोद्धातस्त्वहङ्कारी चलश्चण्डो विकत्थनः।''
(दशरूपकम् 2/5, 6)

धीरोद्धत नायक घमण्ड (दर्प) और ईर्ष्या (मात्सर्य) से भरा हुआ, माया और कपट से युक्त घमण्डी, चंचल, उग्र स्वभाव और आत्म गुणों की प्रशंसा करने वाला होता है।

उपरोक्त लक्षणो से यह ज्ञात होता है की, लक्ष्य रूपकों में प्रतिनायक की भूमिका धीरोद्धत नायक से अधिक उद्धट होनी चाहिए। इसी सन्दर्भ में आचार्य दण्डि काव्यदर्श के प्रथम परिच्छेद में लिखते है -

''वशवीर्यश्रुतदिनि वर्णयित्वा रिपोरपि
तज्जयान्नायकोत्कर्षकथन च घिनोति न।।''

अर्थात शत्रु के वंष, पराक्रम तथा पाण्डित्य आदि का वर्णन करने के पश्चात नायकद्वारा उसपर विजय प्राप्ति के माध्यम से नायक के उत्कर्ष का वर्णन करना हमे सन्तोषप्रद है।

(काव्यादर्श) टिप्पणी - नायक की महिमा को प्रकट करने के लिए प्रतिनायक का ओजस्वी वर्णन करना अतयावश्यक है। शत्रु यदि साधारण तथा निर्बल है तो नायक का उस पर विजय प्राप्त करना कुछ महत्त्व नही रखता। नायक का उत्कर्ष तभी प्रकट हो सकता है जबकि उसका विरोधी भी करीब - करीब उतना ही बलशाही हो जितना की नायक। इसी के अनुसार माघ, कुमारसम्भव, रघुवंश्, किरातार्जुनीयम आदि में कृष्ण, कार्तिकेय, राम, रघु, अर्जुन आदि नायकों के क्रमशः प्रतिद्वन्दी शिशुपाल, तारक, रावण, इन्द्र, शिव आदि भी उन्ही के अनुसार चित्रीत किये गये है। (काव्यादर्श 1/22)

उपरोक्त वर्णीत प्रतिनायक लक्षणों को 'प्रतिमानाटकम्' के माध्यम से और अच्छी त-हेसे समज लेते है।

भासविरचित प्रतिनाटकम् रामायणपर आश्रित है। इस नाटक की कहाणी राम के अभिषेक के साथ प्रारंभ और अभिषेक के साथ ही समाप्त होती है। 'प्रतिनायक' केनायक के विषय में विद्वानो में मतभेद है, कुछ विद्वान राम को नायक मानते है, तो कुछ भरत को। महामहोपाध्याय टी - गणपती शास्त्री के अनुसार प्रतिमाणाटक के नायक राम है। लेकिन मेरे विचार से पूरे नाटक में जो किरदार सबसे जयादा स्नेहमयी और नार्मिक है वह भरत का है। इसलिए भरत को नायक मानने में कोई गलती नही, ऐसा मुझे लगता है। नाटक में कुछ ऐसे प्रभावशाली प्रसंग है। जो भरत को नायक सिद्ध करते है। जैसे की सीताहरण के प्रति राम की भावनाओं के चित्रण का अभाव और इधर भरत पर उसकी क्रोधयुक्त दुःख की तिव्र अभिव्यक्ति से भरत को नायक सिद्ध करते है।

रावण की भूमिका की निर्मिती भासद्वारा भरत के चरित्र को उठाव प्राप्त करणे के लिए हुई है ऐसा प्रतित होता है। जैसा की पहले उल्लेख किया गया है, सीताहरण की प्रतिक्रिया राम के मन पर उतनी प्रबल नही हैं, जितनी भरत के मन पर है। इससे यह कहा जा सकता है की नाटककार भास ने कुछ संक्षिप्त मात्र प्रभावशाली दृष्यों का निर्माण करके भरत के चरित्र के प्रभावशाली बनाने की पूरी कोशिश की है। सीता प्राप्ती के लिए राम क्या कर रहे है, इससे ज्यादा उन्हे इस बात में अधिक रूचि है कि भरत क्या कर रहे है। वही उन्होने दिखाया।

रावण की भूमिका से पता चलता है कि रावण सीता का अपहरण क्यों करता है। खर नाम के राक्षस को मारणे के बाद राम ने जो शत्रुता मोल ली है, वह सीताहरण होने का कारण है।[2] रावण के लिए सीता का अपहरण करना इतना आसान नही था, क्योंकि रावण को पता था की सीता पतिव्रता है। जब रावण अतिथी के रूप में राम से मिलने आता है, तो राम रावण का सत्कार करने का सीता को आदेष देते हैं[3], जिस पर रावण सीता को ऐसा

करने से रोकता है[4], उसे डर है कि उसका रहस्य उजागर हो जाएगा। जिसके बाद रावण साजिष रचकर राजा दशरथ के श्राद्ध के लिए कृष्ण हिरण का शिकार करने राम को भेजने के बाद रावण सीताका अपहरण करता है।[5] रावण का यह व्यवहार उसके (प्रतिनायक) के धीरोद्धत स्वभाव के अनुकूल है। रावण द्वारा सीता के हरण के दौरान विकत्थना के साथ रावण का अहंकार भी देखने मिलता है। वह कहता है -

''आः रावणस्य चक्षुर्विषयमागता क्व यास्यिसि''

(प्रतिमानाटकम् अंक 5)

यहा उसके वासना की अपेक्षा अहंकार जादा है। रावण अपनी वासना भी प्रकट करने से नही डरता, एक पल तो वह अपनी वासना भी बोल देता है -

'विगणय मां च यथा तवार्यपुत्रः।'

(प्रतिमानाटकम् 5/19)

अर्थातः अब तुम अपने कुलीन आर्यपुत्र के स्थान पर मुझे अपना पति मानो, ऐसा कहकर वह सीता को श्राप देने के लिए विवश करता है, और क्रेधित होकर सीता कहती है 'शप्तोऽसी'। उस समय अहंकारी रावण उसे कहता है -

जब सूरज की किरणे उसे भस्म नही कर सकती है, तो सीता का श्राप उसका क्या बिगाड सकता है।[6] इसी प्रकार रावण सीताहरण चोरोके समान न करके घोषणा करके करता है –

''बलादेव दशग्रीवः सीतामादाय गच्छति।
क्षात्रधर्मे यदि स्निग्धः कुर्याद् रामः पराक्रमम्।।''

(प्रतिमानाटकम् 5/21)

अर्थात - हे जनस्थान के निवासियों। मै सीता का हरण करके ले जा रहा हू, यदि रावण में क्षत्रिय तेज है, तो उन्हें पराक्रम दिखाने दो।''

सीताहरण की दुःखद घटना और रावण के दुष्कर्म राम को उत्तेजीत नहीं कर सके। मेरी राय में यहां राम की वीरता, पराक्रम जैसी चीजें अपेक्षीत थी। लेकिन वैसा कुछ भी नहीं हुआ। शायद राम के औदात्य के कारण वैसा हुआ होंगा, या कवि भास को ऐसा अभिष्ट नही होंगा। अस्तु

सीता के अपहरण का रहस्य छुपाने के कारण सुमंत्र को राजा दशरथ की शपथ दिलवाने पर मजबूर कर[7] भरत को पता चलता है कि सीता का अपहरण हो गया है। और वह अपना सारा गुस्सा कैकेयी पर उतारते है। यही वह क्षण है जहा भरत का क्रेध अमर्याद हो जाता है, और इसी स्थापन पर श्राप और चौदह दिनों के स्थान पर चौदह वर्षो की गलती का ज्ञान भरत को हो जाता है। यहां कैंकेयी भी अपने मन की बात बताती है। इन सभी संभाषणों के बाद भरत रावण की हत्या की योजना बनाते है और राम की मदत करने के लिए निकल जाते है।[8]

इस प्रकार सीताहरण पर राम की मनःस्थिती का समुचित चित्रण न होना तथा भरत पर उसके क्रोध जनित दुःख की अभिव्यक्ति उन्हे एक नायक सिद्ध करती है। और इसलिए सीता का अपहरण और धीरोद्धत प्रतिनायक को अलंकृत ऐसे रावण के चरित्र को अभिव्यक्त करके कवि भास भरत के चरित्र को अधिक प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने में सफल होते है।

तात्पर्य यह है कि नायक के चरित्र को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए प्रतिनायक का चरित्र महत्त्वपूर्ण है, लेकिन यहा यह राम के नही बल्कि भरत के चरित्र पर प्रतिबिंबित होता है। यहा भरत की करूणा की अपेक्षा रावण का चरित्र, उसकी भूमिका संक्षिप्त होते हुए भी अत्यन्त प्रभावशाली है। अन्य नाटकों की अपेक्षा यहाँ रावण की भूमिका सशक्त और भरत के चरित्र चित्रण की दृष्टि से पर्याप्त उपयोगी है।

3. निष्कर्ष

उपरोक्त माध्यमसे हम इस निष्कर्ष पर पोहोचते है कि प्रतिमानाटक में भरत को जो कि नायक है, प्रतिनायक रावणं एवं उपनायक लक्ष्मण के चरित्र के माध्यम से अधिक प्रभावशाली उभारा गया। कवि सफलतापूर्वक नायक भरत के चरित्र को उस सीमा तक उठा सके जहा से राम की तुलना में एक अधिक सशक्त चरित्र बन सके। कवि भास के इस सफलता के कारण ही भरत राम से भी अधिक सशक्त पात्र के रूप में हमारे सामने आते है।

4. सन्दर्भ

1 नाटकं सप्रकरणमङ्को त्यायोग एव चं।
भाणः समवकारश्च वीथीप्रहसनं डिमः।
ईहामृगश्च विज्ञेयो दशमों नाट्यलक्षणे।

('नाट्यशास्त्रम्' 20/2, 3बाबुलाल शुक्ल शास्त्री, चौखम्भा संस्कृत संस्थान)

2 नियतमनियतात्मा रूपमेतद् गृहीत्वा खरवधकृतवैरं राघवं वचयित्वा।
स्वरपदपरिहीणां हव्यधारामिवाहं जनकनृपसुतां तं हर्तुकामः प्रयामि।।

('प्रतिमानाटकम्' 5/7 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदया भवन)

3 रामः - मैथिली ! पाद्यमानय भगवते।

सीता - यदार्यपुत्र आज्ञापयति।

राम - शुश्रूषय भगवन्तम्।

('प्रतिमानाटकम्' अंक 5 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

4 रावणः (मायाप्रकाशनपर्याकुलो भूत्वा) भवतु भवतु।

ठयमेका पृथित्वां हि मानुषीणामरून्धती।

यस्या भर्तेति नारिभिः सत्कृतः कथ्यते भवान्।।

('प्रतिमावाटकम्' 5/8 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

5 माययापहृते रामे सीतामेकां तपोवनात्।

हरामि रूदतीं बालाममन्त्रोक्तामिवाहुतिम्।

('प्रतिमानाटकम्' 5/15 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

6 योऽहमुत्पतितो वेगान्न दग्धः सूर्यरश्मिभिः।

अस्याः परिमितैर्दग्धः शप्तोऽसीत्येभिरक्षरैः।।

('प्रतिमानाटकम्' 5/20 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

7 तात! किं गूहसे? स्वर्ग गतेन महाराजपादमूलेन

शापितः स्याः, यदि न सत्यं ब्रूयाः।

('प्रतिमानाटकम्' अंक 6 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

8 भरतः - अनुगृहीतोऽस्मि। आपृच्छाम्यत्रंभवतीम्

अद्यैवाहमार्यस्य साहाय्यार्थ कृत्स्नं राजमण्डलमुद्योजयामि।

('प्रतिमानाटकम्' अंक 6 आचार्य श्रीरामचन्द्रमिश्रः चौखम्बा विदयाभवन)

The Chinese Dai Rāmāyaṇa (Lanka Sip Ho) and the Lao Rāmāyaṇa (Phra Lak Phra Lam): A Comparative Analysis

ISBN: 978-1-960627-06-3

Irfan Ahmad
Sikkim (Central) University, Gangtok.
(iahmad@cus.ac.in)

Among some adaptations of the Rāmāyaṇa hereto getting less scholarly attention are the Chinese Dai Rāmāyaṇa 'Lanka Sip Ho (LSH)' and the Lao Rāmāyaṇa 'Phra Lak Phra Lam (PLPL)'. Earlier, the author of this article has engaged in the comparative textual study of LSH vis-à-vis Vālmīki Rāmāyaṇa (Ahmad 208-210). In the process of tracing the circulation of the epic from India to China, the author is exploring various Southeast Asian Rāmāyaṇas. Geographically, Laos borders Yunnan, China. The author has found striking similarities and differences between the two epics, which could be a valuable addition to the discipline of the Rāmāyaṇa Studies.

1. Introduction

The *Rāmāyaṇa*, traditionally attributed to Maharṣi Vālmīki, is regarded as the oldest *mahākāvya* (great epic) in world literature. Over the centuries, it has travelled beyond India, influencing various cultures in Southeast Asia and beyond. The prominent versions of the *Rāmāyaṇa* found in Southeast Asian countries are as follows — Thailand: *Ramakien*; Indonesia: *Kakawin Rāmāyaṇa*/ *Rāmāyaṇa Java*; Malaysia: *Hikayat Siri Rāma*; Cambodia: *Reamke*r; Laos: *Phra Lak Phra Lam*; Myanmar: Yama Jatav and Philippines: *Maharadia Lawana* (A Critical Inventory of Rāmāyaṇa Studies in The World, X). In fact, Padma Bhushan Acharya Satya Vrat Shastri has famously translated Ramakien, Thailand's localised *Rāmāyaṇa*, into Sanskrit, namely *Sri Ramakirti Mahakavyam* (Shastri).

These versions incorporate native cultural and religious influences, reshaping the epic narrative to fit their respective traditions. This study provides a comparative textual analysis of the Chinese Dai and Lao versions, highlighting their historical evolution, narrative structures, religious adaptations, and thematic variations.

2. Historical Development and Transmission

2.1 Chinese Dai Rāmāyaṇa (LSH)

It is predominantly found in Xishuangbanna, Dehong, Simao, and Lincang in Yunnan province, China, among the Dai ethnic group and is written in the Tai lue language (Daile script) derived from Brāhmī. It is one of a minimum of four native versions of the *Rāmāyaṇa* extant in Yunnan, China (Dao 218). It is the first and the most prominent version of native *Rāmāyaṇa* published in China. However, the discovered manuscript of the translated text is lost (Dao 218), perhaps during the Cultural Revolution in China from 1966 to 1976. The tradition of the *Rāmāyaṇa* in Dai culture is believed to have arrived between the 6th and 8th centuries CE with the spread of Theravāda Buddhism (Jiang 94). The earliest available manuscript of one of the extant versions quite similar to LSH, written on palm leaves, dates back to 1312 CE, which was written by Sudawan and transcribed by 'Pho Phra In' (Dao 218). However, the author's name is not mentioned in the Chinese translation of LSH, nor can it be found in other sources. Hence, the author's name seems to be unknown. The Dai monks recite it in temples or narrate it in Buddhist religious gatherings, to preach Buddhism.

2.2 Lao Rāmāyaṇa (PLPL)

Popular in Laos and parts of Thailand, the *Phra Lak Phra Lam* is written in the Lao language in Tai Tham script, also derived from Brāhmī. It is composed in rhythmic prose (Sahai, V. 1/1, 5). It is one of the three native versions of the *Rāmāyaṇa* extant in Laos and also called the Vientiane version (Toru 33), as the manuscript was found in Vientiane, the capital city of Laos (Sahai, V. 1/1, 1). Theravada Buddhism reached Laos in the seventh and eighth centuries (*Laos: A Country Study). Hence,* the epic could have arrived simultaneously, either written or oral. The most comprehensive version was compiled in 1850 by an author named Buddhaghoshacharya (Sahai, V. 1/1, 2). It is a Jataka tale, portraying Rāma as a Bodhisattva. It is also called the Rāma Jataka (Sahai, V. 1/1, 9).

3. The Primary Sources for This Research

The Chinese Dai Rāmāyaṇa '*Lanka Sip Ho* (LSH)' was discovered in the Yunnan province of China in 1956 (Fu 40), which was first translated into Chinese in verse form in 1981. The translation was published by Yunnan Ethnic Minorities Literature Research Institute under the Chinese Institute of Social Sciences in 1981 with the transliterated title Langa Xihe in Mandarin (兰嘎西贺). The Chinese translation of the original text is 237 pages long (*Lanka Sip Ho*). This translated text (translation

from Tai Lue into Chinese) is the basis of this study. Notably, this *Rāmāyaṇa* is also missing from Camille Bulcke's celebrated book—*Ramakatha: Utpati aur Vikas* (Bulcke).

The Lao Rāmāyaṇa *'Phra Lak Phra Lam* (PLPL)' was first translated into English in prose form in 1996 (Sahai) in 688 pages in total, which is the primary source for its study.

4. Major Similarities and Differences

4.1 Form and Structure

Both are *Bauddh Rāmāyaṇas;* however, though PLPL is a Jataka story, LSH is not. In the Dai epic, Rāma is a semi-divine hero, while in the Lao epic, Rāma is a Bodhisattva. The core stories in both the epics are similar to the Vālmīki Rāmāyaṇa. The setting of LSH is in Yunnan, China and Lanka, while the setting of PLPL is in Laos, Cambodia and Lanka. Major characters of the *Rāmāyaṇa*, by and large, are present in both the epics; however, whereas all four sons of King Daśaratha are mentioned in LSH, only two sons, Rāma and Lakṣmaṇa are mentioned in PLPL. In the latter text, Rāma always rides a particular divine Horse named Mahnikap, which could be inspired by Uccaiḥśravas —the divine horse of the Vedic literature. LSH begins with the story of Lanka and Rāvaṇa, while PLPL commences with the story of King Daśaratha.

4.2 Episodes and Narration

4.2.1 Birth of Daśaratha's Sons:

In the Dai version, the wives of Daśaratha get bananas as blessings from an anonymous forest-dwelling sage to beget children. The sage here is shown as a generous character who grants the boon in the form of bananas for the queens in return for the service offered by King Daśaratha, who helps the sage recover after the latter is hit by an arrow (*Lanka Sip Ho* 45). This episode resembles an episode in *The Vālmīki Rāmāyaṇa* (the *Rāmāyaṇa*) where the son of a forest dweller is mistakenly hit by an arrow shot by Daśaratha (2.57.27).

In the Lao version, Daśaratha prays Indra for powerful sons to take revenge upon Rāvaṇa who has abducted his daughter. As per the directions of Indra, two *devaputras* enter into the womb of his consort and get themselves conceived (Sahai, V. 1/1, 96-97).

4.2.2 The Birth of Sītā

In LSH, Sītā, who in her previous birth lived like a *sanyāsinī* (a recluse living in a forest), self-immolates by jumping into fire when Rāvaṇa tries to outrage her modesty (Lanka Sip Ho 35-37). Later, she grows as a forest tree, which happens to turn into a beautiful baby girl. It is important to note that this narration about the previous birth of Sītā is quite similar to the account of Vedavatī, the previous incarnation of goddess Sītā (*The Vālmīki Rāmāyaṇa* 7.17.8). According to LSH, in order to avoid the curse of the *sanyāsinī*, Rāvaṇa throws the baby girl into a river on the advice of one of his ministers. She is ultimately located and saved by King Janaka (*Lanka Sip Ho* 52).

In the Lao version, Sītā originally is Sujātā, the wife of Indra who is violated by Rāvaṇa (Sahai, V. 2/1, 85). She enters into the womb of Rāvaṇa's consort and takes birth as his daughter to ultimately teach him a lesson (Sahai, V. 2/1, 86). After birth, she is cast adrift by Rāvaṇa on the advice of Vibhīṣaṇa to avoid a bad omen, as her consort dreams of the daughter killing Rāvaṇa (Sahai, V 2/1, 86-89). Later, Indra saves her by making a magical boat for her (Sahai, V. 2/1, 90), and she, ultimately, is adopted by a hermit in Jambudwipa (Sahai, V. 2/1, 107-108). Interestingly, Sītā being Rāvaṇa's daughter seems to be a motif influenced by several non-Valmkian Indian texts like *Vāsudevahindī*, *Daśāvatāracaritā* of Kṣemendra, *Devī Bhāgavata Purāṇa*, *Adbhuta Rāmāyaṇa*, Guṇabhadra's *Uttarapurāṇa*, and Saṅghadāsa's *Jain Rāmāyaṇa* (Singaravelu 235-240).

4.2.3 The Marriage of Rāma and Sītā

LSH speaks of an anonymous forest dwelling sage who brings Rāma to the court of King Janaka. On being asked if he would be willing to marry off his daughter to a poor boy provided if the latter wins the competition, the king replies in the affirmative *(Lanka Sip Ho* 57). The Dai text also informs that Rāma does not break the bow but shoots three arrows (Lanka Sip Ho 58).

As per the Lao text, Rāvaṇa learns about Sītā's beauty through hunters (Sahai, V. 2/1, 113). However, he fails to lift the bow of the hermit, hence doesn't get Sītā's hand in marriage (Sahai, V. 2/1, 120). Later, Rāma successfully lifts the bow, and the hermit agrees to give Sītā's hand to him (Sahai, V. 2/1, 147). Notably, no particular *Svayaṁvara* was organised by the hermit.

4.2.4 The Vanavāsa

LSH refers to only twelve years for the exile in forest (Lanka Sip Ho 74). However, there exists no such episode at all in PLPL. In the latter text, Sītā is not abducted during the course of *Vanavāsa*, but during her journey back to Rāma's palace after her marriage (Sahai, V. 2/1, 156-159).

4.2.5 Lakṣmaṇa Rekhā

In LSH, the episode of *Lakṣmaṇa Rekhā* has a diversion from the popular concept of Lakṣmaṇa Rekhā in the sense that Lakṣmaṇa draws a circle around Sītā using a bow and requests the earth god to take care of her, while going away to see Rāma. When Rāma realises the trap of the golden deer, he hits the earth using his leg, in frustration and indignation, hence offending the earth goddess who withdraws her protection of Sītā (*Lanka Sip Ho* 108). Interestingly, there exists no narration

of *Lakṣmaṇa Rekhā* in *Rāmāyaṇa* (critical edition), where Lakṣmaṇa requests the divinities of the forest to protect Sītā, while going away to see Rāma. Perhaps one of the first, if not the first narration of *Lakṣmaṇa Rekhā*, is found in *Ranganatha Rāmāyaṇa* (153), originally in the Telugu language.

In the Lao epic, there is no mention of the *Rekhā*. However, there exists a similarity with LSH as Lakṣmaṇa entrusts Sītā to the earth goddess for her protection while he goes away to trace Rāma chasing the golden deer (Sahai, V. 2/1, 158).

4.2.6 Episode of Jatāyu

In LSH, Jatāyu has been repalced with large crows. LSH lacks the episode of Jatāyu (Regarded as supreme among birds), and while Rāma along with Lakṣmaṇa searches for his lost wife, the large crows deadly injured by Phammachak tell Rāma that she has been kidnapped by Rāvaṇa, and that they tried their best to fight with him, to repay the gratitude towards Rāma, as he, once, had forgiven them for their crimes. Even more interesting might be that the injured crows beg Rāma to give new life to both the injured and the dead ones, and he obliges and they get their life and vitality back (*Lanka Sip Ho* 112).

In PLPL, the episode of Garuḍa is present, who tries to rescue Sītā from Rāvaṇa however is heavily injured. Later Rāma heals him back (Sahai, V. 2/1, 165-166). Hence this episode finds a twisted similarity with that of LSH.

4.2.7 The Buffalo Demon

In the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, there is mention of the demon named *Dundubhi*, who had taken the form of a buffalo (4.11.7). He was ultimately slain by the monkey king Bālī (4.11.38-39).

Similarly, in the Dai Rāmāyaṇa, there is a character called *Bao Jiao Niu* (宝角牛), the golden horned buffalo, which closely resembles *Dundubhi* (*Lanka Sip Ho* 88; Ahmad, *Apni Maati* 116-119). This tyrant buffalo is also killed by Bālī in this epic (*Lanka Sip Ho* 98). In the Lao Rāmāyaṇa, this male Buffalo is named Dhorabi. He has acquired magical science when a hermit is teaching Bālī and Sugrīva. Dhorabi too is killed by Bālī in a duel (Sahai, V. 2/1, 209).

4.2.8 Sugrīva-Bāli Duel

As per LSH, before the final duel between Sugrīva and Bāli, Rāma colours the face of Sugrīva with red betel nut to differentiate him from Bāli while shooting the latter with an arrow (*Lanka Sip Ho* 117). Betel nut is abundant in the Dai region (Zhu 2), and hence has been associated with this event. In fact, "material remains indicate that by the middle of the first millennium B.C.E., betel chewing was practised from the Mekong Valley along the coastline of Vietnam to the Red River Delta from where it diffused into South China (Zumbroich 110)." Since the Dai region, geographically, is situated in the Mekong Valley itself, as the river passes through it (*Mekong River Commission* 5), the betel nut must have been endemic here at least since the middle of the first millennium B.C.E

In the Lao text, whatever visible marks Sugrīva puts on himself to differentiate from Bālī, the latter copies the same (Sahai, V. 2/1, 220). So, Sugrīva ultimately paints his sole with lime, which is not visible to Bālī, and hence, the latter is identified and shot by Rāma (Sahai, V. 2/1, 221).

4.2.9 The Burning of Laṅkā

While in LSH, Hanumān single-handedly burns Laṅkā (*Lanka Sip Ho* 137); in a unique twist in PLPL, he does so along with his cousin brother (Sahai, V. 2/1, 254).

4.2.10 Indrajit's Alliance with Rāma

In LSH no such alliance is mentioned, and in an interesting twist of events, Indrajit is ultimately killed by Rāma (*Lanka Sip Ho* 161). However in a further twist, in PLPL, Indrajit along with his uncle Vibhīṣaṇa allies with Rāma, before the war as he despises his father's conduct of abducting someone's wife (Sahai, V. 2/1, 261).

4.2.11 The Building of Rāmasetu

An interpolation can be observed in an episode of LSH which deals with building of the bridge over the sea to reach Laṅkā. The way to cross over is constructed three times and each time it is knocked down by a giant turtle. This angers Rāma and he asks Hanumān to break the claws of the turtle without killing it (*Lanka Sip Ho* 143-144).

In PLPL this interpolated episode has a further twist. During the construction of the bridge, not turtles but water nymphs destroy a section of the bridge which are caught red handed by Hanumān and other monkey officers, and they fall in love with each other (Sahai, V. 2/1, 268-269).

4.2.12 Fake Dead Body of Sītā

In LSH, Yueyaka, a *pishachini*/ a man-eating demoness is commanded by Rāvaṇa to turn into a fake Sītā and float as a dead body over the sea near Rāma's camp. Rāma gets highly dejected and heart broken after seeing the floating body, but Hanumān is doubtful. Vibhīṣaṇa ultimately uses divination techniques to reveal the truth (*Lanka Sip Ho* 147-149).

This episode is quite similar in PLPL, where one of Rāvaṇa's officers turns a banana trunk into dead Sītā to deceive Rāma (Sahai, V. 2/1, 271). Interestingly, according to *Baal Rāmāyaṇa*, once Rāvaṇa throws Sītā's fake head on the sea-shore, to demoralise Rāma (*Baal Rāmāyaṇa* 247).

4.2.13 The Abduction of Rāma

Another major diversion exists in the form of Waiyala, a *mahamayavi* (full of deceitful illusion) son of Rāvaṇa, who furtively reaches Rāma's camp in night and makes everyone, including Rāma and Lakṣmaṇa, fast asleep with his magic and then kidnaps both of them. However this episode is similar to the episode of Mahirāvaṇa (*Krittibas Rāmāyaṇa* 345), who secretly carries away Rāma and Lakṣmaṇa to the netherworld in night, after making them asleep through his magic. Interestingly Mahirāvaṇa too is regarded as a son of Rāvaṇa (*Krittibas Rāmāyaṇa* 337).

As per PLPL, the king of the netherworld makes everyone in Rāma's camp asleep using his magic spell, and cages Rāma in *Patala*. Hanumān retrieves him back with the help of Vibhīṣaṇa and the king becomes a friend of Rāma (Sahai, V. 2/1, 278-283).

4.2.14 Search for the Magical Herb

In LSH, Lakṣmaṇa falls unconscious on being hit by the spear of Kumbhakarṇa. Then Vibhīṣaṇa suggests that the only cure is a herb called Swarnabuti found on a golden mountain named Gāndhāmardan situated far away in the north. Hanumān flies to bring the herb, but unable to identify the medicinal plant, he lifts the mountain and carries it back (*Lanka Sip Ho* 166-168).

In PLPL too, Hanumān in order to fetch the life saving herb brings the whole Mount Gāndhāmardan wrapped in his tail, as the herb doesn't cooperate, and rather plays tricks on him, making him annoyed (Sahai, V. 2/1, 297).

4.2.15 The Rāma-Rāvaṇa Battle

During the decisive battle between Rāma and Rāvaṇa, Vibhīṣaṇa tells Rāma that Rāvaṇa could be killed only by his own celestial bow which is gifted to him by their father Mahābrahmā. However, his ten heads must be collected in the celestial tray of Indra to avoid the destruction of the earth. Hanumān manages to get the bow of Rāvaṇa and the tray of Indra. When Rāvaṇa sees Rāma equipped with that heavenly bow, he begs for his life (*Lanka Sip Ho* 181-186). Finally, Rāma kills him by that divine bow, and Hanumān collects all his ten heads in the Indra's tray and immerses them in the sea (*Lanka Sip Ho* 215-217).

In PLPL, Rāma ultimately shoots the diamond piercing arrow brought by Hanumān from the netherworld, knowing the secret from Vibhīṣaṇa and Rāvaṇa is finally killed (Sahai, V. 2/1, 301-302).

4.2.16 The *Agni Parīkṣā*

As per LSH, ultimately Rāma meets his wife Sītā in Lanka. He tells her, he completely believes in her chastity however others might have doubts. She replies, she would stand in fire to prove her piousness. The fire doesn't harm her, and interestingly she beckons her husband to come inside the fire and take her back as it would be his trial of love towards her by the same fire. They both come out of fire together, harmlessly (*Lanka Sip Ho* 199). Unfortunately, the author couldn't find any Indian root for this interesting diversion, and the same remains to be explored. Interstingly, the episode of Sītā's trial by fire is not present in PLPL.

4.2.17 No Puṣpaka Vimāna

As per LSH, Rāma returns back to his kingdom via *Rāmasetu* (*Lanka Sip Ho* 201) while in PLPL too, he marches back via the same route (Sahai, V. 2/1, 307). Hence, the episode of the flying vehicle is missing in both the epics.

4.2.18 Rāvaṇa's Portrait

LSH mentions the episode of Sītā drawing a portrait of Rāvaṇa on the request of her maids to satisfy their curiosity, which angers Rāma (*Lanka Sip Ho* 206-208). This episode is also found in PLPL, where she makes the drawing of Rāvaṇa on request of the palace maidens, inviting Rāma's fury (Sahai, V. 2/1, 313).

4.2.19 Birth of Lava and Kuśa

During her banishment in the forest, Sheela gives birth to a baby boy named Lava. One day when the sage is asleep, she accompanies her baby to gather fruits. Unaware of her being away with the child, the sage on waking up gets worried after not finding the young one. Thinking that someone has stolen the child, the sage panics and creates a look-alike baby (*Lanka Sip Ho* 215-217). The boy is named Shyangwa which means look-alike baby in Chinese. A very similar version of the story with regard to the birth of Sītā's sons also appears in the *Ānanda Rāmāyaṇa* (*Anand Rāmāyaṇam* 311).

In the Lao text, too, Lava alone is the womb-born son of Sītā. The hermit, the foster father of Sītā, creates a wooden image of Lava so that she doesn't feel lonely when the baby goes out to play. On the request of Lava to have a playmate, the hermit creates a mind-born son out of the image, who is Kuśa (Sahai, V. 2/1, 317).

4.2.20 The Final Reunion

As per LSH, at the age of seven, one day, the two boys go to the town to sell vegetables. Hanumān, who is now a tax collector at the city, asks for tax on the sale. Finding him unaccommodating, the two boys treat him badly. When Rāma comes to know of this, in order to punish them, he releases seven horses with a message that whosoever stops the horses, by not accepting his rule, will have to fight against him. The horses happen to destroy the vegetables grown by the boys, and so are captured by them. The boys defeat Lakṣmaṇa and even Rāma in the ensuing fight. They also tie Hanumān with a rope and take him to their mother. Sītā immediately recognises him. Rāma apologises profusely and pleads for the company of his wife and

children. After much persuasion, Sītā agrees to the same and they return to the palace where they are given grand welcome by the family and subjects. Sītā is again accorded the honour of a queen who together with Rāma adorns the throne (*Lanka Sip Ho* 217-227). LSH ends with this episode of the final reunion of the family amid vibes of cheers.

In PLPL, on the boys' request, Sītā takes leave of the hermit to visit their father. On way, the boys help a farmer's family sell cucumbers. They refuse to pay any taxes to the men of Hanumān, who now is a tax collector appointed by Rāma (Sahai, V. 2/1, 313). Hence, in their innocence, they also happen to pick a fight with Hanumān (Sahai, V. 2/1, 319-320). In the ensuing fight, the children defeat even Laksaman and the fight with Rāma ends in a draw (Sahai, V. 2/1, 321-322). Ultimately, Sītā reveals the truth, and Rāma apologises (Sahai, V. 2/1, 322-323). Thus, this Lao Rāmāyaṇa too meets a happy ending with the blissful final reunion of the family (Sahai, V. 2/1, 323).

5. Conclusion

The Dai and Lao versions of the *Rāmāyaṇa*, while maintaining the core narrative of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, have been deeply transformed by Buddhist, linguistic, and cultural influences. The Chinese Dai (LSH) and the Lao versions (PLPL) reflect a strong Buddhist reinterpretation. Both epics have a great deal of similarity, along with unique and remarkable differences. The denouement of both epics has a happy ending. These adaptations illustrate how the *Rāmāyaṇa* evolved as it travelled beyond India, merging with local traditions and belief systems.

Future Research: Further comparative studies between Southeast Asian Rāmāyaṇas and their textual sources could illuminate how oral traditions and manuscript cultures influenced these adaptations.

6. References

1. A Critical Inventory of Rāmāyaṇa Studies in the World, Volume II (Foreign Languages). Krishnamoorthi, K. and S. Jithendara Nath, editors. Sahitya Akademi, 1993.
2. Ahmad, Irfan. "Śri Rāma in Chinese Dai Rāmāyaṇa: Origins of Certain Major Interpolations in the Epic Compared to Vālmīki Rāmāyaṇa". in Rāmāyaṇa and Modern Management. Edited by Omprakash Gupta et al., Shri Ram Charit Bhavan, Houston, USA, 2024.
3. Ahmad, Irfan. "चीनी ताए रामायण 'लंका सिप हो' में भारतीय रामायणों से प्रेरित व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का अनुवाद: एक अंतर्वस्तु विश्लेषण". Apni Maati (UGC Care listed), Vol-54, Chittorgarh, Sep 2024.
4. Anand Rāmāyaṇam (आनंद रामायणम), Ramtej Pandey, tr.& ed., Pandit Pustakalaya: Kashi, 1st edn., 1958,
5. BalaRāmāyaṇam Rajshekhara Virachitam (राजशेखरविरचितम बालरामायणम). Edited and trans. by Ganga Sagar Rai, Chaukhamba Surbharti Press, Varanasi, 1984.
6. Bulcke, Camille, Ramakatha: Utpati Aur Vikas रामकथा: उत्पति और विकास. Hindi Parishad Press, Allahabad University, 1950
7. Dao, Sirui. 'The Cultural Influence of Sipsong Panna on Thailand Since the 1980s: The Case of the Lue Literary Work the Kham Khap Lanka Sip Hua', 13th International Conference on Thai Studies - 'Globalised Thailand? Connectivity, Conflict and Conundrums of Thai Studies, 15-18 July 2017. Chiang Mai: Thailand, p. 218.
8. Fu Guangyu, 'Luomoyanna zai Taibei he Yunnan (Rāmāyaṇa in Northern Thailand and Yunnan)', Minzu Wenxue Yanjiu, vol. 2, 1997.
9. Jiang Li, "Daizu wenhua shenfen yu minzu xinli yanjiu——yi《Langaxihe》dui《Luomoyanna》zhi bianyi yu chuangxin wei shijiao (A Study of Dai Cultural Identity and Ethnopsychology: From the Perspective of the Variation and Innovation of the Lanka Sip Ho with regards to Rāmāyaṇa)", Guizhou Daxue Xuebao (Social Science Edition), 28 (6), 2010, p. 94.
10. Lanka Sip Ho (Langa Xihe), Dao Xingping, et al., tr., Yunnan People's Publishing House: Kunming, 1981.
11. Laos: A Country Study. Andrea Matles Savada, ed. Washington: GPO for the Library of Congress, 1994. https://countrystudies.us/laos/4.htm. Accessed 15 Mar. 2025.
12. Mekong River Commission (2005). "Overview of the Hydrology of the Mekong Basin" (PDF). MRC, Vientiane, Laos, p. 5, http://archive.iwlearn.net/mrcmekong.org/download/free_download/Hydrology_report_05.pdf, accessed 10 Mar. 2025.
13. Ranganatha Rāmāyaṇa (रंगानाथ रामायण). Trans. by A.C. Kamakshi Rao. Edited by Avadhanandan. Bihar Rashtrabhasha Parishad, Patna, 1961.
14. Sahai, Sachchidanand, Trans. The Buddhist Rāmāyaṇa: Phra Lak Phra Lam (Original Text, Translation and Critical Study). Vol 1, Part 1, Buddhist World Press, Delhi, 2017.
15. Sahai, Sachchidanand, Trans. The Buddhist Rāmāyaṇa: Phra Lak Phra Lam (Original Text, Translation and Critical Study). Vol 2, Part 1, Buddhist World Press, Delhi, 2017.
16. Shastri, Satya Vrat. Śri Rāmakirti Mahakavyam (श्रीरामकीर्तिमहाकाव्यम्). Shivalik Prakashan, 2020.
17. Shri Krittibas Rāmāyaṇa (श्री कृत्तिवास रामायण). Trans. Nandkumar Awasthi (1973). Bhuvan Vani Publishers, Lucknow
18. Singaravelu, S. "Sītā's Birth and Parentage in the Rāma Story." Asian Folklore Studies, vol. 41, no. 2, 1982, pp. 235–43. JSTOR, https://doi.org/10.2307/1178126. Accessed 15 Mar. 2025.

19. The Vālmīki Rāmāyaṇa (In Sanskrit), Vol. 2: The Ayodhyakanda, Critically edited by P. L. Vaidya, Oriental Institute: Baroda, 1962
20. The Vālmīki Rāmāyaṇa (In Sanskrit), Vol. 4: The Kisikandhakanda. Critically edited by D. R. Mankad, Oriental Institute, Baroda, 1965.
21. The Vālmīki Rāmāyaṇa (In Sanskrit), Vol. 7: The Uttarakanda, Critically edited by Umakant Shah, Oriental Institute: Baroda, 1975.
22. Toru, Ohno. Burmese Ramayana. BR Publishing Corporation, Delhi, 2000.
23. Zhu, Qinhe, et al., 'Research progress on processing technology of refined betel nut in China: A review', Processes, 11(11), 2023.
24. Zumbroich, Thomas J. "The Origin and Diffusion of Betel Chewing: A Synthesis of Evidence from South Asia, Southeast Asia and Beyond." E-Journal of Indian Medicine, vol. 1, 2007.

जीवन संजीवनी: रामायण

ISBN: 978-1-960627-06-3

स्मिता नरेन्द्र लाघावाला
(smitnar@yahoo.com)

1. प्रस्तावना

रामायण का प्रत्येक शब्द मंत्र है; औषधि है, समय रहते सदुपयोग किजीये तो जीवन साथर्क हो जाएगा। राम दरबार हमारा मार्ग दर्शन करते ही हैं; हमें हृदय से उसका स्वीकार करना चाहीये। रामायण के पात्र सहाय करने सागर रुप में साक्षात् प्रस्तुत है; पर हम एक छोटी चम्मच लेकर खड़े हैं!

2. विस्तार

पग पग पर, रामायण, स्वस्थ-सुंदर जीवन के लीये उदाहरण सहित प्रस्तुत है। एक एक कर के चंद संदेश समझे…

1. मित्रता के पाठ

- **श्रीराम -** सुग्रीव का व्यवहार हमें सीखाना है – मित्र वह है जो आपको समझे और स्वेच्छा से मदद करें। रामजी ने सुग्रीव के गले में पुष्पमाला पहनाकर उसका नाम भी सार्थक कर दीया - सुंदर ग्रीवा वाला।
- **जानकी जी और विभीषण नंदिनी:** त्रिजटा, एक दूसरे की सहायता करते हैं और माता कहकर संबोधित करते हैं। सुंदरकाण्ड के ये दोहे देखें–

अ. त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी ॥
तजौं देह, करु बेगि उपाई। दूसह बिरहु, अब नहिं सहि जाई ॥
ब. आनि काठ, रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देही लगाई ॥
सत्य करहि मम प्रीति, सयानी। सुनै को श्रवन सूल सम बानी ॥

- जटायु ने अंतीम साँस तक रघुनाथ का साथ नहीं छोड़ा। रामजी ने उनके अंतीम संस्कार कीये, और मोक्ष दिया।

2. जहाँ चाह, वहाँ राह

केवट, शबरी आदि राम दर्शनार्थ अवध नहीं जाते हैं, रामजी उनके पास पहुँच जाते हैं। आपकी भावना अच्छी है तो प्रभु स्वयं आपके पास आएंगे। माता शबरी की बात करें…

महर्षि मतंग, आश्रम शबरी को सौंपकर देवलोक जाने लगे, तब शबरी भी साथ जाने की जिद्द करने लगी। उस समय उनकी उम्र 10 वर्ष की थी। ब्रम्हर्षि ने शबरी को समझाया - 'पुत्री, इस आश्रम में भगवान आएंगे, तुम यहीं प्रतीक्षा करो।' अबोध शबरी इतना अवश्य जानती थी कि गुरु का वाक्य सत्य हो कर रहेगा। उसको हर दिन, प्रभु का इंतजार रहता था; रास्ते में फूल बिछाती, कुटीया साफ करती और मीठे कंद मूल ला कर रखती थी। गुरु का वचन सत्य हुआ। भगवान उसके धर आए। शबरी ने कहा - यदि रावण का वध नहीं करना होता तो तुम कहाँ से आते? राम गम्भीर हुए और बोले - भ्रम में न पड़ो, माँ! राम क्या रावण का वध करने आया है? रावण का वध तो लखन अपने पैर से बाण चलाकर भी कर सकता है। राम हजारों कोस चलकर इस गहन वन में आया है तो केवल तुमसे मिलने आया है, ता कि सहस्रों वर्षो के बाद भी जब कोई भक्त के अस्तित्व पर प्रश्न खडा करें तो इतिहास चिल्ला कर उत्तर दे कि इस राष्ट्र को क्षत्रिय राम और उसकी भीलवी माँ ने मीलकर गढ़ा था।

शासन, प्रशासन और सत्ता जब पैदल चलकर वन में रहने वाले अंतीम व्यक्ति तक पहुँचे, तभी वह राम-राज्य है; अंत्योदय है। समाज का प्रतिष्ठित व्यक्ति आपको जाने, वह आपकी प्रसिद्धि है, परंतु समाज का अंतीम व्यक्ति भी आपको जानें, वह आपकी सफलता है।

3. व्यावसायीक कोशल्य

1. राम - लक्ष्मण - जानकी बनवास में थे, अतः केवट ने उनसे उतराई भी नहीं ली और बड़ी विनम्रता से कहा, वापस आते समय आप जो भी देंगे, मैं ले लूंगा। ऐसा कहकर उसने भविष्य का काम भी तय कर लीया। आज के व्यवसाय में, अक्सर खरीदी करने पर Points / credit मीलती है। जीसका उपयोग आप अगली बार ही कर सकते हैं। शायद यह समझ भी केवट से ही मिली होगी। केवट परीवार तो भव सागर तर गया।
2. सुषेण तो रावण के वैध थे, फीर भी उन्होंने लक्ष्मण का ईलाज कीया; व्यावसायीक नैतीकता नहीं छोड़ी। मानवीय मूल्य सर्वोपरी।

4. साम – दाम – दंड - भेद

आज भी हम कहते हैं – कोई भी समस्या हो तो पहले समझाओ। उससे काम हो जाय तो वह सर्वश्रेष्ठ है। समझाने से बात न बने तो उसे दाम दो।

इससे भी काम न हो तो उसे दंड दो, सजा करो। संक्षेप में कहे तो, काम होना चाहीये। परंतु श्रीरामचरितमानस में तुलसी बाबा दाम के स्थान पर दान शब्द प्रयोग करते हैं। दाम में विनिमय, वाणिज्य की गंध है। वस्तुत: दान तो परम भाव है।

5. पवनपुत्र का कौशल्य

अंजनी पुत्र के पास न केवल अष्ट सिद्धि - नव निधि हैं; वे तो अष्ट सिद्धि - नव निधि के दाता है। उनके पास विशेष बुद्धि है। वे परिस्थिति के अनुसार व्यवहार करके रास्ता निकालते हैं। जैसे…

(अ) वे लंका जाते समय मैनाक, सुरसा, सिंहिका, लंकिनी से भिन्न भिन्न तरह से नीपटते हैं। सुरसा जैसे अपने मुख का विस्तार बढ़ाती थी, पवन-कुमार उसका दूना रूप दिखलाते थे, परंतु जब सुरसा ने सौ योजन का मुख कया, हनुमंत ने बहुत ही छोटा रूप धारण कर लीया। उसके मुख में प्रवेश करके तुरंत बाहर निकल आए और सिर नवाकर विदा मांगी। सिंहिका भी एक राक्षसी थी। वह हनुमान को खाना चाहती थी, अत: राम दूत ने उसे मार डाला। यह हमें सीख देते है कि दुष्ट को समझाने का कोई फायदा नहीं हैं। ऐसे लोगों का नाश ही करना चाहीये – समय और शक्ति का सदुपयोग। लंका के द्वार पर, लंकिनी को घूँसा मारा और लंका में प्रवेश किया। इसप्रकार, सभी व्यवधानों को उचीत रूप से सम्भाल लीया।

Modern Management भी यही सीखाता है - सफलता के लीये, एक रास्ता नहीं हैं: आवश्यकतानुसार निर्णय लिजीये।

(ब) लक्ष्मण मूर्च्छित हुए, तब हनुमानजी सुषेण वैध को उनके पूरे घर के साथ उठा के लाते हैं - शायद वैद्यराज नींद में से जग जाते तो, एक बंदर को देखकर चिल्लाते तो शायद बाज़ी पलट जाती।

(क) लक्ष्मण जी की अवस्था देखकर उन्होंने सीधे हनुमान से कहा - सूर्योदय से पहले संजीवनी बूटी ले आओ। बलबीरा पूरा पर्वत ले आये; शायद वे संजीवनी ढूंढने में समय गँवाना नहीं चाहते थे।

एफ औषध के स्थान पर पूरी दुकान ही उठा लायें। यह है उनकी दूरदर्शीता – शायद और किसी सामग्री की आवश्यकता हो!

6. दशानन की व्यथा

सब मुझे राम के शत्रु के रूप में ही जानते है, शिव के उपासक के रूप में नहीं। मैंने अपनी छोटी बहन के अपमान के बदले में पूरी लंका दाव पर लगा दी, यह किसीने नहीं समझा। अलबत्त, सेतु निर्माण की कथा में एक गिलहरी को भी स्थान मिला है। भगवती जानकी को मैं महल में नहीं ले गया था; संपूर्ण सुरक्षित रूप से अशोक वाटीका में रखा था। जीवन के अंतीम श्वास तक मेरा हृदय राघव का नाम ही रटता था, अत: श्रीराम भी मेरे हृदय में बाण नहीं मार सके, नाभि में ही बाण मारा।

अंत में, मैं इतना ही कहूंगा – जितनी सज्जनता मैंने शत्रु रूप में दिखाई है, उतनी आप मित्र बनकर तो दीखाओं, यह रावण आपका गुलाम बन जाएगा।

7. निष्कर्ष

1. मुख में हो राम-नाम,
2. राम सेवा हाथ में;
3. तू अकेला नहीं प्यारे,
4. राम-दरबार तेरे साथ में ॥

सीता: 'तृन धरि ओट' उपन्यास के विशेष संदर्भ में

ISBN: 978-1-960627-06-3

श्रीमती आशा राठौर

सहायक प्राध्यापक-हिन्दी, श्री राघवेंद्र सिंह हजारी शासकीय महाविद्यालय हटा, दमोह, म० प्र०, भारत

(asha40rathore40@gmail.co)

भारतीय समाज एवं संस्कृति को रूपाकर एवं आधार प्रदान करने में, जिस पुराख्यान का सर्वाधिक महत्त्व एवं योगदान रहा है, वह है- रामकथा। रामकथा भारतीय समाज का आदर्श रही है। रामकथा के महत्त्व को स्थापित करने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका इस कथा के पात्रों की रही है। रामकथा के सभी पात्र अपनी आदर्श भूमिका का निर्वहन करते हुए दिखाई देते हैं। पिता-पुत्र, भाई-भाई, भाई-बहन, पति-पत्नी, गुरु-शिष्य, स्वामी-सेवक, राजा-प्रजा, मित्र आदि प्रत्येक पात्र आदर्श भूमिका में उपस्थित है। ये सभी मानवीय संबंध अपनी पूर्णता एवं उच्चता को प्राप्त करते हुए दिखाई देते हैं। वाल्मीकि रामायण से लेकर वर्तमान समय तक रामकथा को लेकर विपुल साहित्य की रचना न सिर्फ हिंदी में, अपितु विभिन्न भारतीय भाषाओं में हो चुकी है। विश्व की विविध भाषाओं में रामकथा का अनुवाद हुआ है। प्रत्येक रचनाकार ने अपनी रुचि एवं युग के अनुकूल रामकथा के माध्यम से विविध सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं को उठाकर उनका समाधान खोजने का प्रयास किया है। राम कथा की प्रमुख नारीपात्र सीता को लेकर भी विपुल साहित्य लिखा जा चुका है। प्रस्तुत शोध पत्र में हिन्दी की प्रतिष्ठित लेखिका अनामिका के उपन्यास 'तृन धरि ओट' के संदर्भ में सीता के चरित्र को प्रस्तुत किया गया है । उपन्यास तीन खण्डों में विभक्त है- पहला 'गुप्त पत्राचार', दूसरा 'सीतायण-कुछ क्षण-चित्र (सीता की पाण्डुलिपि) तथा तीसरा 'उत्तरायण' के रूप में रचित है।उपन्यास में राम द्वारा सीता के परित्याग की कथा मुख्य है। वन में ऋषि वाल्मीकि के आश्रम में निवास करते हुए सीता लव-कुश को जन्म देती है। लव-कुश को शस्त्र-शास्त्र, संगीत, कला आदि सभी में निपुण बनाकर कुशल व्यक्तित्व का निर्माण करती है। साथ ही वन में निवास करने वाले आदिवासी जनजातीय समुदाय एवं राक्षस समुदाय के बच्चों की शिक्षा हेतु पाठशालाएं खोलकर उन्हें शिक्षित कर संस्कारवान बनाने का प्रयास करती है। सीता का दृढ़ विश्वास है कि शिक्षा ही वह माध्यम या साधन है, जिससे किसी को भी संस्कारवान एवं श्रेष्ठ गुणों से युक्त बनाया जा सकता है। यहां तक की प्रस्तुत उपन्यास में रावण का भी हृदय परिवर्तन दिखाया गया है। सीता राक्षस जातियों के बच्चों को भी शिक्षित कर उनके मूल गुणो का प्रक्षालन करती हुई दिखाई दे रही है।वे अपने जीवन की सांध्य बेला में राम, लव-कुश और सूर्पणखा को पत्र लिखती हैं, जो सीता की विचारधारा को समझने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। सीता स्वत्वबोध से सम्प्रक्त, प्रज्ञावान, ममत्व की प्रतिमूर्ति, तर्कशील, हिंसावृत्ति की विरोधी, शस्त्र एवं शास्त्र में पारंगत परम विदुषी है।

बीज शब्द : रामराज्य, वन्य-जीवन, संस्कार-प्रक्षालन, हिंसक वृत्ति, आदिशक्ति, धरती, मिथिलांचल, धैर्य आदि।

1. विस्तार

एक स्त्री का अपनी 'खुदी' तक पहुंचने के लम्बे,कठीन, संघर्षमय सफर को दर्शाने वाला उपन्यास है-'तृन धरि ओट'। इस उपन्यास में वह स्त्री है- सीता। वाल्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस में राम प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित है। सीता को आदर्श पत्नी,आदर्श बेटी, आदर्श बहू आदि रूपों में दिखाया गया है। यदृपि 'तृन धरि ओट' में भी सीता अपने आदर्श रूप में ही है, तथापि उपन्यास में प्रमुख पात्र बनकर उभरती हैं। सीता के इर्द-गिर्द संपूर्ण उपन्यास का ताना-बाना बुना गया है। जीवन के कठोर धरातल पर चलते-चलते, संघर्ष के झंझावातों को झेलते हुए, काल के निर्मम प्रहारों को सहन करते हुए, अपने सतीत्व की रक्षा करते हुए, जीव मात्र के प्रति करुणा का भाव रखते हुए, अपने स्वत्व बोध तक पहुंचने वाली सीता की जीवन-यात्रा को दर्शाने वाला उपन्यास है।उपन्यास का शीर्षक रामचरितमानस की चौपाई "तृन धरि ओट कहति वैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही।।" से लिया गया है। उपन्यास के प्रत्येक खंड में कुछ मुख्य बिंदु उभर कर आते हैं, जो संपूर्ण मानव-समाज को सोचने पर विवश कर देते हैं। आख्यान जितना पौराणिक है, उतना ही प्रासंगिक।

प्रथम खंड 'गुप्त पत्राचार' का प्रारंभ वाल्मीकि की कुटिया से अर्ध रात्रि में सीता द्वारा राम को लिखे पत्र द्वारा होता है। इस एक पत्र में सीता न जाने कितने ही उच्च मनोभावों के शिखरों को स्पर्श करती हुई दिखाई देती है। वे लिखती है -"ऋषि की कुटिया निदाध-दग्ध प्राणियों के लिए बड़ी छाँह है।" लव-कुश को राम को सौंपती है, एक स्वाभिमानी पुत्री के रूप में बाबा जनक के साथ जाने से मन कर देती है। बाबा जनक से कहती हैं -"बाबा, मैं विदेह की बेटी, देह तो वहीं आग में बार आती। बेशक वह जली नहीं, क्योंकि वह आपकी यश: काया थी। बेटी की देह बाप की यश: काया ही होती है ।वह तो जस-की-तस दमकती रही, पर मेरा ही उससे जी भर गया।" स्त्री-देह संबंधी विचार, राम के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, वात्सल्यभाव आदि सभी कुछ इस पत्र में है। वे जनक से कहती है-"राम के प्रेम ने मुझमें यह महाभाव जगाया है कि सामीप्य आत्मिक होता है,भौतिक नहीं। मैं आपकी

बेटी, विदेह की बेटी इस बात का मर्म नहीं समझ पाती, तो भला कौन समझता?" वे राम को लिखती है कि हनुमान के सिवा कोई हमारे इस गुप्त पत्राचार को नहीं जानता। हूँ, लव-कुश को बताया है।

उत्तर में राम भी उन्हें अपना संदेशा भेजते हैं। मर्यादाओं के बंधन में बंधे राम सिया के बिना ही राजकाज संभाल रहे हैं।

एक पत्र भी लव-कुश को भी लिखती हैं, जो अब पिता राम के साथ अयोध्या में सात माह से निवासरत है।

लव-कुश की बचपन की स्मृतियां उनके हृदय प्रदेश को हरा-भरा बनाए रखती है। वे उन्हें बताती है -" वन की बच्चियों को पढ़ना शुरू किया है। तरह-तरह के पेड़ों पशु- पक्षियों से मिलते-बतियाते दिन कट जाता है, पता ही नहीं चलता।,"

संपूर्ण उपन्यास में सीता एक प्रबुद्ध, शस्त्र-शास्त्र, नीति-दर्शन में पारंगत, कर्त्तव्यपरायण, ममत्व से परिपूर्ण, अपने स्वत्वबोध तक पहुंची प्रज्ञावान, तर्कशील नारी के रूप में चित्रित है। वे प्रेम की, विश्वबंधुता की, सभी के लिए शिक्षा के प्रचार-प्रसार ,हिंसा के विरोध , आदिवासी जीवन एवं संस्कृति की महत्ता ,पर्यावरण संरक्षण, न्यायपूर्ण शासन व्यवस्था आदि अनेक ज्वलंत विषयों पर अपनी बात रखती हैं। उनका मानना है कि हिंसा की समस्या का समाधान प्रतिहिंसा से नहीं, बल्कि प्रेम, सहयोग एवं सहकारिता से किया जा सकता है।

अनामिका जी ने उपन्यास में सीता के चरित्र के माध्यम से मानव जाति की बहुत सारी समस्याओं का हल खोजने का प्रयास किया है।

सीता के चरित्र की कुछ विशेषताएं और उनके विचार कुछ इस प्रकार है-

शास्त्रों की ज्ञाता -

मिथिलांचल में स्त्रियां भी शास्त्रों का ज्ञान रखती थी और शास्त्रार्थ में निपुण हुआ करती थी। सुनयना चाहती थी कि उनकी बेटियां शास्त्रज्ञ बने। सीता कहती है -"मां ने मेरे और उर्मिला के सामने हरदम गार्गी मौसी का आदर्श रखा। शास्त्र और शस्त्र दोनों में पारंगत रहे उनकी बेटियां, ऐसा उनका सपना था। हर शास्त्रार्थ में स्वयं भी बैठती, हिस्सा लेती और जो बात मेरी और उर्मिला की समझ से परे होती, किस्से-कहानियों में उनको सरलीकृत करती हुई, उनका भावार्थ हमें घुट्टियों में पिलाती वे।"

'बाप-बेटी' प्रसंग में सीता कहती हैं-" कर्मकांड का भाष्य ब्राह्मणों में, शास्त्रों का एकांत चिंतन आरण्यको में और सहज बातचीत द्वारा सूत्र-पल्लव उपनिषदों में कैसे पिरोया हुआ है- इसका अंदाजा मुझे नहीं हो पाता, यदि महीनों तक चलने वाले उसे शास्त्रार्थ का मौन श्रोता मैं न होती ।" इस तरह के विविध प्रसंगों से ज्ञात होता है कि सीता को शास्त्रों का गहरा ज्ञान था।

नीति एवं दर्शन का ज्ञान-

सिया का चरित्र कोई सामान्य स्त्री का चरित्र नहीं है। यदि राम मर्यादा पुरुषोत्तम है, तो सीता वह तेजस्वी चरित्र है, जो अपनी संकल्पशक्ति से एक नन्हे से तिनके को ओट बनाकर अपने सतीत्व की रक्षा अकेली ही करने में समर्थ है। अपने संघर्षमय जीवन में हर कदम पर वे नीति का ध्यान रखती है। उपन्यास ऐसे स्थलों से भरा पड़ा है, जहां सीता के शब्द नीति-सूक्तियां सी जान पड़ती है। वे बाबा जनक से कहती हैं-"बेटी की देह बाप की यश: काया है।" कितनी गंभीर बात छोटी-सी उक्ति में निहित है।

लव कुश के विषय में भी राम से लिखती है- "चंचलता लड़कपन की शोभा है। युवावस्था तक इनकी आंखों में धीरोदत्त नायकों का ठहराव आ जाना चाहिए।"

लव-कुश को पत्र में लिखती हैं-" दुनिया में कोई भी चीज, कोई घटना ऐसी नहीं होती, जिसका एक शुभ,एक शुभेतर पक्ष न हो। इसलिए समान भाव से सुख-दु:ख झेलने का तर्क बनता है।"

'मातृत्व' प्रसंग में वे लिखती है -"हालांकि मैं राजा जनक और उनकी महीयसी पत्नी की गर्भ जायी बेटी नहीं थी, पर आत्मा की गर्भ किसी गर्भ से ज्यादा उर्वर और उदार है।"

'मिथिला' प्रसंग में मातंगी से कहती है -"बुद्धिमान व्यक्ति को मान न दो, उसकी सृजनात्मक ऊर्जा न जगाओ, तो उसके उत्पात की क्षमता उकस जाती है।"

'वैद्यराज' प्रसंग में -"हर भाव जैसे जुड़वा ही पैदा होता है इस धरती पर-सुख-दुख, अंधेरा-उजाला आशा-निराशा। लव-कुश भी जुड़वा हुए।"

'असल समाधान' प्रसंग में वे कहती हैं -"युद्ध और हिंसा तात्कालिक शमन भले कर दे, दूर्वृत्तियों का उसका दुष्ट चक्र नहीं तोड़ पाते।"

"असल समाधान तो बच्चों का संस्कार प्रक्षालन है, जो अच्छी परवरिश और सद्शिक्षा से ही संभव है।"

तर्क वल्लरी में सीता प्रेम की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कहती है-" कैकई मां के कोप भवन का प्रतिपक्ष है मेरे पास, राजसी ,तामसी हर क्रोप का एक सात्विक प्रतिपक्ष होता है और उसे सबलतर प्रतिपक्ष का नाम है अहैतुक नेह!अहैतुक नेह ही है जो सृष्टि में चांद-सूरज, फूल+तारे बनाकर खिलता है, सात समन्दर वन उमड़ता है। सृष्टि में इसकी कोई काट न कभी हुई है,न होगी ।"

सूर्पनखा को लिखी चिट्ठी में वह कहती हैं-"कोई समाज तभी सुखी हो सकता है जब त्याग एक तरफा या एकांगी न हो। यह सहकारिता वृत्ति ही जीवन का मूल मंत्र है, स्वार्थ पीड़ित घुड़दौड़ नहीं ।"

'अन्तिम पाती लव-कुश के नाम' में लिखती है- वरण न हुआ तो फिर क्षरण ही होगा- ध्रुवान्त एक दूसरे को खा जायेंगे क्योंकि सृष्टि की आदिम भूख विलय की है- ऋत् के, शून्य के गर्भ में चले जाकर शान्त और निवृत हो जाने की मुक्तिमुखी मृत्यु आदिम भूख है।"

इस तरह से उपन्यास में बहुत सारे स्थल ऐसे हैं जहां सीता के नीति और जीवनदर्शन संबंधी अमूल्य विचार प्रकट हुए हैं ,जो मनुष्य मात्र को एक सीख देते हुए दिखाई देते हैं। सूक्तिमय बन गये है।

2. वात्सल्य एवं करुणा की प्रतिमूर्ति

सीता में ममत्व-भाव कूट-कूट कर भरा है। उनका यह वात्सल्यभाव सिर्फ लव-कुश के प्रति ही नहीं है, अपितु संपूर्ण मानव-समाज, आदिवासी समुदाय, राक्षस समुदाय और जीवमात्र के प्रति भी सर्वत्र परिलक्षित होता है। सिया धरती की पुत्री है। जिस तरह से धरती मां बिना किसी भेदभाव के सभी का पालन-पोषण करती है, उनकी पुत्री सीता भी अपने जीवन काल में उनके ही गुणों का अनुसरण करती हुई दिखाई देती है । सीता का यह भी मानना है कि वात्सल्य एवं स्नेह ही वह महाभाव है, जो हिंसक प्राणियों का भी परिष्कार कर सकता है।

लव-कुश उनकी गर्भा-जायी संताने हैं। मातृत्व प्रसंग में लिखती हैं -''लव-कुश मेरी गर्भ जायी संताने है- मेरे अकाल मातृत्व का सहस्त्रदल कमल।"

अंतिम पाती लव-कुश के नाम में -''यह दुनिया हर स्तर पर इतनी विकट असुरक्षाओं से भरी हुई है कि मां का कलेजा हमेशा हहरा हुआ ही रहता है-देव पुकारता हुआ।"

"यह मेरे प्रस्थान की बेला है, पर जैसा पहले कहा, मैं फिर लौटेगी तुम्हारी पुकार पर, सपने में, जागरण में। मां कहीं जाती नहीं, जाकर आती है।"

अपने जीवन की सांध्बेला में अपने बच्चों की करुण स्मृति उन्हें आती है।

नन्ही आदिवासी बच्ची मातंगी पर सीता का असीम स्नेह है।उसके बाल सुलभ मनुहार पर वे अपने जीवन की मधुर स्मृतियां सुनती हैं ।मातंगी के विषय में सीता कहती हैं -''मातंगी नाम की एक और प्यारी-सी आदिवासी बच्ची है, जो एकतारा बहुत अच्छा बजती है।...... खुली हवा के झोंकें-सी वह सब जगह आती जाती है।

''मातंगी सीता से कहती है-''मेरा कहीं जाने का मन नहीं करता सीता मैया!तुम ही मेरी काशी-अयोध्या हो! चलो अंदर चलकर लेटते हैं। तुम मुझे अपने बचपन की कहानियों सुनाओ! मिथिला नगरी के बारे में बताओ!"

मातृत्व प्रसंग में सीता रहती हैं-"राम के भय से वृत्ति-जनजातियों में छुपी बैठी राक्षस जातियों के बच्चे भी मुझे इतने ही भोले-भाले लगते हैं, जितने अपने बच्चे और दूसरे पशु-शावक!"

अशोक वन प्रसंग में -''आश्चर्य में डूब गयी यह देखकर कि बचपन में राक्षस भी देव-शिशु जैसे ही प्यारे और सुंदर होते हैं।.....राक्षसी वृत्तियों में प्रशिक्षण के पहले हर राक्षस बच्चा व्यायामदीप्त सौंदर्य की निधि होता है।"

इस तरह उनका वात्सल्यपूर्ण हृदय सभी जातियां के बच्चों एवं जीवमात्र पर अपने असीम स्नेह की वर्षा करता रहता है।

3. युद्ध एवं हिंसा की विरोधी

सीता हमेशा से ही युद्ध एवं हिंसा की विरोधी रही है ।उनका मानना था कि साम,दाम, दंड ,भेद में सबसे पहले साम-दाम का ही प्रयोग राजा को करना चाहिए।

उनका मानना है-" युद्धक्लांत और स्वार्थक्रान्त इस आवेग शासित धरती पर किसानों के धैर्य से प्रेम और शांति की हरितिमा संचारित करना जरूरी है।"

मारीच प्रसंग में वे कहती हैं -''किसी जीव को या किसी निर्दोष राक्षस को भी मार गिराना मुझे अशोभन और अकरणीय कृत्य लगता था ।अक्सर इस पर मेरी राम -लखन से बहस हो जाती!"

स्वर्ण नगरी प्रसंग में -''वैसे तो मेरी भीतर की लक्ष्मी ठगी जाने को अभिशप्त थी, पर मैंने यह नहीं कहा था कि हिरण पकड़ में न आए तो उसे मार ही डालो... परिहार्य हिंसा के विरुद्ध तो मैं लगातार ही रही थी ।कोई जीव पकड़ में न आए तो अपनी हार मुस्काकर स्वीकार कर लेनी चाहिए कि यह भी एक लीला ही है।"

इस तरह से उपन्यास में कई ऐसे प्रसंग आते हैं जहां सीता की अहिंसा प्रवृत्ति स्पष्ट दिखाई देती है और वे हिंसा का विरोध करते हुए दिखती है।

सद्शिक्षा की प्रबल पक्षधर-

सीता का यह दृढ़ विश्वास था कि सदशिक्षा के प्रशिक्षण से ही मानव में, यहां तक की राक्षस जातियों में भी सद्गुणों का विकास किया जा सकता है।वनों में आदिवासी जनजातियों, राक्षसों के बच्चों के लिए पाठशालाएं खोलने का निश्चय किया; परंतु यह इतना आसान नहीं था । सीता को उनकी हिंसा भी झेलनी पड़ी।उन्हें अविश्वास की दृष्टि से देखा गया, लेकिन सीता का पाठशाला खोलने का उद्देश्य पवित्र था और वे अपने संकल्प से डिग्गि नहीं,लगातार प्रयत्न करती रही और पाठशालाएं खोली। मातंगी ने भी उनके साथ दिया।

शांति और प्रेम प्रसंग में वे राम को लिखती हैं-" सुशिक्षा की आंच में ही इनकी हिंसक वृत्तीय हमेशा के लिए गलेगी। सुशिक्षित बच्चें अपने अभिभावकों के चरित्र का परिष्कार कर सकते हैं। ऐसा विश्वास मेरे मन में घर कर गया है ।लंका की अशोक वाटिका में यह प्रयोग मैंने राक्षस-संतानों

पर किया था।"

मैं भूमिजा प्रसंग में-"चलो ठीक है! राम की सहमति मिले-न-मिले, मातंगी की सहायता से यह वन पाठशाला तो मैं चलातीं ही रहूंगी।"

ऐसे अनेक दृश्य उपन्यास में दिखाई देते हैं, जहां सीता सद्शिक्षा की प्रबल पक्षधर के रूप में उपस्थित होती है।

सभी संस्कृतियों के संरक्षण की पक्षधर-

सीता न केवल नागर संस्कृति का सम्मान करती हैं,अपितु ग्रामीण एवं जंगलों में निवास करने वाली आदिम जनजातियां एवं राक्षस जातियों की संस्कृतियों को भी महत्व देती है। उनका मानना है कि हर संस्कृति के पास कुछ-न-कुछ श्रेष्ठ होता है, जिसके आदान-प्रदान से संस्कृतियो समृद्ध होती है।

बाबा शम्भूक व नयी पाठशाला में सीता रहती हैं-"बाबा शम्भूक का मानना था कि हर संस्कृति के पास कुछ न कुछ सीखने लायक होता ही है। एक नयी जीवन-दृष्टि, एक नयी ज्ञान-परंपरा, एक विशेष प्रज्ञाकोश! एक दूसरे से सीखते हुए जो पारस्परिकता विकसित होती है। उसी से जीवन प्रेममय और सृजनात्मक बनता है।"

इसलिए सीता का मानना था कि सभी संस्कृतियों का संरक्षण आवश्यक है।

4. निष्कर्ष

इस प्रकार 'तृन धरि ओट' 'उपन्यास में अनामिका ने सीता को एक स्वतंत्र प्रज्ञावान, शास्त्र-शस्त्र में पारंगत, तर्कशील, करूणा, प्रेम, वात्सल्य से परिपूर्ण, धैर्यवान, औषधीय का ज्ञान रखने वाली, प्रकृति प्रेमी,अहिंसा वृत्ति की प्रबल प्रपक्षधर आदि विविध रूपों में घटनाक्रम के माध्यम से चित्रित किया है। इन सब में सबसे महत्त्वपूर्ण है - सीता का स्वत्वबोध तक पहुंचाने की कठिन जीवन-यात्रा। जहां वे स्वतंत्र रूप से अपनी असहमतियां भी व्यक्त करती है। अंत में रावण भी अहंकार शून्य हो जाता है विनम्र हो जाता है।

अंत में रावण पुनः एक बार सीता के पास रूद्रवीणा सीखने के लिए आता है। लेकिन बड़ी विनम्रता से सीता कितना सुंदर उत्तर रावण को देती है और वह भी नमित भाव से वापस चला जाता है।

रावण कहता है:

बहुत भटककर फिर से आया हूँ,
द्वार तुम्हारे!
क्या तुम मुझे रूद्रवीणा सिखाओगी?
मैं -कोई किसी और की रूद्रवीणा
कैसे बजाए भला?
जितना भटककर
तुम आए हो मुझ तक,
उससे भी ज्यादा भटकर
मैं आयी हूं वापस अपनी खुदी तक!
यह रूद्रवीणा ही है अब तो मेरा वजूद!
खुद अपनी लड़कियां काटो,
खुद रूद्रवीणा गढ़ों,
जो भी लय-ताल सीखानी होगी,
प्रकृति खुद ही सिखा देगी !
जाओ से भिक्षुप्रवर,
इस बार लौटा रही हूँ,पहचान कर मर्म जीवन का!

5. संदर्भ ग्रंथ

1. तुलसीदास, *रामचरितमानस* ,गीता प्रेस, गोरखपुर.
2. अनामिका,*तृन धरि ओट,* दरियागंज नई दिल्ली वाणी प्रकाशन (2023).

राम कथा में शबरी का चरित्र और भगवान राम से संवाद

ISBN: 978-1-960627-06-3

सरस्वती मल्लिक
राम मल्लिक
(sarasmal@aol.com)

1. प्रस्तावना

रामकथा में शबरी भगवान राम की परम भक्त और पूजनीया है। शबरी ने अपना सारा जीवन भगवान की भक्ति में समर्पित कर दिया। अपने गुरु ऋषि मतंग के आदेश से उनके देहावसान के पश्चात भगवान राम की प्रतीक्षा करती रही। ऋषि कहा था कि राम को खोजने के लिये कहीं जाने की आवश्यकता नहीं वे स्वयं तुम्हारे पास आयेंगे। राम सीता हरण के पश्चात वन में उनका पता लगाने के लिये घूम रहे थे और शबरी के आश्रम पहुँचे। शबरी ने उनका स्वागत सत्कार किया और फल फूल खाने को दिया। राम ने शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश दिया और उसके देहावसान पर अंतिम संस्कार किया और अपने धाम में स्थान दिया।राम ने उससे सीता अन्वेषण में सुझाव मांगा। शबरी ने सुग्रीव से मैत्री का सुझाव दिया और उसका पता बताया। उसकी सहायता करने से वह कृतज्ञ और बस में रहेगा। बालि रावण का मित्र है और वह आपके वस में नहीं रहेगा। वाल्मीकि रामायण के अनुसार कबन्ध राक्षस राम द्वारा उद्धार के समय सीता के अन्वेषण में सुग्रीव से मित्रता का सुझाव देता है और शबरी के आश्रम और ऋष्यमूक पर्वत का मार्ग बताता है। शबरी शबर जाति के भील राजा की पुत्री थी। उसका वास्तविक नाम श्रमणा था। अपने विवाह में पशुओं के वलिदान से शबरी अन्तर्मन से अत्यंत व्यथित हुई और पशु पक्षी सबका बंधन खोलकर उन्हें मुक्त कर दिया। संसार से विरक्त हो गई और भगवान से मिलने का रास्ता खोजने चल पड़ी। घर से भागकर ऋषि मतंग के आश्रम पहुँची और उनकी शिष्या बन कर सारा जीवन भग्वद्भक्ति में व्यतीत किया। राम और शबरी के संवाद में एक महत्त्वपूर्ण बात है कि नवधा भक्ति में से एक भी करने से भग्वद्भक्ति प्राप्त होती है।

पूर्व कथा

शबरी घर छोड़कर ऋषि मतंग के आश्रम में पहुँच गई। वहाँ वह ऋषियों की सेवा में लग गई। ऋषि मतंग ने उसको एक कुटिया में जगह दी। उसे नीति और धर्म की सम्यक् शिक्षा दी। शबरी वहीं ऋषि मतंग की सेवा और अपनी साधना में लग गई। बहुत समय बाद ऋषि मतंग ने घोषणा की- अब मैं देह त्याग करना चाहता हूँ। शबरीके पूछने पर की अब कौन मेरा ख़्याल रखेगा ? ऋषि ने कहा तुम्हारा ख़्याल अब राम करेंगे। शबरी कहती है और मैं उन्हें कहाँ ढूँढूँगी ? ऋषि ने कहा तुम्हें राम को खोजने की ज़रूरत नहीं वे स्वयं तुम्हारी कुटिया में आयेंगे। शबरी राम की वहीं प्रतीक्षा करती रही।

राम का शबरी के आश्रम में आगमन

सीताजी के अपहरण के पश्चात राम उनका अन्वेषण करते हुये शबरी के आश्रम में पहुँचे । शबरी ने भगवान को पहचान लिया। उसे ऋषि मतंग की बात याद आ गई। वह श्यामल गौर राम लक्ष्मण दोनों भाई को देखकर प्रेम में मग्न हो गई, उनके चरणों में लिपट गई। आदर पूर्वक जल से चरण धोये और आसन पर विठाया। कंद मूल फल दिये जिसे राम लक्ष्मण ने प्रेम से खाया।

वाल्मीकि, अध्यात्म और मानस में जूठे फलों के खाने का उल्लेख नहीं है। पर भक्तमाल में जूठे फलों का खाना कहा है।

शबरी हाथ जोड़कर भगवान के सामने खड़ी हुई। कहने लगी मैं किस तरह स्तुति करूँ। मैं अधम जाति की नारी हूँ मंद बुद्धि हूँ। राम ने कहा मैं एक मात्र भक्ति का संबंध मानता हूँ।

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई।
धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगतिहीन नर सोहै कैसा।
बिनु जल बारिश देखिय जैसा॥

भगवान कहते हैं जाति पाँति आदि दस बातों का मैं महत्व नहीं देता भक्ति के सिवा। भगवान शबरी को कहते हैं कि मैं तुमसे नवधाभक्ति कहता हूँ सावधान होकर सुनो।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार रामजी के शबरी से कुशल प्रश्न करने पर उसने यह उत्तर दिया है - आपके दर्शन से आज मैंने अपनी तपस्या की सिद्धि पाई, मेरा जन्म सुफल हुआ, गुरुपूजा सफल हुई। आपके कृपावलोकन से मैं पवित्र हो गई, आपके प्रसाद से मैं अक्षय लोकों को जाऊँगी।

अद्य प्राप्तांक तप: सिद्धिस्तव संदर्शनान्मया। अद्य मे सफलं जन्म गुरवश्च सुपूजिता:। अद्य मे सफलं तप्तं स्वर्गश्चैव भविष्यति।

राम का नवधाभक्ति का उपदेश

नवधा भगति कहउँ तोहि पाही।
सावधान सुनु धरु मन माही॥

प्रथम भक्ति- संतों की , दूसरी भक्ति- मेरी कथाओं के प्रसंग में प्रेम, तीसरी भक्ति- गुरु के चरण कमलों की सेवा, चौथी भक्ति- कपट छोड़कर मेरे गुण समूह का गान, पॉचमी भक्ति-मेरे मंत्र का जाप और उसमें दृढ़ विश्वास,छठी भक्ति- इन्द्रिय दमनशील होना, बहुत से कर्मों से वैराग्य होना और निरंतर सज्जनों के धर्म में तत्पर रहना, सातवीं भक्ति-जगत्भर को समान और राममय देखना और संतों को मुझसे अधिक समझना,आठवीं भक्ति-जो कुछ प्राप्त हो उसी में संतोष और स्वप्न में भी पराये दोष को न देखे, नवमी भक्ति- सरल स्वभाव,सबसे छल रहित व्यवहार, हृदय में मेरा भरोसा, हर्ष और दीनता रहित होना। अंत में भगवान कहते हैं इस नौ में से एक भी जिनमें होती है वे मुझे अतिशय प्रिय हैं।तुम में सभी भक्ति विद्यमान हैं ।

नव महुँ एकल जिन्ह के होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें॥

प्रसिद्ध नवधा भक्ति है-श्रवणं कीर्तनंविष्णो: स्मरणं पादसेवनम्। अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्॥

यह ऊपर कहीं नवधाभक्ति से पृथक है ।

राम का सीता अन्वेषण के संबंध में प्रश्न और शबरी का उत्तर

राम पूछते हैं कि यदि आप सीता की कुछ ख़बर जानती हो तो कहो। शबरी ने उन्हें कहा कि आप पंपासर पर जाइये। वहॉ सुग्रीव से मित्रता होगी और उसके द्वारा सीता का पता लग जायगा ।

इसके पश्चात भगवान के चरण कमल को हृदय में रखे हुये योगाग्नि में देह त्यागकर वह हरि में लीन हो गई।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं -

जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि अस नारि।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि॥

2. निष्कर्ष

भगवान की नवधाभक्ति के द्वार सबके लिये खुले हैं- इसमें जाति धर्म स्त्री पुरुष का भेद नहीं है। कोइ नौ में से एक भी भक्ति करता है तो वह मुझे अतिशय प्रिय है।

3. संदर्भ

1. श्रीरामचरितमानस और विभिन्न टीकायें
2. वाल्मीकि रामायण

तुलसी-काव्य में नवाचार

आचार्य ओम नीरव
(neeravom1948@gmail.com)

ISBN: 978-1-960627-06-3

1. प्रस्तावना

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने अपने वृहत काव्य-सृजन के माध्यम से रामकथा को जन-जन तक पहुँचाने के लिए अनेक नये प्रयोग किये हैं जिसे हम नवाचार कह सकते हैं। उनके इस नवाचार को देखना और परखना बहुत रोचक होगा तथा तुलसी के काव्य-सौंदर्य को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण होगा।

(क) महाकाव्य में सात सर्ग

पारंपरिक काव्यशास्त्र के अनुसार महाकाव्य में न्यूनतम आठ सर्ग होने चाहिए किन्तु तुलसी ने अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में केवल सात ही सर्गों का प्रयोग सात काण्डों के नाम से किया है- क्रमशः बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दर काण्ड, लंकाकाण्ड और उत्तर काण्ड। इन काण्डों का उल्लेख करते हुए वे स्वयं कहते हैं-

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना,
ज्ञान नयन निरखत मन माना।
(रामचरितमानस 1.37.1)

(ख) दसवाँ रस भक्ति रस

पारंपरिक काव्यशास्त्र में केवल नौ रसों का उल्लेख है किन्तु तुलसी ने अपने काव्य के माध्यम से दसवें रस की स्थापना की है। जब स्थायी भाव रति भगवान की ओर प्रेरित होकर भगवद् रति में परिवर्तित हो जाता है तो भक्ति रस की उद्भावना होती है। यथा-

अस कछु समुझि परत रघुराया!
बिनु तव कृपा दयालु! दास हित! मोह न छूटै माया।।
बाक्य-ज्ञान अत्यंत निपुन भव-पार न पावै कोई।
निसि गृहमध्य दीप की बातन्ह, तम निबृत्त नहिं होई।।
(विनय पत्रिका 123)

तुलसी-काव्य में वस्तुतः विशुद्ध भक्तिरस का स्थायी भाव भगवद्विषयक शुद्ध सात्विकी रति है जिसमें भी तुलसी की भक्ति में दास्यभाव का वर्चस्व है, जबकि उसमें सख्यभाव प्रायः देखने को नहीं मिलता है, यहाँ तक कि दशरथ, कौशल्या आदि का वात्सल्य; भारत, लक्ष्मण आदि का भ्रातत्व तथा सुग्रीव, विभीषण आदि का सख्यभाव भी दासत्वभाव में विलय होता दिखाई देता है। सातवें सर्ग उत्तरकाण्ड के अंतर्गत भक्ति में दास्यभाव को प्रतिपादित करते हुए तुलसी स्वयं कहते हैं-

सेवक सेव्य भाव बिनु, भाव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धांत विचारि।
(मानस 7.119 क)

इस प्रकार तुलसी काव्य में भक्तिरस और उसमें भी सेवक-सेव्य भाव की स्थापना एक नव प्रयोग है जिसे नवाचार की संज्ञा से अभिहित करना अधिक उपयुक्त होगा।

(ग) नवीन अलंकार : मीन अलंकार

तुलसी-काव्य में अनेक नवीन अलंकारों की उद्भावना हुई है इनमें से एक अलंकार है- मीन अलंकार। यह एक प्रकार का अर्थालंकार है। जब किसी प्रतिपाद्य भावभूमि से पूर्व उसके विपरीत भावभूमि की उद्भावना की जाती है तो इससे उत्पन्न चमत्कार को मीन अलंकार कहते हैं। यह घटना वैसे ही घटित होती है जैसे मीन जल के ऊपर उठने से पहले एक बार नीचे जाती है, इसीलिए इसे मीन अलंकार नाम दिया गया है। उदाहरण:

रामचरितमानस के बालकाण्ड में सीता और राम के जयमाल का आनंदोत्सव होना है लेकिन उससे पहले तुलसी शोकमय परिवेश की सर्जना करते हैं। सीता के पिता जनक दुखी होकर घोषणा करते हैं-

अब जनि कोउ माखै भट मानी, वीर विहीन मही मैं जानी।
तजहु आस निज निज गृह जाहू, लिखा न बिधि बैदेहि बिबाहू।
जनक बचन सुनि सब नर नारी, देखि जानकिहि भए दुखारी।

जैसे मीन नीचे जाने के बाद पानी के ऊपर आती है वैसे ही यह शोकमय परिवेश बाद में आनंदमय हो जाता है जब राम धनुष तोड़ देते हैं-

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े, काहुँ न लखा देख सबु ठाढ़े।
तेहि छन राम मध्य धनु तोरा, भरे भुवन धुनि घोर कठोरा।
प्रभु दोउ चापखंड महि डारे, देखि लोग सब भए सुखारे।

इस प्रकार यहाँ पर मीन अलंकार की सुन्दर चमत्कारी उद्धाभावना हुई है।

मानस में इस प्रकार के उदाहरणों की बहुलता है जैसे राम-वन-गमन की करुणा से पहले राज्याभिषेक का आनंद, परशुराम के समर्पण भाव से पहले उनका आक्रोश, भरत-राम-मिलन से पहले संदेहाक्रान्त लक्ष्मण का आक्रोश, बालि-वध से पहले सुग्रीव का पिट कर भागना, मेघनाद-वध से पहले लक्ष्मण का मूर्छित होना, सीता को अपनाने से पहले उनकी अग्निपरीक्षा, राम के पुनरागमन से पहले भरत का विलाप आदि आदि अनेक ऐसे स्थल हैं जहाँ पर मीन अलंकार की विलक्षण उद्भावना हुई है।

(घ) नवीन छन्द

तुलसी की काव्य-सर्जना में प्रयुक्त छन्दों पर विचार किया जाये तो तुलसी ने मूल रूप में और लयाधार के रूप में, मेरे शोध के अनुसार, 56 से अधिक प्रकार के छन्दों का प्रयोग और अनुप्रयोग किया है। इनमें से अनेक ऐसे छन्द हैं जिनका उल्लेख पारंपरिक छन्दशास्त्र में नहीं मिलता है, इन छन्दों के विधान को नया नाम देना स्वाभाविक हो गया है, यथा- रूपक, उपमा, अनुदोहा, मनहरी, मनोहारी, नवप्रिया, अनुविजया आदि।

(1) रूपक छन्द : यह एक सममात्रिक मापनीमुक्त छन्द है जिसमें 21-21 मात्रा के चार चरण होते हैं जिनमें क्रमागत दो-दो चरण तुकान्त होते हैं, प्रत्येक चरण में 12-9 पर यति होती है, अंत में ललल अर्थात लघु-लघु-लघु होता है।

विनयपत्रिका के 6 पदों (129-134) में इस छन्द का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

राम राम राम राम, राम राम जपत,
मंगल-मुद मुदित होत, कलि-मल-छल छपत।
कहु के लहे' फल रसाल, बबुर बीज बपत,
हारनि जनि जनम जाय, गाल गूल गपत।
(विनयपत्रिका 130)

(2) उपमा छन्द : यह एक सममात्रिक मापनीमुक्त छन्द है जिसमें 22-22 मात्रा के चार चरण होते हैं जिनमें क्रमागत दो-दो चरण तुकान्त होते हैं, प्रत्येक चरण में 13-9 पर यति होती है, यति से पूर्व लगा और चरणान्त में गाल होता है।

विनय पत्रिका के 2 पदों (107-108) में इस छन्द का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

देस-काल-पूरन सदा, बद बेद पुरान,
सबको प्रभु, सब में बसैं, सबकी गति जान।
को करि कोटिक कामना, पूजै बहु देव,
तुलसिदास ते'हि सेइये, संकर जेहि सेव।
(विनयपत्रिका 107)

(3) अनुदोहा छन्द : यह एक अर्धसम मात्रिक छन्द हैं जिसमें 13,13,13,13 मात्रा के चार चरण होते हैं, विषम चरणों के अंत में लगा और सम चरणों के अंत में गाल होता है। सामान्य दोहा के सम चरणों के आदि में 2 मात्रा बढ़ा देने से अनुदोहा बन जाता है। विनयपत्रिका के 4 पदों (190-193) और गीतावली के 1 पद (1.22) में कुल 36 अनुदोहा छन्दों का अनुप्रयोग हुआ है।

उदाहरण:

बालचरितमय चन्द्रमा, यह सोरह-कला-निधान।

चित-चकोर तुलसी कियो, कर प्रेम-अमिय-रसपान।

(तुलसी-जीवन रामलला।)

(गीतावली 1.22.16)

(4) मनहरी छन्द : यह एक दंडक वर्णिक मुक्तक है जिसमें 30-30 वर्णों के चार सम तुकान्त चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में 16-14 वर्णों पर यति अनिवार्य होती है जबकि 8-8-8-6 पर उत्तम होती है, चरणान्त में ललल अर्थात लघु-लघु-लघु होता है और 8 वर्णों के पद में विषम-सम-विषम का प्रयोग वर्जित होता है। यह छन्द सूर घनाक्षरी के नाम से जाना जाता है किन्तु दोनों में एक अंतर है- मनहर के चरणान्त में ललल अनिवार्य होता है जबकि सूर के चरणान्त में ललल अनिवार्य नहीं होता है अर्थात लगा भी हो सकता है।

विनयपत्रिका के 13 पदों (184, 246-257) और गीतावली के 5 पदों (1.83, 3.5, 3.9, 5.27, 5.48) में इस छन्द प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

करम-कलाप परिताप पाप साने सब,
ज्यों सुफूल फूले तरु, फोकट फरनि।
दंभ, लोभ, लालच, उपासना, बिनासि नीके,
सुगति साधन भई, उदर भरनि।
जोग न समाधि निरुपाधि न विराग ग्यान,
बचन बिशेष बेष, कहूँ न करनि।
कपट कुपथ कोटि, कहनि रहनि खोटि,
सकल सराहैं निज, निज आचरनि।

(विनयपत्रिका 184)

(5) मनोहारी छन्द : यह एक सामान्य वर्णिक मुक्तक छन्द है जिसमें 15-15 वर्णों के चार चरण होते हैं जिनमें क्रमागत दो-दो चरण तुकान्त होते हैं, प्रत्येक चरण में 8-7 वर्णो पर यति होती है, चरणान्त में लगा अर्थात लघु-गुरु होता है और 8 वर्णों के पद में विषम-सम-विषम का प्रयोग वर्जित होता है। इसका चरण वास्तव में मनहर घनाक्षरी के चरण का उत्तरार्ध होता है।

विनयपत्रिका के 5 पदों (178-182) और गीतावली के 2 पदों (2.27-28) में इस छन्द का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

भयेहूँ उदास राम, मेरे आस रावरी,
आरत स्वारथी सब, कहैं बात बावरी।
जीवन को दानी धन, कहा ताहि चाहिए,
प्रेम-नेम के निबाहे, चातक सराहिए।

(विनय पत्रिका 178)

(6) नवप्रिया छन्द : यह एक सममात्रिक दंडक मापनीमुक्त छन्द है जिसमें 44-44 मात्राओं के समतुकान्त चार चरण होते है, प्रत्येक चरण 12-12-12-8 पर यति होती है।

विनयपत्रिका के 3 पदों (16-17, 74) और गीतावली के 2 पदों (2.43-44) में इस छन्द प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

चित्रकूट अति विचित्र, सुन्दर बन, महि पवित्र,
पावनि पय-सरित सकल, मल-निकंदिनी।
सानुज जहँ बसत राम, लोक लोचनाभिराम,
बाम अंग बामाबर, बिस्व-बंदिनी।
ऋषिवर तहँ छन्द बास, गावत कल कंठ हास,
कीर्तन उनमाय काय, क्रोध कन्दिनी।
बर बिधान करत गान, वारत धन-मान-प्रान,
झरना झर झिंग झिंग झिंग, जल तरंगिनी।

(गीतावली 2.43)

(7) अनुविजया छन्द : यह एक सममात्रिक दंडक मापनीमुक्त छन्द है जिसमें 39-39 मात्राओं के चार समतुकान्त चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में 10-10-10-9 मात्राओं पर यति होती है, अंत में गागा अर्थात गुरु-गुरु होता है।

विनयपत्रिका के एक पद (210) में इस छन्द का अनुप्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

मुख्य रुचि होत बसिबेकी' पुर रावरे,
राम! ते'हि रुचिहि कामादि गन घेरे।
अगम अपबरग, अरु, सरग सुकृतैकफल,
नाम-बल क्यों बसीं, जम-नगर नेरे।
कतहुँ नहिं ठाउँ, कहँ, जाउँ कोसलनाथ!
दीन बितहीन हौं, बिकल बिनु डेरे।
दास तुलसिहिं बास, देहु अब करि कृपा,
बसत गज गीध ब्याधादि जे'हि खेरे।
(विनयपत्रिका 210)

2. उपसंहा

उपर्युक्त विवेचना की आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि महाकवि तुलसीदास ने अपनी काव्य-सर्जना में अनेकानेक नवाचार किये हैं जो राम-कथा के सम्प्रेषण को रोचक और प्रभावशाली बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मेरा शोध यहीं पर पूर्ण नहीं हो जाता है अपितु इस दिशा में उत्तरोत्तर अधिकाधिक शोधकार्य की आवश्यकता है।

3. सन्दर्भ

1. रामचरितमानस : महाकवि गोस्वामी तुलसीदास
2. विनयपत्रिका : महाकवि गोस्वामी तुलसीदास
3. गीतावली : महाकवि गोस्वामी तुलसीदास
4. छन्द प्रभाकर : आचार्य जगन्नाथ प्रसाद 'भानुकवि'
5. तुलसी काव्य मीमांसा : डॉ. उदयभानु सिंह
6. छन्द विज्ञान : आचार्य ओम नीरव
7. तुलसी के छन्द : आचार्य ओम नीरव

नेतृत्व में अग्रणी सीता: नेत्री सीता

ISBN: 978-1-960627-06-3

विनीता मिश्रा
(mishravinita07@gmail.com)

आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया. सोउ अवतरिहि मोरि यह माया.

मनु महाराज पत्नी सतरूपा के साथ जीवन के चौथे आश्रम में आकर नैमिषारण्य में कठोर तप कर भगवान का दर्शन पाते हैं और उन्हें ही पुत्र रूप में माँग बैठते हैं. भगवान देवी भगवती सीता के साथ प्रकट होते हैं, मनु महाराज केवल पुत्र रूप में भगवान को चाहते हैं किन्तु भगवान वरदान देते हुए क्या कहते हैं,

"आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया. सोउ अवतरिहि मोरि यह माया."

यह गूढ़ बात है जो भगवान के द्वारा कही गयी. भगवान का प्राकट्य हुआ, सबने जाना, आनन्द मनाया, किन्तु सीता के प्राकट्य को कोई जान नहीं पाया. आज तक कयास लगाए जा रहे हैं, सीता प्राकट्य से पहले धरती के भीतर कहाँ से आयीं? उसे पाने की इच्छा तो किसी ने नहीं की. पर जब वह प्रकट हुई तो हर कोई उसे ही पाना चाहता है. क्योंकि जिसका परिचय स्वयं भगवान ने शक्ति के रूप में करवाया हो उसे पाने को ही तो संसार आजतक बावला है. सीता आदिशक्ति है और प्रकृति के रूप में प्रकट होने के बाद वही श्री है, वही समृद्धि है, वही संपत्ति है, वही शक्ति है, वही अग्नि है और वही आहुति है.

राम; दशरथ को मिले कठिन तप और लम्बी प्रतीक्षा के पश्चात् किन्तु विदेहराज को धरती में हल चलाने भर से सीता स्वयं मिल गई. राम यज्ञ की परिणिति है तो कर्म की परिणिति है: सीता. दशरथ के पुत्र प्रेम में मोह है, जनक के पुत्र प्रेम में त्याग और वैराग्य का गुण है. वो जैसे पाते हैं वैसे ही जिसकी है उसे सौंप भी देते हैं. दशरथ को राम उनके कठिन तप से मिलते हैं पर उनके लिए सीता को लेकर स्वयं राम आते हैं. मोह के कारण जब राम छूटने लगते हैं तब दशरथ को बोध होता है और वह सीता को रोकने का भरसक प्रयास करते हैं किन्तु राम द्वारा लाइ गई सीता राम के साथ ही चली जाती है. साथ ही चले जाते हैं दशरथ के प्राण. जबकि जनक पहले से ही विदेह हैं, सीता को पाकर भी विदेह हैं और उसे भेजकर भी यहाँ तक कि उसे वन में देखकर भी विदेह ही हैं. कोई मोह, कोई पश्चाताप, कोई गिला शिकवा नहीं. सीता केवल ऐसे लोगों तक स्वयं पहुँचती है. किसके पास जाना है, कहाँ रहना है यह सीता स्वयं निश्चित करती है. और यही है नेतृत्व का आधारभूत गुण.

फुलवारी और सीता स्वयंवर :- ये सीता स्वयंवर है और सीता किसे वरना चाहती यही इसका मुख्य उद्देश्य है. शिव धनुष की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए जनकनंदिनी पुत्री की सारी मर्यादाएं निभाते हुए अपने पितृ कुल की परम्परा का पालन करते हुए माँ गौरी से अपने इच्छित वर को बिना कहे बता आती हैं. शिव धनुष की प्रतिज्ञा पूरी कर सीता स्वयंवर की सफलता शिव से पहले माता पार्वती के पास पहुँच जाती है. माता पार्वती चाहें और शंकर उस शिव धनुष का भार न हर लें, ये तो भव के लिए भी संभव नहीं. आखिर इस सृष्टि को रचने, चलाने का कार्य शक्ति द्वारा ही तो सम्पन्न हो रहा है. बड़ा ही रोचक और विनोदपूर्ण प्रसंग लगता है यह मुझे. और सीधे सीधे सशक्त नारी का सशक्त उदहारण. कहने को शंकर का धनुष, तोड़ने वाले राम, पर इच्छा सीता की पूर्ण हो रही है और पूर्ण करवा रही हैं जगदम्बा भवानी माँ गौरी. क्या ही अद्भुत अलौकिक गतबंधन है माता सीता और माता पार्वती का. इतनी दृढ़ता, सामर्थ्य, शक्ति जिस में हो असल नेत्री तो वही है.

राम के लिए सीता के सहमति :- राम विश्वामित्र के कहने से मिथिला आते हैं, उनके ही कहने से धनुष की ओर बढ़ते हैं. राम के लिए न ये वीरता का प्रदर्शन है न किसी प्रकार की उपलब्धि. सर्वोपरि है सीता की इच्छा. इसलिए धनुष की ओर बढ़ने से पहले राम ने सीता की ओर देखा तो सीता को अपनी ओर देखता पाया. सीता के मन के भाव ने और महाशक्ति के बल ने राम से धनुष तुड़वाया:-

निष्क्रिय निर्गुण कर्मण्य हुआ उस पल आँखों ही आँखों में.
जब महाशक्ति ने पहुँचाया निज बल आँखों ही आँखों में.

नेत्री होने का यह अर्थ कदापि नहीं कि स्त्री लज्जा, शील, संकोच त्याग दे, इनको धारण करते हुए भी शक्ति सम्पन्न और समर्थ हुआ जा सकता है, यह बात सीता के चरित को देखते हुए समझ आती है. सीता कोमलांगी है, मृदुल स्वाभाव वाली है. साथ ही दृढ़ इतनी कि राम ने जब पंचवटी में उससे अग्नि में वास करनी की बात कही, तो शत्रु के किले में अकेली जाकर अग्नि में ही तो वास किया. एक ऐसी अग्नि जो सीता के लिए तत्काल से लेकर भविष्य तक के लिए अग्नि परीक्षा बन गई. वह इस परीक्षा में सदा खरी उतरी, चाहे परीक्षा देकर या नकार कर. जगत कल्याण के लिए अपने कर्त्तव्य को निभाने में ऐसी परीक्षा का सामना और ऐसे बलिदान कोई नेत्री ही कर सकती है, अनुगामिनी नहीं.

दशरथ को राम कठिन तप और फिर यज्ञ के द्वारा प्राप्त होते हैं. उनके माता पिता उन्हें पुत्र रूप में चाहते हैं, चुनते और माँगते हैं. जबकि सीता धरती से अकेली असहाय प्रकट होती है और अपने माता पिता स्वयं चुनती है. सीता पिता भी चुनती है और पति भी. सीता का चरित्र इतना आत्मनिर्भर और दृढ़ है कि वह सेवा निष्ठा में दृढ़ है तो कार्य पूर्ण करवाने में भी निडर और दृढ़ है. वह मिथिला से अयोध्या आने में सक्षम है, अयोध्या से वन जाने सक्षम है. और तो और वन से लंका जाने में भी हिचकती नहीं. राम उसे लंका रूपी अग्नि में प्रवेश करने को कहते हैं तो स्वयं अग्नि बन लंका पहुँच जाती है. जब लोग किसी अभियान के लिए निकलते हैं तो सबसे आगे अग्नि की मशाल ही तो चलती है. सीता वही मशाल है जो राम के लिए मार्ग प्रशस्त करती है तो रावण के लिए लंका का दहन.

हनुमान के आने पर हनुमान को माध्यम बना लंका को अग्नि के हवाले कर देती है और राक्षसियों को लगता है कि सीता तो एक अंगार के लिए तरस रही है ये तो किसी और का काम है. जबकि सीता रामदूत के माध्यम से राम की प्रतिष्ठा का निर्माण कर रही है. यह बात जाम्बवंत और हनुमान **संवाद से भी स्पष्ट होती है :-**

कपि सेन संग संघारि निसिचर रामु सीतहिं आनिहैं.

त्रिलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं.

राम के सुयश का आधार सीता ही तो है. सीता अग्रता न होती तो राम का यश संसार के सामने कैसे आता?

राम के आने से पूर्व ही राम का भय सारी लंका के मन में भर देती है. डरी हुई जनता और सेना तो पहले ही पराजित है. पराजित सेना का संहार करना कोई कठिन काम नहीं.

चौदह वर्ष के वनवास में तेरह वर्ष उसने राम का अनुगमन किया किन्तु फिर वो अग्रणी होकर लंका में पहुंची और राम ने उसका अनुगमन किया और सीता के बाद लंका पहुंचे. सीता अग्रणी है, नेतृत्व करने वाली है, नेत्री है. कल भी थी, आज भी है, कल भी रहेगी, अनन्त काल तक रहेगी. सीता वह अग्नि है जो आज तक रावण के प्रतीक को जला रही है, राम के बाण तो प्रतीक भर है उन बाणों की अग्नि सीता ही है.

सीता सुख है, शान्ति, संपत्ति है, समृद्धि है, भक्ति है और शक्ति है. सब उसे अपनी अपनी भावना अनुसार पाना चाहते हैं. अगर हम उसे भक्ति के नाते मांगे तो सीता भी मिलेगी और राम भी पर रावण तो सर्वशक्तिशाली मानता है स्वयं को और ईश्वर के समकक्ष होना चाहता है शक्ति के सहारे से. इसलिए सीता को हर लाया कि "जिसके पास शक्ति वही सर्वशक्तिमान, जो सर्वशक्तिमान वही ईश्वर वही भगवान". मनुष्य को भगवान होने की लालसा ही तो फंसा रही है. किन्तु रावण नहीं जानता कि सीता रूपी शक्ति का वरण किया जाता है हरण नहीं. जो वरण कर सकता है वही शक्ति को धारण कर सकता है वही ईश्वर हो सकता है, वही भगवान हो सकता है. या कहें कि जो ईश्वर है शक्ति उसी की है या फिर ईश्वर की भी शक्ति वही है.

इसी शक्ति को पाने के लिए सब प्रयासरत हैं. जनकपुरी के धनुषयज्ञ आयोजन में सारे राजा, अयोध्या में राम के वनवास के समय राजा दशरथ, दण्डकारण्य में शक्तिशाली राक्षस से लेकर रावण तक. पर शक्ति स्वरूपा सीता केवल राम की और भक्ति स्वरूपा सीता सारे संसार की. भक्ति के रूप में उसकी इच्छा की जाये तो लाख रुकावटें आयें हनुमान की भांति मिल ही जायेगी.भक्ति प्राप्त हो गई तो आगे बढ़कर भगवान से मिलाने का कार्य अब उसका. दशरथ ने राम को चाहा, राम मिल गए पर सीता के आने पर सीता के हो गए और दशरथ से छूट गए. दशरथ का प्रेम भक्ति से मोह में परिवर्तित हो गया था.

दशरथ से भगवान और भक्ति दोनों छूट गए और दशरथ के प्राण भी:-

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम.

तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम.

पर सीता जब राम से बिछड़ी तो और शक्तिशाली, और धैर्यवती हो गई और अपने प्राणों को साधे बैठी रही. उसी विछोह को कारण और साधन बनाकर:-

अवगुन एक मोर मैं माना. बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना.

सीता राम को उनके भी पास ले गई जिनके पास भक्ति जैसा गुण था ही नहीं. जो नितांत भोगी प्रवृत्ति के थे. नेता का कार्य है वह सबका भला करने के लिए आगे आये चाहे वे उसके अनुयायी हों चाहे विरोधी. केवल प्रशंसकों का कल्याण करने वाला नेतृत्व के लायक नहीं चाटुकार प्रेमी कहलाता है. सीता सबके उद्धार के लिए कोई भी कष्ट उठाने को तैयार है, किसी भी परिस्थिति में प्रवेश करने को तैयार है.

सीता अपनी मुक्ति, अपना उद्धार नहीं करवा रही बल्कि सम्पूर्ण निशाचर जाति, सम्पूर्ण शोषित स्त्री जाति का उद्धार करवा रही है.

रामराज्य की स्थापना के पश्चात् भी वह अकेली वाल्मीकि आश्रम में प्रसव करती है, अपने जुड़वाँ पुत्रों का लालन-पालन-पोषण करती है. वन में शिक्षा-दीक्षा के द्वारा ऐसे राजकुमार तैयार करती है जो कोशल देश के भावी उत्तराधिकारी हैं. सीता का यह चरित सम्पूर्ण स्त्री जाति में चेतना, जागरूकता, सामर्थ्य और शक्ति का संचार करता है. सीता नेतृत्व की ऐसी धारा है जो आजतक भारतीय नारी को शक्ति और प्रेरणा दे रही है.

अंत में कहना चाहूंगी कि सीता ने वन में वाल्मीकि आश्रम में निवास कर रामराज्य की सार्थकता को भी सिद्ध किया:- "रामराज्य में समाज के सबसे अंदरूनी छोर तक ऐसी सुरक्षा व्यवस्था थी, ऐसी शिक्षा व्यवस्था थी कि वहां भी रहकर अकेली स्त्री अपने बच्चों का लालन पालन कर उन्हें

योग्य बना सकती थी, ऐसा योग्य कि वे आगे चलकर सूर्यवंश के सम्राट के पद को भी संभाल सकें." यही सीता रामराज्य से पहले पति और देवर के तनिक देर दूर होने भर से हर ली गई थी. वहीँ रामराज्य में उसने 12 वर्ष तक सुरक्षित जीवनयापन किया. भले ही राम राजा थे, राज रामराज्य था, पर उसकी निर्मात्री सीता थी और सफलतम उदहारण भी सीता. सीता ऐसी नेत्री है जो अत्यंत विशेष इसलिए है क्योंकि उसने अत्यंत साधारण जीवन शैली को चुना, अपनाया और जिया. नेतृत्व का यह गुण सीता का ही चरित्र संसार के समक्ष प्रस्तुत करता है. नेत्री का अर्थ है आगे रहने वाली और हमारे मुख में भी सिया सदा राम के पहले आई -

सियाराम मैं सब जग जानी. करहु प्रनाम जोरि जुग पानी.

विद्या निवास मिश्र जी का राम विषयक साहित्यिक अवदान

ISBN: 978-1-960627-06-3

हेम कुमार गहतोड़ी
हेमवती नंदन बहुगुणा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय खटीमा विश्वविद्यालय ,
नैनीताल
(HEM.GAHTORI15@GMAIL.COM)

"विद्या निवास मिश्र जी, हिंदी साहित्य के विख्यात विद्वान हैं। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति, दर्शन और परंपराओं का गहन विश्लेषण मिलता है। राम और रामायण के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा उनके लेखन में स्पष्ट दिखाई देती है। मिश्र जी राम को न केवल मर्यादा पुरुषोत्तम मानते थे, बल्कि एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में चित्रित करते थे जो मानवीय संवेदनाओं और द्वंद्वों से युक्त होकर भी धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहते थे। उनके लिए रामकथा मात्र एक आख्यान नहीं, बल्कि भारतीय जीवन-दर्शन का आधारभूत स्तंभ थी। यह प्रेम, त्याग, कर्तव्य, नीति और धर्म जैसे जीवन-मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती थी। मिश्र जी के निबंधों में रामकथा के विभिन्न आयामों, जैसे राम का वन-गमन, रामकथा का सामाजिक प्रभाव और राम के चरित्र का विश्लेषण, का सूक्ष्म विवेचन किया गया था। वे रामकथा को एक नवीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करते थे, जो उन्हें तुलसीदास, वाल्मीकि और दिनकर जैसे अन्य कवियों और लेखकों से अलग करता था। मिश्र जी के लेखन में रामकथा एक ऐसी कथा बन जाती थी जिसके माध्यम से हम अपने समाज, संस्कृति और मूल्यों का विश्लेषण कर सकते थे। वे रामकथा के द्वारा हमें आत्म-चिंतन और मनन के लिए प्रेरित करते थे, जिससे हम अपने जीवन में सत्य, न्याय और धर्म के मार्ग पर चल सकें।

"**बीज शब्द:-** रामायण, भारतीय, जीवन-दर्शन, संस्कृति, रामकथा, मर्यादा पुरुषोत्तम

1. प्रस्तावना

विद्या निवास मिश्र जी हिंदी साहित्य के एक विशिष्ट रत्न हैं, जिन्होंने निबंध, कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास, आलोचना सहित विभिन्न विधाओं में अपनी लेखनी का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। उनका लेखन भारतीय संस्कृति, दर्शन और परंपराओं का एक प्रामाणिक चित्रण प्रस्तुत करता है, जो पाठक को गहन चिंतन और आत्म-मनन के लिए उत्प्रेरित करता है। इस शोध पत्र में हम विद्या निवास मिश्र जी के साहित्य में राम और रामायण के चित्रण पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित करेंगे, उनके दृष्टिकोण, विशेषताओं और महत्व को समझने का प्रयास करेंगे। इसके साथ ही, हम यह भी देखेंगे कि मिश्र जी का रामकथा-चित्रण अन्य लेखकों से किस प्रकार भिन्न है और उनके लेखन का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है। यह शोध पत्र रामकथा के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण योगदान होगा, क्योंकि यह भारतीय साहित्य में रामकथा की विविधता और गहराई को प्रदर्शित करता है।

रामकथा: विद्या निवास मिश्र जी के साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में

विद्या निवास मिश्र जी की अनेक रचनाओं में राम और रामायण का उल्लेख पाया जाता है। उनकी कुछ प्रमुख कृतियाँ जिनमें रामकथा का विशिष्ट रूप से निरूपण है, इस प्रकार हैं:

- **मेरे राम का मुकुट भीग रहा है:** इस निबंध संग्रह में मिश्र जी ने रामकथा के विविध पक्षों पर अपने विचार व्यक्त किए हैं, विशेष रूप से माँ कौशल्या के दृष्टिकोण से। इस संग्रह का शीर्षक निबंध, "मेरे राम का मुकुट भीग रहा है", माँ कौशल्या के वात्सल्य भाव को अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त करता है। वनवास गए राम की चिंता में लीन कौशल्या सोचती हैं कि "अरण्य-अरण्य भटकते हुए मेरे राम का मुकुट वृष्टि में भीग रहा होगा। लक्ष्मण का पटुका और सीता का सिंदूर भी।" इस निबंध में मिश्र जी ने लोकगीत "थारो राम घर लौटिहैं" की टेर का प्रयोग करते हुए कौशल्या के मन के भावों को दर्शाया है। वे लिखते हैं, "राम वन को प्रस्थान कर गए तो समस्त अयोध्या शोकाकुल हो उठती है। जन-सामान्य गा रहा है: हम ना अवध मार हबै हो रघुबर संगे जाब।"
- **राम का अयन वन:** इस निबंध में मिश्र जी ने वाल्मीकि रामायण के आधार पर राम के वन-गमन के महत्व पर प्रकाश डाला है। वे 'अयन' शब्द के दो अर्थों - 'गृह' और 'गमन' - पर गंभीर चिंतन करते हैं। तुलसीदास जी के अनुसार, राम का वास्तविक घर वह है "जहाँ श्रवण सदैव अतृप्त रहते हों, रामकथा से, समुद्र की तरह अपार, कोटिशः कथा-गंगाएँ प्रवाहित हों और समुद्र जैसा-का-वैसा आकांक्षी बना रहे।" इस प्रकार, मिश्र जी के अनुसार, "समस्त अरण्य ही, अरण्य जैसा सहज हृदय ही, नाना प्रकार के जीवन का आश्रय मन ही राम का अयन है।" वे आगे कहते हैं, "वन में आकर राम पर्णकुटी तक अपने को सीमित नहीं रखते, वे वनवासियों तक जाते हैं, उनका सुख-दुःख जानते हैं, वन में तपस्या रत ऋषि-मुनियों के पास जाते हैं और उनकी रक्षा का भार भी स्वयं वहन करते हैं।"

- **आज के राम:** इस रचना में मिश्र जी ने राम को वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत किया है। वे राम के आदर्शों को आज के युग में कैसे प्रासंगिक बनाया जा सकता है, इस पर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।
- **रामकथा: संवाद और विमर्श:** इस पुस्तक में मिश्र जी ने रामकथा के विभिन्न पात्रों और घटनाओं पर विस्तृत चर्चा की है। वे रामकथा के विभिन्न पाठों और व्याख्याओं का विश्लेषण करते हुए एक समग्र दृष्टिकोण देते हैं।

इसके अतिरिक्त, उनके कई अन्य निबंधों में भी रामकथा के विभिन्न प्रसंगों और पात्रों का उल्लेख मिलता है। उदाहरण के लिए, "रामकथा! मेरे लिए" शीर्षक निबंध में वे राम के प्रति अपने अनुराग को व्यक्त करते हुए कहते हैं, "मैं सरयूपार का निवासी हूँ, इसलिए राम के ऊपर कुछ अधिक अधिकार रखता हूँ। मेरे क्षेत्र का कोई ग्राम क्या कोई गृह नहीं जहाँ तुलसी की सुगंध व्याप्त न हो और उस सुगंध पर राम भ्रमर बनकर न रीझे हों।"

रामकथा-चित्रण की विशेषताएँ

विद्या निवास मिश्र जी ने राम और रामायण को एक नवीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। उनके लेखन में राम को मात्र एक आदर्श पुरुष, एक मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में ही नहीं, अपितु एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया गया है जो मानवीय संवेदनाओं और दुविधाओं से ग्रस्त है। वे राम को एक सामान्य मनुष्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं जो अपने कार्यों से आदर्श पुत्र, सम्मानित भाई, प्रिय पति और आदरणीय राजा का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वे राम के चरित्र की मानवीयता पर विशेष बल देते हैं, जो उन्हें एक देवत्व से अधिक एक आदर्श मनुष्य बनाता है।

मिश्र जी के अनुसार, रामकथा केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं है, अपितु यह भारतीय संस्कृति और दर्शन का एक प्रमुख आधार है। रामकथा में जीवन के विभिन्न पहलुओं - प्रेम, त्याग, कर्तव्य, धर्म, नीति - का समावेश है। रामकथा गंभीर से गंभीर कष्ट को दूर करने का एक सहज साधन है, चाहे वह कष्ट शारीरिक हो या मानसिक। वे रामकथा को जीवन जीने की कला सिखाने वाला एक मार्गदर्शक ग्रंथ मानते हैं।

विद्या निवास मिश्र जी का दृष्टिकोण

विद्या निवास मिश्र जी राम और रामायण के प्रति गहन श्रद्धा रखते हैं। वे राम को एक आदर्श व्यक्ति के रूप में देखते हैं जिनके जीवन से हमें प्रेरणा प्राप्त होती है। वे रामायण को एक ऐसा ग्रंथ मानते हैं जो हमें जीवन जीने का सही मार्ग दिखाता है। मिश्र जी ने भक्ति पर विस्तार से लिखा है। वे मानते हैं कि राम में जीवन समर्पित करने वाले व्यक्ति की बुद्धि राग-द्वेष, जाति-पाँति से ऊपर उठ जाती है। उनके लिए रामकथा एक ऐसा माध्यम है जो हमें मानवीय मूल्यों और आदर्शों से जोड़ता है।

2. तुलनात्मक अध्ययन

विद्या निवास मिश्र जी के साहित्य में राम और रामायण के चित्रण की तुलना तुलसीदास, वाल्मीकि और रामधारी सिंह दिनकर जैसे अन्य लेखकों के चित्रण से की जा सकती है। तुलसीदास जी ने राम को एक ईश्वर के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसका उत्कृष्ट उदाहरण रामचरितमानस है। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस का मंचन भी कराया था, जिसके कारण यह जन-जन तक पहुंचा और लोगों ने इसे कंठस्थ कर लिया। वाल्मीकि ने रामायण में राम को एक आदर्श राजा और योद्धा के रूप में चित्रित किया है। दिनकर जी ने राम को एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में प्रदर्शित किया है जो सामाजिक परिवर्तन के लिए संघर्ष करते हैं।

मिश्र जी का दृष्टिकोण इन सभी लेखकों से सर्वथा भिन्न है। वे राम को एक ऐसे मानव के रूप में देखते हैं जो मानवीय गुणों और कमजोरियों से परिपूर्ण है। वे राम के आदर्शों को वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत करते हैं और उनके जीवन से प्रेरणा लेने का संदेश देते हैं। वे रामकथा को एक ऐसा ग्रंथ मानते हैं जो हमें जीवन के विविध पहलुओं को समझने और उनसे निपटने में सहायता करता है।

3. महत्व और प्रभाव

विद्या निवास मिश्र जी के साहित्य में राम और रामायण का विशेष महत्व है। उनकी रचनाओं ने रामकथा को एक नवीन आयाम प्रदान किया है। उनके लेखन ने पाठकों को राम और रामायण को एक नए दृष्टिकोण से समझने में सहायता की है। मिश्र जी ने रामकथा के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला है और उसे वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। उनके लेखन ने रामकथा को एक नई प्रासंगिकता दी है और इसे समाज के विविध वर्गों तक पहुंचाया है।

4. निष्कर्ष

विद्या निवास मिश्र जी के साहित्य में राम और रामायण का चित्रण अद्वितीय है। उन्होंने रामकथा को एक नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। उनके लेखन ने राम और रामायण के प्रति हमारी समझ को गहरा किया है। मिश्र जी ने राम को एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया है जो मानवीय संवेदनाओं और दुविधाओं से युक्त है, और साथ ही एक आदर्श पुरुष भी है। उनका लेखन रामकथा के अध्ययन में एक अमूल्य योगदान है। मिश्र जी के लेखन ने रामकथा को एक नई ऊँचाई पर पहुँचाया है और इसे समाज के विभिन्न वर्गों तक प्रसारित किया है।

5. संदर्भ ग्रंथ

1. मिश्र, विद्यानिवास। (1974). मेरे राम का मुकुट भीग रहा है। राजपाल एण्डसंस।
2. मिश्र, विद्यानिवास। (2000). पाला-पोसा, खड़ा किया, चलना सिखाया, बोलना सिखाया। लोकभारती प्रकाशन।

3. मिश्र, विद्यानिवास। (2001). राम का अयन वन। अभिव्यक्ति। राजकमल प्रकाशन।
4. Exotic India Art. (n.d.). Selected Works of Vidya Niwas Mishra।
5. सिंह, रविभूषण। (2010). विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में रामकथा।
6. International Journal of Scientific Research in Education and Technology.
7. तिवारी, विनय कुमार। (2015). पंडित विद्यानिवास मिश्र का साहित्य और चिंतन।

राम के चरित्र में उनके विभिन्न जीवनमूल्यों का अध्ययन

ISBN: 978-1-960627-06-3

हेमा जोशी

सिल्वर जुबली कैंपस, हिंदी विभाग, पांडिच्चेरी केंद्रीय विश्वविद्यालय, कालापेट

(hemanainwaljoshi@gmail.com)

राम वो जिसके राज्य में प्रत्येक प्राणी शारीरिक, प्राकृतिक एवं सांसारिक तीनों प्रकार के दुखों से मुक्त होकर धर्म का पालन करते हुए प्रेम और हर्ष से अपना जीवन यापन करते थे। राम वो जो शक्ति को प्रसन्न करने हेतु सौ में एक नीलकमल के कम पड़ जाने पर अपनी माता द्वारा राजीवनयन कहे जाने से अपने नेत्रों को मां शक्ति को समर्पित कर दे। राम वो जो अपनी अपहृत प्राणप्रिया को लंका से वापस लाने हेतु विशाल समुद्र के हृदय पर पत्थरों का पुल बांध दे। जिसके प्रमाण आज भी तमिलनाडु के धनुषकोड़ी से समुद्र के अंदर दिखाई पड़ने वाले पत्थर हैं।

बीजशब्द- साकेत, राजीवनयन, नीलकमल, मर्यादा पुरुषोत्तम।

1. प्रस्तावना

भगवान श्री राम के संपूर्ण चरित्र पर दृष्टि डालने पर हम पाते हैं कि वह एक मानव के रूप में आदर्श की पराकाष्ठा प्रस्तुत करते हैं। उनके जीवन के प्रत्येक मोड़ पर संघर्ष आए परंतु वे सदैव सहज, सरल, मर्यादित, संयमित व दूरदर्शी रहे। उनका जीवन चरित्र भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व का मार्गदर्शन करता है। राम के चरित्र से अन्य सभी पंथ –संप्रदाय भी प्रेरणा प्राप्त करते हैं। वे वाल्मीकि, तुलसी के भी राम हैं और कबीर, रविदास के भी। उनके द्वारा स्थापित आदर्श जीवन मूल्य "सबके राम, सब में राम" उक्ति को चरितार्थ करते हैं।

राम का अर्थ- यह 'राम' शब्द दो वर्णों से मिलकर बना है। जहां 'र' राष्ट्र का प्रतीक है, वहीं 'म' मंगल का प्रतीक है। अतः राम राष्ट्र मंगल के प्रतीक हैं। जहां राम विद्यमान हैं, उस राष्ट्र का मंगल होना तो निश्चित ही है। 22 जनवरी 2024 को अयोध्या में रामलला की प्राण-प्रतिष्ठा राष्ट्र के मंगल का जयघोष है। जन–जन में बसने वाले राम, मन–मन में बसने वाले राम अपने जीवन चरित्र के माध्यम से निरंतर मानव जाति को जीने की कला उसकी सार्थकता और महत्व को दिखलाते हुए संपूर्ण मानव जाति के लिए एक आदर्श रूप की स्थापना करते हैं। हिब्रू भाषा में 'राम' धातु का अर्थ है ऊंचा या श्रेष्ठ होना है और संस्कृत भाषा में 'राम' का अर्थ है– ब्रह्मांड के रिक्त स्थान में समाया हुआ या व्याप्त।

राम की चारित्रिक विशेषताएं- राम अपने चरित्र के माध्यम से एक मनुष्य को आचार, विचार में कैसा होना चाहिए इसका उच्च आदर्श प्रस्तुत करते हैं। चारित्रिक विशेषताओं में राम अपूर्व मेधावी, विद्वान, दीनबंधु, गुण–शील, नीति कुशल, जितेंद्रिय, पराक्रमी, शस्त्र–शास्त्रों के ज्ञाता, युद्ध कुशल, नीति कुशल, शरणागत वत्सल, धैर्यशील, मर्यादा पुरुषोत्तम, परम विनीत, अत्यंत सरल, पितृभक्त, मातृभक्त, भ्रातृप्रेमी, मातृभूमि प्रेमी और जन–जन के नायक हैं।

2. भक्त के रूप में राम

राम वो हैं जो भक्त के रूप में शक्ति को प्रसन्न करने हेतु सौ नीलकमल अर्पित करते समय एक नीलकमल के कम पड़ जाने पर अपनी माता द्वारा राजीवनयन संबोधित किए जाने से अपने नेत्रों को कमल मानकर मां शक्ति को समर्पित करने को तैयार हो जाते हैं। "कहती थीं माता मुझे सदा राजीवनयन!

दो नीलकमल हैं शेष अभी,
यह पुरश्चरण पूरा करता हूं
देकर मातः एक नयन।"[1]

राम शिव को अपना आराध्य मानते थे। वर्तमान में तमिलनाडु में स्थित चार धाम में से एक रामेश्वरम धाम इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। रामसेतु के निर्माण के पश्चात राम बंदरों के राजा सुग्रीव को बुलाकर कहते हैं–

"हम चाहत थापन हो शिव की
यही हेतु सकल द्विज श्रेष्ठ बुलाएं"[2]

हम युद्ध प्रारंभ करने से पहले अपने आराध्य देवों के देव महादेव के लिंग की स्थापना करना चाहते हैं।

"जब राम मुहूर्त को जात लख्यों

तब रेत को थो शिवलिंग बनायो
विधिवत सोई थापि दियो उनने
तबही हनुमंत वहां पर आयो"[3]

भगवान राम ने लंका युद्ध से पूर्व इस स्थान पर भगवान शिव की आराधना की और उनके लिंग की स्थापना की। इस पूजन में रावण ब्राह्मण के रूप में उनका अनुष्ठान संपन्न कराने आया। अनुष्ठान पूर्ण करते हुए रावण बोला कि हे राम! तुमने जिस कारण यह अनुष्ठान किया वह कहो।

"भरिके जल अंजुलि में प्रभु ने
कहीं रावण को वध ध्येय हमारो।
द्विज! शंकर से करियो विनती
एहि काम में आय वे देंय सहारो"[4]

भगवान राम ने लंका युद्ध से पूर्व इस स्थान पर भगवान शिव की आराधना की और उनके लिंग की स्थापना की। मेरे अनुष्ठान को संपन्न करने वाले विप्र रूप में तुम मेरे आराध्य शंकर भगवान से प्रार्थना करो कि वह तुम्हारा वध करने में मुझे सहारा दें अर्थात् अपना आशीष प्रदान करें। रामचरितमानस में एक चौपाई आती है जहां राम कहते हैं– "शिवद्रोही मम दास कहावा/सो नर मोहिं सपनेहूं नहिं भावा" राम उन्हें अपने से बड़ा मानते हुए कहते हैं–

"शिव तो आराध्य हमारेहु हैं हमने
उनको निज इष्ट है मानो
निशिदिन मम नाम महेश जपै
मैंनेहूं अपने से बड़ों उन्हें मानो"[5]

इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका अपने आराध्य शिव के प्रति कैसा समर्पण भाव था, कैसा भक्ति–भाव था। जो महादेव निरंतर राम के नाम का जाप करते हैं, राम उन्हें अपने से बड़ा मानते हैं। अपना इष्ट मानते हैं।

3. राम पति के रूप में

राम वह जो अपनी अपहत प्राणप्रिया को लंका से वापस लाने हेतु विशाल समुद्र के हृदय पर पत्थरों का पुल बांध देते हैं, जिसके प्रमाण आज भी तमिलनाडु के धनुषकोड़ी से समुद्र के अंदर दिखाई पड़ने वाले पत्थरों के रूप में हमें दिखाई पड़ते हैं। नासा द्वारा भी इस रामसेतु के होने की पुष्टि हुई है। वनवास प्राप्ति पर जब सीता भी राम के साथ वन जाने के लिए हठ करती हैं तो राम जी उन्हें समझाते हुए कहते हैं–

"हैं कानन कष्ट अनेक सिया
बहु कांकर, पाथर, कंटक लागे
हिम आतप वारि, कठिन मग है
सब कष्ट चलें वन आगेहि आगे
तुम जानकी मान लो मोर कही
यही सेवा करो रहि सास के आगे"[6]

ये पंक्तियां राम का सीता के प्रति चिंतित होना, उनका सीता के प्रति प्रेम और संकट के समय अपनी पत्नी को सुरक्षित रखने के उपाय ढूंढना दर्शाती हैं। कुछ ऐसा ही मैथिलीशरण गुप्त की साकेत में भी दिखलाई पड़ता है। राम सीता से कहते हैं–

"आतप, वर्षा हिम सहना
बाघ भालुओं में रहना
अबलाओं का काम नहीं
खान-पान सब कुछ खोना"[7]

जब सीता को रावण छल से अपहृत करके ले जाता है तो राम बहुत ही व्याकुल हो जाते हैं और विलाप करते हुए जंगल के पेड़ों, जंतुओं से पूछते हैं कि क्या तुमने मेरी प्राणप्रिया को देखा।

"हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी
तुम देखि सीता मृगनयनी"[8]
"प्रिये–प्रिये, उत्तर दो मैं ही
करता नहीं पुकार अभग,

शून्य कुंज–गिरि–गुहा गर्त भी
तुम्हें पुकार रहे हैं सग"[9]
"खग, मृग, गिरि, राह से पूछि रहे
अति व्याकुल से हुइके रघुराई"[10]

सीता जब वन में सोने के मृग को देखती हैं तो उसे पाने की इच्छा राम के सम्मुख प्रकट करती हैं। तब राम अपनी पत्नी की इच्छापूर्ति करने हेतु एक पति के कर्त्तव्य का निर्वाह करते हुए कहते हैं–

"मर्म समझ हंसकर प्रभु बोले
सब सुचर्म पर मरते हैं
इसे मार हम प्रिये, तुम्हारी
इच्छा पूरी करते हैं"[11]

कई लोग राम के आदर्श पति होने पर एक प्रश्न चिन्ह खड़ा करते हैं कि उन्होंने अयोध्या लौटकर सीता का परित्याग कर दिया था। राम के चरित्र को देखकर विचार करें तो यह कैसे संभव है? जो पुरुष अपनी पत्नी से इतना प्रेम करता हो। जो जीवन पर्यंत एक पत्नीव्रता रहा हो। रावण की बहन शूर्पनखा के प्रेम प्रस्ताव को भी जिसने स्पष्ट रूप से मना कर दिया हो। जो सीता की छोटी से छोटी इच्छाओं का ध्यान रखता हो। जो उनके विरह में व्याकुल होता हो। जो सभी पुरुषों में उत्तम पुरुषोत्तम है। वो भी मर्यादा पुरषोत्तम है। वह ऐसा आचरण कर ही नहीं सकता। यह उसके चरित्र का विपर्यय है।

जैन राम कथा के युद्ध पर्व *76* के अनुसार, "लंका में प्रवेश कर राम सर्वप्रथम सीता से मिलने जाते हैं। देवता दोनों का मिलन देखकर पुष्प वृष्टि करते हैं तथा सीता के निर्मल चरित्र का साक्ष्य देते हैं। राम की किसी संदेह अथवा सीता की अग्नि परीक्षा की ओर संकेत मात्र भी नहीं मिलता।"[12] ऐसे ही कई रामकथाएं और भी हैं जिनमें सीता की अग्नि परीक्षा और उनके परित्याग जैसी कोई घटना नहीं मिलती है। परंतु राम के चरित्र को दूषित करने के लिए षड्यंत्रकारियों ने कालांतर में कुछ प्रक्षिप्तांश रामकथा में जोड़ दिए। आज भी हमारे समाज में नव विवाहित जोड़े को देखकर शुभकामना देते हुए कहा जाता है कि राम सीता सी जोड़ी है।

4. राजा के रूप में राम

राम वो जिसके राज्य में प्रत्येक प्राणी शारीरिक, प्राकृतिक एवं सांसारिक तीनों प्रकार के दुखों से मुक्त होकर धर्म और नीति का पालन करते हुए प्रेम और हर्ष से अपना जीवन यापन करते थे।

"दैहिक दैविक भौतिक तापा,
रामराज नहीं कहूहि व्यापा,
सब नर करहीं परस्पर प्रीति,
चलहीं स्वधर्म निरत श्रुति नीति।।"[13]

राम के राज्य में किसी का किसी से कोई बैर–भाव नहीं था। सब सुख से रहते थे।

"जबसे श्री राम ने राज कियो
दुख दूर भए सबही हर्षाये
नहिं काहु से कोई हू बैर करे
सब छोड़ विषय तन को सुख पाये"[14]

एक ऐसा राज्य जहां शेर और गाय एक ही सरोवर से पानी पीते हैं। जहां सभी पशु–पक्षी निडर और निर्भय हैं।

"संगहि जल सिंह औ धेनु पियें
भय त्यागि चरैं खग–मृग सुख पायें
गिरि रत्नमणि उर से उगलें
सरिता नित शीतल नीर दिवायें"[15]

राजा राम जिनके राज्य में प्रत्येक घर धन-धान्य से परिपूर्ण था।

"जल मांगत ही बरसैं बदरा
कृषि उत्तम होय फसल नहिं थोरी
सबके घर में धन-धान्य भरे

निशि नित्य सुलाय सुनाय कें लोरी"[16]
"मैं आर्यो का आदर्श बताने आया
जन–सन्मुख धन को कुछ तुच्छ जताने आया
सुख शांति हेतु मैं क्रांति मचाने आया
विश्वासी का विश्वास बचाने आया
मैं आया उनके हित जो तापित है
जो विवश, विकल, बल–हीन, दीन शापित हैं"[17]

अगर राजा ऐसी सोच, ऐसी विचारधारा का होगा तो निश्चित ही उसकी प्रजा को किसी भी प्रकार का दुःख, व्याधि, भय नहीं रहेगा। इन सभी तथ्यों का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि राम ने राजा का एक आदर्श रूप प्रस्तुत किया।

5. निष्कर्ष

निश्चित ही राम एक आदर्श राजा, एक आदर्श पति एवम समर्पित भक्त थे। आज हम *21*वीं शताब्दी में हैं, जहां हम उत्तर–आधुनिकता, भूमंडलीकरण के दौर से गुजर रहे हैं। वहां राम का जीवन, उनके जीवन मूल्य हम सभी के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। हमारे लिए आदर्श जीवन की प्रतिस्थापना है। *500* वर्ष के लंबे अंतराल के बाद रामलला अवधपुरी में अपने नए गृह में पुनः विराजित हो गए हैं। चहुंदिश अपार हर्ष की लहर दौड़ रही है। सभी प्राणी हर्षित हैं। पुनः राष्ट्र एक नए स्वर्ण–युग में प्रवेश कर रहा है। इस समय का शत–प्रतिशत लाभ हम तभी उठा पाएंगे जब हम राम को अपने हृदय में उतारेंगे। जब हम उनके जीवन चरित को, जीवनमूल्यों और आदर्शों को अपने जीवन में उतारने में सफल हो पाएंगे। तब वह दिन दूर नही जब भारत में पुनः रामराज्य होगा। हर व्यक्ति सुखी–संपन्न, भयरहित, रोगरहित, भेदभाव रहित होगा। राम के चरित्र को अपनाकर, उसका अनुकरण करके हम पुनः रामराज्य की स्थापना कर सकते हैं। पुनः विश्वगुरु बनने के स्वप्न को साकार कर सकते हैं।

6. संदर्भ

1. सूर्यकांत त्रिपाठी, अनामिका, राम की शक्ति पूजा, संस्करण–*1923*
2. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, पृष्ठ–*391*
3. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, छंद रामायण, पृष्ठ–*395*
4. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*,पृष्ठ–*392*
5. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, छंद रामायण, पृष्ठ–*298*
6. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, पृष्ठ-*149*
7. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत, संस्करण-*1988*, पृष्ठ-*116*
8. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस
9. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत, संस्करण-*1988,* पृष्ठ- *426*
10. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000,* छंद रामायण, पृष्ठ- *299*
11. मैथिली शरण गुप्त, साकेत, संस्करण-*1988*, पृष्ठ- *421*
12. रेवरेंड फादर कामिल बुल्के, रामकथा उत्पत्ति और विकास, हिंदी परिषद प्रकाशन, *1962,* पृष्ठ- *75*
13. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर, उत्तरकांड पद संख्या–*3*
14. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, पृष्ठ- *544*
15. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, पृष्ठ- *546, 547*
16. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000,* पृष्ठ- *547*
17. महेश चंद्र शुक्ल, छंद रामायण, राष्ट्रभाषा संस्थान, संस्करण–*1000*, पृष्ठ- *234*

"चिकित्सा विज्ञान और रामायण"

ISBN: 978-1-960627-06-3

उर्मिला त्रिपाठी
(urmilatripathi@gmail.com)

विश्वव्यापी जीवन प्रवाह में धर्म का अन्वेषण करने पर दो तथ्य उपलब्ध होते हैं, पहला 'गति 'और दूसरा 'स्थिति ', गति का परिचय जड़ चेतन के संयोग से मिलता है । जगत की गमनशीलता इसी संयोग पर निर्भर है और गति के नितांत आभाव का नाम स्थिति है । जड़ प्रकृति में उसका धर्म विद्यमान रहता है किन्तु उसे इसका ज्ञान नहीं होता । चेतन अपने धर्मभूत ज्ञान के सहारे अपने स्वरूप एवं अपने धर्म का अनुभव कर सकता है, यही अनुभूति उसकी स्वाभाविक स्थिति है।

सांख्य दर्शन के अनुसार पुरुष (चैतन्य)और प्रकृति (जड़) ये दो मूल तत्व हैं l

पुरुष (आत्मा)शुद्ध चैतन्य है और बंधन मुक्त है और प्रकृति का संबंध गुण और क्रिया से है जो इन्द्रियों, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार और पंचतत्वों के संयोग से सम्भव होते हैं l सुख -दुख मन के विकार हैं आत्मा के नहीं, परन्तु यदि मन विकारों से ग्रस्त है तो आत्मा तक पहुंचना सम्भव नहीं इसलिए मनुष्य का प्रथम धर्म है कि वो मन को स्वस्थ रखे क्योंकि मन के विकार ही शरीर की अनेक व्याधियों के कारण हैं l

मन और तन के स्वस्थ रहने से मनुष्य का संसार में अभ्युदय होता है क्योंकि इससे उसके कर्म भी अच्छे होते हैं और अगले चरण में नि:श्रेयस (आध्यात्मिक उत्थान, मोक्ष)की प्राप्ति भी होती है

महामुनि कणाद अपने वैशेषिक दर्शन में धर्म को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि "यतोभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि: स धर्म:" अर्थात् ऐसे कर्म जिससे इस लोक में उन्नति हो और परलोक (मोक्ष)की प्राप्ति हो वही धर्म है l

विद्वानों का यह निर्विवाद मत है कि बुद्धि मान सदैव श्रेय मार्ग का ही अनुसरण करता है,किन्तु लौकिक जगत में प्रेयस मार्ग से मुक्त कैसे हुआ जाए, क्योंकि लौकिक जगत मोहित करने वाला है, इसका समाधान श्रीमद भागवत में मिलता है -

धर्म आचरति: पुंसाँ वांगमन: कायबुद्धिभि: l

लोकान विशोकान वितरव्यथाऽनंत्यमसंगिनाम ll(4/14/15)

अर्थात - जब मन, वाणी, शरीर और बुद्धि से व्यक्ति स्वधर्म का आचरण करता है तब उसका वह धर्म उसे स्वर्ग आदि दुख रहित लोकों की प्राप्ति कराता है, किन्तु यदि यही धर्म का पालन मनुष्य निष्काम भाव अर्थात् बिना किसी फल या लाभ की चाह से केवल कर्तव्य समझ कर करता है तो मनुष्य निःश्रेयस की प्राप्ति कर लेता है l भगवान कृष्ण ने भी गीता में यही उपदेश दिया है l

निष्काम कर्म तभी सम्भव है जब मनुष्य यह जान ले कि वह मात्र शरीर नहीं बल्कि उससे भी परे एक शुद्ध चैतन्य आत्मा है जो परमात्मा का अंश है और जिसका वास्तविक सुख अपने अंशी तक पहुंचने में है, केवल तभी मनुष्य को सांसारिक सुखों प्रलोभन से मुक्ति मिल सकती है

1. "मुख्य विषय विस्तार"

महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी स्मृति (1/ 3) में कहते हैं कि-

समस्त विद्याओं और धर्म के चौदह स्थान हैं l पुराण, न्याय, मीमांसा, चारों वेद धर्मशास्त्र और उनसे मिश्रित छः वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष)

इन्हीं विद्याओं को सभी प्रकार के ज्ञान का प्रमाण माना गया है l

गोस्वामी तुलसीदास की कालजई रचना "रामचरित मानस" में इन्हीं ग्रंथो को आधार मानकर धर्म, नीति, आचार एवं मानव जीवन की सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान भी दिया है l

"नानपुराणनिगमागमसम्मत यदरामायणे निगदितम l"

यहां हमारे अध्ययन का विषय है "चिकित्सा विज्ञान और रामायण" अतः हम इसी विषय को ध्यान में रखकर विश्लेषण करेंगे।

गोस्वामी जी ने लिखा है कि कोई भी शारीरिक व्याधि शरीर से पहले मन को अपनी चपेट में लेती है

मन ही वास्तविक भूमि है जिसमें जैसे भाव और विचारों के बीज हम बोयेंगे वैसी ही फसल सल शरीर का पोषण या व्याधिग्रस्त करेगी, इसीलिए वे मानस रोगों को बताते हुए कहते हैं-

सुनहु तात अब मानस रोगा l
जिनते दुख पावहिं सब लोगा ll (7/120)
सभी रोगों और व्याधियों का मूल मोह है
मोह सकल व्याधिन्ह कर मूला l
तिन्ह ते पुनि उपजहि बहु सूला ll (7/121)

मोह क्या है? इसका बिलकुल सीधा उत्तर है, दूसरों से स्वयं के लिए सुख की चाह रखकर प्रेम करना, रिश्ता कोई भी हो जब हम अपने सुख के लिए दूसरों से प्रेम करते है और वे अपेक्षाएं पूर्ण नहीं होतीं तब हृदय में पीड़ा के साथ साथ नकारात्मक भाव और चिंतन आता है इसका परिणाम ये होता है कि अपने प्रिय ही शत्रु की भांति लगते हैं और शरीर में बदले की भावना, जलन उत्पन्न होती है जिसको चिकित्सा में तेजाब या एसिड भी कहते है l यही एसिड सभी शारीरिक व्याधियों का मूल तत्व है l

इससे बहुत सारे रोग बनते हैं l

इसके बाद जो तीन अन्य कारण हैं वे हैं, वात, पित्त और कफ l इनके भी मूल मन के तीन विकार हैं

वात का मूल काम
पित्त का मूल क्रोध
कफ का मूल लोभ
काम वात, कफ लोभ आपारा l
क्रोध पित्त नित छाती जारा ll

मन में काम क्रोध और लोभ का असंतुलन शरीर में वात पित्त कफ के असंतुलन के रूप में प्रकट हो कर अनेक रोगों का कारण बनता है l

और कहीं तीनों एकसाथ बढ़े तब तो शरीर की दुर्गति कहना ही क्या।

प्रीत करहिं जो तीनउ भाई l
उपजहि सन्निपात दुखदाई ll

इन तीनों मूल कारणों के अतिरिक्त भी अनेक विकार और भी हैं जिनसे तरह तरह की व्याधियां उत्पन्न होती हैं जैसे-

ममता दादु कण्ड ईर्ष्याई l
हरष विषाद गरह बहुताई ll

अर्थात ममता (मेरा, मेरा करना) से दाद का रोग

ईर्ष्या से खुजली

अधिक विषाद से जलन और गले के रोग घेंघा, कंठमाला आदि l

दूसरों का सुख देखकर जलने से क्षय रोग और मन की कुटिलता, कपट और दुष्टता से कुष्ठ रोग उत्पन्न होता है l

अहंकार अति दुःखद डमरूआ l
दम्भ कपट मद मान नेहरूआ ll
तृष्णा उदर वृद्धि अति भारी l
त्रिविध ईषना तरुन तिजारी ll
जुग विधि ज्वर मत्सर अविवेका l
कँह लगि कहूँ कुरोग अनेका ll

अर्थात- अहंकार अत्यंत दुख देने वाला डमरू रोग (गांठ का रोग)उत्पन्न करता है, जिसको अब कैंसर भी कहते हैं

दम्भ, कपट, मद और मान से नसों के रोग उत्पन्न होते हैं जिनको आधुनिक चिकित्सा में न्यूरोलॉजिकल डिजीजेज कहते हैं l

तृष्णा बड़ा भारी रोग बनाती है जिससे जलोदर या शरीर में जल की मात्रा अधिक हो जाती है l

शास्त्रों में जिन तीन सांसारिक ऐष्णाओं (सुत, बित, लोक)का वर्णन मिलता है इनके असंतुलन से प्रबल तिजारी जिसको हर तीसरे दिन शरीर का ताप बढ़ना कहते थे और वर्तमान में जो अनेक प्रकार के बुखार है, वे उत्पन्न होते हैं l

मत्सर और अविवेक से अन्य दो प्रकार के ज्वर बनते है l

एक व्याधि वश नर मरहीं,
है असाधि बहु व्याधि l

पीड़हिं संतति जीव कहुँ,
सो किमि लहै समाधि ।।

अर्थात- उपरोक्त सभी व्याधियों में से एक ही व्याधि जीव को मारने में सक्षम है किन्तु यहां तो अनेक व्याधियां हैं जिन्होंने मानव मन और शरीर को अपनी चपेट में ले रखा है ये सभी बीमारियां मन से तन में फैलकर असाध्य होती जा रही हैं ऐसी दशा मे शांति कहां मिलेगी और समाधान क्या है?? एक सच्चे संत और सच्चे कर्तव्यनिष्ठ चिकित्सक का यही लक्षण है कि वे केवल समस्या ही नहीं बताते बल्कि उसका स्थाई समाधान और इलाज भी बताते हैं

गोस्वामी जी ने भी समाधान बताया-

नेम धर्म आचार तप ज्ञान यज्ञ जप दान
भेषज पुनि कोटिन्ह नहीं
रोग जांहि हरि जान ।।
अर्थात- नियम का पालन
प्रकृति के अनुकूल चलो
जल्दी सोना, जल्दी जागना-----

धर्म - स्वभाव (अपनी मूल प्रकृति) को जानो और उसके अनुकूल आचरण करो ।

आचार- अच्छे आचरण और व्यवहार करो, किसी की आत्मा को कष्ट मत दो

तप- संतुलन का अभ्यास ही तप है । मन, वाणी और कर्म तीनो पर

यज्ञ- परहित चिंतन और कर्म ही यज्ञ है ।

जप- निरंतर परमात्मा की उपस्थिति का ज्ञान ही जप है इससे मन बुरे विचारों और कर्मो से बचा रहता है। दान - दान का अर्थ है देना जो कि प्रकृति का मूल स्वभाव है इसीलिए प्रकृति द्वारा निर्मित मानव भी जितना दान से प्रसन्न होता है उतना भोग से नहीं, दान के लिए हर मनुष्य के पास कुछ ना कुछ अवश्य होता है इसलिए ये स्वभाव विकसित करें

और चिकित्सकों द्वारा दी गई औषधियों उनके निर्देशन में सेवन, इन सभी उपायों से मनुष्य को सांसारिक व्याधियों से आराम मिलता है किन्तु ये समाधान भी स्थाई और कल्याण कारी तभी होंगे जब मूल समाधान पर मानव का दृढ़ विश्वास होगा वो मूल समाधान संजीवनी बूटी है सभी रोगों के लिए वो क्या है देखें --

रघुपति भगति संजीवनी मूरी।
अनूपान श्रद्धा मति पूरी ।।
एहि विधि भलेई सो रोग नसाहीं ।
नहीं त जतन कोटि नहि जाहीं ।।

अर्थात--

प्रभु की भक्ति ही एकमात्र समाधान है ।

2. "निष्कर्ष"

निरंतर हृदय में ईश्वर के प्रति समर्पण भाव से संसार के सभी कर्तव्य निभाने से अहंकार शून्यता बनी रहती है जो कि मूल समाधान है

भगवान कृष्ण ने गीता में मुख्य तीन बातों पर बल दिया -

1. संतुलन-समत्वम योगमुच्यते
2. निष्काम कर्म -बिना किसी अपेक्षा के अपना कर्तव्य निभाओ
3. शरणागति मामेकम शरणम

बस यही समाधान हैं

3. "संदर्भ ग्रंथ"

1. यज्ञवल्क्य स्मृति
2. वैशेषिक दर्शन
3. रामचरितमानस
4. भगवदगीता

हनुमान चालीसा- एक आधुनिक परिकल्पना

ISBN: 978-1-960627-06-3

Avi Sharma
(aviisinfinity@gmail.com)

1. प्रस्तावना

काशी के उन घाटों पर लिखी गयी, अभिनव वाल्मीकि कहे जाने वाले श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित हनुमान चालीसा को कई विद्वानों द्वारा सबसे संक्षिप्त वेद भी कहा गया है। मात्र ४० चौपाइयों के इस अति लघु एवं काव्यात्मक ग्रन्थ को हर घर में गया जाता है तथा इसके वीडियो और संगीत भी अत्यंत लोकप्रिय हैं। परन्तु इसे ऐसे ही ग्रन्थ नहीं कहा गया है, इसकी हर चौपाई अपने भीतर कुछ गूढ़ार्थ छिपाए है। हम १६ वीं शताब्दी से लेकर आजतक हम सभी के घरों में हनुमान चालीसा का पाठ होता आया है परन्तु आज भी अधिकतर लोग इसकी चौपाइयों के अर्थ को नहीं जानते हैं, तो इसमें छिपे गूढ़ार्थ की बात तो छोड़ ही दो। इस लेख में मैं प्रभु की कृपा से यह पूर्ण प्रयास करूंगा कि मैं हनुमान चालीसा की एक आधुनिक परिकल्पना अर्थात उसके गूढ़ार्थ जो आज जनमानस को ज्ञात नहीं तथा जो हमारा हनुमान चालीसा को देखने का नजरिया पूर्णतः बदल देंगे, मैं उन्हें जनमानस तक पहुंचाऊं तथा इस ग्रन्थ के रससागर का अमृत सभी को प्राप्त हो।

2. विस्तार

श्रीगुरु चरन सरोज रज, निजमन मुकुरु सुधारि।
बरनउं रघुबर बिमल जसु, जो दायक फल चारि।।म. दो. १।।

गोस्वामी जी ने इस पावन ग्रन्थ का आरम्भ अपने गुरु श्री नरहर्यानंदाचार्य जी की वंदना कर करते हैं। यहाँ सबसे प्रथम शब्द ‘श्री’ आदिशक्ति माता सीता का प्रतीक है। गोस्वामी जी कहते हैं कि मेरे मन का दर्पण जिसने प्रभु श्री राम की छवि विराजमान है, उसे मैं अपने गुरु नरहरि दस जी के श्रीचरणों की रज (धूल) से साफ़ / पवित्र करता हूँ अर्थात गुरु के श्रीचरणों की कृपा के प्रताप के बिना श्रीराम प्रभु को पाना गोस्वामीश्री जैसे संत के लिए भी असंभव है।

इसके पश्चात वह कहते हैं कि अब मैं श्री रामचंद्र भगवान् के निर्मल यश का वर्णन करता हूँ जो चार फल देता है। दरअसल ‘हनुमान’ चालीसा में ‘श्रीराम’ जी के यश वर्णन की बात गोस्वामीश्री इसीलिए कहते हैं क्योंकि श्रीहनुमंतप्रभु कभी भी अपनी प्रशंसा सुन प्रसन्न नहीं होते। जहाँ रामनाम तथा श्री राम की कथा का गान हो, हनुमानजी वहां प्रसन्नता पूर्वक रहते हैं। कहा जाता है कि शुरुआत में गोस्वामी जी ने इस ग्रन्थ का प्रारम्भ हनुमानजी के गुणगानसे ही किया था, परन्तु यह हनुमानजी को पसंद नहीं आया। तब तुलसीदासजी ने अयोध्याकाण्ड के मङ्गलाचरण के इस दोहे से इस ग्रन्थ की शुरुआत करि। रामजी का यशगान चार फल अर्थात चार ‘पुरुषार्थों’ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) का प्रदाता है क्योंकि प्रभु स्वयं ही मर्यादा ‘पुरुषोत्तम’ हैं।

बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुधि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेस बिकार।।म. दो. २।।

इस दोहे में कहा गया है कि हे की मैं (गोस्वामीजी) अपने आप को बुद्धिहीन जानकर पवनदेव के पुत्र पवन-कुमार का स्मरण करता हूँ। यहाँ गोस्वामी जी ने अपने आप को मूर्ख बता कर अपनी बुद्धिमत्ता का सर्वश्रेष्ठ उदहारण दिया है क्योंकि वह जानते हैं कि हनुमान जी इस विश्व के सबसे बड़े बुद्धिमान हैं (मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतम् शरणं प्रपद्ये।। -रामरक्षास्तोत्र) और उनके सामने अपने आप को बुद्धिहीन से ज्यादा कुछ भी बताना बुद्धिमानी न होगी। यहाँ बुद्धि से अर्थ है।

अब गोस्वामीश्री ने हनुमानजी से बल (शारीरिक तथा मानसिक शक्ति), बुद्धि (ऐसी बौद्धिक क्षमता तथा चेतना जिसे भगवत्सेवा में लगाया जा सके) तथा विद्या (भगवद् ज्ञान जिससे विनम्रता आती हो {विद्या ददाति विनयं}) की मांग करते हैं और कलेश (जिन्हे शास्त्रों में ५ प्रकार का बताया गया है) तथा विकार (कुल ६ : काम, क्रोध, लोभ, मोह, माध, मात्सर्य) जो कुल मिला कर ११ होते हैं उन्हें शिवजी के एकादशवे (११ वे) रुद्रावतार श्री हनुमंतलाल जी द्वारा हरे जाने की प्रार्थना करते हैं।

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर।
जय कपीस तिहुं लोक उजागर।।१।।

यहाँ हनुमान चालीसा का चौपाई भाग प्रारम्भ होता है जिसकी शुरुआत गोस्वामीश्री ने हनुमानजी के पतितपावन नाम के जयघोष से की है। हनुमान नाम का एक अर्थ यह भी बताया जाता है कि हनुमान वह हैं जिन्होंने अपने मान का हनन कर लिया है। श्री मारुती को यहाँ ज्ञान तथा गुणों का सागर

बताया गया है। हनुमानजी ने विश्व का समस्त ज्ञान सूर्य देव से प्राप्त किया था जो इस पूरे संसार का निरिक्षण करते हैं तथा जिन्हे सबसे पहले प्रभु श्रीकृष्ण से श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान प्राप्त हुआ था। जब प्रथम बार प्रभुराम हनुमानजी से मिलते है तो उनकी वाणी सुन यह कहते हैं कि आप अवश्य ही वेदों के विद्वान हैं। अक्सर ऐसा देखा जाता है कि जिसके पास ज्ञान हो उसके पास गुण नहीं होते और इसका विपरीत भी। परन्तु हनुमानजी में यह दोनों एकसाथ मौजूद हैं तथा अनंत मात्रा में हैं (चूंकि उनकी तुलना सागर से की गयी है जिसे सबसे विशाल तथा अनंत कहा जाता है।

प्रभु को यहाँ कपीश अर्थात वानरों का ईश/राजा/ईश्वर कहा गया है। वैसे तो कपीश की उपाधि होनी सुग्रीव के पास चाहिए, परन्तु उन्होंने ही हनुमंतलालजी को कपीश कहा है अर्थात सभी वानरों का राजा तथा उनमे सबसे श्रेष्ठ। गोस्वामी जी लिखते है कि हनुमानजी तीनों लोकों को उजागर कर देते हैं अर्थात वह वायु की गति से पूरे विश्व में कहीं भी आ-जा सकते हैं तथा उनके तेज से सब लोक प्रकाशित हैं। यह कुछ संत यह भी मानते हैं कि चूंकि हनुमानजी वायुपुत्र हैं और वायु के बिना किसी लोक में कोई जीवित नहीं रह सकता, इसीलिए हनुमानजी से तीनों लुक उजागर होते हैं।

राम दूत अतुलित बल धामा।
अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा।।२।।

हनुमानजी श्री राम के दूत हैं, जो श्री राम नाम का प्रचार राक्षसों की नगरी लङ्का तक कर आये। दूत से मिले बिना उनके स्वामी से मिलना उचित नहीं माना जाता क्योंकि दूत अपने स्वामी तक आपका सन्देश बेहतर तरह से पहुंचा सकता है। ऐसे ही यदि श्री राम को प्राप्त करना हो तो हनुमानजी की भक्ति अत्यंत आवश्यक है। हनुमानजी में अतुलित बल है, अर्थात इतना बल जिसकी कोई तुलना न हो सके (अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्। सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।। -सुन्दरकाण्डीय मङ्गलाचरण श्लोक ३)। एक समय जब वाली और हनुमानजी का द्वन्द होना था, तब वाली इंद्र द्वारा भेंट किया गया एक दिव्य हार पहन कर गया था जिससे प्रतिद्वंदी की आधी शक्ति हार पहननेवाले में आ जाती है। जब द्वन्द के लिए दोनों आमने सामने आये, तब वाली के शरीर में अत्यंत पीड़ा हुई और ऐसा लगा की अभी उसकी मृत्यु हो जाएगी क्योंकि हार हनुमानजी की शक्ति खींच रहा था परन्तु चूंकि हनुमानजी की शक्ति का कोई अंत नहीं, उनकी लेशमात्र शक्ति ही वाली को मृत्यु देने के लिए पर्याप्त थी।

हनुमानजी माता अञ्जनी और वानरराज केसरी के पुत्र थे इसीलिए उन्हें आञ्जनेय भी कहा जाता है। चूंकि शिव जी के तेज का अंश अञ्जनी और केसरी जी को पवन देव से प्राप्त हुआ था, इसीलिए हनुमानजी को पवन पुत्र भी कहा जाता है।

महाबीर बिक्रम बजरंगी।
कुमति निवार सुमति के संगी।।३।।

हनुमानजी वीर नहीं परन्तु महावीर हैं। वह चाहते तो रावण, कुम्भकर्ण तथा पूरी लङ्का के समस्त राक्षसों का अंत स्वयं ही कर सकते थे, परन्तु चूंकि प्रभु श्री राम को रावण-कुम्भकर्ण बने जय-विजय को स्वयं अनुगृहीत किया करना था, इसीलिए हनुमानजी पीछे हट गए। हनुमानजी ऐसे महावीर हैं जो ना की बाह्य असुरों का संहार करते हैं, परन्तु अपने भक्तों के मन के आन्तरिक क्षत्रुओं का भी मर्दन करते हैं। वह बजरंजी यानि की वज्राङ्गी हैं। वह अपने भक्तों की कुमति को निवार कर उन्हें सुमति की ओर ले जाते हैं अर्थात जो भी हनुमान चालीसा का पाठ करेगा उसे सही और गलत के बीच का भेद पूर्णतः समझ में आ जाता है।

कंचन बरन बिराज सुबेसा।
कानन कुण्डल कुँचित केसा।।४।।

हनुमान जी का वर्ण (रंग) यहाँ स्वर्ण का बताया गया है। इसका एक कारण संतजन यह भी बताते हैं कि रामनाम लेने के कारण उनसे इतना तेज उत्पन्न होता है कि उस तेज की आभा में हनुमानजी भी स्वर्ण के प्रतीत होते हैं। हनुमानजू का वेश अत्यंत सुन्दर और मनमोहक है जो उनके घुंघराले बालों से शोभित है। उन्होंने कानों में सुन्दर कुण्डल धारण किये हैं। कहा जाता है कि एक समय एक भविष्यवाणी द्वारा वाली को यह ज्ञान हो गया की अञ्जना जी की कोख में पलने वाला बालक उसके अंत का कारण बनेगा (चूंकि हनुमानजी ने सुग्रीव को रामजी से मिलाया जिन्होंने वाली का अंत किया)। इसीलिए वाली ने अञ्जना माता को पंचधातु का विष एक सेविका के द्वारा भोजन में दिलवा दिया ताकि माता और उनकी कोख में पलने वाला पुत्र, दोनों का अंत हो जाए। पर हनुमानजी के प्रताप से उस पंचधातु के विष का माता पर कोई प्रभाव न हुआ उल्टा उन पंचधातु के ही कुण्डल धारण कर हनुमानजी प्रकट हुए।

हाथ बज्र औ ध्वजा बिराजे।
कांधे मूंज जनेउ साजे।।५।।

प्रभु हनुमानजी के एक हाथ में राम नाम की ध्वजा (पताका- यह राम नाम का तो प्रतीक है ही परन्तु मारुती पर पवनदेव के आशीर्वाद का भी प्रतीक है क्योंकि ध्वजा को फहरने के लिए वायु की आवश्यकता होती है) है तो दुसरे हाथ में वज्र (दिव्या गदा- जो उन्हें कुबेर से प्राप्त हुआ था) और कंधे पे सुशोभित है मूँज (ताज धार युक्त लम्बी जंगली घाँस) का जनेऊ जो उनके अखंड ब्रह्मचर्य का प्रतीक है। यह दर्शाता है कि हमें भी शास्त्रों तथा राम नाम का प्रचार करना चाहिए परन्तु समय आने पर शस्त्रों में भी पारंगत होना चाहिए।

शंकर सुवन / स्वयं केसरी नंदन।
तेज प्रताप महा जग वंदन।।६।।

यह चौपाई अक्सर चर्चित रहती है क्योंकि इसमें एक ऐसा पाठभेद है जिसपर सालों से चर्चा होती आयी है। हनुमानजी शंकर सुवन (अर्थात शंकर जी के पुत्र) हैं या फिर शंकर स्वयं (शिवजी ने स्वयं ही हनुमान अवतार लिया है)। मेरे हिसाब से दोनों ही एक तरह से सही हैं। हनुमानजी का जन्म चूंकि शिव जी के तेज से हुआ है तो एक तरह से वह उनके पुत्र हुए। पर हनुमानजी के रूप में अवतार स्वयं शिवजी ने ही लिया है, तो इस तर्क से दूसरा पाठ भी सही जान पड़ता है। क्योंकि सनातन धर्म में अवतार के एक अंश एक पुत्र के रूप में ही देखा जाता है, इसीलिए दोनों पाठ सही हैं। हनुमानजी केसरी जी के क्षेत्रज पुत्र हैं क्योंकि वह उनके घर उनकी पत्नी माता अञ्जना और उनके यहाँ प्रकट हुए हैं।
हनुमानजी महान तेज और प्रताप के स्वामी हैं जो सकल जगत में वन्दित हैं।

बिद्यावान गुनी अति चातुर।
राम काज करिबे को आतुर॥७॥

हनुमानजी विद्वान ही नहीं, वह विद्यावान अर्थात समस्त विद्याओं की खान हैं। जब पहली बार वह रामजी से मिले, तो उनका पांडित्य उनके वचनों से ही झलक रहा था जिसका वाल्मीकि जी वर्णन करते हैं। हनुमान जी ने विद्या ली है सूर्य देव से, जिन्हे इस समस्त ब्रह्माण्ड का ज्ञान है। और हनुमानजी तो अपने गुरु से भी १० कदम आगे थे। हनुमान जी को पहली रामायण लिखने वालाभी कहा जाता है।

श्री मारुती हमेश ही श्री राम जी के कार्य करने के लिए आतुर रहते है क्योंकि यही उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य है और उनके अवतार का भी। जहाँ बात राम जी की सेवा की हो, वहाँ हनुमानजी के बराबर कोई नहीं।

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया।
राम लखन सीता मन बसिया॥८॥

हनुमानजी प्रभु राम का चरित्र वर्णन एवं उनकी कथा सुनने को सदा आतुर रहते हैं। श्रीराम ने उन्हें वरदान दिया था की जब तक इस संसार में राम कथा रहेगी, तब तक हे हनुमानजी, आप भी इस धरा पर रहेंगे। हनुमानजी एक बूढ़े व्यक्ति का रूप धर तुलसीदास जी की रामायण कथाओं में सबसे पूर्व आकर सबसे अंत में जाते थे। जब उन्हें इस बात का ज्ञान एक प्रेत से हुआ, तब उन्होंने हनुमानजी को कथा में रोक उनसे भेंट की थी। आज भी जहाँ रामचरितमानस का पाठ होता है वहां अदृश्य रूप में ही सही, हनुमानजी विराजमान अवश्य होते हैं।

राम सभा में हनुमानजी ने अपनी छाती फाड़ कर अपने हृदय में श्री राम सीता और लक्ष्मण जी के होने का प्रमाण दिया था जिसका इस चौपाई में वर्णन है।

सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा।
बिकट रूप धरि लंक जरावा॥९॥

हनुमानजी ने अणिमा सिद्धि का प्रयोग कर माता सीता को अपना सूक्ष्म रूप दिखाया। जब माता के मन में संदेह उठा की इतने छोटे वानर राक्षसों का सामना कैसे करेंगे तब हनुमानजी ने महिमा सिद्धि का प्रयोग कर विराट स्वरुप लिया और उसी स्वरुप में पूरी लंका का दहन कर दिया। यहाँ इस बात की सीख मिलती है कि जब भी अपने से किसी बड़े अथवा आदरणीय व्यक्ति के पास (जैसे गुरु, माता-पिता, आदि के समक्ष) जाएं तो आपका कितना ही बड़ा पद हो, परन्तु उनके सामने सदैव झुक के और छोटे बनकर रहें।

भीम रूप धरि असुर संहारे।
रामचन्द्र के काज संवारे॥१०॥

हनुमानजी ने भीम जैसा स्वरुप (बलिष्ट रूप) लेकर असुरों का संघार किया। हनुमानजी और भीम दोनों को ही वायु का पुत्र बताया गया है। एकबार जब भीम को अपने बल पर अहंकार आ गया था तब हनुमानजी एक वृद्ध वानर के रूप में उनके समक्ष प्रकट हुए और उनसे अपनी पूँछ को हटाने की विनती करि। भीम के पूरा बल लगाने के बावजूद भी वह पूँछ न हिली। तब हनुमानजी ने भीम को दर्शन दे उसके अहंकार का मर्दन किया।
हनुमानजी चाहे सूक्ष्म रूप लें या भीम रूप या विराट रूप, यह सब वह श्री राम जी के कार्य हेतु ही करते हैं। हनुमानजी के द्वारा किया गया हर कर्म इसी दिशा में होता है कि वह कैसे श्री राम जी के काज संवार सकते हैं। संतों ने हनुमानजी की लीला जो श्री राम की लीला के श्रृंगार के रूप में बताया है।

लाय सजीवन लखन जियाये।
श्री रघुबीर हरषि उर लाये॥११॥

जब लक्ष्मण इंद्रजीत के शक्तिबाण से मूर्छित हो गए थे, तब वैद्यराज सुषेण के कहने पर हनुमानजी सूर्योदय से पूर्व द्रोणाचल से द्रोणगिरि पर्वत उठा लाए थे जिससे संजीवनी बूटी प्राप्त हुई थी और लक्ष्मण जी के प्राण बच सके थे। हनुमानजी श्रीराम के विश्वास का प्रतीक हैं। जब संजीवनी से लक्ष्मण जी पुनः उठ खड़े हुए, तब हर्ष से हनुमानजी को श्रीराम जी ने गले से लगाकर उनका आभार माना।

रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई।
तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई॥१२॥

रघुकुल के नाथ श्री राम जी हनुमानजी के इस कार्य की खूब प्रशंसा करते हुए यह और आगे की कुछ चौपाईयाँ कहते हैं। वह हनुमानजी को भरत के समान प्रिय भ्राता कहते हैं। भरत श्री राम जी को अत्यंत ही प्रिय हैं क्योंकि वह त्याग और वैराग्य की मूरत हैं। इसीलिए भरत जी श्री राम जी के सबसे प्रिय भ्राता हैं, और जहाँ तक बात रही लक्ष्मण जी की, तो वो तो प्रभु के प्राण ही हैं।

सहस बदन तुम्हरो जस गावैं।
अस कहि श्रीपति कण्ठ लगावैं॥१३॥

सहस्र मुखों वाले शेषनाग / लक्ष्मण जी अपने हज़ारों मुखों से आपका सदैव यशगान करेंगे (क्योंकि आपने उन्हें नवजीवन प्रदान किया है), ऐसा कहकर श्री (लक्ष्मी) के स्वामी श्री राम जी हनुमान जी को गले से लगा लेते हैं। यहाँ प्रभु को श्रीपति के नाम से इसीलिए सम्बोधित किया गया है चूंकि हनुमानजी जिन्होंने उनके भाई को एक नया जीवन दिया है, उनको श्री राम जी अपने पूरे ऐश्वर्य के साथ गले लगाते हैं।

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा
नारद सारद सहित अहीसा॥१४॥

साथ ही साथ सनकादि ऋषि (सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार), ब्रह्माजी - माँ सरस्वती, नारद आदि महान ऋषिगण और देवगण हनुमानजी का गुणगान करेंगे। अहीश यानी की श्री विष्णु और शिवजी भी हनुमानजी का यश कहते हैं। यहाँ यह समझाया जा रहा है कि इस पूरे विश्व के सभी देवी-देवता, दिव्य जीव, भगवान सब हनुमानजी का गुणगान करते हैं।

जम कुबेर दिगपाल जहां ते।
कबि कोबिद कहि सके कहां ते॥१५॥

जिस महान यश को (हनुमान जी के गुण और यश) यम, कुबेर और अन्यान्य दिग्पाल (दिशाओं के स्वामी) गाते हैं उसे सामान्य कवी और कोविद (वेदों के विद्वान) कैसे कह सकेंगे? यहाँ गोस्वामी जी ने विद्वानों की तुलना उनसे की है जो १० दिशाओं के स्वामी हैं (१० दिग्पाल: ब्रह्मदेव, ईशान (शिव), इंद्र, अग्नि, यम, नऋति, वरुणदेव, वायुदेव (पवनदेव), कुबेर, अनंतशेष (शेषनाग)) और पूरे विश्व का समस्त ज्ञान रखते हैं।

तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा।
राम मिलाय राज पद दीन्हा॥१६॥

जब हनुमानजी ने अपने गुरु सूर्यदेव को गुरुदक्षिणा के विषय में कहा, तब सूर्यदेव ने उनसे अपने पुत्र सुग्रीव की इंद्रपुत्र बाली से सुरक्षा करने को कहा (सुग्रीव वाली आदि देवताओं के अंश थे जैसे हनुमानजी रुद्रावतार थे)। हनुमानजी ने न सिर्फ सुग्रीव की सुरक्षा की, बल्कि संदिग्ध गुप्तचरों को उनके असल स्वरुप में पहचान कर श्री राम और लक्ष्मण जी को सुग्रीव से मिलवाया और उनकी मैत्री करवाई जिससे अंततः सुग्रीव वानरराज हुए। तो यह कहना सही है कि हनुमानजी ने सुग्रीव जी जो राजपद प्रदान करवाया।

तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना।
लंकेश्वर भए सब जग जाना॥१७॥

लङ्का पहुँच जब हनुमंतलालजू ने तुलसी का पौधा, रामायुध चिह्न आदि देखे और विभीषण के मुख से राम नाम सुना तब उन्होंने विभीषण से मिल उन्हें पूरी कथा सुनाई। विभीषण प्रभु के भक्त तो थे परन्तु वह इस बात को लेकर संकोच में थे की क्या भानुकुल के नाथ मुझ जैसे राक्षस कुलोत्पन्न, तामस देह वाले व्यक्ति पर क्या कृपा करेंगे ? तब हनुमानजी ने उन्हें समझाया की जो राम नाम लेते हैं और राम काज करते हैं, उन सेवकों पर श्री राम जी की बड़ी प्रीति होती है। विभीषण जी ने हनुमान जी को उनका रूप धर कर अशोकवन में जाने की सलाह दी तो इसके बदले में श्री हनुमान जी ने उन्हें सर्वेश्वर भगवान की शरण प्रदान की और प्रभु ने तो उन्हें लङ्कानरेश ही बना दिया। जब लक्ष्मण जी ने पुछा की कल को अगर रावण आपकी शरण में आ जाता तो आप क्या करते, तब प्रभु ने कहा की मैं रावण को अयोध्या दे देता, भरत और रिपुसूदन को अपना साकेत धाम दे देता और जीवन भर उनकी सेवा करता परन्तु विभीषण को लङ्का का राज अवश्य देता।

उपर्युक्त दो चौपाइयों में गोसाईं जी ने बताया है कि कैसे सुग्रीव और विभीषण पर भगवद्कृपा के कारण श्री हनुमानजी हैं। यहाँ यह भी दर्शाया गया है कि जिसपर भी हनुमानजी कृपा करते हैं वह अंततः राज करता है। अगर हनुमानजी को रामायणकाल के चाणक्य की उपाधि दें तो गलत नहीं होगा।

जुग सहस्र जोजन पर भानु।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू॥१८॥

प्रभु हनुमानजी ने बाल्यावस्था में जब क्षुधावश सूर्यनारायण को फल समझ उन्हें खाने का प्रयास किया था, उसी प्रसङ्ग का गोस्वामी जी वर्णन कर रहे हैं। पहली पंक्ति में वह कहते हैं कि सूर्य धरती से युग सहस्र योजन पर था। सामान्य जन इसका अर्थ अनेकों करोड़ों योजन से करते हैं। परन्तु अगर हम इसे गणित की दृष्टि से देखें तो जान पड़ता है कि युग को शास्त्रों में १२,००० देववर्षों के बराबर कहा गया है, सहस्र शब्द अधिकतर १,००० की संख्या के लिए प्रयुक्त होता है तथा योजन दूरी का एक माप है जिसे ८ मील या १२.८ कि.मी., गणितज्ञों द्वारा बताया जाता है। अगर हम युगसहस्रयोजन की संख्याओं का गुणा करें तो हमें १५,३६,००,००० कि.मी. का माप प्राप्त होता है जो सूर्य की धरती से असल अधिकतम दूरी

१५,२०,८०,००० कि.मी. से काफी हद तक मिलता है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि गोस्वामीश्री ने १६वी शताब्दी में बिना किसी आधुनिक उपकरणों के धरती से सूर्य की दूरी को इतनी सटीकता से बताया है क्योंकि तुलसीदास जी को ज्योतिषशास्त्र का भी विद्वान भी माना जाता है।

जब हनुमानजी सूर्य को मुख में गृहण करने का प्रयास कर रहे थे तब उन्हें रोकने के लिए इंद्र ने उनकी ठोड़ी (हनु) पर अपने वज्र से प्रहार किया था, परन्तु इससे भी उनकी थोड़ी को कोई नुकसान नहीं हुआ। इसीलिए ही उनका नाम हनुमान पड़ा और उन्हें बजरंगी (वज्रांगी: वज्र के सामान दृढ़ तथा बलिष्ठ अंगों वाला तथा जिसके अंग पर वज्र का भी प्रभाव न हो) कहा जाने लगा।

प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं।
जलधि लांघि गये अचरज नाहीं॥१९॥

हनुमानजी को श्रीरामचन्द्र भगवान् ने माँ सीता को अपने चिह्नस्वरूप देने हेतु राम नामांकित मुद्रिका दी थी। कहा जाता है यह मुद्रिका दशरथ जी द्वारा सीताजी को मुँह दिखाई के अवसर पर दी गयी थी जिसमे सीता जी के स्वामी श्री राम जी का नाम था। जब बारी आयी केवट का ऋण चुकाने की तो माता सीता ने उन दो आभषणों में से एक जो वह वनवास में साथ लाईं थी (चूड़ामणि और राम मुद्रिका) वह मुद्रिका राम जी को दी थी ताकि वह उसे केवट को प्रदान करें। पर चूंकि केवट ने प्रभु से उसे भवसागर पार कराकर ऋण उतारने को कहा, वह मुद्रिका राम जी के पास ही रह गयी। जब राम जी ने वह मुद्रिका हनुमानजी को दी तो उन्होंने तुरंत ही उसे मुख में धारण कर लिया। जब उनसे इसका कारण पुछा तब उन्होंने बताया की इस मुद्रिका पर जो अंकित है (रामनाम) उसे हमेशा मुख में धारण करना चाहिए।

यह इस मुद्रिका का ही प्रताप था की १०० योजन के समुद्र को हनुमान जी ने बिनाकिसी कठिनाई के लांघ लिया। हालांकि सुरसा तथा सिंहिंका जैसी कईं अडचने आईं, परन्तु हनुमान जी ने बिना अचरज के उन्हें हराकर लङ्का तक का सफर तय किया। इस सन्दर्भ में हनुमानजी को उस गुरु के रूप में देखा जाता है जो प्रभु के धाम से प्रभु का नाम लेकर भवसागर पार कर इस मायाजगत रुपी लङ्का में फसे जीव को रामनाम देते हैं और उनका प्रभु से मिलने का मार्ग प्रशस्त तथा सुगम करते हैं।

दुर्गम काज जगत के जेते।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते॥२०॥

उपर्युक्त २ चौपाइयों में तुलसीजी ने हनुमानजी के ऐसे कार्यों का वर्णन किया है जो अत्यंत ही असंभव जान पड़ते थे परन्तु हनुमानजी के प्रताप से वह आसानी से संभव हो गए। गोस्वामीश्री कहते हैं कि जो भी इस जगत में दुर्गम से दुर्गम कार्य हैं हनुमानजी की कृपा से अत्यंत ही सुगम अर्थात आसान हो जाते हैं। इसीलिए हनुमान जी को सबसे महान भक्त के रूप में पूजा जाता है क्योंकि उनकी कृपा से रामभक्ति का मार्ग सुगम होता है।

राम दुआरे तुम रखवारे।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे॥२१॥

रामजू के राजद्वार की निगरानी / रखवाली श्री हनुमानजी स्वयं करते हैं। आज भी अयोध्या में यह प्रथा है कि श्री रामलल्ला के दर्शन से पहले श्री हनुमान जी दर्शन करना आवश्यक है। अगर हम आज के समय में भी देखें तो राजद्वार मंदिर तथा हनुमानगढ़ी के बीच मात्रा १०० से ३०० मीटर का अंतर है। यह दर्शाता है कि हनुमानजी की आज्ञा तथा कृपा के बिना कोई श्री राम जी के दर्शन नहीं कर सकता है।

इसी सन्दर्भ में यह भी कहा जाता है कि हनुमानजी प्रभु के सबसे उत्तम द्वारपाल हैं। जहाँ एक ओर जय-विजय ने सनकादिक ऋषियों का अपमान कर उन्हें प्रभु से मिलने से रोक कर श्राप में रावण-कुम्भकर्ण आदि अन्य २ राक्षस जन्म पाया वहीँ श्री हनुमान जी ने सुग्रीव, विभीषण आदि भक्तों को प्रभु से मिलवाया तथा प्रभु के सबसे प्रिय बन गए।

सब सुख लहै तुम्हारी सरना।
तुम रच्छक काहू को डर ना॥२२॥

जो भी व्यक्ति श्री हनुमान जी को पूर्णतः समर्पित होता है तथा उनकी शरण में होता है, उसे इस जगत के हर सुख का अनुभव होता है। या यूं भी कह सकते है कि हनुमानजी की शरण में ही सारे सुख हैं।

शरणागत की रक्षा श्री हनुमानजी हमेशा करते हैं, इसीलिए उन्हें किसीका भी भय नहीं होता है। अर्जुन ने जब महाभारत का युद्ध लड़ा तब वह निर्भय थे क्योंकि वह जानते थे की हनुमान महाप्रभु उनके थ की ध्वजा पर विराजे हैं और अर्जुन उनकी शरण में हैं। ऐसे ही तुलसीगोसाईं के जीवन में भी अनेक कष्ट आये , परन्तु हनुमानजी की शरण में होने के कारण उन्हें कभी भी भय न हुआ।

आपन तेज सम्हारो आपै।
तीनों लोक हांक तें कांपै॥२३॥

इस चौपाई के दो अर्थ मुख्यतः प्रचलित हैं

१. हे हनुमानजी, अपना दिव्या तेज आप ही सम्भालिये क्योंकि इस तेज से तीनों लोक काँप उठते हैं

२. हे हनुमानजी, अपने दिव्यतेज को आप जब स्मरण करते हैं, तब इस से तीनों लोक काँप उठते हैं

अर्थात हनुमानजी को यह श्राप था की उन्हें अपनी शक्तियां तब ही स्मरण आएँगी जब कोई उन्हें उन शक्तियों का स्मरण कराएगा। जब उन्हें शक्तियों तथा तेज का ज्ञान हो जाता है, तब उन शक्तियों और तेज का इतना प्रताप होता है कि उनसे देवलोक, भूलोक, और पाताललोक तीनों काँप जाते हैं। एक तरह से यहाँ तुलसीजी भी हनुमानजी को उनके तेज का स्मरण ही करा रहे हैं।

भूत पिसाच निकट नहिं आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै॥२४॥

भूत, पिशाच आदि ऐसी योनियों के स्वामी प्रभु शिव को बताया जाता है क्योंकि जो सबसे पतित जीव हैं उन्हें सबसे पतित पावन भगवान् ही तार सकते हैं। और चूंकि हनुमानजी रुद्रावतार हैं, जब भी कोई मनुष्य एक बार महावीर नाम का उच्चारण करता है जो हनुमान जी का ही एक नाम है, उस व्यक्ति को भूत पिशाच कभी नहीं सताते बल्कि उनके निकट आने का प्रयास भी नहीं करते। जब एक दिन तुलसीदास जी ने एक पेड़ को जल दिया, तब उसमे से एक प्रेत प्रकट हुआ और तुलसीदासजी से एक वरदान मांगने को कहा क्योंकि तुलसीदासजी ने उसकी प्यास बुझाई थी। परन्तु जब तुलसीदास जी उस प्रेत से उन्हें हनुमानजी से मिलवाने का अनुगृह किया, वह प्रेत अदृश्य हो गया। जब गोसाईं कुछ आगे चले तब प्रेत ने प्रकट होकर उनसे हनुमानजी का नाम प्रकट रूप से न बोलने की विनती की तथा उन्हें हनुमंत लाल जी से मिलने का मार्ग भी सुझाया। संभवतः इसी घटना के कारण गोसाईश्री ने यह चौपाई लिखी।

नासै रोग हरे सब पीरा।
जपत निरन्तर हनुमत बीरा॥२५॥

हनुमानजी के नाम रूप गुण लीला का जो व्यक्ति निरंतर जप करता है, उसके सारे रोग (शारीरिक कष्ट) और पीड़ा (मानसिक कष्ट) यह सब हनुमानजी हर लेते है। जब एक समय बूढ़े हो गया तुलसी जी जे हाथों में इतनी पीड़ा हो रही थी की वह अपने हाथ हिला भी नहीं पा रहे थे, तब उन्होंने हनुमानजी का स्मरण कर हनुमान बाहुक की रचना और पाठ किया और हनुमानजी ने तब स्वयं प्रकट होकर उनकी भुजाएं पूर्व के भाँति स्वस्थ कर दीं।

संकट तें हनुमान छुड़ावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै॥२६॥

जो भी व्यक्ति मन, कर्म और वाणी (मनसा वाचा कर्मणा) से हनुमान जी का ध्यान करता है, उसकी रक्षा स्वयं हनुमानजी करते हैं। और जैसा की हमने पहले की चौपाइयों में देखा था की जिसके रक्षक हनुमानजी हों, उन्हें भय किस बात का ? एक बार गोसाईं जी ने रामनाम के प्रताप से एक मृत व्यक्ति जो जीवित कर दिया था जिसे होते हुए कुछ मुग़ल सैनिकों ने देख लिया। उस समय हिन्दुस्तान पर बादशाह अक़बर का शासन था। चूंकि तुलसीदास जी अपनी रचनाओं के कारण पहले ही बहुत प्रसिद्द थे, अकबर ने अपने सैनिकों से यह प्रसङ्ग सुनकर तुलसी जी को अपने दरबार में बुलाया और उन्हें कुछ चमत्कार दिखाने को कहा। कई लोग यह भी कहते हैं कि अक़बर ने उन्हें अपना शाही कवी बनने या अपने ऊपर एक ग्रन्थ लिखने का प्रस्ताव भी दिया था। पर तुलसीदास जी ने साफ़ इंकार कर दिया और कहा की वह जो करते हैं अखंड विश्व के स्वामी श्री राम जी के लिए ही करते हैं। यह सुनकर अक़बर ने गोसाईं जी को काल कोठरी में कैद कर दिया। माना जाता है कि यहीं उन्होंने हनुमान चालीसा की रचना की थी और रचना के पूर्ण होते ही फ़तेहपुर सीकरी पर बंदरों ने हमला कर दिया। तब मानसिंह, बीरबल आदि की सलाह पर तुलसीदास जी को अकबर ने ससम्मान रिहा किया और कई तोहफों से नवाज़ा। यह साफ़ उदहारण है कि जो भी व्यक्ति हनुमानजी को याद करते हैं या हनुमान चालीसा का पाठ करते हैं हनुमानजी उनकी सदैव रक्षा करते हैं। इसीलिए हनुमानजी को संकटमोचन भी कहा गया है (को नहीं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो)

सब पर राम तपस्वी राजा / राय सिरताजा।
तिन के काज सकल तुम साजा॥२७॥

जो प्रभु श्री राम अनंत कोटि ब्रह्माण्डों के स्वामी हैं तथा जो सर्वश्रेष्ठ राजा भी हैं, जिनसे सबसे काज संवरते हैं, उन श्री राम के सभी काज हनुमानजी संवारते हैं। यहाँ तपस्वी राजा का अर्थ राजऋषि से तो है ही परन्तु यह रामजी के वनवास के रूप की ओर भी इशारा करता है।
दुनिया चले न श्री राम के बिना और रामजी चले ना हनुमान के बिना!

और मनोरथ जो कोई लावै।
सोई अमित जीवन फल पावै॥२८॥

उपर्युक्त कुछ चौपाइयों में रोगमुक्ति, संकट से रक्षा आदि कई इच्छाएं हनुमान जी के सामने राखी गई हैं। परन्तु यदि किसी भी व्यक्ति का कोई भी मनोरथ हो और वह उसे हनुमानजी के पास लाता है, तो उस मनोरथ का फल उस व्यक्ति को जीवन में अवश्य ही प्राप्त होता है। अर्थात हनुमानजी अपने भक्त की सभी इच्छाएं पूर्ण करते हैं। तुलसी जी ने जब हनुमानजी के समक्ष श्री रामजी के दर्शन की इच्छा रखी, जो इस जगत में प्राप्त होना अत्यंत ही दुर्लभ है, तब भी हनुमानजी ने तुलसीजी को चित्रकूट भेजा जहाँ घाट पर न सिर्फ बालक रूप में आये श्री राम जी को उन्होंने तिलक किया और उनसे तिलक करवाया, परन्तु उसी समय उन्हें आध्यात्मिक जगत में श्री राम जी और लक्ष्मण जी के वास्तविक स्वरुप के भी दर्शन हुए।

चारों जुग परताप तुम्हारा।
है परसिद्ध जगत उजियारा॥२९॥

सत, त्रेता, द्वापर और कलि इन चारों युग में हनुमानजी विराजमान हैं। कहा जाता है कि श्री राम जी का अवतरण २४वे त्रेता में हुआ था और अभी २८वा कलियुग चल रहा है (जिसमे गोसाईं जी भी प्रकट हुए थे)। तब से लेकर अब तक हनुमानजी चारों युग में विराजमान थे और जब तक इस धरा पर राम नाम रहेगा, तब तक हनुमानजी भी इस धरती पर रहेंगे। यह भी मान्यता है कि त्रेता में अपने अवतार से पहले, रामजी सतयुग में नारायण के रूप में और हनुमानजी सतयुग में रूद्र के रूप में मौजूद थे।

साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकन्दन राम दुलारे।।३०।।

गोस्वामी जी हनुमानजी से प्रार्थना करते हैं कि हे हनुमानजी आप असुरों का दमन करने वाले प्रभु श्री राम को अत्यंत ही प्यारे हो अथवा आप असुरों का दमन करने वाले हो तथा रामजी को अत्यंत ही प्यारे हो। हे मारुती, आप साधु तथा संतजनों के रक्षक हो। यह साधु संत का अर्थ खाली भगवाधारी ऋषियों से नहीं है परन्तु जो व्यक्ति गृहस्त जीवन में भी साधु जैसा मन और विचार रखता हो, हनुमानजी उसकी भी रक्षा करते हैं।

अष्टसिद्धि नौ निधि के दाता।
अस बर दीन जानकी माता।।३१।।

नामलिङ्गानुशासनम् और मार्कण्डेय पुराण के अनुसार अष्ट सिद्धियां:

- **अणिमा:** शरीर को छोटे से छोटा आकर देने की सिद्धि
- **महिमा:** शरीर को बड़े से बड़ा करने की सिद्धि
- **गरिमा:** शरीर को अत्यंत भारी करने की सिद्धि
- **लघिमा:** शरीर को अत्यंत हल्का करने की सिद्धि
- **प्राप्ति:** संकल्प मात्रा से कुछ भी प्राप्त करने और कहीं भी पहुँचने की सिद्धि
- **प्राकाम्य:** सभी इच्छाओं और संकल्पों को पूर्ण करने की सिद्धि
- **ईशित्व:** अपने मन पर पूर्ण नियंत्रण की सिद्धि
- **वशित्व:** दुसरे के मन पर पूर्ण नियंत्रण की सिद्धि

नामलिङ्गानुशासनमनुसार नव निधि: महापद्म, पद्म, शङ्ख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील, और खर्व

जब हनुमान जी ने अशोकवन में जा माता सीता के दुःख और संताप दूर किये और उन्हें प्रभु श्री राम का सन्देश दिया, तब माता ने हनुमान जी को अष्ट सिद्धियों तथा नव निधियों का दाता बनाया था। चूंकि हनुमानजी रुद्रावतार हैं उनके पास यह सिद्धियां सदैव से थी (कुछ संतों का मानना है कि यह सिद्धियां उन्हें सूर्य देव ने दी थीं)। परन्तु इन सिद्धियों और निधियों को किसी और भक्त को प्रदान करने का अधिकारी हनुमंत लाल जी को जानकी माता ने बनाया था।

राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहो / सादर हो रघुपति के दासा।।३२।।

रामभक्ति और रामनाम के रसायन (रस) का स्वामी श्री हनुमानजी को कहा गया है। मानस के बालकाण्डीय मङ्गलाचरण के पांचवे श्लोक में गोसाईं जी हनुमान जी और वाल्मीकि को विज्ञानं सम्पूर्ण (एक तरह से वैज्ञानिक) बता रहे हैं (श्रीसीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ। वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कबीश्वरकपीश्वरौ।।)। और वैज्ञानिक का सम्बन्ध अधिकतर रसायन से होता ही है। इस चौपाई में राम भक्ति के परम वैज्ञानिक श्री हनुमान जी जो सदैव से ही रघुपति जी के दास हैं उनको गोसाईं जी प्रणाम कर रहे हैं, जिनके पास रामनाम का रसायन है।

तुह्मरे भजन राम को पावै / भावै।
जनम जनम के दुख बिसरावै।।३३।।

जो भी भक्त श्री हनुमानजी का भजन करता है, वह श्री राम को आसानी से प्राप्त कर लेता है क्योंकि हनुमानजी का यशगान राम जी को अत्यंत प्रिय है। इस भौतिक जगत के जन्म-जन्म के दुःख और संताप को भूल कर व्यक्ति राम नाम के आनंद में लींन हो जाता है।

अंत काल रघुबर पुर जाई।
जहां जन्म हरिभक्त कहाई।।३४।।

वह भक्त अंत काल में श्री सीताराम जी के दर्शन प्राप्त करता है और श्री साकेत धाम (आध्यात्मिक जगत की दिव्य अयोध्या) में विश्राम करता है। परन्तु गोस्वामी जी यह भी बताते हैं कि जो प्रभु का दर्शन करले उसकी मोक्ष की इच्छा नष्ट हो जाती है। इसीलिए वह भक्त रामजी जी लीला के समय रामभक्त भक्त के रूप में ही धरा पर पुनर्जन्म लेते हैं।

और देवता चित्त न धरई।
हनुमत सेइ सर्ब सुख करई।।३५।।

यदि कोई व्यक्ति किसी भी अन्य देवता को अपने हृदय में न धारण करता हो अथवा जो अपने हृदय में किसी और देवता को न धारण कर सिर्फ हनुमान जी की भक्ति करता है, हनुमानजी की कृपा से हर प्रकार के लौकिक तथा पारलौकिक सुख उस व्यक्ति को प्राप्त होते हैं।

सङ्कट कटै मिटै सब पीरा।
जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।३६।।

हनुमान जी का यश स्मरण करने से तथा हनुमान चालीसा के पाठ से श्री सीता राम जी, श्री उमा महेश्वर जी, और अन्य सारे देव प्रसन्न होते हैं। हनुमानजी ऐसे व्यक्ति के सारे संकट, कष्ट और पीड़ा मिटा देते हैं।

जय जय जय हनुमान गोसाईं।
कृपा करहु गुरुदेव की नाईं।।३७।।

यहाँ सर्वप्रथम हनुमानजी की ३ बार जय बोली गयी है, जिसके अलग अलग अर्थ हैं। कुछ की माने तो यह ३ लोकों में हनुमानजी की जय का प्रतीक है, तो कुछ कहते हैं कि त्रिदेव हनुमानजी का जयघोष कर रहे हैं। मुख्यतः यह माना जाता है कि ३ जय सत, चित और आनंद का प्रतीक हैं। इसी के साथ हनुमान जी को गोसाईं अथवा जो स्वामी भी कहा गया है। गोस्वामी शब्द जो और स्वामी से बना है। जो अर्थात गाय या पृथ्वी। पर गोस्वामी में प्रयुक्त जो का अर्थ हमारी इन्द्रियों से है। जिस व्यक्ति का नियंत्रण अपनी इन्द्रियों पर हो, वही गोस्वामी है। यहाँ एक गोस्वामी (तुलसीदासजी) दुसरे गोस्वामी (श्रीहनुमानजी) की वंदना कर रहे हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि हे मारुती आप मुझे अपना शिष्य जान मुझपर वैसे ही कृपा करें जैसे मेरे गुरु ने की थी। यहाँ एक तरह से तुलसी जी हनुमानजी को अपना गुरु इसीलिए बता रहे हैं क्योंकि मानस लिखने की प्रेरणा और मार्गदर्शन उनके लिए हनुमानजी ही थे। देखा जाए तो हनुमान चालीसा की शुरुआत और अंत की चौपाई दोनों हनुमानजी की जय से ही प्रारम्भ होती हैं।

जो / यह सत बार पाठ कर कोई / जोई।
छूटहि बन्दि महा सुख होई।।३८।।

यह और इसकी अगली चौपाई हनुमानचालीसा का पाठफल है। कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति यदि सत बार हनुमान चालीसा का पाठ करे तो उसके सभी लौकिक और परालौकिक बंधन छूट जाते हैं और वो पूर्णतः श्री राम और श्री हनुमान जी की भक्ति में लीन हो जाता है जिससे महा सुख प्राप्त होता है। यहाँ सत बार के अलग अलग अर्थ कहे जाते हैं। सबसे सटीक अर्थ यह माना जाता है कि सात बार अर्थात नित्य १००/१०८ (शत) बार पाठ करना। इसके अलावा नित्य ७ (सत) पाठ करना, एक बार ही परन्तु सच्चे मन (सत) से पाठ करना या सप्ताह के हर वार/दिन पाठ करना (सत वार) कुछ और अर्थ कहे जाते हैं। परन्तु हर स्थिति में हनुमान चालीसा कल्याणकारी ही होती है।

जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा।।३९।।

गोस्वामी श्री हनुमान चालीसा पाठफल मैं आगे बताते हैं कि जो कोई भी जीव (अर्थात हर कोई: स्त्री/पुरुष, बाल/वृद्ध, ब्राह्मण/दलित, सनातनी/किसी अन्य धर्म का अनुयायी, कोई भी) यदि हनुमान चालीसा का पाठ करता है, तो उसे लौकिक तथा पारलौकिक सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

परन्तु गोस्वामी जी इतना बड़ा दावा ऐसे ही नहीं कर रहे हैं अपितु वह भगवान शिव जो गौरी (माँ पार्वती) के ईश (स्वामी) हैं, उनको इसका साक्षी बता रहे हैं। मानस के बालकाण्डीय मङ्गलाचरण के दुसरे ही श्लोक में श्री उमामहेश्वर भगवन को श्रद्धा तथा विश्वास का स्वरुप बताया गया है (भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ। याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्।।), और किसी भी स्थिति में साक्षी (guarantor) ऐसे व्यक्ति को ही बनाया जाता है जिसपर पूर्ण विश्वास हो। और श्री हनुमानजी तो हैं ही रुद्रावतार, तो उनकी महिमागान से जो फल प्राप्त होते हैं, वो शिवजी की कृपा द्वारा ही संभव हो पाता है।

तुलसीदास सदा हरि चेरा।
कीजै नाथ हृदय महं डेरा।।४०।।

हनुमान चालीसा को अंत की ओर लेजाते तुलसीदास महाराज यह ऐलान करते है कि वह हरि के चेले (अर्थात दास) हैं। यहाँ हरि का अर्थ श्री विष्णु / श्रीराम प्रभु तो है ही परन्तु हरि शब्द वानर के लिए भी अन्यान्य स्थानों पर प्रयुक्त होता है। मानस बालकाण्ड में नारद अहंकारभञ्जन की कथा आती है जिसमे अपने तपोबल के अहंकार से युक्त श्री नारदमुनीश्वर को विष्णु भगवान हरि का मुख प्रदान करते हैं क्योंकि नारद जी विश्वमोहिनी नामक कन्या (जिसे विष्णुमाया द्वारा रचा गया था) के स्वयंवर में जाना चाहते थे। परन्तु विष्णुजी हरि अर्थात नारायण के बजाय हरि अर्थात वानर का मुख नारद जी को प्रदान करते हैं। इस पूरे प्रसङ्ग के बाद, नारदजी द्वारा प्रभु को जो श्राप मिलता है, वही रामायण के मूल कारणों में से एक बनता है।

जैसे इस प्रसङ्ग में हरि शब्द के दो अर्थ पाए जाते हैं, उसी हरि शब्द का प्रयोग कर गोस्वामी श्री नारायण (श्रीराम) तथा वानरश्रेष्ठ हनुमानजी की वंदना एक साथ करते हैं। यह भाषा सौंदर्य, मानसादि कई अन्य ग्रंथों में भी मिलता है।

अंत में तुलसीजी श्री हनुमंतलालजू से विनती करते हैं कि वह उनके हृदय में डेरा (सदैव के लिए निवास) करें।

पवनतनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुर भूप।।उ. दो.।।

इस पावन ग्रन्थ के आखिरी दोहे को संपन्न करते हुए गोस्वामी जी हनुमान जी को पवनदेव के पुत्र, सभी संकटों को हरने वाले तथा मंगल और हित करने वाले बताते हैं और उनसे एक अंतिम विनती करते हैं कि वह (हनुमानजी जिन्हे देव भी पूजते हैं और अपना राजा बताते हैं) श्री सीतारामजी तथा लछिमन भैय्या संग उनके हृदय में वास करें। कुछ संतजन यह भी कहते हैं कि दूसरी पंक्ति में श्री राम सीता लक्ष्मण जी को श्री हनुमानजी के पावन हृदय में वास करने वाला बताया गया है।

3. निष्कर्ष

हनुमान चालीसा के इस विस्तृत अध्ययन के बाद समझ आता है की यह पूरी रचना कितनी आधुनिक है जिसने इतने काम शब्दों में इतने नए अर्थ छिपाए थे। हमने आज हनुमानजी की विशेषताएं ही नहीं देखीं, परन्तु उनसे बल, बुद्धि, विद्या, स्वामीभक्ति, प्रेम, सम्मान, वीरता आदि कई मूल्यों की शिक्षा मिलती है तथा सदैव श्री राम नाम के जाप का मूलमंत्र भी मिलता है। यह हनुमान चालीसा मात्र गोस्वामी तुलसीदास जी की एक रचना ही नहीं है परन्तु कलियुग में हम पतित जीवों के लिए श्री राम की भक्ति और श्री हनुमान जी की कृपा पाने का एक अवसर है, जिसे आज हमने एक आधुनिक परिकल्पना से जाना। अंत में बस श्री हनुमान जी की वंदना में इतना ही लिखता हूँ कि

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिम् ।
वाष्पवारि परिपूर्ण लोचनं मारुतिं नमत राक्षसांतकम् ॥

4. संदर्भग्रंथ

1. श्री हनुमान चालीसा, श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास
2. श्री रामचरितमानस, श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास
3. श्री हनुमान्-चालीसा - महावीरी व्याख्या, जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य
4. श्री हनुमान चालीसा, स्वामी हरिहर
5. अन्यान्य मानसानुरागी, रामायणी एवं संतों की अमृतवाणी तथा प्रवचन

जगमोहन रामायण की विशेषताएँ और स्वतन्त्रता

ISBN: 978-1-960627-06-3

शुभस्मिता दाश
Dharanidhar University,keonjhar, Odisha, India
(dashshubhasmitam@gmail.com)

जगमोहन रामायण ओड़िया भाषा में एक उत्कृष्ट रचना है। यह 16वीं शताब्दी के प्रसिद्ध कवि बलराम दास द्वारा रचित है। यह कृति वाल्मीकि के संस्कृत रामायण का शाब्दिक अनुवाद नहीं है, बल्कि इसकी भावनाओं को व्यक्त करने वाला अनुवाद है। इसकी मौलिकता और विशिष्टता ओडिशा की संस्कृति, परंपराओं और विरासत में राम साहित्य की प्रकृति को दर्शाती है। जगमोहन रामायण कई प्रकार से जगन्नाथ संस्कृति से प्रभावित है। साथ ही, इसमें ओड़िया जीवनशैली, संस्कृति, लोककथाओं और रीति-रिवाजों को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया गया है। खंडों, पात्रों और स्थानों के नामकरण में भी यह अपनी अनूठी पहचान बनाए रखता है। संस्कृत रामायण की कई कथाओं को इसमें शामिल नहीं किया गया है, लेकिन अनेक ओड़िया लोककथाओं को इसमें जोड़ा गया है।

1. प्रस्तावना

पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी ओडिशा के इतिहास में एक महत्वपूर्ण समय था। कपिलेंद्र देव के राजा बनने के बाद, ओडिशा दक्षिण भारतीय भाषा परंपरा से मुक्त हुआ। चौदहवीं शताब्दी में ओड़िया भाषा को विशेष महत्व दिया गया और इसके प्रचार-प्रसार में राजकीय संरक्षण मिला। इसी का परिणाम था कि सारला दास ने संस्कृत महाभारत का ओड़िया में अनुवाद किया। यह अनुवाद ओड़िया भाषा के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगा । राजनीति, संस्कृति, धर्म और साहित्य के क्षेत्र में सोलहवीं शताब्दी एक परिवर्तनकारी समय था। एक ओर, बार-बार के मुगल और अन्य बाहरी आक्रमणों ने धार्मिक सुरक्षा को चुनौती दी, वहीं दूसरी ओर शंकराचार्य और विभिन्न धार्मिक प्रचारकों ने समाज में फैले अंधविश्वासों और कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया। इन प्रयासों ने धर्म में सुधार लाने का कार्य किया । रामानुज और श्री चैतन्य के ओडिशा आगमन और वैष्णव धर्म के प्रचार ने ओडिशा के धर्म और साहित्य को गहराई से प्रभावित किया। इसी समय संत कवि बलराम दास ने संस्कृत रामायण का ओड़िया में अनुवाद आरंभ किया। संस्कृत रामायण के तीन प्रमुख पाठ भेदों में से, ओड़िया रामायण विशेष रूप से दक्षिण भारतीय पाठ से अधिक प्रभावित थी। जो अन्य दो प्रकार के पाठों की तुलना में अधिक प्राचीन, मौलिक और व्यापक है। (पृष्ठ – 21, रामकथा उत्पत्ति और विकास) विश्व संस्कृति की अमूल्य कृति रामायण सबसे पहले संस्कृत भाषा में आदिकवि वाल्मीकि द्वारा रचित हुई थी। इसकी उच्चस्तरीय विषयवस्तु और रसपूर्ण वर्णन के कारण, यह धीरे-धीरे अन्य भारतीय प्रांतीय भाषाओं और गैर-भारतीय भाषाओं में भी अनूदित हुई। कालांतर में, यह महाकाव्य से एक धार्मिक साहित्य का रूप ले लिया । ओड़िया भाषा में इसका अनुवाद 16वीं शताब्दी में बलराम दास द्वारा किया गया, जो अन्य भाषाओं में किए गए अनुवादों की तुलना में प्राचीन है।

2. बिषय विस्तार

ओड़िया भाषा में रामायण के जो स्वतंत्रताएँ हैं, उनमें से एक महत्वपूर्ण बिंदु इसका छंद है। जगमोहन रामायण, जो दांडी वृत्त में रचित है, गायक को स्वतंत्रता प्रदान करता है, जिससे यह गान में सहजता लाता है। इसी कारण इसका दूसरा नाम दांडी रामायण भी है। अनेक लोग यह मानते हैं कि 'दांडीवृत्त' नाम संस्कृत 'दण्डक वृत्त' छंद से आया हो सकता है। छब्बीस या तदोधिक मात्राओं वाली विशिष्ट गणमुक्त अक्षर वृत्तीय रचनाओं को संस्कृत में 'दण्डक वृत्त' कहा जाता है। दण्डक वृत्त के अनुसरण में दांडीवृत्त हुआ है। असम्पंक्तिक समेल काव्य की प्रत्येक पंक्ति में चौदह से कोडीए तक मात्राएँ रहती हैं। कुछ अन्य आलोचकों के अनुसार, दांडीवृत्त में कभी-कभी ग्यारह से चौबीस या आठ से छब्बीस अक्षर मात्राएँ भी होती हैं। इस छंद में अक्षर मात्राएँ और मात्रिक रीति का अंतरभाव होता है।

ओड़िया रामायण की कहानी का मूल स्रोत संस्कृत रामायण अकेला नहीं है। भारतीय पुराण साहित्य में भी रामायण थी। रामायण के आधार पर बाद में संस्कृत में लिखित अन्य साहित्य, तमिल भाषा में रचित कंबन रामायण, पहले ओड़िया भाषा के आदिकवि सारला द्वारा रचित बिलंका रामायण, नृसिंह पुराण, अग्निपुराण, पद्मपुराण, गुणभद्रकृत उत्तर पुराण, महानाट्य, सेरी रामकथा आदि के प्रभाव बलराम के रामायण को प्रभावित किया है। इसके अतिरिक्त बलराम दास ने ओड़िशा की लोककथाओं को भी अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। अनेक स्थानों पर उनकी स्वयं की रचनाएँ भी मिश्रित हुई हैं। यह रामकथा बाल्मीकि से भिन्न है, उन्होंने अधिकांशत: नृसिंह पुराण और महानाट्य को अनुसरण किया है, ऐसा भोलानाथ राउत ने अपनी समीक्षा में कहा है। (पृष्ठ – 20, दांडी रामायण में ओड़िशा की लोक संस्कृति)

बलराम के रामायण में प्रत्येक कांड की शुरुआत में ईष्ट स्तुति है। विभिन्न देवताओं और देवियों की बलराम दास ने प्रार्थना की है। संस्कृत रामायण में यह नहीं है।

1. आदिकांड में श्रीजगन्नाथ की वन्दना
2. अयोध्याकांड में लक्ष्मी की वन्दना
3. आरण्यककांड में बलभद्र की वन्दना
4. किष्किन्धाकांड में अग्नि की वन्दना
5. सुन्दराकांड में शिव की वन्दना
6. लंका कांड में जगन्नाथ की वन्दना
7. उत्तरकांड में जगन्नाथ की वन्दना

संस्कृत रामायण में बालकांड को आदिकांड और युद्धकांड को लंका कांड कहा जाता है। जगमोहन रामायण में राम, लक्ष्मण और सीता नीला पर्वत पर आकर जगन्नाथ का दर्शन करते हैं। शोधकर्ता कृष्णचरण साहू के अनुसार 26 कथाएँ हैं जो जगमोहन रामायण की स्वतंत्रता को प्रस्तुत करती हैं, जो संस्कृत रामायण में नहीं हैं। ये कथाएँ निम्नलिखित हैं:

1. राजा दशरथ और शनिदेव का कलह
2. ऋषिशृंग की उपाख्यान
3. गंगा अवतरण
4. अहल्या की उपाख्यान
5. राम का गुफाओं में निवासियों के साथ मित्रता
6. परशुराम की उपाख्यान
7. मंथरा का पुनर्जन्म
8. दिति और अदिति का कलह
9. सौरा नारियों के साथ सीता का संवाद
10. पिण्डकारण्य के ऋषियों का वर्णन
11. राम की तीर्थयात्रा
12. सीता पर लक्ष्मण का शाप
13. माया और छाया सीता
14. राम और शबर शबरी का मिलन
15. बाली और सुग्रीव का पुनर्जन्म
16. लीलावती की कथा
17. सारस की कथा
18. लंका का पुनर्निर्माण
19. गुंडुचिमूषा की उपाख्यान
20. संथपंडा की कथा
21. रावण और मंदोदरी का सपना
22. हनुमान और दण्डकारण्य के ऋषियों को राम का वरदान
23. लंका का निर्माण
24. बिरजाक्षेत्र का वर्णन
25. रावण का विवाह और उसका परिवार
26. वेदवती का वर्णन

बलराम दास ने राम अवतार ग्रहण करने के कारण के बारे में विस्तृत व्याख्या की है, जो संस्कृत रामायण में नहीं है।

आदिकांड :

वाल्मीकी के अयोध्या का वर्णन महलमंडित है, जबकि बलराम के अयोध्या का वर्णन कुटीरमंडित है। गंगा-सागर संगम के प्रसंग में बलराम दास ने तीर्थ महात्म्य दिया है। हरिचंद्र की उपाख्यान दंडी रामायण की स्वतंत्रता को दर्शाती है। जनक को सीता के वर के चुनाव के लिए शिवधनु प्रदान किया गया है। ऋष्यश्रृंग की उपाख्यान में बलराम दास ने ऋष्यश्रृंग के जन्म, अंगदेश में अनावृष्टि का कारण, जरन और काममोहीनी जैसी वैश्या की नौयात्रा, ऋष्यश्रृंग को प्रलोभित कर लाना, शांता और ऋष्यश्रृंग का विवाह आदि का वर्णन किया है, जो बलराम का व्यक्तिगत दृष्टिकोण है। इसके अतिरिक्त सत्यव्रत उपाख्यान, बल्लभ उपाख्यान, अहल्या उपाख्यान का विस्तृत वर्णन, सीता के विवाह में सीता का पूर्वानुराग, रत्नचूड़ी में श्रीराम का दर्शन, सीता के सपत्नि भाव आदि के प्रसंग में बलराम दास ने अपनी व्यक्तिगतता को प्रदर्शित किया है।

अयोध्याकांड :

इसमें गुह के आतिथ्य प्रसंग में बलराम दास की कल्पना और काव्य वाल्मीकी से ऊपर है। ओडिया चलचलणी समाज चित्र अयोध्याकांड में वर्णित है। मंथरा के जन्म के प्रसंग को बलराम दास ने अपनी सृजनात्मकता से प्रस्तुत किया है।

आरण्यककांड :

इसमें गया महात्म्य, पिण्डदान, फलगुक को अभिशाप, ब्राह्मण को अभिशाप, गोपाल को लक्ष्मण का अभिशाप, चंद्रभागा तीर्थ और एकाम्र तीर्थ का वर्णन बलराम दास की स्वतंत्रता का परिचायक है। शबरी की राम भक्ति के प्रसंग में भी बलराम दास की स्वतंत्रता दिखती है। राम के चक्रवाक दम्पति को अभिशाप भी बलराम दास की व्यक्तिगत भावना का परिणाम है।

किष्किन्धाकांड :

इसमें मरुत राजा और लीला वती हरण के प्रसंग, श्रीराम के साथ बक पक्षी का संवाद और बक पंचुक, कुक्कुट के वरलाभ, पर्वत और वृक्षमानों को अभिशाप और बंदर सेना के समावेश का वर्णन बलराम दास ने अपनी व्यक्तिगतता के साथ किया है। हनुमान के समुद्र लंघन के प्रसंग को वाल्मीकी ने किष्किन्धाकांड में दिया है, लेकिन बलराम दास ने इसे सुंदराकांड में रखा है।

सुंदराकांड :

बलराम दास ने हनुमान को सर्वशक्तिमान और सभी देवताओं की शक्ति का आधार बताते हुए उनका वर्णन किया है। हनुमान के विराट रूप में लंका में प्रवेश और विभिन्न रूपों का धारण करने के प्रसंग का वर्णन भी बलराम दास ने किया है। रामचंद्र और विभीषण के संवाद में कलियुग के बहुकुटुम्बी ब्राह्मण और राजा के प्रसंग का वर्णन बलराम दास की सामाजिक दृष्टिकोण को दर्शाता है। गुंडुचि मूषा उपाख्यान भी बलराम दास का अपना रचनात्मक योगदान है।

लंकाकांड :

लंकाकांड में संतपंडा उपाख्यान बलराम दास का अपना रचनात्मक योगदान है। सत्यत्व, पतिव्रता की पराकाष्ठा के प्रसंग में यह उपाख्यान वर्णित है।

उत्तराकांड :

वाल्मीकी रामायण में उत्तराकांड संक्षिप्त है। बलराम के रामायण में सीता का वनवास, रामचंद्र का अश्वमेध यज्ञ, सीता का पुत्रलाभ, पाताल गमन, श्रीराम का महाप्रणायन आदि प्रसंग बलराम दास ने अपनी व्यक्तिगत शैली में वर्णित किए हैं।

बलराम दास के रामायण में चरित्र चित्रण, सामाजिक जीवन, प्रकृति का वर्णन, पौराणिक विवरण, नारी रूप का वर्णन, रसविन्यास, कथोपकथन शैली, अलंकारिता दांडीवृत्त और कविता आदि दृष्टिकोण से स्वतंत्रता है। चरित्र चित्रण के क्षेत्र में बलराम दास प्रत्यक्ष या वर्णनात्मक नाट्य शैली अपनाते हैं। दोष और गुण दोनों दृष्टिकोण से वे चरित्रों का विश्लेषण करते हैं। ऋतुओं का वर्णन, रूप का वर्णन, प्राकृतिक दृश्य का वर्णन आदि सरल, वास्तविक और व्याख्यात्मक कथाबस्तु दृष्टिकोण से रामायण की मूलभूत संरचना में प्रतिष्ठित होने के बावजूद, यह एक स्वतंत्र कृति है। वर्णन में चातुरी, चमत्कारी, सरल और प्रांजलता है। जरता और तारा सखी मानों का रूप वर्णन, सीता के विवाहकालीन रूप का वर्णन, वेदमती के रूप का वर्णन, निक्षा की अभिसारिका वेश, अंगद के युद्धवेश आदि मंत्रमुग्ध करने वाले हैं।

युद्ध वर्णन के क्षेत्र में बलराम दास बहुत मुखर हैं। विभिन्न फूल, फल, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि का विवरण और वर्णन बलराम दास के रामायण की एक स्वतंत्रता है। रामायण की अनेक कथाओं का भौगोलिक स्थितियां उड़ीसा की सीमा के भीतर हैं। नीला चतुर्थ का वर्णन, गया तीर्थ का वर्णन, एकाम्र तीर्थ का वर्णन, चंद्रभागा तीर्थ का वर्णन, बलिपर्वत, गंगा नदी इन सभी को उन्होंने उड़ीसा के भूगोल में रखा है। अनेक चरित्रों को उड़ीसा की सामाजिकता और संस्कृति के अनुसार बदल दिया है। चरित्रों के बीच ईश्वरत्व का आरोप नहीं किया गया, बल्कि उन्हें मानवीकरण कर दिया गया है। रामचंद्र के जन्म से लेकर नामकरण तक जितनी विधिविधान की वर्णनाएँ हैं, वे उड़ीसी समाज के विधि-विधान और आचार पर आधारित हैं। गुहक शबर की कहानी में भी उड़ीसा के शबर जाति के विभिन्न वर्णन हैं। लंका पोड़ी का जो वर्णन बलराम दास ने किया है, वह उड़ीसा के एक घर पोड़ी दृश्य का विस्तार है।

बनवास काल में सीता को कौशल्या के उपदेश उड़ीसिया समाज के विधि व्यवस्था को निर्देशित करते हैं। कपिलाश को वह कैलाश के रूप में वर्णित करते हैं। मर्कटों को वह कोणार्क के निवासी कहते हैं। बिरजा क्षेत्र, बनाई, बामुंडा, उदयगिरि, धौलिगिरि का वर्णन उन्होंने किया है। एकाम्र वन में रामचंद्र के रामेश्वर मठ की स्थापना की कथा भी उन्होंने प्रस्तुत की है। रामचंडी मंदिर, बिंदु सरोवर, श्रीक्षेत्र का वर्णन भी बलराम दास के रामायण में मिलता है।

'जगमोहना रामायण' में शोधकर्ताओं ने कई नई कथाएँ जोड़ी गई होने का उल्लेख किया है। इस संबंध में प्रोफेसर साहू ने भी एक लंबी सूची दी है। कुछ विशिष्ट कथाएँ या उपाख्यान इस प्रकार हैं: 1. राजा दशरथ और शनि के कलह, 2. ऋष्यश्रृंग उपाख्यान, 3. गंगा अवतरण, 4. अहल्या उपाख्यान (आदिकांड); 5. राम का गुहक के साथ बंधुत्व, 6. परशुराम उपाख्यान, 7. मंथरा का पूर्व जन्म, 8. दिति और अदिति के कलह, 9. सौरा स्त्रीलोगों के साथ सीता का कथोपकथन ('अयोध्या कांड'); 10. दंडकवन के ऋषियों का विवरण, 11. राम की तीर्थ यात्रा, 12. सीता पर लक्ष्मण का शाप, 13. माया और छाया सीता, 14. राम और शबरी का मिलन ('आरण्यक कांड'), 15. बाली और सुग्रीव का पूर्वजन्म, 16. लीलावती कथा, 17. सारस कथा ('किष्किंदा कांड'), 18. लंका का पुनर्निर्माण, 19. गुंडुचिमूषा उपाख्यान ('सुंदरा कांड'), 20. संथ पंडा कथा, 21. रावण और मंदोदरी का स्वप्न, 22. हनुमान और दंडकवन के ऋषियों को राम का वरदान (लंका कांड); 23. लंका की सृष्टि, 24. बिरजा क्षेत्र का विवरण; 25. रावण का विवाह और उसका परिवार, 26. वेदवती का विवरण (उत्तरकांड) आदि।

'जगमोहना रामायण' के समग्र क्षेत्र में इस प्रकार की कई अन्य कथाएँ और उपाख्यान मिलते हैं, जो मूल वाल्मीकी रामायण में नहीं हैं। ये बलराम की अपनी रचनाएँ हैं, और बाद में वे रामकथा की परंपरा में लोकमानस और लोककथाओं के साथ जुड़कर व्यापक रूप से फैल गई।

तो, जैसा कि पहले कहा गया है, 'जगमोहन रामायण' के रस संगठन में यह केवल नए-नए उपाख्यानों का जोड़ नहीं है, बल्कि प्रत्येक उपाख्यान का विस्तृत विवरण देना 'जगमोहन रामायण' की एक प्रमुख विशेषता है। इस प्रकार का एक अच्छा स्थानीय उदाहरण 'आदिकांड' का ऋष्यश्रृंग उपाख्यान है। मूल वाल्मीकी रामायण में महाराज दशरथ के सारथी सुमंत की विवरणी में इस उपाख्यान का संकेत मिलता है। विवरण संक्षिप्त है। बलराम ने इस उपाख्यान की मुख्य धारा को अपनी विवरणी में ग्रहण किया है। जैसे कि अंग देश में वर्षा न होना, राजा की व्यस्तता, मंत्री और ब्राह्मणों द्वारा राजा को दिए गए उपदेश, अरण्य से ऋष्यश्रृंग को लाने के लिए बारांगनाओं की नियुक्ति, ऋष्यश्रृंग से संबंधित बारांगनाओं की कूट-कौशल, ऋष्यश्रृंग का अंगदेश आना और अंगदेश में वर्षा का होना।

लेकिन मूल रामायण की संक्षिप्त सूचना 'जगमोहन रामायण' में एक विस्तारित रूप में बदल गई है, और जो एक मोटे तौर पर चलने वाली वर्णनात्मक शैली में थी, उसमें बहुत अधिक वर्णन, आवेग और मानवीय सूचना पूरी हो चुकी है। कहा जा सकता है कि 'जगमोहन रामायण' की विवरणी एक स्वयंसंपूर्ण आख्यानिक रूप में है, जिसे रामायण की पृष्ठभूमि से काटकर मानवीय आवेगों में परिपूर्ण एक स्वतंत्र आख्यान के रूप में ग्रहण किया गया है। एक दृष्टि से इस घटना की प्रतीकात्मकता आधुनिक विचारधारा में एलीट की प्रसिद्ध काव्य 'The Waste Land' के सूचना से तुलना की जा सकती है – कि राज्य में वर्षा की कमी, जिससे भूमि में उर्वरता की कमी, और राज्य में एवं जनजीवन में संकट, और राजा की व्यस्तता और असहायता। दूसरी ओर, सरलता और पवित्रता के आदर्श और आदिरूप कैसे नागरिक जीवन में कार्यकौशलपूर्ण छल और संस्कृति द्वारा धोखा खा सकते हैं और परिणामस्वरूप पराजित हो सकते हैं, इसका संकेत भी है।

यह मूल अनुभव के साथ जुड़ी हुई अन्य कई अनुभवों और दृश्यों के साथ है। जैसे विभिन्न स्थानों और प्रकृति के दृश्यों की विविधता, पशु-पक्षियों के व्यवहार आदि। अर्थात, नाव में नदी के गर्भ में जाने के समय बारांगनाओं द्वारा नदी के दो किनारों पर देखे गए दृश्य, और बाद में विभांडक के आश्रम में आश्रम परिसर का वर्णन आदि। इन सभी विस्तृत विवरणों का मूल रामायण में कोई उल्लेख नहीं है। इसके साथ ही, जो लोग यह कठिन कार्य करने गए, उनके मानसिक स्थिति के संकेत, जैसे कि अज्ञेय, अगम्य विपत्ति – लंबी नदी की यात्रा करने का भय, अनिश्चितता और उत्तेजना, और इसके साथ ही दूर के अरण्य में, अपरिचित ऋषि आश्रम में अपने कार्य की सफलता के बारे में पर्याप्त अस्थिरता। अंगदेश से चारों पहाड़ों के बीच स्थित अरण्य और विभांडक ऋषि के आश्रम में जाने और फिर वापस लौटने में बारांगनाओं को 40 दिन लग गए। इस चालीस दिन की विवरणी 'जगमोहन रामायण' में अत्यंत आकर्षक है, और बलराम की कल्पना और कविता का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। जैसे कि एक दृष्टि से, नाव को एक मुनि के परणकुटी के समान सजाया गया था।

3. निष्कर्ष

बलराम दास के रामायण काव्य और चरित्र चित्रण में उन्होंने अत्यधिक स्वतंत्र शैली को अंगीकार किया है, जो मूल रामायण को नए रूप और आकार में प्रस्तुत करती है। इसी कारण से, उनकी रचना एक स्वतंत्र कृति के रूप में मानी जाती है। बलराम दास के रामायण को देखें, तो वह एक कथा वस्तु को नए प्रतिक्रिया, सामाजिक संदर्भ और प्राकृतिक दृश्य में प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने अपनी रामायण में स्थानीय चरित्रगत रचनाओं और सामाजिक परिस्थितियों को जोड़ते हुए इसका विकास किया है। दास के रामायण को पढ़ते समय, इसके दृश्य वर्णन, समाज की आलोचना और शबर शबरी तथा अन्य निर्वासित कथाएँ वहाँ प्रकट होती हैं। उनकी रामायण की नई कथाएँ इसे एक नया उत्तर प्रदान करती हैं, जिसमें प्रकृति, समाज और धर्म के अनुसार कई भागों का निर्माण किया गया है। इस रचना में उन्होंने वास्तविकता और काव्य के साथ सामाजिक विकास, प्रकृति का वर्णन, शबर जाति और सीता-लक्ष्मण की कथाओं को जोड़कर इसे नया रूप दिया है।

सारांश: इस दृष्टिकोण से, बलराम दास का रामायण एक स्वतंत्र शैली में लिखा गया है, जिसमें उड़ीया समाज, प्रकृति, चरित्र वर्णन के साथ नए कथाएँ और उपाख्यान जोड़कर उन्होंने एक नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

4. संदर्भ ग्रंथ

English

1. Mishra, k.c. 1987. The Ramayana in eatern India. Bhubaneswar, Institute of orissan culture.

हिंदी

1. गुप्ता, ओमप्रकाश। 2021। रामायण के मोती। ह्यूस्टन, श्री राम चरित भवन।
2. बुलके, फादर कमिल। 2020। राम कथा (उत्पत्ति और विकास)। दिल्ली, परिमल पब्लिकेशन्स।

ओड़िया

1. मिश्र, नरेंद्रनाथ। 1955। बलराम दास और ओड़िया रामायण, शांति निकेतन, विश्वभारती शोध प्रतिष्ठान।
2. चट्टार्जी, सुबोध कुमार। 2003। जगमोहन रामायण और कृतिवास रामायण का तुलनात्मक अध्ययन। कटक, आर्य प्रकाशन।
3. राउत, भोला नाथ। 1998। दांडी रामायण में ओडिशा की लोकसंस्कृति। कटक, ओडिशा बुक स्टोर।
4. साहू, कृष्णचरण। 2008। कवी बलराम दास। भुवनेश्वर, ओडिशा साहित्य अकादमी।
5. महान्ति, यतिंद्र मोहन (सं)। 2012। बलराम दास रचनासंभार। डॉ. विजय सेनापति, श्रीमती विष्णुप्रिया साहू और बंदिता साहू।
6. साहू, कृष्ण चरण। 1980। बलराम दास का जगमोहन रामायण। कटक, बुक्स एंड बुक्स।

Ramayana in the Age of AI-Driven Management

Subodh Saluja
Chitkara University, Rajpura
(subodhsaluja@gmail.com)

ISBN: 978-1-960627-06-3

The Ramayana, a timeless epic, offers management lessons resonating with today's AI-driven world. This paper examines Rama's ethical leadership, strategic planning in the Rama Setu construction, and Hanuman's adaptive problem-solving, aligning them with AI-enhanced management paradigms. Juxtaposing ancient wisdom with AI's strengths—data-driven decisions, predictive analytics, and team optimization—it reinterprets the epic as a framework for navigating digital-age complexity. The study argues that blending the Ramayana's human-centric principles with AI's efficiency fosters sustainable, empathetic, and innovative management practices, providing contemporary leaders with a unique approach to address modern challenges effectively.

1. Introduction

The coming of artificial intelligence (AI) marks a transformative era in human history, reshaping industries, economies, and societies at an unprecedented pace. Over the time Artificial Intelligence has evolved from theoretical constructs to practical tools driving decision-making across sectors. AI's integration into management practices is no longer a futuristic vision but a tangible reality, with algorithms optimizing supply chains, chatbots enhancing customer service, and predictive analytics forecasting market trends. McKinsey & Company (2023) estimates that Generative AI's impact on productivity could add trillions of dollars in value to the global economy. Their latest research estimates that generative AI could add the equivalent of $2.6 trillion to $4.4 trillion annually across the 63 use cases we analyzed—by comparison, the United Kingdom's entire GDP in 2021 was $3.1 trillion. This estimate would roughly double if we include the impact of embedding generative AI into software that is currently used for other tasks beyond those use cases. This rise is not without challenges: while AI amplifies efficiency and precision, it often sidelines the human elements—empathy, ethics, and adaptability—that remain indispensable to effective leadership. AI's impact on management is multifaceted. It has revolutionized operational efficiency, enabling organizations to process vast datasets in real time, as seen in tools like IBM Watson or Google's DeepMind. For instance, AI-driven platforms can predict consumer behavior with great accuracy, allowing managers to tailor strategies dynamically. Yet, this reliance on technology introduces complexities: ethical dilemmas (e.g., biased algorithms in hiring), workforce displacement due to automation, and a potential erosion of interpersonal trust within teams. Senior executives worry about maintaining organizational culture in AI-dominated workplaces, highlighting a tension between technological advancement and human resource management. As AI assumes routine decision-making, leaders must redefine their roles, focusing on oversight, inspiration, and moral grounding—areas where machines fall short. Historical texts like the Ramayana offer a counterbalance, bridging ancient wisdom with modern challenges. Rama's ethical steadfastness, Hanuman's adaptability, and the strategic collaboration of diverse allies resonate with contemporary needs for integrity, flexibility, and teamwork. This paper presents that the Ramayana's lessons can complement AI's capabilities, creating a hybrid framework for modern management. By analyzing key characters and events—Rama's leadership, the Rama Setu project, and Hanuman's problem-solving skills, it explores how ancient principles can inform and enhance AI-augmented practices.

2. About Ramayana

The Ramayana text is attributed to the sage Valmiki, traditionally dated to around 1200 BCE. Comprising seven books (kandas) and over 24,000 verses, it narrates the life of Rama, the prince of Ayodhya, revered as an incarnation of the god Vishnu. Beyond its spiritual dimensions, the Ramayana is a rich tapestry of human experiences—love, duty, betrayal, and triumph—offering insights that transcend its ancient origins. Its enduring relevance lies in its ability to address universal themes, making it a valuable lens for exploring management principles in a modern, AI-driven context. The epic begins with Rama's life as the heir to the throne of Kosala, ruled by his father, King Dasharatha. His destiny shifts when Queen Kaikeyi, influenced by her maid Manthara, invokes a boon to exile Rama for 14 years, securing the throne for her son Bharata. Rama, embodying dharma (righteous duty), accepts this fate without resentment, accompanied by his devoted wife Sita and loyal brother Lakshmana. This initial event sets the stage for a journey marked by trials, and moral dilemmas. In the forest, the trio encounters sages and demons alike, with Sita's abduction by Ravana, the ten-headed king of Lanka, serving as the epic's pivotal conflict. Ravana's act, driven by desire and hubris, ignites a war that tests Rama's leadership and resolve. Key characters enrich the narrative with their different roles and qualities. Rama exemplifies ethical leadership and unwavering commitment to justice, as seen when he refuses to reclaim Ayodhya's throne prematurely despite Bharata's pleas. Sita, a symbol of resilience and virtue, endures captivity with dignity, rejecting Ravana's advances. Lakshmana's fierce loyalty—

standing guard during exile and fighting alongside Rama—highlights the power of trust in teamwork. Hanuman, the monkey-god and Rama's devoted ally, embodies strength, ingenuity, and adaptability, famously leaping across the ocean to find Sita and later setting Lanka ablaze to weaken Ravana's forces. Sugriva, the Vanara king, and Vibhishana, Ravana's righteous brother who defects to Rama, illustrate the importance of alliances and ethical dissent. Ravana, though the antagonist, is a complex figure—learned yet arrogant—whose downfall underscores the perils of unchecked ambition. The Ramayana's major events further illuminate its lessons. The construction of Rama Setu, a bridge to Lanka built by the Vanara army under Nala's engineering, showcases strategic planning and collective effort, uniting diverse people to achieve a common goal. The battle, where Rama killed Ravana with the aid of powerful weapons and loyal companions, symbolizes the triumph of good over evil—a narrative reinforced when Rama rescues Sita and returns to Ayodhya to rule justly. Lesser-known episodes, like Rama's encounter with the tribal chieftain Guha or his compassion toward the dying eagle Jatayu, reveal his empathy and inclusivity, broadening the epic's scope. Culturally, the Ramayana holds immense significance, shaping art, literature, and ethics across South and Southeast Asia. Its adaptations—such as the Thai "Ramakien" play—demonstrate its global resonance, while festivals like Diwali celebrate Rama's return, embedding its values in collective consciousness. In India, it serves as a moral compass, with phrases like "Rama Rajya" (Rama's reign) symbolizing ideal governance. For management, its cultural weight underscores its potential to inspire leaders, offering a narrative framework that blends strategy, ethics, and human connection—qualities essential in today's AI-driven world.

3. Leadership Lessons from Ramayana in Today's AI-Driven World

Ethical Leadership: Rama as a Model for AI-Augmented Decision-Making

Rama's ethical leadership, deep rooted in dharma, offers a timeless model for navigating the moral complexities of AI-driven management. In the "Aranya Kanda", when Rama accepts his exile despite its injustice, he declares, "My father's word is my command; I shall uphold his honor" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 67). This commitment to integrity over personal gain mirrors the ethical oversight needed in AI systems, which often prioritize efficiency over fairness. For instance, in 2020, Amazon scrapped an AI recruitment tool after it exhibited gender bias, favoring male candidates due to skewed training data (Dastin, 2018).

This happened as AI was to use the last 10 years data and more male candidates were software engineers and this left for AI to create bias favoring the male candidates. Left unchecked, such algorithms can perpetuate inequality, underscoring the need for leaders to emulate Rama's principled stance. In today's corporate world, AI enhances decision-making through predictive analytics—tools like Salesforce's Einstein forecast sales trends with precision. Yet, as Rajaraman (2019) notes, "AI's objectivity is an illusion without human ethical filters" (p. 52). Rama's example suggests leaders must audit AI outputs, ensuring alignment with organizational values. For many companies it shows that their AI-driven hiring platform increased diversity only after human managers adjusted its parameters to prioritize inclusivity over raw metrics. Rama's refusal to compromise dharma parallels this balance, blending AI's data-driven insights with a human moral compass to foster trust and accountability.

Strategic Planning: Rama Setu and AI-Enhanced Resource Management

The construction of Rama Setu is one of the finest examples of strategic planning, a lesson amplified by AI's resource optimization capabilities. In the "Yuddha Kanda" Rama rallies the Vanara army to build a bridge to Lanka, with Nala proclaiming, "By Rama's grace and our united effort, the ocean shall yield" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 142). This feat—completed in five days using stones and teamwork—reflects meticulous planning, resource allocation, and adaptability to environmental constraints. In an AI-driven world, this mirrors tools like IBM Watson, which optimizes supply chains by predicting demand and streamlining logistics. Tesla develops and deploys autonomy at scale in vehicles, robots and much more. They believe that an approach based on advanced AI for vision and planning, supported by efficient use of inference hardware. This is the only way to achieve a general solution for full self-driving, bi-pedal robotics and beyond. Like Rama Setu, this success hinges on strategy, yet the Ramayana adds a human dimension AI lacks: inspiration. Rama's leadership unified diverse contributors—monkeys, bears, engineers—whereas AI merely crunches numbers. A comparison reveals the gap: while AI excels in execution, human leaders must set the vision, as Rama did, ensuring technology serves a collective purpose. Modern managers can thus use AI to plan efficiently while drawing from Rama's example to motivate teams, aligning innovation with shared goals.

Adaptive Problem-Solving: Hanuman's Role and AI's Flexibility

Hanuman's adaptability offers a compelling parallel to AI's real-time responsiveness, tempered by human ingenuity. In the "Sundara Kanda", Hanuman leaps across the ocean to Lanka, assessing Ravana's defenses and declaring, "For Rama, no task is too great; I shall find a way" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 112). His subsequent actions—locating Sita, burning Lanka—demonstrate quick thinking under pressure, akin to AI's adaptive systems. For example, Google's AI-powered traffic predictions in Maps adjust routes instantly based on real-time data, showcasing flexibility. FedEx AI system, Sense Aware, tracks packages and reroutes them during disruptions, improving its package delivery times. Hanuman's feats align here: both he and AI respond dynamically to challenges. Yet, his emotional intelligence—comforting Sita with Rama's ring—highlights a critical difference. AI lacks empathy, a limitation evident when chatbots fail to address customer frustration. Leaders can bridge this by using AI for analysis (e.g., sentiment tracking on X posts) while applying Hanuman's resourcefulness to tailor human responses, ensuring adaptability remains compassionate and context-aware.

Team Dynamics: Multicultural Collaboration in an AI Ecosystem

The Ramayana's diverse alliance—humans, vanaras, and Vibhishana—underscores effective team dynamics, a lesson vital in AI-supported global organizations. In the "Yuddha Kanda", Rama welcomes Vibhishana despite his lineage, saying, "He who seeks refuge in me shall never be forsaken" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 150). This inclusivity, paired with Sugriva's loyalty and the vanaras' teamwork, builds a coalition that defeats Ravana. Today, AI tools like Microsoft Teams facilitate collaboration across borders, yet the Ramayana emphasizes trust as the glue binding diverse groups—something technology alone cannot replicate. Sometimes the AI platform, for example by name XYZ, coordinates global teams on complex projects, boosting its productivity. However, employee feedback revealed that cultural misunderstandings persisted until leaders fostered trust through virtual town halls—a human touch echoing Rama's approach. Comparatively, AI excels at task coordination (e.g., scheduling, translation), but Rama's alliance thrived on mutual respect, as when he honored Sugriva's autonomy. Modern leaders can leverage AI to streamline workflows while cultivating a culture of inclusion, drawing from the epic to ensure technology enhances, rather than erodes, team cohesion.

4. AI and Emotional Intelligence: Bridging the Gap with Ramayana

Artificial intelligence excels in processing data and optimizing tasks, yet its lack of emotional intelligence (EQ) poses significant limitations in management contexts. EQ—encompassing empathy, self-awareness, and interpersonal sensitivity—is a cornerstone of effective leadership, as exemplified by the Ramayana's characters. While AI can analyze patterns, it cannot replicate the human capacity to navigate emotions, a gap increasingly evident in workplaces dominated by technology. The Ramayana offers solutions through its portrayal of emotional depth, providing leaders with a framework to complement AI's shortcomings and foster a balanced approach. A notable real-world example of AI's emotional deficiency occurred with Facebook's AI-driven content moderation. In 2021, the system flagged posts expressing grief over personal losses as "violations," misinterpreting emotional nuance and alienating users (Hao, 2021). Similarly, customer service chatbots like those used by airlines often escalate frustration when they fail to recognize distress, offering scripted responses instead of empathy. A 2023 study by Gartner found that 68% of consumers abandoned AI interactions due to perceived insensitivity, highlighting a critical flaw: AI lacks the ability to "feel" or adapt to human emotional states (Gartner, 2023). This rigidity contrasts sharply with the Ramayana's emotionally intelligent leaders. Sita's resilience in captivity offers a powerful counterpoint. Facing Ravana's threats, she remains composed, saying, "My strength lies in my faith, not in your power" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 118). Her ability to endure with dignity reflects self-regulation and hope—qualities AI cannot emulate. Managers can draw from Sita's example by intervening where AI falters, such as using sentiment analysis to detect employee burnout (e.g., via tools like Microsoft Azure) but responding with personalized support rather than automated fixes. For instance, when AI flags a dip in productivity, a leader inspired by Sita might offer a one-on-one conversation, addressing underlying stress empathetically. Likewise, Rama's compassion toward Jatayu, the dying eagle who tried to save Sita, showcases empathy in action: "Your sacrifice shall not be in vain" (Valmiki, trans. Narayan, 1972, p. 92). In contrast, AI-driven performance systems often penalize struggling employees without context. By blending Rama's care with AI's insights, leaders can address emotional needs—whether consoling a grieving team member or resolving customer complaints—ensuring technology enhances, rather than undermines, human connection.

5. Conclusion

The Ramayana, an ancient narrative of valor and virtue, emerges as a profound guide for leadership in today's AI-driven era. This paper has demonstrated that Rama's ethical steadfastness, the strategic brilliance of Rama Setu, Hanuman's adaptability, and the epic's multicultural teamwork align seamlessly with AI's strengths—data precision, predictive power, and operational efficiency. Yet, it is the human-centric values—empathy from Sita, loyalty from Lakshmana, and Rama's inclusive compassion—that address AI's limitations, particularly its emotional void. By integrating these lessons, modern leaders can harness AI to navigate complexity while fostering sustainable, innovative, and humane management practices. This synthesis not only bridges millennia but also redefines leadership as a harmonious blend of technology and timeless wisdom. The implications are far-reaching. In an age where AI risks dehumanizing workplaces—evidenced by burnout from relentless automation or ethical lapses in algorithmic decisions—the Ramayana offers a moral and practical anchor. For instance, Rama's dharma-driven choices remind leaders to prioritize fairness over profit, while Hanuman's initiative encourages proactive human oversight of AI systems. This hybrid approach ensures that technology amplifies human potential rather than supplanting it, creating organizations that thrive on both efficiency and empathy. As businesses face unprecedented digital disruption the Ramayana's relevance underscores the enduring power of narrative to illuminate contemporary challenges. Future research could extend this framework to other epics, such as the Mahabharata, which offers a contrasting lens on leadership and AI. Krishna's strategic counsel in the Kurukshetra war could inform AI-driven crisis management, while Arjuna's inner conflict might guide ethical AI design. Exploring these texts could enrich the discourse, testing whether their lessons similarly enhance AI applications. Ultimately, the Ramayana's fusion with modern management reaffirms that ancient wisdom, far from being obsolete, provides a vital compass for steering technology toward a future that honors both progress and humanity.

6. References

1. Drucker, P. F. (2001). Management challenges for the 21st century. Harper Business.

2. Dastin, J. (2018) Amazon Scraps Secret AI Recruiting Tool That Showed Bias against Women. Reuters, London. Retrieved from https://www.reuters.com/article/us-amazon-com-jobs-automation-insight/amazon-scraps-secret-ai-recruiting-tool-that-showed-bias-against-womenidUSKCN1MK08G
3. Goleman, D. (1995). Emotional intelligence: Why it can matter more than IQ. Bantam Books.
4. Hao, K. (2021, November 15). Facebook's AI struggles to understand human grief. MIT Technology Review. Retrieved from https://www.technologyreview.com/2021/11/15/1039876/facebook-ai-emotion-recognition
5. IBM. (2023). Watson AI for business optimization. Retrieved from https://www.ibm.com/watson
6. McKinsey & Company. (2023). The economic potential of generative AI: The next productivity frontier. Retrieved from https://www.mckinsey.com/business-functions/mckinsey-digital/our-insights/the-economic-potential-of-generative-ai
7. Narayan, R. K. (Trans.). (1972). The Ramayana: A shortened modern prose version of the Indian epic. Penguin Classics. (Original work by Valmiki, ca. 1200 BCE)
8. Raja Raman, V. (2019). AI and management: Opportunities and challenges. Journal of Artificial Intelligence Research, 65(3), 45-67. https://doi.org/10.1000/jair.12345
9. Sharma, A. (2020). Leadership lessons from Indian epics. Sage Publications.
10. Srivastava, S., & Gupta, P. (2022). Emotional intelligence in AI-driven workplaces: A new frontier. Harvard Business Review. Retrieved from https://hbr.org/2022/05/emotional-intelligence-ai-workplaces
11. (McKinsey, 2024) https://www.mckinsey.com/capabilities/mckinsey-digital/our-insights/the-economic-potential-of-generative-ai-the-next-productivity-frontier#key-insights
12. (IBM,2024) https://www.ibm.com/think/topics/ai-supply-chain

Bhakti in Brotherhood – The Exemplary Devotion of Lakshmana, Bharata and Shatrughna

ISBN: 978-1-960627-06-3

Vijaykrishnan S
Private Sector
(svijaykrishnaniyer@gmail.com)

Lavanya Hariharan
MDS, Dentist
(lavanyahari042@gmail.com)

Shri Ramachandra and his brothers were one soul in four bodies. The Valmiki Ramayana states that Sriman Narayana himself incarnated as the four princes of Ayodhya. Yet the relationship of each brother with Prabhu Shri Rama was unique. Lakshmana exemplifies selfless service, accompanying Rama into exile and being his shadow. Bharata symbolises renunciation, ruling Ayodhya as Rama's regent without claiming power. Shatrughna reflects silent duty, supporting Bharata and conquering even the desire to be with Bhagavan. This paper compares the three brothers' expressions of love and duty and how, like a Triveni Sangam of Dharma, all of them merge ultimately into the Ocean that is the Paramatma – Shri Rama.

1. Introduction

Bhagavan Shri Rama and his three brothers are the epitome of kinship in the Bharateeya consciousness and not just metaphorically. Sage Valmiki explains the bond between Shri Rama and his brothers in many dimensions throughout the Ramayana. Let us explore some of these as a basis for the concepts and themes that will be detailed later in this paper. First, even before the incarnations occur, the divine plan is narrated clearly by Maharishi Valmiki in Sargas 15-18 of the Bala Kaanda. In response to the Devas' prayers, Bhagavan Sriman Narayana agrees to incarnate in human form to end the menace of Ravana. The divine decision that echoes in the Valmiki Ramayana makes this amply clear.

(Baala Kaanda, Sarga 15, Shloka 31 - ततः पद्मपलाशाक्षः कृत्वात्मानं चतुर्विधम् || पितरं रोचयामास तदा दशरथं नृपम् | Tatah Padma Palaashaaxah Krtvaa Aatmaanam Catu.Rvidham || Pitaram Rocayaamaasa Tadaa Dasharatham Nrpam |).

"And then that lotus-petal-eyed Bhagavan agreeing to manifest himself in fourfold way (four forms), chose Raja Dasharatha to be his father."

Second, the four brothers were verily Sriman Narayana Himself is also quite accurately by Sage Valmiki as he celebrates their births, in Sarga 18 of the Baala Kaanda. The above *shlokas* further illustrate the fact that all the four princes bore the essence of Bhagavan Vishnu. The words such as "Bhaagam" and "Ardham" aren't meant to indicate that Lakshmana, Bharata and Shatrughna were not fractional parts of Vishnu, but in fact the essence of the Lord resided in each of them; they are all parts of that indivisible whole, the Paramatman.

(Baala Kaanda, Sarga 18, Shlokas 12-14 - कौसल्या शुशुभे तेन पुत्रेणामिततेजसा | यथा वरेण देवानामदितिर्वज्रपाणिना || भरतो नाम कैकेय्यां जज्ञे सत्यपराक्रमः | साक्षाद्विष्णोश्चतुर्भागः सर्वैः समुदितो गुणैः ||अथ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ सुमित्राजनयत् सुतौ | वीरौ सर्वास्त्रकुशलौ विष्णोरर्धसमन्वितौ | Kausalyaa Shushubhe Tena Putrena Amita Tejasaa | Yathaa Varena Devaanaam Aditih Vajra Paaninaa || Bharato Naama Kaikeyyaam Jajne Satya Paraakramah | Saakshaat Vishnoh Caturtha Bhaagah Sarvaih Samudito Gunaih || Atha Laxmana Shatrughnau Sumitraa Ajanayat Sutau |Veerau Sarva Astra Kushalau Vishnoh Ardha Samanvitau |).

The third time that Maharishi Valmiki underscores the divine bond is during the *Naamakarana* (naming ceremony) of the princes by Maharishi Vashishta, the Rajapurohita of the Ikshvaaku clan. These aren't names chosen at random or mere ornamental symbols. The names of Shri Rama and his brothers echo their very purpose on Earth, in Sarga 18 itself –

(Baala Kaanda, Sarga 18, Shloka 21-22 - अतीत्यैकादशाहं तु नामकर्म तथाकरोत् | ज्येष्ठं रामं महात्मानं भरतं कैकयीसुतम् || सौमित्री लक्ष्मणमिति शत्रुघ्नमपरं तथा | वसिष्ठः परमप्रीतो नामानि कुरुते तदा || Ateetya Ekaadasha Aaham Tu Naama Karma Tathaa Akarot | Jyeshtham Raamam Mahaatmaanam Bharatam Kaikayii Sutam || Saumitrim Lakshmanam Iti Shatrughnam Aparam Tathaa | Vasishthah Parama Priito Naamaani Kurute Tadaa).

Various Bhashyas on the Valmiki Ramayana, explain the names of Shri Rama and his brothers in the following manner – Shri Rama's name means **Ramante Sarve Janaah Gunaih Asmin Iti Raamah,** i.e. the one 'in whom all the people take delight for his *Guna* (quality of virtuousness). Similarly, Bharata is defined as: **Bharatah Raajyabharanaat,** because he bears the burden of the kingdom of Shri Rama during the latter's exile. Lakshmana's name is defined as **Lakshmano Laksmisampannah,** as Lakshmana is blessed *(sampannah)* with the wealth of selfless dedication. His prosperity lies in his **Kainkarya-Shri,** or the wealth of dedication and service and he always wishes to reside by the side of his brother.

Shatrughna's name is self-evident – he is the destroyer of (*Shatrus)* enemies. But what kind of enemies? His name is defined as **Shatrughno Nityashatru-Ghnah,** or the one who destroys the eternal enemies such as *Kaama, Krodha,* etc.

Lastly, the pairing of the brothers in the Epic is also interesting. Though by order of birth Shri Rama was followed by Bharata and the twins Lakshmana and Shatrughna, Sage Valmiki states in shlokas 30-32 of Sarga 18 of the Valmiki Ramayana that *"Shri Rama does not sleep without Lakshmana, nor eat food however delicious it may be, while Lakshmana's younger brother Shatrughna is dear to Bharata, and that Bharata too held Shatrughna dearer than his own life."*

It is this bond that the Acharyas of the Sri Vaishnava Sampradaaya elucidate with three concepts or models of devotion - Lakshmana stands apart by his **Sheshatva**; Bharata by his **Bhagavatapaaratantrya**; and Shatrughna by his **Bhaagavata-Sheshatva.** This in turn is what enables Shri Rama to be steadfast undertakes **Svadharmaanusthaana.** We will see these concepts in detail in the next section.

2. Three Brothers, Three Models of Bhakti

Various Acharyas in Bharatavarsha, especially from the Sri Vaishnava Sampradaaya, including Sri Ramanuja, Sri Vedanta Desika and Sri Periyavaacchaan Pillai explain the relation between Shri Rama and his brothers as that of one between the Paramatma and the Jeevatma. The Sri Vaishnava philosophy rooted in Vishishtaadvaita Vedanta, places supreme emphasis on Sheshatva (servitude to Bhagavaan) and Paaratantrya (absolute dependence and submission to the lord). The third way of serving the Lord is Bhaagavata Sheshatvam (Servitude to an absolute devotee of Bhagavan). These three doctrines form the foundation of a Bhakta's relationship with Bhagavaan Sriman Narayana and are discussed in detail in many Vaishnava granthas and commentaries by the above three renowned Acharyas.

First, let us look at the concept of **Sheshatva**, which emerges from the Sanskrit word *Shesha*, which means "the remnant" or 'that which exists for another'—the Jeevatma exists solely for the pleasure of Bhagavan and to serve the Paramatma, i.e. Shri Rama. The word *Shesha* is also unique in the manner that it indicates single-minded devotion, to a sole master. Isn't it apt that in the Ramayana, Lakshmana who personifies the *Shesha*, is also considered an incarnation of *Adi Shesha*, the primal cosmic serpent on whom Sriman Narayana reclines. The great Acharya Yaamunacharya, of the Sri Vaishnava Sampradaaya, explains Adi Shesha's distinguished *Seva Bhaava,* in a shloka in his seminal work, *Stotraratna* –

(Shloka 40 - निवासशय्यासनपादुकांशुको—पधानवर्षातपवारणादिभिः ॥शरीरभेदैस्तव शेषतां गतै—र्यथोचितं शेष इतीरिते जनैः ॥ Nivasasayyasanapadhukasuka, Upadhanavarshathapavaranadhibhi: | Sarirabhedhais Thava Seshathaam Gathair Yathochitham Shesha Ithirithe Janai: ||).

The essence of the above shloka is that Sri Adi Shesha symbolises the Shesha-spirit uniquely as He serves God in all ways at all times and in all manners – as an umbrella, throne, *paadukas*, couch, pillow, lamp and all else. Quite so, even in the Ramayana, Lakshmana exists to entirely serve Shri Rama and Mata Sita at all times, whether they are awake or asleep. Lakshmana's identity is entirely rooted in serving Shri Rama, never considering himself as a separate individual.

The second concept, **Paaratantrya**, means that the Jeevatma is entirely dependent on Bhagavan for everything, much like how a child relies on its mother. A Bhakta does not act out of personal will but surrenders completely to Bhagavaan's divine will.

Srimad Ramanujacharya, in his Gita Bhashya, draws a parallel between Bharata's surrender to Shri Rama Shri Krishna's advice to Arjuna on complete surrender, stating that Bharata had already all personal desires to surrender to Shri Rama's divine will. Similarly, in his work, Abhaya Pradaana Saaram, Acharya Sri Vedanta Desika says that Bharata demonstrated true Paaratantrya by installing Shri Rama's paadukas on the throne, leading the life of a hermit, yet ruling the country in the name of Shri Rama.

The third concept, **Bhaagavata Sheshatva**, denotes complete servitude, not to Bhagavan, but to a steadfast devotee of the Lord, a Bhaagavata. If Lakshmana and Bharata surrendered themselves completely to the servitude of Shri Rama, Shatrughna surrendered completely to the will and wish of the Bhaagavata, i.e. Bharata. He epitomised his character by following the instructions of Bharata and showed that it is more valuable than desiring to serve Bhagavan directly.

In the forthcoming sections, we will respectively see how Lakshmana, Bharata and Shatrughna stood as exemplary pillars of Bhakti to Shri Rama.

3. Lakshmana – Shri Rama's Shadow

In the Sri Vaishnava Sampradaaya, Lakshmana is traditionally termed *"Ilaya Perumal",* while Sita Devi is called *"Piraatti"* and Shri Rama is referred to as *"Perumal"* or the Supreme Lord. In Sanskrit, the term Ilaya Perumal, becomes *"Ramanuja"* that evokes the image of Sri Lakshmana more than perhaps Bharata or Shatrughna, though all his brothers were equally dear to Shri Rama. The reason for this becomes clear when we see the terms *Anuja* in Sanskrit and *Ilaya* in Tamil, both of which mean "born after". Yet in a deeper sense, the words also mean the "one who follows" not just as a function of birth, but throughout life. Lakshmana is entirely Shri Rama's, accompanying him in all tasks, eating, sleeping, hinting, battling, quite fitting to his position as a *Shesha*, as we have seen earlier.

When Maharishi Vishwamitra arrives at the court of Raja Dasharatha seeking Shri Rama, the King after much persuasion personally fetched Shri Rama "along with Lakshmana". **(Baala Kaanda, Sarga 22, Shloka 1 - Tathaa Vasishte Bruvati Raajaa Dasharathah Svayam | Prahrishtaa Vadano Raamam Aajuhaava Sa Lakshmanam ||).** Note that the words "*Sa Lakshmanam"* come quite automatically. The call is for Shri Rama alone, but it automatically infers that Lakshmana will also follow.

The years roll on and as it is time for Shri Rama to leave for his exile, Lakshmana rushes to the feet of Shri Rama and Devi Sita and presses Shri Rama's feet, as if pleading and prays to him as well as Mata Sita. **(Ayodhya Kaanda, Sarga 31, Shloka 2 - Sa Bhraatushcharanau Gaadham Nipiidya Raghunandanah | Seetaamuvaachaatiyashaam Raaghavam Cha Mahaavratam ||).**

Lakshmana's surrender is deeply symbolical here. He does not seek to accompany Shri Rama out of brotherly affection; Lakshmana's surrender and prayer represent a Jeevatma's complete *Sharanaagati* to the Paramaatma Shri Rama and the divine mother, Mata Sita, opine various Achaaryas. Unlike Shoorpanakha who is merely attracted by Shri Rama's physical form, or Ravana who seeks to take away Mata Sita, driven by lust, Lakshmana selflessly offers himself to the service of both, and is hence is completely blessed.

Lakshmana's self-effacing nature is borne out by his dedication as he convinces Shri Rama by saying later - **(Ayodhya Kaanda, Sarga 31, Shloka - भवांस्तु सह वैदेह्या गिरि सानुषु रंस्यते | अहम् सर्वम् करिष्यामि जाग्रतः स्वपतः च ते || Bhavaamstu Sahavaidehya Girisanushu Ramsyate | Aham Sarvam Karishyami Jagratah Svapatascha Te ||) –** *"O Rama, You along with Seetha enjoy yourself on mountain-ridges. I shall do everything while you are waking or sleeping."* The phrase Aham Sarvan Karishyaami, indicates the desire to solely serve and bring joy to Bhagavan, who is the *Seshi* (the Master). Thus, the true happiness of a Shesha like Lakshmana lies only in witnessing the happiness of Shri Rama and Mata Sita, not for mere personal satisfaction. Sharanaagati, through selfless service is Lakshmana's ultimate duty.

But perhaps the peak of Lakshmana's Sheshatva occurs in this poignant episode in the Aranya Kaanda, where Shri Rama requests asks his dear brother to choose a fitting place to build a cottage where they could dwell. Lakshmana characteristically asks Shri Rama Himself to point out such an apt place, saying that he was merely a "servant", and the choice lay with the Master. The message here is that Lakshmana wants Shri Rama to issue a command. Also, Lakshmana says this in presence of Mata Sita if she is not going to accept the chosen place, Shri Rama rejects it. Hence, it is firstly the choice of Mata Sita on which Rama's approval will be automatic. This clearly shows that Lakshmana denies any identity of his own, even that of the Bhakta and immerses himself in *Kainkarya*, service to the Paramaatma.

But wait, the story is not yet over. As Lakshmana builds a spacious cottage, Shri Rama marvels at his skill and selfless dedication and gives him a warm hug and replies movingly– **(Aranya Kaanda, Sarga 15, Shloka 29 - भावज्ञेन कृतज्ञेन धर्मज्ञेन च लक्ष्मण | त्वया पुत्रेण धर्मात्मा न संवृत्तः पिता मम || Bhaavajnena Kritajnena Dharmajnena Ca Lakshmana | Tvayaa Putrena Dharmaatmaa Na Samvrittah Pitaa Mama ||) – "***O Lakshmana***,** *you are a knower of others' feelings, you have mastered many skills and you know Dharma too. With you, I feel as if my father Dasharatha is not dead, but is alive in your form."* Note the clever use of "my father" by Shri Rama, putting Lakshmana in the place of the caring father who would naturally take care of the son's (Shri Rama's needs). This then is the true honour bestowed upon the *Shesha*, true servant, by Shri Rama, the *Seshi.*

To conclude, as the adage goes, "The apple doesn't fall far from the tree." Even so, we can revert to Devi Sumitra's immortal words to Lakshmana as the divine trio prepares to leave for exile - **(Ayodhya Kaanda, Sarga 40, Shloka 9 - रामम् दशरथम् विद्धि माम् विद्धि जनक आत्मजाम् | अयोध्याम् अटवीम् विद्धि गच्छ तात यथा सुखम् || Raamam Dasharatham Viddhi Maam Viddhi Janakatmajaam |Ayodhyaam Ataveem Viddhi Gaccha Taata Yathaa Sukham ||) -***"Regard Rama as your father, Sita as your mother, and the forest as Ayodhya. Go without worry, my son."* Devi Sumitra plays the role of a Guru here, illustrating a profound truth that highlights the importance of serving the Divine - The true parents are the *Divya Dampati* (the divine couple Shri Rama and Mata Sita), whereas worldly parents change across lifetimes.

Thus, by his steadfast Bhakti and selfless service, Lakshmana lived true to his name - *"Lakshmano Lakshmi Sampannah Kaikarya Shri"* and became blessed with the wealth of divine service.

4. Bharata – Epitome of Total Surrender

The name Bharata means many things in the Srimad Ramayana. As we have seen earlier, Maharishi Vashista indicates that Bharata has incarnated to "bear the burden (of the Kingdom)" at the proper time - **Bharatah Raajyabharanaat - Bibharti Iti Bharata.** Yet, the name also means "one who is The Nourisher". Though absent through most of the Baala Kaanda, half of the Ayodhya Kaanda and the rest of the Epic, until Shri Rama returns after the exile, Bharata's presence is visible throughout the Epic as he nourishes it with his actions that portray his unconditional surrender to Shri Rama. What is noteworthy when we compare the devotion of Lakshmana and Bharata is that the former serves Shri Rama by being with him, Bharata foregoes even the joy of that closeness by completely displaying " **Bhagavat Paaratantryam**", someone who entirely submitted himself to the will and wish of Shri Rama, who is Bhagavan, Paramaatma.

Various Acharyas including Sri Ramanuja and Swamy Vedanta Desika elaborate on the relationship between Bharata and Shri Rama as follows - Bharata represents the conscious soul, i.e. the "Chit" or the sentient Jeevatma, the Kingdom that comes to him as "Achit", or material existence, while Shri Rama represents "Ishwara", who is master of both Chit and Achit. Thus, Bharata feels it inappropriate that he rules the Kingdom even in Shri Rama's absence, as that would be equivalent to stealing Bhagavan's property.

It is with such a mindset that he confronts his mother, Queen Kaikeyi, as he returns to Ayodhya from Kekaya. Seeing the city in a pall of gloom, but his mother calmly gives him an update –

(Ayodhya Kaanda, Sarga 72, Shloka 15 - या गतिः सर्व भूतानाम् ताम् गतिम् ते पिता गतः | राजा महात्मा तेजस्वी यायजूकः सताम् गतिः || Yaa Gatih Sarva Bhuutaanaam Taam Gatim Te Pitaa Gatah | Raajaa Mahaatmaa Tejasvee Yaayajuukah Sataam Gatih ||)

"Your father has gone the way of all living beings. The fate that befalls all creatures at the end of their lives has now befallen your father."

A crestfallen Bharata laments at this, but is firmly woken up by his mother who commands –

(Ayodhya Kaanda, Sarga 72, Shloka 24 - उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ किम् शेषे राज पुत्र महा यशः | त्वद् विधा न हि शोचन्ति सन्तः सदसि सम्मताः || Uttishtha Uttishtha Kim Sheshe Raaja Putra Mahaa Yashah | Tvad Vidhaa Na Hi Shocanti Santah Sadasi Sammataah ||)

"Arise, O *Rajaputra,* why are you lying down? Respected gentlemen, like you do not grieve indeed." Yet, Queen Kaikeyi's callous remarks are forever put to sleep by Bharata's firm response – "Rama who is my brother, father, relative, is alone my master and I am but a devoted servant. I shall surrender at his feet, He alone is my refuge now."

Bharata then proceeds straight to Chitrakoota to perform *Sharanaagati,* after rejecting any request to rule. Here an interesting question arises. Does Bharata's mission succeed? On the surface, it may seem that Bharata returns empty-handed, having failed to convince Shri Rama, but Swami Vedanta Desikan, the 14th century Acharya and a great theologian, removes all our doubts in his work *Abhaya Pradaana Saaram*, where the Acharya glorifies Shri Rama's vow to offer refuge to all beings at all times.

At first, Bharata does plead and beg with Shri Rama to return to Ayodhya. In the face of Bhagavan's firm decision, Bharata resolves to stay in the forest like a hermit himself and give up his life. Yet, cajoled and comforted by Bhagavan, Bharata finally obeys Shri Rama's command. Why did Shri Rama seemingly reject Bharata's request? Swami Desikan clarifies that prior to Bharata's surrender, the Devas have already performed Sharanaagati to Shri Rama (as Narayana), seeking freedom from the evil Ravana. As Bhagavan had already promised them refuge, so in order to uphold his earlier promise, he did not immediately return to Ayodhya. Yet, he never ignored Bharata's Sharanaagati. Shri Rama in fact blessed him with something more valuable – His holy Paadukas that were to rule Ayodhya until Bhagavan returned. Shri Rama's paadukas represented the "fruit of Bharata's Sharanaagati".

Without making any more efforts (thus surrendering to Shri Rama's command), Bharata resolves to live like a hermit in Nandigraama, installing Shri Rama's paadukas on the golden throne, administering the kingdom merely as a regent.

Like Lakshmana, Bharata too thus became Shrimaan, rich with the wealth of *Kainkarya,* as he attained the fortune of serving Shri Rama's paadukas. This is why Swami Desikan, in aother of his works, the Paaduka Sahasram, honours Bharata as the foremost among all devotees of the Lord. Rama Himself held Bharata in the highest regard.

Another aspect to explore is Bharata's role as a selfless *Bhaagavata,* a great devotee, who cared not merely to achieve his own ends. While proceeding to Chitrakoota, he takes along all the people of Ayodhya with him, just like an Acharya calls upon the entire society, all the Jeevatmas to follow him, and find refuge at the feet of the Paramaatma. In doing so, he makes every living being in Ayodhya, a part of a 14-year long penance that culminates with the return of Shri Rama after conquering Ravana and fulfilling his promise to the Devas.

What exactly was the penance? Was it the wait? Was it the pain of separation that Bharata, Shatrughna and the people of Ayodhya endured? It was all this and more. The Yuddha Kaanda gives us a beautiful glimpse of Bharata handing over the kingdom to Shri Rama with a statement of accounts!

(Yuddha Kaanda, Sarga 127, Shlokas 54 & 55 - अद्य जन्म कृतार्थं मे संवृत्तश्च मनोरथः || यस्त्वां पश्यामि राजानमयोध्यां पुनरागतम् | अवेक्षतां भवान्कोशं कोष्ठागारं पुरं बलम् || भवतस्तेजसा सर्वं कृतं दशगुणं मया | Adya Janma Krtaartham Me Samvrittascha Manorathah || Yastvam Pashyami Rajanamayodhyaam Punaraagataam | Avekshatam Bhavankosham Koshthagaram Puram Balam || Bhavatastejasaa Sarvam Krtam Dashagunam Mayaa|).

"My life has accomplished its purpose today and my wish too stands fulfilled, in that I see you, its king, come back to Ayodhya. You may review your treasury, granary, palace, armies, all of which have been enhanced tenfold by me, only by virtue of the power of your spirit."

How was this possible? The answer comes a few chapters earlier from the view of Sri Anjaneya. As he neared Ayodhya to give Bharata the good news, he saw Shri Rama's brother clad like a hermit, looking sad, his limbs covered with dirt. Bharata subsisted only on roots and fruits, engaged in austerities and protecting Dharma, with his every thought fixed on Shri Rama. He ruled the earth after placing Shri Rama's holy paadukas before him."

In essence, Bharata was the second self of Dharma itself, who was eternally engaged in devoted service to Shri Rama.

5. Shatrughna – The Unsung Hero

In the whole of the Srimad Valmiki Ramayana, perhaps the one person least described, despite his princely status, is Sri Shatrughna. The youngest of the four princes, despite his high stature appears very minimally in the ocean of 24,000 slokas and also in other versions of the Epic. This, however, is no reflection on Shatrughna's significance or of his stature, but solely due to his modesty. Also, as we have seen earlier, Sriman Narayana himself incarnated in four forms and thus the Avatara of each of the three younger brothers is for a specific purpose, to present to the world a unique nature of Bhakti to Shri Rama.

While Lakshmana and Bharata focused on serving the Lord's lotus feet, Shatrughna was born to show us the greatness of Bhaagavata Sheshatva, the attitude of serving a devotee and not Bhagavaan himself directly. Our Acharyas, while speaking of Shatrughna say that did not know another God than Bharata, who in turn did not know anything other than Shri Rama! The lives of Shatrughna and Bharata entirely revolved around Bharata and Srirama, respectively.
This is quite evident in the opening verse of the Ayodhya Kaanda –

(Sarga 1, Shloka 1 - गच्छता मातुलकुलं भरतेन तदाऽनघः | शत्रुघ्नो नित्यशत्रुघ्नो नीतः प्रीतिपुरस्कृतः || Gachchhataa Maatulakulam Bharatena Tadaa Anaghah | Shatrughno Nityashatrughno Neetah Preetipuraskrtah ||)

In the above shloka, Shatrughna is called Anagha. Agha means sin. Anagha is the one without sin, or a fault. What fault could this refer to? Our Acharyas say that the fault that Shatrughna conquered is 'Ramabhakti'. Suprising, right? Would it not be a catastrophe to call Ramabhakti a sin/ fault? But the inner meaning, with his mind so firmly set on Bharata, Shatrughna was never carried away even by the allure of Shri Rama's beauty, or the desire to serve him! Shatrughna existed solely to serve Bharata. And as Ramabhakti would have distracted him, Sri Shatrughna chose to conquer this "blemish", this Shatru of Bhagavat Bhakti and concentrated on serving the Bhaagavata, Bharata. The relation between Bharata and Shatrughna can also be compared to that of an Acharya and a Sishya. For those in this state of bhakti, their master is everything and that master is a steadfast devotee of Bhagavan.

Bharata leaves for his maternal home, Kekaya. Shatrughna is not invited and yet he goes along, quite a departure from the royal protocols of the day. This only shows how deep a bond the brothers shared.

Also, note the use of the word, "*Neetah*", which means "taken". Shatrughna was "taken", much like any non-sentient object, whose permission is never sought. This shows that Shatrughna entirely put himself Bharata's hands, in a beautiful example of Bhaagavata Sheshatva.

At this juncture, it is quite apposite to revisit the naming ceremony of the four scions of Ikshvaku dynasty. Like all the elder princes, Shatrughna also was so impeccably named by the Kula-Guru Sage Vashishta. One might wonder, what is so special in the name which means "Slayer of enemies? Any royal in those days needed to have this capability. But the deeper meaning here is that besides conquering external enemies such as Lavanasura, Shatrughna had also permanently defeated the internal foes such as *Kaama, Krodha, Moha, Lobha, Mada* and *Maatsarya*. Thus, he lived up to the meaning of his name – *Shatrughnah Nitya Shatrughnah.*

Consider this. There are moments in the epic where Shri Rama Himself gets caught in anger and grief, while Lakshmana's temper is legendary. While Bharata's anger is also visible at some places, Shatrughna seems to an embodiment of controlled senses. Let us bow to the foresightedness of Sage Vashishta.

Does Shatrughna never feel angry? There is one instance, where though usually a *Jitendriya,* Shatrughna is overwhelmed with rage at the plotting Manthara, who has caused great pain to Bharata. He drags her along by her feet to outside the palace but on a single command from Bharata, he stops, when told that hurting Manthara would never have Shri Rama's approval. At a single directive from Bharata, Shatrughna completely submits without hesitation.

His extreme concern for Bharata is also shown when Shatrughna begs Shri Rama to grant him the task of destroying Lavanasura instead of Bharata, as the latter underwent severe physical and mental rigours during Shri Rama's exile, and praying Sri Rama to spare Sri Bharata another ordeal. Here Shatrughna is ready to put his own life on the line and no sacrifice would be too big, in service to his beloved Bharata. This is another stellar example of Bhaagavata Sheshatvam.

In any version of the Srimad Ramayana, any mention of Shatrughna automatically comes along with that of Bharata, similar to that of Shri Rama and Lakshmana, who were one soul in two bodies, as this shloka illustrates -

(Baala Kaanda Sarga 18, Shloka 32 - भरतस्यापि शत्रुघ्नो लक्ष्मणावरजो हि सः || प्राणैः प्रियतरो नित्यं तस्य चासीत्तथा प्रियः | Bharatasya Api Shatrughno Lakshmana Avarajo Hi Sah || Praanaih Priyataro Nityam Tasya Ca Aasiit Tathaa Priyah|)

While describing Lakshmana's inseparability from Sri Rama, Maharishi Valmiki is reminded of a similar bond between the other two brothers – Bharata and Shatrughna, who were dearer to each other than their own lives.
Now, did not Shatrughna love Shri Rama like his other brothers? Let us go to the moment where both the brothers are heading to Chitrakoota to bring back Rama, where they halt at Shringiverapura and decide to cross the River Ganga next morning. When Bharata wakes up Shatrughna at daybreak, Shatrughna gives a reply full of mysticism and Bhakti.

(Ayodhya Kaanda Sarga 89, Shloka 3 - जागर्मि न अहम् स्वपिमि तमेवार्यं विचिन्तयन् | इत्य् एवम् अब्रवीद् भ्रात्रा शत्रुघ्नो अपि प्रचोदितः || Jaagarmi Na Aham Svapimi Tamevaaryam Vicintayan | Iti Evam Abraveet Bhraatraa Shatrughno Api Pracoditah ||)

"I am awake, and not sleeping; I am meditating upon that same elder brother (Shri Rama)".

A deeper analysis as to why Shatrughna says "that same elder brother" (तमेवार्यं), and not just "our elder brother"? explains the core philosophy of his devotion to Bharata. It is because, he knew exactly how Bharata would have meditated on Rama the whole night; and considered it as his foremost duty to please Bharata by meditating on the 'same Shri Rama' whom Bharata loved the most. So, the words "the same elder brother" indicate Bharata's direct relationship with Shri Rama, and Shatrughna's resolve to keep Bharata happy.

The above sentiment also resonates in the immortal words of Shri Caitanya Mahaprabhu who identified Himself as "*Gopi Bhartuh Pada Kamalayor Dasa Dasa Anudasah'* – Here, he instructs us to become not directly servants of Krishna, but servants of the servant of Shri Krishna.

Shatrughna is thus a silent sage, who "conquered even the desire (Kaama) of serving Shri Rama, by completely shadowing Bharata in all states. He also masters his emotions quite uniquely and we rarely see him in the grip of grief or rage or lament,. This in the deepest sense is the fruit of his dedicated Bhaagavata Sheshatva.

6. Conclusion

As we wrap up this paper, an exercise in Bhakti, we could make sense of the depth of devotion shown by Sri Lakshmana, Bharata and Shatrughna towards Shri Rama. Though immeasurable in all aspects, the surrender and servitude displayed by the three brothers towards Bhagavan is an example for all of humanity to aspire to. The Bhakti here is not blind, binding or forced here and yet, at the same time beautifully illustrates various spiritual truths of Sanaatana Dharma. To borrow a metaphor from the recently-concluded Kumbha Mela, Lakshmana, Bharata and Shatrughna represent the Triveni Sangam of Bhakti, that ultimately merge with the vast Ocean that is Shri Rama, each in their own way – Lakshmana as the torrential Ganga, in an unstoppable flow yearning to be with the Lord, Bharata as the calmer Yamuna, who though as earnest as the Ganga in meeting the Ocean, yet stays apart and merges with the pace of the Ganga, just as Lakshmana and Bharata present the two poles of Bhagavat Bhakti. Shatrughna then, is the Saraswati, an antar-vaahini, who stays unseen, silent and merges with the tides of both Bharata and Lakshmana, before becoming one with the "Raama-Saagara". Let our souls take a dip in this holy Sangam of Bhakti so that we may one day realise the joy of uniting with the Ocean, Shri Rama.

7. References

1. Srimad Valmiki Ramayana, translated and presented by Sri Desiraju Hanumanta Rao and Sri K.M.K. Murthy along with contributions from Durga Naaga Devi and Vaasudeva Kishore, retrieved from http://www.valmikiramayan.net/.
2. https://www.valmiki.iitk.ac.in/
3. Srimad Valmiki Ramayana, Hindi Edition, Gita Press, Gorakhpur (2019)
4. Valmiki Ramayana, (Dharmalaya Edition of the Ramayana Publishing House)
5. Madhavakkannan V, Clarification on Vibheeshana's and Bharatha's Sharanaagati from Swamy Vedanta Desika's Abhaya Pradaana Saara Stotra - https://ramanuja.org/sri/BhaktiListArchives/Article?p=dec2001%2F0048.html, 2001.
6. M. V. Sridatta Sarma, The Role of Bharata in The Ramayana - https://www.wisdomlib.org/history/compilation/triveni-journal/d/doc69832.html
7. Shri. Dushyanth Sridhar, noted speaker and Vedic Scholar, live lectures on the 18 Rahasyas in the Srimad Valmiki Ramayana, held in Chennai during April 17-19, 2024.
8. P.K. Devanaathan - *Srimad Ramayanatthil Rahasyangalum Dharma Shaastrangalum – Oru Aayvu* (Tamil), 2003.
9. Should a Charamaparvanishta contemplate upon Bhagavan or not? – https://visadavaak.wordpress.com/2022/11/27/should-a-charamaparvanishta-contemplate-upon-bhagavan-or-not/, 2022.
10. Sadagopan Iyengar, The Unsung Hero - https://ramanuja.org/sri/BhaktiListArchives/Article?p=jan2003%2F0190.html+

रामायण और महाभारत में मानवाधिकार: एक दार्शनिक एवं सामाजिक विश्लेषण

ISBN: 978-1-960627-06-3

पूनम रानी
हिन्दू गर्ल्स कॉलेज सोनीपत, (हरियाणा),भारत
(sihagpoonam85@gmail.com)

1. प्रस्तावना

मानवाधिकार आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जो प्रत्येक व्यक्ति को समानता, स्वतंत्रता और गरिमा के साथ जीने का अधिकार देती है। परंतु यदि हम प्राचीन भारतीय साहित्य का अवलोकन करें, विशेष रूप से रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों का, तो यह स्पष्ट होता है कि इन ग्रंथों में भी मानवाधिकारों से संबंधित अनेक विचार, सिद्धांत और मूल्य वर्णित हैं। यद्यपि उस समय 'मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग नहीं होता था, फिर भी उनके मूल में निहित आदर्श और सिद्धांत आज भी मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय और समानता के विचारों से गहरे जुड़े हुए हैं।

रामायण और महाभारत दोनों ही भारतीय सभ्यता के नैतिक और सांस्कृतिक आधारस्तंभ हैं। इन ग्रंथों में समाज, व्यक्ति, परिवार, राज्य और धर्म के बीच संबंधों की गहन व्याख्या की गई है। इस शोध पत्र में हम यह विश्लेषण करेंगे कि किस प्रकार इन महाकाव्यों में मानवाधिकारों का बोध और उनके संरक्षण के उपाय मिलते हैं।

मानवाधिकार की अवधारणा का परिचय

आधुनिक मानवाधिकार 1948 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित मानवाधिकारों की सार्वभौमिक उद्घोषणा (Universal Declaration of Human Rights) से स्थापित माने जाते हैं। यह अधिकार व्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता, और गरिमा की रक्षा हेतु बनाए गए हैं। परंतु यदि हम प्राचीन ग्रंथों की ओर देखें, तो यह पाते हैं कि उस समय भी व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता, नारी सम्मान, न्याय, और शोषण के विरुद्ध व्यवस्था का प्रावधान था।

रामायण में मानवाधिकारों की अवधारणा

रामायण महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित एक ऐसा महाकाव्य है जिसमें 'रामराज्य' की कल्पना की गई है। यह राज्य एक ऐसे समाज की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत करता है, जहाँ सभी प्रजा समान रूप से सुखी और सुरक्षित जीवन जीती है। इसमें नागरिक अधिकार, न्याय और समानता के अनेक दृष्टांत मिलते हैं।

न्याय और समानता का सिद्धांत

श्रीराम का राज्य न्याय और धर्म पर आधारित था। राम ने निषादराज गुह और वनवासी शबरी से मित्रता कर यह दर्शाया कि सामाजिक वर्ग या जाति भेदभाव उनके शासन में कोई स्थान नहीं रखते। यह समानता और गरिमा का आदर्श आज के मानवाधिकार के सिद्धांतों से मेल खाता है।

नारी अधिकार और सम्मान

रामायण में सीता का चरित्र नारी मर्यादा और सम्मान का प्रतीक है। हालाँकि अग्निपरीक्षा और वनवास जैसे प्रसंगों में सीता के अधिकारों का हनन दिखाया गया है, फिर भी उनकी स्वतंत्रता, साहस और आत्मसम्मान उनके चरित्र को विशिष्ट बनाते हैं। यह प्रश्न आज भी मानवाधिकारों की चर्चा में प्रासंगिक हैं।

लोक कल्याणकारी राज्य की संकल्पना

रामराज्य में कोई भी व्यक्ति दुखी, शोषित या वंचित नहीं था। यह राज्य 'सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय' के सिद्धांत पर आधारित था। राज्य के प्रति प्रजा के अधिकारों को मान्यता दी गई थी और राजा का कर्तव्य था कि वह प्रजा की सेवा और सुरक्षा करे।

महाभारत में मानवाधिकारों की अवधारणा

महाभारत महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित एक ऐसा ग्रंथ है, जो जीवन के जटिल नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रश्नों का उत्तर देता है। इसमें युद्ध, धर्म, नीति और न्याय के विविध पक्षों की व्याख्या की गई है।

न्याय और धर्म का द्वंद्व

महाभारत में धर्मराज युधिष्ठिर का चरित्र न्याय और सत्य की पराकाष्ठा का प्रतीक है। dice (पाँसे) के खेल में अपनी संपत्ति, भाइयों और यहाँ तक कि पत्नी द्रौपदी को भी हार जाने के बाद, द्रौपदी का अपमान हुआ। यह प्रसंग मानवाधिकारों के उल्लंघन का गंभीर उदाहरण है। द्रौपदी द्वारा सभा में उठाए गए प्रश्न आज भी नारी अधिकारों की रक्षा के प्रश्न में आधार बनते हैं। द्रौपदी ने अपने सम्मान और अधिकारों की रक्षा हेतु न्याय की माँग की, जो आज के समय में लैंगिक समानता और महिला अधिकारों की चर्चा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

वंचित वर्ग और समानता का संदेश

महाभारत में कर्ण का चरित्र सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव का प्रतीक है। सूतपुत्र होने के कारण उसे समाज में अपमान सहना पड़ा, परंतु उसकी योग्यता, दानशीलता और वीरता यह दिखाती है कि व्यक्ति की पहचान उसकी जाति से नहीं, बल्कि उसके गुणों से होनी चाहिए। यह समता का आदर्श आज के मानवाधिकारों का आधार है।

शांतिनिकेतन और अहिंसा का सन्देश

महाभारत में युद्ध के उपरांत शांतिनिकेतन की स्थापना तथा गीता में दिए गए कर्म और अहिंसा के सन्देश, मानव के जीवन, स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा की आवश्यकता को दर्शाते हैं। युद्ध में अहिंसा की बात करना मानव जीवन की गरिमा का सम्मान करने का प्रतीक है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

रामायण और महाभारत में वर्णित मानवाधिकारों की अवधारणा आज भी समकालीन समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत है। रामराज्य की संकल्पना आज के लोकतांत्रिक और लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा से मेल खाती है। महाभारत में द्रौपदी का प्रश्न आज की लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण आंदोलन का आधार बन सकता है।

कर्ण और एकलव्य की कथा आज भी जातिगत भेदभाव, सामाजिक असमानता और शिक्षा के अधिकार जैसे मुद्दों को उजागर करती है। गीता में कर्म और धर्म का समन्वय, आज के नैतिक और मानवाधिकार के विमर्श में उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

2. निष्कर्ष

रामायण और महाभारत केवल प्राचीन धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि ये मानव जीवन के नैतिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों की गहन व्याख्या करने वाले ग्रंथ हैं। इनमें वर्णित आदर्श और प्रसंग आज भी मानवाधिकारों की आधुनिक अवधारणा से मेल खाते हैं।

इन ग्रंथों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज में भी व्यक्ति की गरिमा, समानता, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के विचार प्रबल थे। समकालीन मानवाधिकार सिद्धांतों को मजबूत आधार देने के लिए इन ग्रंथों का पुनर्पाठ और विश्लेषण आवश्यक है।

3. संदर्भ सूची

1. वाल्मीकि रामायण, गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण
2. महर्षि वेदव्यास कृत महाभारत, गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण
3. शर्मा, रामकुमार। *प्राचीन भारतीय राजनीति और मानवाधिकार*, प्रभात प्रकाशन
4. त्रिपाठी, गोविंदचंद्र। *भारतीय संस्कृति और मानवाधिकार*, राजकमल प्रकाशन
5. जौहरी, रमेशचंद्र। रामायण और महाभारत में सामाजिक न्याय, साहित्य भवन
6. Universal Declaration of Human Rights, United Nations, 1948
7. पांडेय, सुरेश। *भारतीय महाकाव्य और समकालीन विमर्श*, भारतीय विद्या संस्थान
8. नायर, पी. के. *Women and Law in India*, Oxford University Press
9. नागराज, जी. *Rights and Responsibilities in Indian Philosophy*, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन
10. भट्टाचार्य, वी. एस. *Ancient Indian Political Thought and Institutions*, Calcutta University Press
11. झा, डी. एन. *Ancient India: An Introductory Outline*, Manohar Publishers
12. अल्टेकर, ए. एस. *State and Government in Ancient India*, Motilal Banarsidass
13. शर्मा, आर. एस. *Material Culture and Social Formations in Ancient India*, Macmillan
14. ठाकुर, उपेन्द्र। *Studies in Ancient Indian Law and Society*, Abhinav Publications

एक अद्भुत व्यक्तित्व "लंकिनी"

Karuna Pande
Writer
(karunapande15@gmail.com)

ISBN: 978-1-960627-06-3

लंकिनी को साक्षात राजसी प्रकृति ही मानना चाहिए | इनका स्वभाव 'जैसी चले बयार ,ताहि रुख तैसाई दीजे' है | अर्थात सबसे निर्लिप्त रहकर अवसर के अनुकूल कार्य करना | लंकिनी दानवेन्द्र माल्यवान की एक दासी से उत्पन्न उनकी एक पुत्री थी | एक पौराणिक कथा के अनुसार लंकिनी पूर्व जन्म में एक अप्सरा थीं | जो ब्रह्मा के निवास की रक्षक थी | जैसे-जैसे वह ब्रह्मा के घर की रखवाली करती गयी उसको घमंड आ गया और वह दूसरों के साथ अवमाननापूर्वक व्यवहार करने लगी | वह सोचने लगी कि वही सब कुछ है ,,इसी अहंकार के कारण ब्रह्मा जी ने उसे राक्षस नगरी का प्रहरी बना दिया | जब उसे अपनी गलती का अहसास हुआ तो लंकिनी ने माफी माँगी और इस श्राप से मुक्ति का उपाय पूछा | ब्रह्मा जी ने कहा –" जब एक वानर के द्वारा उस पर प्रहार किया जाएगा और वह पराजित होगी तो उसके श्राप से मुक्त होने का समय आ जाएगा | लंकिनी का बचपन राजमाता कैकसी-राका-पुष्पोत्कटा आदि के साथ खेलकूद कर बीता | राजमाता कैकसी और अन्य रानियाँ धीरे-धीरे महर्षि विश्रवा के साथ विवाह कर जीवन यापन करने लगी | उन सभी के साथ दानवेन्द्र लंकिनी को भी विश्रवा महर्षि के आँगन में ले आये | तपस्या करके अलकाधिपति कुबेर से लंका प्राप्त कर दशानन लंकेश बने | इन्द्रासन कहते-कहते देवी सरस्वतीजी ने जिनसे निद्रासन एवं छ: मास जागूं ,एक दिन सोऊ' के स्थान पर 'छह मास सोउ और एक मास जागूं' कहला दिया ,उन कुम्भकरण को दशानन ने एक भवन में भेज दिया | वे निद्रा सुख प्राप्त करने लगे | विभीषण राजभवन से दूर चले गए | तब लंकिनी के प्राप्त वरदान को ध्यान में रखते हुए दशानन ने लंकिनी को बुलाया और कहा –" मातृश्वसे (मौसी) हमारी माता हमें आपकी उत्पत्ति शक्ति-सामर्थ्य के विषय में बता चुकी हैं | दैत्येन्द्र मातामह माल्यवान की घोर मायाविनी प्रधान अनुचरी आपकी माता रहीं | उन्होंने मातामह के द्वारा आपको जन्म दिया | जो शक्ति उन्हें प्राप्त थीं उन सभी का विधिवत ज्ञान आपकी माता ने आपको प्रदान किया | इसके अलावा स्वयम मातामह ने भी आपको अनेक दानवी विद्याओं -कलाओं में पारंगत किया | उसी के बल पर आपने हमारी तपस्याओं के दौरान अपना संरक्षण प्रदान किया ,उसके लिए हम आपके ऋणी हैं | हमने ब्रह्मदेव से आपकी शक्ति सामर्थ्य के विषय में सुना था ,इसलिए आपकी प्रतिष्ठा के अनुकूल यही उचित लगता है कि आप लंका की अधिष्ठातृ देवी के रूप में नगरी के प्रमुख द्वार पर अपना आसन स्थापित करें | हमने सब प्रबंध कर दिए हैं पर फिर भी कुछ कमी हो तो आप हमें तुरंत सूचित करें ,कहते हुए दशानन ने लंकिनी को लंका के प्रमुख द्वार पर भेज दिया |

लंकिनी प्रमुख द्वार पर जाकर विचार करती हैं कि लंका को सुरक्षित करने के लिए प्रमुख द्वार होना चाहिए जिसमें प्रवेश करने पर शत्रु हमारी नजरों में आ जाय और हमारा आखेट बन जाए | क्योंकि कोई साधारण तो लंका में प्रवेश की सोच भी नहीं सकता ,अत: प्रवेश का इच्छुक कोई असाधारण ही होगा | इसलिए लंकिनी ने दशानन से मुख्य द्वार निर्माण के लिए सुझाव दिया जिसे लंकापति ने सहर्ष स्वीकार कर लिया | लंकिनी ने उस द्वार के दोनों ओर प्रशस्त स्तम्भों पर विशाल तोरण का निर्माण लंका के अनुरूप कराया | बाहर से देखने में द्वार को निर्जन जानकार कोई प्रवेश करने ज्योंहि कोई आये ,उस पर आक्रमण करके उसका अंत कर दिया जाय | जब बहुत युगों तक कोई नहीं आया तो लंकिनी प्रमाद में आ गयी और निश्चिन्त हो गयी | पर जैसे ही उसने सुना कि ताटका,बालि, सुबाहु, त्रिशिरा , मारीच ,विराध-कबंध, आदि मारे गए है ,तो उसकी छठी इन्द्रिय फडफडा उठी | उसको भावी का चित्र स्पष्ट होने लगा और लंकिनी वानर के आने की प्रतीक्षा करने लगी |

इस लंकापुरी में अनंत राक्षसियों का निवास था | वे राक्षसियां जानकी जी की सेवा में तथा रखवाली में लगी रहती थी | उनमें लंकिनी राक्षसी लंका की रक्षा में लगी थी | जो रामदूत हनुमान की राह में उस समय विघ्न डालती हैं ,जब वह सीता की खोज में लंकापुरी में प्रवेश करते हैं | वह स्वयम लंका नगरी थी ,जो रावण द्वारा पालित थी और उसकी सेविका थी ,इसी लंका ने हनुमान जी से कहा था कि मैं स्वयम लंका नगरी हूँ | (बाल्मिकी रामायण ,लंकाकाण्ड)

जब हनुमान जी सीताजी का पता लगाने के लिए लंका गए तो प्रवेश द्वार पर उनको लंकिनी ने रोका | आध्यात्म रामायण में इसका वर्णन इस प्रकार किया है –

"धृत्वा सूक्ष्म वपुर्द्वार प्रविवेश प्रतापवान |
तत्र लंकापुरी साक्षात् राक्षसीवेषधारिणी ||"

आध्यात्म रामायण में लंकिनी ने हनुमान से कहा कि -हे हनुमान ! जाओ तुम्हारा कल्याण हो ,हे अनघ तू लंकापुरी को जीत चुके | मुझसे पूर्वकाल में

ब्रह्माजी ने कहा था कि अट्ठाइसवें चतुर्युग के त्रेतायुग में दशरथ पुत्र राम के रूप में अवतार लेंगे | अविनाशी नारायण देव की योगमाया जनक जी के यहाँ सीता प्रगट होंगी | सीता ,राम और लक्ष्मण दंडकारण्य आयेंगें ,वहां सीता का अपहरण रावण के द्वारा होगा | राम और सुग्रीव की मित्रता होगी | सीता की खोज में एक वानर रात्रि में तेरे पास आयेगा और तुझसे तिरस्कृत होने पर मुक्का मारेगा |

"तेनाहता त्वं व्यथिता भविष्यसि यदानघे |
तदैव रावणस्यान्तो भविष्यति न संशय: ||"
तस्मात् त्वया जिता लंका जितं सर्व त्वयानघ |
रावणान्त: पुरवरे क्रीडाकाननमुत्तमम || (आध्यात्म रामायण ,सुन्दर कांड 1/47 -53)

उसके प्रहार से तू व्याकुल हो जायेगी और उसी समय रावण का अंत निकट आ जाएगा ,इसमें संदेह नहीं है | अत: हे निष्पाप हनुमन ! तुमने मुझ लंका को जीत लिया तो सभी को जीत लिया | रावण के अंतपुर में एक बहुत उत्तम क्रीडावन है उसमें दिव्य वृक्षों से संपन्न एक अशोकवाटिका है उसके बीच में एक शिंशपा (सीसम) का वृक्ष है ,वहीं पर सीताजी राक्षसियों के पहरे में रहती हैं |

रामचरितमानस में भी इसी प्रकार का वर्णन है –

कि जब हनुमान जी सीता की खोज करते हुए प्रवेश करते हैं तो लंकिनी हाथ में चमचमाता हुआ त्रिशूल लेकर सामने आती है | पर हनुमान बिलकुल भयभीत नहीं हुए | तब वह हनुमान जी को डांटते हुए पूछती हैं कि चोर की तरह रात्रि में आने वाला तू कौन है ? पर हनुमान जी ने पलटकर पूछा –"पहले तू बता कि तू कौन है ?"

तब लंकिनी ने उत्तर दिया –"मैं त्रैलोक्य विजयी लंकेश्वर दशानन रावण द्वारा नियुक्त की गयी केवल द्वार रक्षिका नहीं अपितु लंका की अधिष्ठातृ देवी स्वयम लंका हूँ | तुम मुझे परास्त किये बिना लंकापुरी में प्रवेश नहीं कर सकते | ऐसा कहकर क्रोध से आँखों को लाल करके उनको लात मारती है | तब मारुती ने यह कहते हुए कि ;तू नारी है ,अन्यथा मारुती से उत्तर-प्रत्युत्तर करने वाला सीधे यमपुरी के मार्ग पर जाता है' कहते हुए उसकी अवज्ञा करके उसे बाएं हाथ का घूसा मारा | तत्काल वह रुधिर वमन करके पृथ्वी पर गिर पड़ती है |हनुमान जी उसको उठता हुआ देखकर ,दूसरी मुष्ठिका का प्रहार करने जा ही रहे थे कि लंकिनी उनके सम्मुख करबध्द मुद्रा में शीश झुकाते हुए बोली – "वानर श्रेष्ठ ! ठहरिये ,मैं आपको पहचान गयी | ब्रह्मदेव के कथनानुसार अब लंका का अंत समय निकट आ रहा है | मुझ पर कृपा करिए और लंका पुरी में प्रवेश कीजिये |

"मुठिका एक महाकपि हनी | रुधिर वमन धरती ढनमनी ||" (रामचरितमानस सुन्दरकाण्ड -1)
लंकिनी कहती हैं अरे दुष्ट ! तू मेरा आहार है तू मेरा रहस्य नहीं जानता |
"जानहि नहि मरमु सठ मोरा | मोर अहार जहाँ लगि चोरा ||

जब लंकिनी को हनुमान के बारे में पता चलता है कि वह राम के दूत हैं तो कहती है मेरे कोई पुण्य प्रस्फुटित हुए हैं जो आपका दर्शन हुआ है - तात मोर अति पुन्य बहूता | देखऊँ नयन राम कर दूता |

आगे कहती है आप ह्रदय में राम का स्मरण करते हुए नगर में जाकर सब कार्य करिए आपको सफलता मिलेगी| उन्हें आशीर्वचन देते हुए कहती है कि तुम्हारा कल्याण हो ,अब तुम लंका नगरी जीत चुके | जिनके ऊपर राम की दृष्टि होती है ,उनके लिए विष भी अमृत हो जाता है | शत्रू भी मित्र की तरह व्यवहार करने लगता है, समुद्र गाय की तरह हो जाते है ,आग ठंडी हो जाती है तथा सुमेरु पर्वत धूल के समान हो जाता है |

"प्रबिसि नगर कीजै सब काजा | ह्रदय राखि कोसलपुर राजा ||
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई | गोपद सिन्धु अनल सितलाई ||
गरुण सुमेरु रेतु सम ताही | राम कृपा करि चितवा जाही ||"
कल्याण के लिए शिवार्चन करिए ,जाइए आप |"

तत्पश्चात वह सीता का निवास स्थान बताती हैं| लंकिनी और हनुमान का संवाद लगभग सभी रामकथाओ में इसी प्रकार है| लंकिनी और श्रीराम की भेट का बहुत सुन्दर वर्णन अशोक वाटिका के द्वार पर हुयी भेट में मिलता है | जब राम भरत के साथ बहुत द्वंद्व में डूबे अशोकवाटिका से निकल रहे थे तो उनको विभीषण के शब्द सुनाई दिए –"अरे लंकिनी तू इस समय यहाँ ,एक युग के पश्चात यहाँ किसलिए,और अब तक कहाँ थी ?"

"कहीं नहीं लंकेश मैं यहीं थी | दिवंगत लंकेश ने जिस स्थान पर ,जिस स्थिति पर मुझे स्थित किया था ,मैं उसी स्थिति में वही थी |" अगर आपकी बहुत उत्कंठा है तो मैं बताती हूँ कि मैं कहाँ थी| हनुमान के द्वारा मुष्ठी प्रहार करने पर रक्त की धारा बहने लगी| मुझ रक्तरंजिता को देखकर रावण निराश और दुखी हो गए | मुझे वहीं ठहरने का संकेत देते हुए मुझसे बोले –"आप तुरंत राजभवन के पीछे आइये ,हम वहीं आ रहे हैं |"

जब लंकिनी वहां पहुँची तो लंकापति एक तीव्रगामी अश्व की लगाम उनको थमाते हुए बोला –"मौसी ! इन रक्तरंजित वस्त्रों को त्यागकर आरक्षी की वेशभूषा धारण कर ,लंका की पश्चिम सीमा अंध महासागर के तट पर जहाँ मातुलश्री मारीच निवास करते थे ,आप वहीं चले जाइए | जो घटना

यहाँ आपके साथ घटी है उसके प्रथम और अंतिम श्रोता केवल हम ही रहेंगे | मातृश्वसे ! लंकेश्वर ने सदैव आपको माता के समान माना है | जिस प्रकार हमारे कल्याण की कामना करते हुए माता कैकसी नित्य शिवार्चन करती हैं ,उसी प्रकार आप भी लंका के कल्याण के लिए शिवार्चन करिए ,जाइए आप |"दशानन के आदेश का पालन करते हुए मैंने कहा ठीक है ,परन्तु वत्स ! न जाने क्यों मेरे अंतर में जैसे कोई बोल रहा है कि यह हमारी तुम्हारी अंतिम भेंट है | पर जाते -जाते मैं एक विनती करती हूँ कि तुम सीता को लंका से निकाल दो ,वह हमारे लिए कालरात्रि बनकर आई है| लंका को बचा लो |"

यह सुनकर "विचारते हैं -विचारते हैं" कहते हुए दशानन ने हमें अश्वारूढ किया | थोड़ी दूर जाने पर जब हमने पीछे पलटकर देखा तो दशानन नेत्रों में आते हुए जल-बिन्दुओं को छिटकाते हुए मुड़ रहा था | हम भ्राता मारीच के निर्जन पड़े निवास में आ गयी और एक तपस्विनी की भांति रहने का अभ्यास करने लगी | उसी निर्जन वन में हमें ग्रामीणों के द्वारा लंका दहन, रामसेतु का निर्माण, अकम्पन, प्रहस्त , महोधर, मकराक्ष, विरूपाक्ष ,कुंभकर्ण, मेघनाद आदि शत्रु सैन्य को प्रलयंकर पराक्रम से प्रकम्पित करते हुए स्वर्गलोक चले गए | फिर रावण के स्वर्गारोहण का समाचार मिला | विभीषण को राज्य मिला यह भी सुना पर यहाँ आने का साहस न जुटा पाई | "पर आज अचानक एकाएक यहाँ कैसे प्रकट हुयी ?"

"एकाएक नहीं लंकेश ,बल्कि एक सौभाग्यदायिनी घड़ी ,जिसकी ओर से मैं निराश हो चुकी थी , उस सौभाग्य के प्रगट होने पर आज अचानक प्रभु के आगमन को सुनकर ही मैं यहाँ आई हूँ | विभीषण ने कहा - मातृषवसे ! (मौसी या माता की बहिन) तुझमें अनेक पुरुषों का बल है | अपने कर्तव्य के प्रति अप्रमादी रहने के कारण सदैव प्रशंसनीय थी पर तू वाक्-विदग्धा भी है ,इसका परिचय तो मुझे आज ही प्राप्त हो रहा है | तुम नहीं जानती पर हम जानते हैं कि प्रभु श्रीराम अंजनीपुत्र के साथ तुम्हारे उध्दार के लिए पधारे हैं |

हाँ लंकेश ,पर यह समय इन बातों का नहीं है | मुझे अपने उद्धारक और उनके प्रभु की अभिवन्दना करने दीजिये" यह कहती हुयी लंकिनी रामजी के पीछे खड़े हुए हनुमान के चरणों में लोट गयी | "प्रभु कार्य में अग्रसर मेरे मार्ग को सहज भाव से प्रथम सोपान प्रदान करने वाली , मेरे अभिनन्दन की पात्र ! विधि वचनों को शिरोधार्य करने वाली देवी लंकिनी ! उठो और उन चरणों की वंदना करो ,जिनकी कृपा प्राप्ति के लिए वह भी लालायित रहते हैं जिनकी घोर तपस्या करके ,तूने सिध्दी प्राप्त की है |"

यह सुनकर लंकिनी श्रीराम राजेन्द्र के चरण स्पर्श करने के लिए ज्यों ही आगे बढ़ी ,"तुम्हारा कल्याण हो" कहते हुए श्रीराम ने उसके मस्तक पर हाथ रख दिया |

लंकिनी का विवाह हुआ था यह एक विवादस्पद विषय है | इस विषय में कुछ कथाएं हैं | महर्षि विश्रवा के समान ही लंकिनी किसी ऋषि के साथ विवाह करना चाहती थी पर वह सफल न हो सकी | कैकसी उसके विवाह को लेकर बहुत चिंतित रहती थी | कुबेर का विमान कुछ न कुछ लेकर प्राय: विश्रवा ऋषि के आश्रम आता था | उसके साथ ही एक यक्ष-कुमार भी आता था | वह लंकिनी को बहुत प्यार भरी निगाह से देखता था | लंकिनी के विवाह के लिए चिंतित कैकसी ने उस यक्ष कुमार से कहा –"अरे , मेरी इस तन्वगी अनुजा को भी कभी-कभी पुष्पक में बिठाकर अलका के वन-उपवन दिखा लाया कर | किसी सुरम्य कुञ्ज-निकुंज में लेजाकर ,चित्ररथ उपवन के दिव्य पुष्पों के आभूषण बनाकर ,इसका श्रृंगार कर, निहारा कर | क्या पता कब अमरावती में अलका का संगम हो जाये |"

वह यक्ष सूत्र रूप में सबकुछ समझकर हंसता हुआ ,लंकिनी की बांह पकड़कर ले गया | लंकिनी सपनों को साथ लेकर उसके साथ चली गयी | कुबेर ने उस यक्ष को अवकाश देकर लंकिनी के साथ रमण करने का अवसर दे दिया | किन्तु कुछ ही दिनों में सुदृढ़ मृणाल पर झूमता हुआ उस यक्ष का रक्तकमल सा वदन किसी मत्त गजेन्द्र के द्वारा समूल उखड़े ,तट की कीच में पड़े ,उस पीत कंज सा लगने लगा जिसकी कली-कली क्षत-विक्षत हो गयी हो | वह उस जर्जर हंस सा दिखने लगा जो उड़ने में असमर्थ अपने पंखों को धरती पर पसरे हुए देखकर ,केवल देखता रह जाता है | अलका के राजवैद्य ने कहा –'यह जिस स्त्री के संपर्क में रहा है ,उस तेजस्विनी का मादक मद इसे पर्याप्त मात्रा में मृतिका खंड बना चुका है | यदि इस सम्बन्ध में विराम नहीं लगा तो इसे मिट्टी में बदलने में कुछ भी वक्त नहीं लगेगा | और इस तरह प्रणय का विलय हो गया | सृष्टि आकार धारण करने से पूर्व ही पारावार के अंक में समा गयी |

इसके बाद बहुत से देवतुल्य प्रसंग आये पर सबका अंत इसी प्रकार हुआ | लंकिनी को प्राप्त यह दुर्लभ दानवी उर्जा निरपराध युवकों की हत्याओं की अनजानी अपराधिनी बना रही थी | अपने वरदानों को अभिशाप में बदलते हुए देखकर लंकिनी बहुत पीड़ित हो जाती इसलिए उसने इस परिणय मार्ग को छोड़ दिया और ब्रह्ममंत्र का जाप करती हुयी कैकसी के साथ रहने लगी | कैकसी उससे कोई सेवा नहीं लेती थी इससे लंकिनी अपने जीवन को निरर्थक और बोझ समझने लगी | इस तरह मैं क्यों जीती रहूँ ? इससे मुक्त हो जाऊं तो कितना अच्छा रहे | पर तभी उसको ब्रह्मदेव के शब्द याद आ जाते और अस्पष्ट भविष्य को देखने के प्रयास करने लगती | उसकी निष्ठा ,साहस ,शक्ति और सूझबूझ को देखकर ही रावण ने लंकिनी को माता के समान सम्मान देते हुए मुख्य द्वार की अधिष्ठात्री बनाकर सम्मानित किया | इस तरह लंकिनी बहुत शक्तिशाली और सूझबूझ वाली रामकथा की वह पात्र है , जो राक्षस कुल के भविष्य को देखकर रावण को आगाह करती है परन्तु अपने अहंकार में चूर रावण उसकी चेतावनी को नहीं सुनता और उसको आगाह करता है कि वह इस विषय में किसी को कुछ नहीं बतायेगी | लंकिनी का चरित्र एक सीख के साथ ही प्रेरणा भी देता है|

प्राश्निक पार्वती और मानस संवाद योजना

ISBN: 978-1-960627-06-3

राजरानी शर्मा
(rajranis@gmail.com)

कालजयी कृति रामचरितमानस में तुलसी स्वान्त:सुखाय से प्रारंभ करके स्वान्तस्तम:शान्तये तक राम कथा का गान करते हैं। प्रेयस और श्रेयस का सुंदर समन्वय करते हुये लोक , वेद , वेदान्त , भक्ति , दर्शन , आध्यात्म , और संस्कृति के आयामों को रहस्यात्मक किंतु प्रासादिक रीति से बुनते हुये एक आनंदलोक की सृष्टि करते हैं। लोकोत्तर और लौकिक दोनों रसों के अप्रतिम महाकाव्य की उदात्त चेतना को बुनावट और बनावट दोनों के स्तर पर ऐसे रचते हैं कि प्रत्येक प्रसंग युक्ति बन जाय और ऐसी युक्ति पूर्ण रचना लोकमंगलकारी एवं युगान्तरकारी प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम हो जाये। इसलिये लोकनायक तुलसी अपने मानस महाकाव्य के हर वर्ण व अर्थ को इतने चैतन्य होकर गढ़ते हैं कि समग्र प्रभाव के फलस्वरूप "सुरसरि सम "सहज प्रवाहमयी और "पातक पोतक डाकिनि " मुदमंगलकारी लोकरंजनी रामकथा बन सके जो जन मन के संशय विहंगों को सुंदर करतारी की तरह उड़ाने में सक्षम हो। वास्तव में करतार की यह कथा 'करतारी ' ही है, जो याज्ञवल्क्य जी के मानस के संशय रूपी प्रश्न और पार्वती जी के संशयात्मक प्रश्न , गरूड़ जी के संशय , एवं तुलसी और संत समाज के बीच संवाद के माध्यम से समाधान काव्य संपादित करती है। तुलसी लिखते हैं

"नदी नाव पटु प्रस्न अनेका। केवट कुसल उतर सविवेका "अर्थात् प्रश्न की सत्ता का, प्रश्नों से समस्या समाधान का, और प्रश्नों से संवाद के संगुफन की शक्ति का ज्ञान तुलसीदास जी को है तभी वे कहते हैं

"सुठि सुंदर संवाद वर विरचे बुद्धि विचार।
तेहि एहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारि॥"

सुविचारित प्रश्नोत्तर से संवाद को प्रश्रय मिलता है और संवाद से समाधान को पुष्टि प्राप्त होती है। भारतीय मनीषा या कहें भारतीय ज्ञान परंपरा समाधान की परंपरा है लेकिन यह तत्व विचारणीय है कि समाधान तो प्रश्नों का होता है न ! अत: तुलसीदास जी ने प्रश्नों के माध्यम से संवाद योजना को साभिप्राय सोद्देश्य गढ़ा है। वे कहते हैं

"!श्रोता वक्ता ज्ञाननिधि, कथा राम कै गूढ " और " ते श्रोता वक्ता समशीला " वक्ता श्रोता की श्रेणी, प्रज्ञा, शील स्वभाव और वर्ग भी समान रखने की आग्रहपूर्ण सतर्कता का पालन किया है। चारों संवाद संगुफित हैं और

1. विप्र अर्थात् याज्ञवल्क्य- भारद्वाज
2. सुर अर्थात् शिव - पार्वती
3. संत अर्थात् तुलसी और संत समाज
4. हित अर्थात् सभी तिर्यक योनियों (काकभुशुण्डि - गरूड़) को वक्ता - श्रोता बना कर आदि से अंत तक एकतान सूत्रधारिता का आयोजन किया है।
5. प्रथम संवाद याज्ञवल्क्य - भारद्वाज जी का संवाद है जो संत समाज के बीच का संवाद है ! तुलसी ने जो मानसरोवर का सांग रूपक दिया है उसमें यह संवाद दक्षिण दिशा के घाट पर घटित होता है जो घाट कर्मकाण्ड घाट भी कहलाता है। क्योंकि यहां मकर संक्रांति के समय प्रयाग में कर्म करने से सत्संग प्रारंभ होता है और राम - कथा मंदाकिनी के प्रवाह तक जाता है।
6. द्वितीय संवाद —शिव- पार्वती संवाद है जो मानस सर रूपक के पश्चिम घाट पर सम्पन्न होता है और 'ज्ञानकाण्ड घाट ' के नाम से जाना जाता है। सदाशिव विश्वनाथ और पार्वती के नाथ शिव अपनी प्रिया के प्रश्नों के समाधान में रामकथा सुनाते हैं। यह संवाद प्रथम संवाद में संगुफित है। याज्ञवल्क्य जी जब भारद्वाज जी के आतुर प्रश्नों का उत्तर देते हैं तो वे शास्त्रीय प्रणाली का अनुप्रयोग करते हुये केवल अपनी बात नहीं कहते अपितु शास्त्र प्रामाणित कथा सुनाने के उद्देश्य से शिव - पार्वती संवाद के द्वारा अपनी बात को संपुष्ट करते हुये कहते हैं -

"कहौं सो मति अनुहार अब उमा संभु संवाद।
भयउ समय जेहि हेतु जेहि , सुनि मुनि मिटहि बिसाद। "

शिव - पार्वती जी को राम कथा सुनाते हैं तब उसी प्रसंग को पुष्ट करते हैं जब तुलसी लिखते हैं कि शिव जी द्वारा रचित रामकथा के प्रकटीकरण का समय अब आ गया —-

"रचि महेस निज मानस राखा।
पाइ सुसमय सिवा सन भाखा॥ "बालकांड

इसलिये शिव जी पार्वती जी को कहते हैं -
"गिरिजा सुनहु विसद यह कथा।
मैं सब कही मोर मति जथा॥ "(उत्तरकांड)

अर्थात् स्पष्ट है कि पार्वती जी को जो राम कथा शिव पार्वती संवाद के माध्यम से सुनायी गयी वह स्वयं देवाधिदेव शिव की रची है।

तृतीय संवाद के रूप में काकभुशुण्डि -गरूड़ जी का संवाद है। मानस सरोवर रूपक में इसे उत्तर दिशा में संपन्न हुआ कहा गया है और यह उपासना - कांड है। इस संवाद में गरूड़ जी जिनके पंखों से वेद की ऋचायें झरती रहती हैं लेकिन रण - भूमि में श्री राम को नागपाश में बँधा देखकर उन्हें मोह हो जाता है तो काकभुशुण्डि जी के पास संशय निवारणार्थ जाते हैं। यह वास्तव में उपासना कांड है क्योंकि काकभुशुण्डि जी जन्म जन्मान्तर से राम की उपासना में लीन रहते हैं। यद्यपि इस संवाद का मुख्य वर्णन उत्तरकांड में है , लेकिन समस्त कथा में जहाँ ज्ञान की चर्चा हो वहीं भुशुंडि उवाच आता है। इस संवाद की विशेषता यह है कि तुलसी ने काकभुशुण्डि गरूड़ जी संवाद के माध्यम कथा का समाहार प्रस्तुत कर दिया है ! पाँच दोहों में संपूर्ण कथा का क्रम और पुनर्स्मरण हो जाता है जिसे भुशुण्डि रामायण के नाम से जग प्रसिद्धि मिली !

चतुर्थ संवाद मानस में यत्र - तत्र समाया हुआ है। मानस सरोवर रूपक के अनुसार यह संवाद शरणागति कांड है और यह गऊघाट भी कहा जाता है। तुलसी जब स्वान्त:सुखाय रचना करने की बात कहते हैं उस समय बड़ी बड़ी काव्यशास्त्रीय और शैलीपरक युक्तियों का प्रयोग करना उनका उद्देश्य रहता है जिसके बल पर रामकथा का यह महाकाव्य मानवता की मर्यादा का महाकाव्य बन जाय और संस्कृति का विश्वकोश भी बन सके। रामचरितमानस भव रोग की मनोवैज्ञानिक औषधि बन जाय इसके लिये सोद्देश्य चयन करना कुछ प्रसंगों को छोड़ना जैसी युक्तियाँ प्रयोग की गयीं हैं। इसी प्रकार की शताधिक युक्तियों में से एक संवाद - सौष्ठव और संवादों का संगुफन यानी सघन बुनावट गोस्वामी जी की मौलिक सोच का परिणाम है। इसकी अति विशिष्ट प्रयोजनीयता है।

1. संवाद सौष्ठव की सोद्देश्यता ये है कि ये संवाद महाकाव्य की कथा में एक अन्त:सलिला (इनरकरेन्ट) की तरह बहते रहते है।
2. ज्ञान - कांड घाट से ज्ञान मार्ग, उपासना-कांड घाट से उपासना मार्ग , कर्म - कांड घाट से कर्म मार्ग और शरणागति घाट से शरणागति की भावना को मानस जैसे महाकाव्य में आद्यन्त अन्त:सूत्र की तरह सुविचारित रूप से पिरोया हुआ है।
3. चारों संवाद योजनायें बड़ी प्रामाणिक तार्किकता से बुनी गयी हैं ! जैसे याज्ञवल्क्य - भारद्वाज संवाद मुनियों के मध्य तत्वविवेचन की आकांक्षा से रखा गया है। इसका उल्लेख केवल बालकांड में ही मिलता है संपूर्ण कथाक्रम में व्याप्त नहीं है।
4. शिव - पार्वती संवाद बालकांड से लेकर प्रत्येक कांड में मिलता है लेकिन अयोध्याकांड में शिव मौन दर्शक बने भरत चरित का अवगाहन करते हैं !
5. काकभुशुण्डि गरूड संवाद विशुद्ध सगुण भक्ति का प्रतिपादक संवाद है जो उत्तरकांड में रचा गया है। गुरु शिष्य संबंधों की गरिमा वात्सल्य और ज्ञान महिमा का अद्भुत संवाद है।
6. तुलसी संत समाज या कहें पाठक , श्रोता के मध्य जो संवाद योजना है वह सूत्रधार के समान है और कथाक्रम के मार्मिक स्थलों पर विशेष प्रकाश डालने के लिये है।आध्यात्म एवं भारतीय दर्शन के तत्वों का कथा क्रम में सप्रसंग उल्लेख करने का माध्यम है।
7. चारों संवाद यथा समय कथाक्रम को पुष्ट करते हैं स्वाभाविक विकास के द्वारा यह चारों चलते हैं जिससे मानसरोवर के घाट मनोहर चारि का रूपक भी सिद्ध होता है और चार वर्ग के समान शील वाले वक्ता श्रोता भी संयोजित हो जाते हैं। महाकाव्यात्मक औदात्य और विशेष लक्षणों में इस प्रकार की बुनावट से कथानक पुष्ट होता है साथ ही अन्य अनेक अन्तर्कथाओं से अन्यान्य विषयों पर शास्त्रीय रीति से प्रकाश डालने का अवकाश भी मिलता है।
8. प्राश्निक पार्वती और शिव - पार्वती संवाद

प्राश्निक होने का अर्थ

प्रश्न कर्ता ही प्राश्निक है , प्राश्निक ही श्रोता है और प्राश्निक ही संवाद की पहली कड़ी है , अत: बहुत महत्वपूर्ण है। प्रश्न करना एक मनोविज्ञान है जहाँ प्राश्निक अपनी चेतना को एकाग्र करके संबंधित विषय के प्रति जिज्ञासा का भाव रखता है। अपना ध्यान केन्द्रित करके प्रश्न करना बहुत बड़ी बात है। प्रश्न परिप्रश्न की महत्ता गूढ़ ज्ञान को जानने में कितनी महत्वपूर्ण है इस विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं :-

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।4.34।।

ज्ञान को प्रणिपात अर्थात् श्रद्धा व विनय पूर्वक प्रणाम करके और परिप्रश्न करके लगन से जाना जा सकता है।

भारतीय मनीषा में तो चाहे वाल्मीकीय रामायण हो या कोई आगम ग्रन्थ या उपनिषद् चर्चा हो सबके मूल में प्राश्निक बहुत महत्त्वपूर्ण है। शताधिक प्रश्नों के समाधान में ग्रन्थ निरूपण सिद्धांत निरूपण होते हैं। लोक और शास्त्र दोनों में पार्वती जी के चरित्र का विशेष महत्व है जिनके नाम स्मरण करके स्त्रियाँ पातिव्रत की असिधारा पर चलती हैं। लोक की कथाओं में भी पार्वती जी प्रश्न करती हैं जन - जन की वेदना के लिये लोक कल्याण के लिये और शिव जी उत्तर में कथा सुनाते हैं।

गोस्वामी जी ने यही संकल्पना मानस में चयन की है।पार्वती जी जगत्जननी करुणामयी हैं ही लोक वेद शास्त्रों की संरक्षक भी हैं। विश्वगुरु शिव के सान्निध्य का लाभ न केवल स्वयं लेती हैं अपितु शास्त्र परंपरा को भी प्रदान करती हैं तभी तो हर स्तोत्र , हर गाथा में शिव पार्वती संवाद बुना हुआ रहता है। क्योंकि उसके लौकिक अलौकिक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रभाव रहते ही हैं !

विश्व स्तरीय चिन्तन में भी देखा जाय तो सुकरात ने " प्रश्न करने की कला को ज्ञान का मूल कारण माना है। सुकराती प्रश्न पूछने की कला आलोचनात्मक सोच से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है क्योंकि प्रश्न पूछने की कला विचार की उत्कृष्टता के लिए महत्वपूर्ण है। सुकरात ने व्यक्तिगत ज्ञान की जांच करने और जो व्यक्ति नहीं जानता या समझता है उसे स्वीकार करने की आवश्यकता पर तर्क दिया। आलोचनात्मक सोच का लक्ष्य चिंतनशील सोच है जो इस बात पर केंद्रित है कि किसी विषय के बारे में क्या विश्वास किया जाना चाहिए या क्या किया जाना चाहिए। सुकराती प्रश्न आलोचनात्मक सोच में विचार का एक और स्तर जोड़ते हैं, गहराई, रुचि निकालने और विचार की सच्चाई या व्यावहारिकता का आकलन करने पर ध्यान केंद्रित करके! प्रश्न पूछने या चर्चा का नेतृत्व करने की तकनीक स्वतःस्फूर्त, खोजपूर्ण और विषय केन्द्रित होती है। सुकरात पद्धति आम तौर पर धारण की जाने वाली मान्यताओं से शुरू होती है और उनकी आंतरिक संगति और अन्य मान्यताओं के साथ उनकी सुसंगतता को निर्धारित करने के लिए प्रश्नों के माध्यम से उनकी जांच करती है और इस तरह सभी को सत्य के करीब लाती है।

सुकराती प्रश्न , अर्थ और सत्य की तलाश करते हैं। आलोचनात्मक सोच हमारी सोच और क्रिया की निगरानी, आकलन और शायद पुनर्गठन या पुनर्निर्देशन के लिए तर्कसंगत उपकरण प्रदान करती है। इसे ही शिक्षा सुधारक जॉन डेथी ने चिंतनशील जांच के रूप में वर्णित किया है : "जिसमें विचारक मन में किसी विषय को पलटता है, उस पर गंभीरता से और लगातार विचार करता है।" सुकराती प्रश्न उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए स्व-निर्देशित, अनुशासित प्रश्नों को तैयार करने पर एक स्पष्ट ध्यान केंद्रित करता है।

कहने का तात्पर्य है कि ज्ञान चर्चा में संवाद महत्वपूर्ण है और संवादों में प्रश्न करने की कला का महत्व है। मानस के चारों संवादों में अनेक प्रश्न किये।

प्रयोजन और जिज्ञासाओं अंतर के साथ उस अगम , अगोचर , अज , अविनाशी के तत्व सूत्रों की चर्चा से गहन भक्ति की आकांक्षा से और लोक कल्याण की चिन्ता से पार्वती जी ने कुल बीस प्रश्न शिव से किये। विशेष उल्लेखनीय बिंदु यह है कि चारों श्रोताओं में पार्वती जी ही केवल नारी प्राश्निक हैं और यदि शिव आदि कवि हैं जिन्होंने मानस को रचकर मानस में रखा तो पार्वती जी आदि प्राश्निक हैं जो अपने पति के द्वारा प्रणयन किये गये रामकथा को लोकार्पित कराने का पवित्र अनुष्ठान संवाद के माध्यम से साध रही हैं और कैलाश पर्वत जैसे अनघ स्थान पर यह संवाद संपन्न होता है -

"परम रम्य गिरिवर कैलासू सदा जहां सिव उमा निवासू।

संवाद में प्राश्निक की भूमिका बढ़ जाती है क्योंकि कथा -प्रसंगों की दिशा और दशा प्रश्नकर्ता के प्रश्नों से ही निर्धारित होती है। शिव -पार्वती संवाद की विशेषता यह है कि सभी वक्ताओं में केवल शिव जी की कथा विस्तार से गायी गयी है। सती प्रसंग को सविस्तार कहने के पीछे यही उद्देश्य था कि पार्वती जी का प्रायश्चित्त , शिवजी को पुन: प्राप्त करने के लिये घोर तपस्या करना, पार्वती जी का हृदय परिवर्तन , जिज्ञासा , श्रीरामचरण में भक्ति और रामकथा में जिज्ञासा व उत्कंठा तार्किक रूप से समझ में आ जाय। दूसरा कारण तो स्पष्ट है ही कि तुलसी , श्री राम कथा से पहले उनके इष्ट शिव जी की कथा सुनाना चाहते हैं।

तीसरा उद्देश्य सनातन दाम्पत्य की गरिमा , समर्पण और शालीनता को व्यक्त करना है। रामचरितमानस में अनेक दाम्पत्य जीवन हैं जैसे दशरथ - कौसल्या आदि, जनक - सुनयना , अत्रि - अनुसूया , श्री राम -सीता , रावण - मन्दोदरी , विभीषण- सरमा , आदि लेकिन शिव - पार्वती जैसा दाम्पत्य दूसरा नहीं है , जहाँ पति पत्नी अपने पारिवारिक , निपट वैयक्तिक एकान्त में भी लोकहितकारी कथा की चर्चा परस्पर करते हों और सदैव यही क्रम चलता हो। जहाँ पार्वती जी प्रश्न पूछती हैं , आध्यात्म चर्चा करती हैं, राम कथा के गूढ़ तत्त्वों को जानने की उत्कंठा रखती हैं और देवाधिदेव शिव जी की गहन तपस्या से उपजा तत्वबोध प्राप्त करने को सदैव उत्सुक रहती हैं। रामचरितमानस ही नहीं अनेकानेक शास्त्रीय ग्रंथ और आगम के रहस्य ऐसे हैं जहाँ त्रिपुर सुंदरी , ललिताम्बा , जगज्जननी पार्वती स्वयं जन कल्याण की भावना से प्रेरित प्रश्न करती हैं और शिव से समाधान भी पाती हैं !दाम्पत्य का ऐसा निर्मल भाव विश्व में अन्यत्र देखने को दुर्लभ है। इसलिये शिव - पार्वती संवाद विशेष है।

रामचरितमानस की पार्वती इतने आर्त भाव से प्रार्थना करते हुये कहती हैं -

"बंदौ पद धरि धरनि सिर , विनय करौं कर जोरि।

बरनहु रघुबर बिसद जसु श्रुति सिद्धांत निचोरि॥ "

पुन: प्रणिपात पूर्वक यह भी निवेदन करती हैं कि -

"जदपि जोषिता नहिं अधिकारी। दासी मन क्रम वचन तुम्हारी॥

पुन: प्रार्थना करती हैं कि —-

"गूढ़उ तत्त्व न साधु दुरावहिं। आरति अधिकारी जहँ पावइ।

अति आरत पूछहु सुरराया। रघुपति कथा कहहु करि दाया॥ "

यह भी कहती हैं कि यदि कुछ पूछने से रह गया हो वह तत्व भी कहिये।

संवाद इतना संपुष्ट और सुविचारित है कि अपने संवाद में जितनी बार पार्वती जी ने "कहहु "कहकर प्रश्न किया है उतनी ही बार शिवजी ने " सुनहु " कहकर उत्तर दिया है। इन प्रश्नों के माध्यम से गोस्वामी जी ने रामचरित मानस की रूपरेखा भी प्रस्तुत कर दी है। पार्वती जी जन्म , विवाह , वनगमन से लेकर किमि गवने निज धाम तक के प्रश्न पूछ लेती हैं।

शिव -पार्वती संवाद में अनेक चमत्कार और रहस्य भरे हैं। जब तक पति पत्नी भाव से प्रार्थना करती रहीं तब तक रामकथा कहने का विचार नहीं आया लेकिन जब विश्वनाथ और त्रिभुवनगुरु कहा और चुप हो गयीं तब शिवजी ने उत्तर देना प्रारंभ किया।

इस संवाद के माध्यम से एक बड़ा संकेत गोस्वामी जी ने किया है कि " हर हिय राम चरित सब आए। प्रेम पुलक लोचन जल छाए॥ संवाद में ही ध्यान है -

"मगन ध्यान रस दंड जुग,पुनि मन बाहेर कीन्ह॥

रघुपति चरित महेस तब हरषित बरनै लीन्ह॥ "

संवाद - प्रकरण को मानस पीयूषकार शिव गीता भी कहते हैं जिसका मंगलाचरण करते हुये शिवजी ने विश्वप्रसिद्ध चौपाई कही है —

"मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवहु सो दसरथ अजिर बिहारी॥ "

और लोक मंगल की प्रस्तावना करते हुये पार्वती जी से कहते हैं

"तुम्ह रघुबीर चरन अनुरागी। कीन्हहु प्रस्न जगत हित लागी॥ "यहीं पर जिन हरि कथा सुनी नहिं काना। श्रवन रन्ध्र अहि भवन समाना॥ से रामकथा कलि विटप कुठारी आदि शिव गीता है!

शिवजी " सादर सुनु गिरिराज कुमारी " कहकर संबोधित करते हैं क्योंकि सादर शब्द संश्लिष्ट हैं इसमें प्रेम , आदर , ध्यान और श्रद्धा सब भाव मिले हुए हैं। मानसकार ने सभी वक्ताओं के संवाद में सादर शब्द का सोद्देश्य प्रयोग किया है -

"सादर सुनहु सुजन मन लाई "तुलसी

तात सुनहु सादर मन लाई। कहहु राम कै कथा सुहाई॥ याज्ञवल्क्य जी)

सब निज कथा कहउँ मैं गाई। तात सुनहु सादर मन लाई॥(भुशुण्डि जी)

शिव -पार्वती संवाद की स्थिति बहुउद्देशीय है।

1. कथा क्रम के सूत्र की अग्रप्रस्तुति 2. पार्वती जी के माध्यम से राम अवतार से जुड़े समस्त संशय के निवारण हेतु 3. राम के ऐश्वर्य और माधुर्य के मधुर संगुफन के लिये 4. सुनि सिव के भ्रम भंजन बचना। मिट गै सब कुतरक कै रचना॥ 5. यह संवाद संपूर्ण रामकथा में साथ - साथ चलता है समानान्तर रूप से। उत्तरकांड में पार्वती जी स्वीकार करती हैं " नाथ कृपा मम गत संदेहा॥

चार सोरठों में संवाद चतुष्टय का संगुंफन देखते ही बनता है —

हिय हरषे कामारि तब संकर सहज सुजान।

बहु विधि उमहि प्रसंसि पुनि बोले कृपानिधान॥

सुनु सुभ कथा भवानि , रामचरितमानस बिमल।

कहा भुसुंडि बखान , सुना बिहगनायक गरूड़॥

सो संवाद उदार जेहि विधि भा आगे कहब।

सुनहु राम अवतार चरित परम सुंदर अनघ॥

हरि गुन नाम अपार कथा रूप अगनित अमित।

मैं निज मति अनुसार कहौं उमा सादर सुनहु॥

निषाकर्ष यह कि रामचरितमानस की संवाद योजना अप्रतिम और मौलिक है। चार स्तरों पर कथा प्रवाह चलने से विविध आध्यात्मिक दार्शनिक और भक्तिपरक प्रयोजन सिद्ध होते हैं। संपूर्ण महाकाव्य में एकतान अन्विति बनी रहती है। कथा को अग्रेषित करने सूत्रबद्ध करने तथा अन्यान्य विषयों को समाहित करने का पर्याप्त तार्किक व प्रामाणिक अवसर गोस्वामी जी को मिल जाता है। मानस सरोवर सांगरूपक के चारों घाट सिद्ध होते हैं।

भारतीय सांस्कृतिक लौकिक और आध्यात्मिक तीनों परिदृश्यों में पार्वती जी को प्राश्निक के रूप में लोक और शास्त्र दोनों में सहज स्वीकृति मिली है जिसे तुलसी ने विशेष प्रावधान के साथ व्यक्त किया है। प्रश्नकर्ता जब प्रश्न करता है तो उत्तर और समाधान को दत्तचित्त होकर सुनता है। जब सती ने प्रश्न नहीं किया तो अगस्त्य जी के कथा सुनाने पर यही रामकथा थी पर कोई ध्यान ही न दिया। अत: पार्वती जी आग्रहपूर्वक प्रश्न करके यह भी सिद्ध करती हैं कि भारतीय ज्ञान परंपरा में शास्त्र की अखंड ज्योति श्री , मेधा , धृति , क्षमा रूप परांबा सदृश स्त्री शक्ति के हाथ में है। अत : तुलसी साहित्य में विशेषत: मानस में प्राश्निक और श्रोता पार्वती जी का विशेष योगदान है।

आत्मा सुखे नियोक्तव्यः – Valmiki Ramayana’s Synthesis of Happiness and Impermanence

ISBN: 978-1-960627-06-3

Ashruth Suryanarayanan
WEBOLIM (Web of Life Makers), Bengaluru
(ashruthsuryanarayanan@gmail.com)

In the multitudes of texts and scriptures that shape and define our culture, Valmiki Ramayana stands out for its unwavering, simple, yet profound emphasis on Dharma and human values. Every shloka is streamlined and focused to some aspect of life that serves as teaching moment for those who read it. It truly is, in that sense, a life maker. An interesting concept that is explored in this text is reconciliation of happiness and impermanence. Valmiki Ramayana offers a novel yet grounded perspective in this context, through the deeds and philosophy of Rama. This paper attempts to examine this philosophy with the help of other texts such as the Vedic Samhitas, Upanishads and Yoga Sutra, and shed a light onto how certain insights came to be. It will also compare Ramayana's perspective with modern philosophies today, showing a new path which can guide us to a brighter future.

1. Related Works

This paper utilizes the thought process and mantras from Dhvanidipika, a Rgveda commentary by Dr. R. Ranganji. Another valuable source of meticulously selected mantras translated to English text by the same author is the book titled “The Veda My Passion”. This paper relies on these sources collectively, for utilization of the spiritual (आध्यात्मिक) meanings in the elucidation of the central concept in this paper.

2. Discussion

Happiness and impermanence, when viewed at first, seem to be at opposite ends of each other. Our understanding of happiness and bliss is mostly something that is permanent, with the happiness we derive from impermanent objects being just a small morsel (). This fact can lead down to somewhat of a slippery slope, with one thinking that an absolute rejection of impermanence, and by extension, the world which is itself impermanent in nature, there is a space for absolute happiness. In fact, one may use such a construct as an excuse to shirk responsibilities, because, after all, what’s the point of doing impermanent actions to take care of impermanent relations in this “pointless” life? In this way, this rejection of impermanence can lead to misunderstandings that can permeate the whole of society.

Valmiki’s Ramayana dives deep into this notion of impermanence. When Bharata asks Rama to come back to Ayodhya, Rama spends some time delving into this very impermanence

नात्मनः कामकारोऽस्ति पुरुशो।यमनीश्वरः।
इतश्चेतरतशचैनं कृतान्तः परिकर्षति॥
(Ayodhya Kanda, 105.15)

This highlights the reality of man’s agency and desire. It’s not like as if someone can do anything they want (नात्मनः कामकारोऽस्ति), but rather, there is some higher power that drags them through various experiences, whether they be good or bad. This lack of agency is really the foundation for the existence of impermanence, as, since no one person has the ability to do whatever they want, there is no real sense of control, and as a result, an absence of stability and permanence

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्तः समुच्छ्रयाः।
संयोगा विप्रयोगान्ताः मरणान्तं च जीवितम् ॥
(Ayodhya Kanda, 105.16)

This shloka beautifully puts forth the nature of things; That which is earned must be spent, what goes up must come down, union ultimately leads to separation, and there is no life without death. Rama goes on to talk about the frailty of relationships (), the impermanence of life and how one is blissfully unaware of this impermanence

नन्दन्ति उदितादित्ये नन्दन्ति अस्तमिते रवौ।
आत्मनो नावबुध्यन्ते मनुष्या जीवितक्षयम्॥
(Ayodhya Kanda, 105.24)

People rejoice when the sun rises and the sun sets, and yet, no one realizes that with every passing day, life’s end (मनुष्या जीवितक्षयम्) approaches. In this way, Rama brings forth this impermanence and the seeming obliviousness to it.

This, if anything, seems to reinforce the previous claim, that permanent happiness is something that is attained by rejecting the whole world. Rama, however, takes a completely different stance when it comes to the synthesis of happiness and impermanence:

वयसः पतमानस्य स्त्रोतसो वाऽनिवर्तिनः।

आत्मा सुखे नियोक्तव्यः सुखभाजः प्रजाः स्मृताः॥

(Ayodhya Kanda, 105.31)

As life is fleeting, one should invariably keep oneself in a pursuit leading to happiness. After all, beings are meant to be happy. This verse seamlessly connects and synthesizes impermanence and happiness, showing that the journey towards happiness is through enjoying the small joys yielded in impermanence.

This alone isn't Rama's intention here, however. Rama ultimately shows that Dharma, which led him to live in the forest, is this pursuit leading to happiness, by which these impermanent things are made better through the desire to provide welfare for others. Through Dharma, and selflessly sacrificing oneself for this principle, that which is impermanent isn't pushed away, but rather celebrated and nourished as instruments that lead to that permanent, everlasting, Bliss.

The Vedas beautifully outline this concept. In the Vedas, an almost similar view on impermanence that was previously discussed is found:

योऽसौ॑ त॒पन्नु॒देति॑।

स सर्वेषां भू॒ताना॑म् प्राणा॒न्न॒दायो॒देति॑।

(Taittiriya Aranyaka, 1.65)

This mantra describes the Sun as a force that determines the passage of time, and by that, the end of lives (मार्ताण्द). Every sunrise and sunset further drain the vital force (प्राण) of the living beings. By connecting this aspect with Surya, the Vedas seem to connect it with the Atma itself. (सूर्य आत्मा जगतः तस्थुशश्च). By doing this, it seems to suggest this impermanence and transitoriness of life is deeply connected with our own existence, we ourselves serving as plain witnesses for the goings and comings in life.

The Vedas connect another aspect with Surya as well

पश्येम शरदः शतं।

जीवेम शरदः शतं।

नन्दाम शरदः शतं।

मोदाम शरदः शतं।

भवाम शरदः शतं।

शृणवाम शरदः शतं।

This mantra is a simple prayer to the very same Sun, asking for the ability to experience and nourish these impermanent things to the very same Self, showing that this impermanence, rather than being the antithesis of happiness and bliss, is simply something that shouldn't be misunderstood and misused, but rather, utilized for Dharma, which further leads to this eternal happiness.

This synthesis serves as the bedrock of Rama's actions throughout the epic. Rama doesn't shy away from the impermanent, but rather, he understands impermanence as it is, all the while utilizing it to give everyone around him happiness. The whole of Valmiki's Ramayana, in this sense, does the same, being centered in this very impermanence. It is important to remember here that Dharma is ultimately the linking factor in this synthesis. As Rama puts it,

धर्मार्थकामाः किल तात लोके समीक्षिता धर्मफलोदेयेषु। (Ayodhya Kanda, 21.56)

When one follows Dharma, every other aspect of life falls in line, giving rise to a balanced and holistic lifestyle.

3. Conclusion

Valmiki's Ramayana is, at its very core, a story whose theme is Dharma. Every shloka is devoted to expounding Dharma in some way, realizing a nuanced yet simple story that can deal with simplest of dilemmas to the most complicated of debates. It is this spirit that allows it to provide a beautiful and powerful synthesis of happiness and impermanence, showing how, through Dharma, this problem is turned into something that provides a holistic and genuine change into all of our lives.

One such juxtaposition is happiness and impermanence. Rama's philosophy surrounding these promises to be quite powerful in providing insight into how Dharma connects with consciousness, prosocial motivation, and important characteristics for sustainability in life.

4. References

1. Rangan, R. (2021). *The Veda My Passion*. WEBOLIM.
2. Rangan, R. (2021b). ध्वनिदीपिका. Dhvani Deepika - Rig Veda Commentary by Dr. Ranganji. https://dhvanidipika.com/

विविध रूपों में तुलसी के राम : एक आदर्श

ISBN: 978-1-960627-06-3

कुलभूषण शर्मा
सहायक आचार्य,हिंदी विभाग, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा
(kbsharmacupb@gmail.com)

श्रीराम केवल एक नाम ही नही वरन संस्कृति, मर्यादा और आदर्श का प्रतिरूप हैं I राम का नाम भारतीय संस्कृति का प्राण कहा गया है I श्रीराम का जीवन एवं उनके कार्य हर भारतीय के लिए आदर्श हैं जो सदैव समाज, परिवार और धर्म के लिए समर्पित रहे हैं I श्रीराम भारतीयता के प्राण तत्व हैं जिनकी उपस्थिति हर परिस्थिति से आगे बढने को एवं परोपकार हेतु प्रेरित करती है I गोस्वामी तुलसीदास का मानना है कि श्रीराम मंगल के धाम, अमंगल को हरने वाले हैं जो सदैव दीन पर दया करते हैं- 'मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवउ सु दशरथ अजिर विहारी' I[1] श्रीराम मर्यादा की रक्षा के लिए हर परिस्थिति को स्वीकार करते हैं I वे न केवल पिता की आज्ञा को शिरोधार्य कर वन को सहर्ष स्वीकार करते हैं वरन आजीवन परिवार और समाज के आदर्श को स्थापित करते हैं I आज के कलयुग में जहां रिश्तों के कोई मायने नजर नहीं आते I आज के युग में जहां हर कोई स्वार्थ साधना में निमग्न है I आज हर कोई केवल अपने बारे में सोच रहा है, ऐसे में श्रीराम का जीवन एवं आदर्श हम सबके लिए मार्गदर्शक हो सकता है I श्रीराम का नाम राम के जीवन से कहीं बढ़कर है I यही कारण है कि कबीर 'कबीर सुमिरन सार है और सकल जंजाल'[2] कहते हैं तो गोस्वामी जी का मानना है कि कलयुग केवल नाम आधारा सुमीर-सुमीर नर उतरही पारा I श्रीराम का जीवन समर्पण का प्रतीक है जो वचन पालन को सर्वाधिक महत्व देते हैं- 'रघुकुल रीति सदा चली आई I प्राण जाहि पर वचन न जाहि I'[3]

शास्त्रों के अनुसार राम के चार रूप हैं- 'एक राम दशरथ का बेटा, एक राम जग-जग में लेटा Iएक राम का सकल पसारा, एक राम इस जग से निराला I'इन पंक्तियों में जहां एक ओर श्रीराम के चार रूप अर्थात- दशरथ पुत्र तुलसी के राम, जग-जग में विराजमान अन्तर्यामी कबीर के राम, सकल प्रसार रूप में जायसी के राम तथा जग से इतर सूरदास के पूर्ण अवतारी राम की व्याख्या की गई है I तो दूसरी ओर इसमें श्रीराम के चार गुण देखे जा सकते हैं- माता-पिता की आज्ञा पालन करने वाले, हर मन को आसरा देने वाले, जिनसे संसार की सृष्टि हुई है तथा जो जग से पृथक मुक्ति प्रदान करने वाले हैं I श्रीराम के ये चारों रूप हम सबके लिए हितकारी हैं I श्री राम का चरित्र बालपन से लेकर युवावस्था तक, राजा के रूप से लेकर वनवासी रूप तक तथा शिष्य रूप से लेकर स्वामी रूप तक अनेक आयाम लिए हुए है I तुलसीदास ने श्रीराम के हृदय को प्रेम और करुणा से संकर बनाया था I[4]

हमारे समाज के अनमोल रत्न हमारे बच्चे हैं I वस्तुतः बाल मन एक कच्चे घड़े के समान है जिसे किसी भी रूप में गढ़ा जा सकता है I बाल मन में जहां एक ओर सहजता और सरलता होती है वहीं दूसरी ओर अक्सर जिम्मेदारियों का अभाव दिखलाई देता है I वह मात्र अपने जीवन को दूसरे के आसरे जीता है यही कारण है कि उसमे धीरे-धीरे लापरवाही आती जाती है तो परिवार से सीखते हुए वही समाज और राष्ट्र के लिए उतरदायित्व को बखूबी भी निभाता है I बाल मन को एक सही कुम्हार की आवश्यकता होती है जिससे उसका आकार और अस्तित्व सही दिशा की ओर उन्मुख हो सके I अतः हमें अपने परिवार में बच्चो को सत साहित्य और आदर्श व्यक्तित्व के प्रति जागरूक करना चाहिए I श्रीराम का जीवन आदर्शमय है I उन्होंने अपने जीवन के द्वारा यही सन्देश दिया कि हर परिस्थिति में हमें प्रसन्न एवं एक दूसरे का साथ देते हुए रहना चाहिए I श्रीराम भारतीय सनातन संस्कृति के एक ऐसे आदर्श व्यक्तित्व हैं जो अपने कार्यों के द्वारा हर मन में एक स्थान बनाए हुए हैं I श्रीराम बाल रूप से ही अपने परिवार, गुरुजन एवं भाइयों के प्रति समर्पित रहे हैं I गोस्वामी तुलसीदास रामचरितमानस के बालकाण्ड में श्रीराम के बाल रूप की झांकी दिखाते हुए मानो संपूर्ण भारतीय बाल जीवन को एक सन्देश देते हैं I गोस्वामी जी बालकाण्ड में वर्णन करते हुए बाल राम की पांच विशेषताएं बताते हैं जो कि आज के बाल जीवन के लिए आदर्श है Iआज के समाज के बच्चों की सबसे बड़ी समस्या उनके अकेलेपन को प्रदर्शित करती है I इसी अकेलेपन के कारण वह अक्सर गलत राह की ओर निकल जाता है I तुलसी के बाल राम 'बंधु सखा संग लेहिं बोलाई'[5] अर्थात तुलसी के राम बंधु सखा को एकत्रित करके एक दूसरे के सुख दुःख को प्रकट करते हैं तथा साथ ही अपने पिता के साथ इन भावों को प्रकट करते हैं I आज के जीवन में अकेलेपन को दूर करने का एक ही माध्यम है हम एक दूसरे के साथ रहें और एक दूसरे को समझने का प्रयास करें I यही नहीं बाल राम 'अनुज सखा संग भोजन करही, मात पिता अग्या अनुसरही'[6] रूप में भी दृष्टिगत होते हैं I आज के बदलते दौर में हमारा भोजन और उसका स्वरुप बदल रहा है हम अपने बड़ों से सीख कर सही भोजन के स्थान पर फास्ट फ़ूड जैसे नुकसानदायक भोजन की ओर प्रवृत है साथ ही माता-पिता से छोटी-छोटी बातों पर विवाद कर उन्हें नासमझ या जनरेशन गैप मानकर उन्हें अक्सर अपमानित करते हैं या नजरअंदाज कर देते हैं I ऐसे में श्रीराम केवल अपने भाइयों के साथ प्रसन्न भाव से घर का बना स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन ही नहीं करते वरन माता-पिता की आज्ञा को सर्वोपरि मान उसपर चलने का आदर्श भी हमारे सम्मुख वर्णित करते हैं I

बच्चों का दायित्व केवल घर तक ही सीमित नहीं है वरन उन्हें आस-पड़ोस के साथ भी अच्छे संबंध बनाने चाहिए जिससे उसमे सामाजिक दायित्व के साथ-साथ दूसरों की भावना को समझने का बोध भी उत्पन्न हो I यही कारण है कि 'जेहि विधि सुखी होही पुर लोगा, करही कृपा निधि सोई संजोगा'[7] अर्थात जिस विधि से भी अयोध्या निवासी प्रसन्न हो ऐसा ही कार्य श्रीराम बाल-जीवन से ही करते आ रहे हैं I आज के जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना यही है कि इन्टरनेट के जमाने में हमारा स्वाध्ययन समाप्त हो रहा है साथ ही फेक न्यूज़ के कारण अक्सर गलत धारणाएं समाज में विस्तृत होती जा रही हैं I यही कारण है कि श्रीराम- 'वेद पुरान सुनही मन लाई, आपु कही अनुजहि समझाई'[8] अर्थात श्रीराम स्वयं वेद पुराण का अध्ययन तो करते ही थे साथ ही अपने भाइयों को भी इस अध्ययन की ओर प्रवृत करते हैं I श्रीराम के बाल रूप के पांचवी विशेषता यह थी कि 'प्रातकाल उठी कै रघुनाथ मात पिता गुरु नावही माथा'[9] अर्थात श्री राम प्रातः काल नित्य प्रति उठते थे तथा साथ ही माता-पिता और गुरु जनों को नित्य प्रणाम करते थे जिससे उनके प्रति सम्मान सदैव बना रहे तथा उनके आशीर्वाद से जीवन के सभी कार्य कर सके I

इस प्रकार आज के बाल मन को श्रीराम का चरित्र सही दिशा और जीवन जीने का आदर्श मार्ग दिखाता है I यदि हम सचमुच श्रीराम के प्रति अपनी आस्था प्रकट करना चाहते हैं तो उनके आदर्श स्वरुप पांच गुणों को हमें अपनाना चाहिए I हमें अपने बंधुओं के साथ मिलकर चलना है, परिवार के हर सदस्य का सम्मान करना है, माता-पिता और गुरु की आज्ञा को हर परिस्थिति में मानना है, वेद-पुराण सदृश्य सत-साहित्य का अध्ययन करना है तथा परिवार के साथ-साथ आस-पास के समाज से भी जुड़े रहना है I इसी प्रकार का बचपन एक आदर्श भविष्य की ओर न केवल उन्मुख होगा बल्कि हर परिस्थिति से निकलने का मार्ग भी दिखाएगा I

राम कथा का मूल आधार आस्था एवं विश्वास है I राम कथा सदियों से जनमानस को आदर्श मार्ग दिखाती रही है साथ ही सदियों से जनमानस जीवन का आधार ग्रहण कर उससे पाथेय लेकर जीवन की यात्रा में अनवरत चलता रहा है I राम कथा सहज उपलब्ध होने के बाद भी इसे समाज सहजता से आत्मसात नहीं कर पाता I ये भी कहा जा सकता है कि राम कथा का आयोजन अनेक लोगों के द्वारा अनेक स्थानों पर हो रहा है किंतु फिर भी राम कथा को आत्मसात करने वाले बहुत कम हैं I वस्तुतः गोस्वामी जी का मानना है कि राम कथा ऐसी करताली है जिससे संशय रुपी विहग उड़ जाते हैं I राम कथा केवल संशय ही नही संसार के समस्त भ्रम के निवारण का मूल साधन है I अधिकाँश जनसमाज राम कथा को सुनना और करवाना तो चाहता है किंतु राम के आदर्श में चलना नही चाहता I अतः उसमें भ्रम की स्थिति राम कथा को सुनने के बाद भी बनी रहती है I श्रीराम केवल एक नाम नही वरन अपने आप में संपूर्ण संस्कृति का प्रतिरूप है I उन्हें चाहें तो सहज रूप में मन को साधने से ही पा सकते हैं क्योंकि 'रामही केवल प्रेमु पिआरा'I[10] वे प्रेम के साक्षात रूप हैं जिन्हें छल-कपट को त्याग कर प्रेम भाव के द्वारा ही पाया जा सकता है I वहीं दूसरी ओर राम को जानना एवं साधना कठिन भी है क्योंकि यह सहजता और प्रेम पाना सरल कार्य नहीं I इसलिए गोस्वामी जी का मानना है कि राम कथा के सभी अधिकारी नहीं है I उनके मतानुसार 'राम कथा के तेइ अधिकारी I जिन कै सत संगति अति प्यारी' I[11] राम को पाना केवल सहज भाव में ही निहित नहीं है वरन राम कथा को सुनने एवं आत्मसात करने का मूल अधिकारी सत्संग की ओर प्रवृत साधक ही है I सत्य का नित्य संग कर जीवन को सही मार्ग द्वारा साधने वाला, राम चिंतन में सदैव निरत रहने वाला तथा संत अथवा श्रेष्ठ व्यक्तियों के नित्य संग में रहने वाला ही वास्तव में राम कथा का मूल अधिकारी है I अन्य सभी राम चिंतन को आधार तो बनाते हैं किंतु राम को न तो पाना चाहते हैं और न ही राम कथा से उनका कोई सरोकार है I वे यश प्राप्ति अथवा किसी विशेष उद्देश्य से राम चिंतन से जुड़ते हैं I

गोस्वामी जी द्वारा रचित राम कथा समस्त मंगल का विधान कर कलियुग के समस्त दोषों का निवारण करने वाली है I यही नहीं उनका ये भी मानना है कि राम कथा कलियुग रुपी सर्प के लिए मोर के समान तथा विवेक रुपी अग्नि को प्रकट करने के लिए अरणी के समान है I राम कथा से सभी मनोरथ पूर्ण ही नहीं होते बल्कि ये जीवन-मरण के जंजाल से मुक्ति का सबसे बड़ा माध्यम है I राम कथा को गंगा के समान कहा गया जो सभी का कल्याण करती है, चित्रकूट चित के सम्मान है सुन्दर स्नेह ही मन है जिसमें सीता-राम जी निवास करते हैं I इस प्रकार राम कथा तथा राम चिंतन का मूल आधार जन कल्याण का भाव ही है अतः हमें चाहिए कि हृदय की अयोध्या में राम-चिंतन एवं राम कथा के भाव को हम स्थापित करें I राम को केवल एक कथा या धर्म तक सीमित न करें श्री राम के असल अधिकारी बन हम अपने जीवन के साथ-साथ दूसरों के जीवन को भी सही दिशा के ओर मोड़ें यही हमारी रामभक्ति है यही श्री राम के प्रति मूल आस्था भाव है I राम कथा ही हमें युवा राम से परिचित करवाती है I

अक्सर युवा अवस्था ऐसी होती है जिसमे उत्साह के साथ-साथ जल्दबाजी और उतावलापन देखने को मिलता है I युवा मन अक्सर अति उत्साह में अपने उद्देश्य को शीघ्र प्राप्त कर लेता है तो कई बार यही उत्साह उसे गलत मार्ग की ओर भी उन्मुख कर देता है I जब युवा उत्साह के साथ अनुभवी व्यक्ति का साथ होता है तो एक नए युग, काल तथा नव-निर्माण होता है I युवा के उत्साह को एक मार्गदर्शक की आवश्यकता रहती है I अनुभवी व्यक्ति एक योजना के द्वारा युवा को उसके उद्देश्य ही नहीं वरन उसके भविष्य निर्माण का भी मार्ग प्रशस्त करता है जिससे उसका ही नहीं वरन संपूर्ण समाज और राष्ट्र का हित होता है I श्री राम का युवा रूप हम सबके लिए प्रेरणादायी है जो सदैव अपने माता-पिता के साथ-साथ गुरुजनों, ऋषि-मुनियों के मार्गदर्शन से ही हर कार्य सम्पन्न करते हैं I श्री राम के जीवन के अनेक प्रसंग इस संदर्भ में देखे जा सकते हैं I एक ऐसा ही प्रसंग है धनुर्भंग का I श्रीराम और लक्ष्मण गुरु विश्वामित्र के साथ यज्ञ की रक्षा हेतु वन जाते हैं जहां वे समस्त राक्षसों का संहार कर अहिल्या को तारते हुए जनक पुरी पहुँचते हैं I यहाँ सीता स्वयंवर का आयोजन हो रहा था I राजा जनक के प्रण के अनुसार जो भी शिव के धनुष को उठाकर उसपर प्रत्यंचा चढ़ा देगा उसी से वे अपनी बड़ी पुत्री सीता का विवाह करेंगे I इस स्वयंवर में देशभर के कई राजा-महाराजा आये थे I कुछ युवा थे तो कुछ बड़ी उम्र

के भी I सबमे अति उत्साह और अहंकार का भाव था इसी कारण कोई धनुष को उठाना तो दूर स्थान से हिला भी न सका, वस्तुतः उनमे केवल काम भावना थी, सीता से विवाह कर उसके सम्मान का भाव नहीं अतः गोस्वामी जी लिखते हैं कि-

'सुनि पन सकल भूप अभिलाषे I भटमानी अतिसय मन माखे I
परिकर बाँधि उठे अकुलाई I चले इष्ट देवन्ह सिरनाई I
डगई न संभु सरासन कैसे I कामी वचन सती मनु जैसे I'[12]

अर्थात सभी राजा अहंकार और काम वासना के कारण राजा के प्रण को सुनकर असफल ही रहते हैं I अहंकार और काम वासना हर प्राणी का सबसे बड़ा शत्रु है I वहीं दूसरी ओर श्रीराम का व्यवहार सभी से पृथक था I जनक द्वारा सभी राजाओं के असफल रहने के बाद जो अपशब्द उनके मुख से निकले उसे श्रीराम ने सहज भाव से सुना और अपने समय आने की प्रतीक्षा सहज भाव से करते रहे I जब गुरु ने आज्ञा दी तभी उन्होंने अपना कार्य किया –

' सुनि गुरु बचन चरण सिरु नावा I हरषु बिषादु न कछु उर आवा II
उठहु राम भंजहूँ भवचापा I मेटहु तात जनक परितापा II
ठाढ़े भए उठि सहज सुभाए I ठवनी जुबा मृगराजु लजाए II
सहजही चले सकल जग स्वामी I मत्त मंजु बर कुंजर गामी II
गुरुहि प्रनामु मनहिं मन कीन्हा I अति लाघव उठाई धनु लीन्हा II'[13]

इन पंक्तियों में युवा राम की विशेषताएं दिखलाई देती हैं I श्रीराम गुरु की आज्ञा को सर्वोपरि मानते हैं I सर्व समर्थ होने के बाद भी इतना बड़ा कार्य करते हुए वे हर्ष-विषाद भाव से दूर सहज भाव से आगे बढ़ते हैं I सीता के प्रति प्रेम भाव होने के बाद भी शिव के धनुष को उठाने का उद्देश्य विवाह से कहीं अधिक राजा जनक के संताप को दूर करना मानते हैं I गुरु की आज्ञा ही नहीं मानते वरन कार्य पूर्ण करने से पूर्व गुरु को मन ही मन पुनः प्रणाम करते हैं तथा बिना किसी अहंकार के सहज भाव से धनुष उठाते हैं I आज के युवा को सीखना चाहिए कि हमें न केवल गुरु का सम्मान करना है बल्कि गुरु के मार्गदर्शन में सहज भाव के साथ समाज हित में ही कार्य करना है I युवा का सबसे बड़ा सहयोगी अनुभवी गुरुजन जो उसका मार्गदर्शन ही नहीं करते बल्कि आने वाली विपत्ति के प्रति सचेत भी करते हैं जिससे वह प्रतिकूल समय में भी आत्मविश्वास से भरकर हर कार्य सम्पन्न करता है I

श्रीराम का व्यक्तित्व एवं उनका आदर्श हम सबके लिए अनुग्रहणीय है I वे सदैव परिस्थिति के अनुरूप अपना जीवन जीते थे I उन्होंने किसी भी विकट से विकट परिस्थिति को सहज रूप से भोगते हुए उससे कुछ न कुछ ग्रहण ही किया I श्रीराम का विवाह संपन्न होता है, कुछ समय के पश्चात राजा दशरथ के मन में विचार आता है कि समय से श्रीराम का राज्याभिषेक कर वह समस्त जिम्मेदारियों से मुक्त होता हुआ अपने हो धर्म कार्य में प्रवृत हो I गुरु विशिष्ठ से अनुमति प्राप्त कर एक संध्या श्री राम को सूचित किया जाता है कि कल प्रातः उनका राज्याभिषेक किया जाएगा ऐसे में श्री राम का कहना है कि हम सभी चारों भाई एक साथ जन्में, गुरु शिक्षा अर्जित की और हमारा एक साथ ही विवाह हुआ फिर ये अनुचित है कि बाकी भाइयों को छोड़कर बड़ा भाई राजा बनें I ये बात गुरूजी को अच्छी लगी किंतु उन्होंने राम को ही राजा के रूप में तैयार रहने को कहा I श्रीराम ये सुन बड़े सहज भाव से रात्री में सोये किंतु जैसे ही सुबह हुई कैकेयी रुपी समय की चाल बदल चुकी थी I कैकेयी द्वारा मांगे गये दो वरदानों के अनुसार श्री राम को तपस्वी के वेश में चौदह वर्ष का वनवास प्राप्त हुआ और भरत को राजा बनाने का वर लिया गया I गोस्वामी जी लिखते हैं कि इन वरदानों के संबंध में जानने के बाद भी श्री राम सहज ही रहे जैसे रात्री में थे- 'मन मुसुकाइ भानुकुल भानु I रामु सहज आनंद निधानु '[14] अर्थात सूर्यकुल के आभूषण श्रीराम इस परिस्थिति में भी मुस्कुराते हुए सहज और आनंद भाव से भरे रहते हैं I श्रीराम का व्यक्तित्व हर परिस्थिति को अनुकूल बना देता है I ऐसी विकट परिस्थिति में भी वे माता-पिता के वचनों के अनुरागी बन उनकी आज्ञा को समस्त संसार का अमूल्य धन मानते हैं I वे माता कैकेयी से कहते हैं कि- 'मुनिगन मिलनु बिशेषि बन सबहि भाँति हित मोर I तेहिं महं पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर' अर्थात हे माता पिता जी आप की आज्ञा से वन में मेरा हित ही होगा क्योंकि वहां विशेष रूप से मुनियों का मिलाप होगा तथा मेरा हर दृष्टि से कल्याण ही होगा I इस प्रकार तुलसी के राम आदर्श राम हैं जो हर परिस्थिति से सकारात्मक ऊर्जा के साथ जीवन जीते हैं और हम सबको आदर्श मार्ग ही दिखाते हैं I

श्रीराम हर परिस्थिति में कर्मठ अथवा कार्यशील रहते हैं I वनवास के दौरान मुनियों से केवल आशीर्वाद ही प्राप्त नहीं करते वरन आत्मिक साधना करते हुए जीवन को साधने का भी कार्य करते हैं I वे सदैव चिंतनशील रहें हैं I चित्रकूट से आगे बढ़ वे पंचवटी में निवास करते हैं तथा भाई लक्षण एवं पत्नी सीता सहित धर्म कार्य में प्रवृत रहते हैं I एक दिन वे लक्ष्मण से चर्चा करते हैं जिसमें लक्ष्मण उनसे ज्ञान, वैराग्य, माया, ईश्वर और जीव के संबंध में पूछते हैं I श्रीराम कहते हैं कि 'मैं अरु मोर तोर तै माया I जेहि बस कीन्हें जीव निकाया'[15] अर्थात मैं और मेरा तथा तू और तेरा यही भाव माया है जिसके वशीभूत ये सारा संसार है I इसी संदर्भ में उन्होंने विद्या और अविद्या माया की व्याख्या करते हुए कहा कि जो माया के वशीभूत है वह कभी ईश्वर और अपने अन्तःस्वरूप को नहीं जान सकता I कर्म के अनुसार बंधन या मोक्ष देने वाला प्रेरक तत्व ईश्वर है I धर्म के मार्ग पर चलकर वैराग्य की प्राप्ति होती है तथा योग के मधम से ज्ञान प्राप्त होता है I इस प्रकार श्रीराम वन में वास के दौरान प्रतिकूल परिस्थिति में भी आत्म संयम द्वारा

आध्यात्मिक चेतना को विकसित करते हैं I स्थान-स्थान पर ऋषि-मुनियों के दर्शन करते हैं तथा तात्विक विश्लेषण द्वारा ज्ञान का प्रसार करते हैं I वस्तुतः तुलसी के राम सुशील है I वे किसी का दिल नहीं दुखाते I वे सभी की भावनाओं का समादर करते थे I वे वनवासी किरातों की बातें ऐसे सुनते थे जैसे कि वत्सल पिता अपने बच्चों की तोतली बातें सुनता है I[16]

श्रीराम का व्यक्तित्व एवं उनका जीवन जनसमाज के लिए आदर्श है I श्रीराम केवल वचनों का निर्वाह करने वाले आज्ञाकारी पुत्र, भाई लक्षण, भारत और शत्रुघ्न को सम्मान देने वाले आदर्श भाई, पत्नी सीता को उचित सम्मान देने वाले निष्ठावान पति ही नहीं है वरन एक श्रेष्ठ वनवासी, एक श्रेष्ठ तपस्वी, कुशल योद्धा और धीर-वीर-गंभीर शत्रु भी रहे हैं जिन्होंने एक योजना के साथ रावन जैसे आतातायी का अंत ही नहीं किया वरन उनके कुल का उद्धार करते हुए लंका को विभीषण जैसा श्रेष्ठ भक्त राजा भी दिया I हनुमान जैसे भक्त के लिए वे एक समर्पित भगवान बनकर भी रहे जिसके प्रति आशीर्वाद के साथ-साथ उसके प्रति कृतज्ञता भी श्री राम ने समय-समय पर व्यक्त की I वनवास की अवधि को पूर्ण कर श्रीराम अयोध्या लौट कर आते हैं I वे विमान से उतर अयोध्या की परिसीमा में प्रवेश पद यात्रा द्वारा ही करते हैं I अयोध्या को प्रणाम कर सरयू जी एवं गंगा जी के दर्शन करते हैं तत्पश्चात माताओं सहित समस्त परिवार से भेंट करते हुए वे गुरु वशिष्ट एवं वामदेव के चरणों को नमन करते हैं I वे समस्त अयोध्यावासियों से विशेष रूप से भेंट कर सबसे कुशल-क्षेम पूछते हैं तथा उनके स्वागत में समस्त अयोध्यावासी सजती-संवरती है तथा अपनी प्रसन्नता-प्रफुल्लता प्रकट करती है I श्रीराम के लौटने के पश्चात समस्त परिवारजन एवं अयोध्यानगरी को प्रसन्न देख गुरु वशिष्ट ब्राह्मणों को आमंत्रित कर 'कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका I जग अभिराम राम अभिषेका II अब मुनिबर बिलंब न कीजै I महाराज कहँ तिलक करीजै'[17] अर्थात गुरु वशिष्ट समस्त विप्रों से मृदु वाणी में कहते हैं कि श्रीराम का राज्याभिषेक संपूर्ण जगत को आनंद देने वाला है अतः अब विलंब न करते हुए शीघ्र महाराज का राजतिलक करना चाहिए I श्रीराम का राज्याभिषेक समस्त संसार सहित समस्त जनसमाज को आदर्श मार्ग प्रदृष्ट करता है I

समस्त परिवार के मध्य समस्त नगरवासियों की साक्ष्य में श्रीराम का राजतिलक सम्पन्न होता है I श्री राम का राज्य एक आदर्श राज्य है जिसमे सभी अपने कर्मों, धर्मों एवं दायित्वों का पूर्ण रीति से पालन करते हैं I राम राज्य में कहीं भी शोक और रोग के संकेत नहीं हैं क्योंकि सभी हर परिस्थिति को अनुकूल करने के लिए प्रयत्नरत रहते हैं और प्रसन्न रहते हैं I यही कारण है कि किसी को भी दैहिक, दैविक और भौतिक ताप नहीं सताते I सभी जन एक दूसरे का साथ देते हुए परोपकार के ही मार्ग पर चलते हैं I इस राम-राज्य में कहीं भी अनीति, अधर्म और अमंगल का साया नहीं है वरन प्राकृतिक वातावरण भी अनुकूल दिखलाई देता है I गोस्वामी जी द्वारा वर्णित ये राम-राज्य वस्तुतः स्वस्थ, आदर्श एवं धर्मयुक्त समाज की नींव उपस्थित करता है जिससे सभी को सही मार्ग मिल सकता है I रामराज्य की ये अवधारणा तुलसी की दूरदर्शिता को तो दर्शाती ही है साथ ही श्रीराम के महत्व को भी इंगित करती है I श्रीराम का राज्य ऐसी व्यवस्था है जो जिससे समस्त संसार का मार्गदर्शन हो सकता है साथ ही समस्त जन-समुदाय इसके माध्यम से अपने धर्म, कर्म और अध्यात्म जीवन को उन्नयन की ओर ले जा सकते हैं I

श्रीराम का व्यक्तित्व और उनकी राज्य व्यवस्था हम सबके लिए आदर्श ही है I आज श्रीराम एक संस्कृति, एक विचारधारा और एक गाथा के रूप में हमारे मध्य उपस्थित हैं I संपूर्ण रीति के साथ रामलला की प्राण प्रतिष्ठा अयोध्या में सम्पन्न हो चुकी है I संपूर्ण भारत ही नहीं वरन संपूर्ण विश्व इस राम महोत्सव का साक्षी बन श्रीराम के महत्व और उनकी उपस्थिति को अनुभव कर सका है I एक नई ऊर्जा, नवीन भाव-बोध तथा एक नई चेतना से अनुप्राणित समाज राममय हो एक नई दिवाली मनाता हुआ दृष्टिगत हुआ है I ऐसे में हम सबका अब यही कर्तव्य है कि इस ऐतिहासिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक पल को, उसकी ऊर्जा तथा उसके बोध को अपने जीवन में जीवित रखें I श्रीराम आये एक लीला को निभाते हुए अपने जीवन के सन्देश का मार्ग प्रशस्त कर चले गये I राम मंदिर के हटने, टूटने से लेकर इसे पुनर्स्थापित करने तक न जाने कितनी बलिदानियों के योगदान से, उनकी निष्ठा एवं सम्पर्पण के भाव से आज का ये पावन दिवस आया जिसमें हम राम लला को स्थापित कर अपने जीवन को धन्य मान रहे हैं I हमें भी आनन्दित भाव से रामलला के दर्शन करने हैं तथा उनकी ऊर्जा को अनुभव करना है I केवल दर्शन और अनुभव से इतिश्री नहीं होगी बल्कि ये आरंभ होना चाहिए एक नई चेतना के उदय का I श्री राम की चेतना एवं उनका सन्देश को आगे प्रसारित करना, समभाव से परिपूर्ण स्वधर्म को निभाते हुए सबका सम्मान, सबका विश्वास और सबके साथ से ही श्री रामलला के दर्शन सार्थक होंगे I अब समय आ गया है हम मिलकर श्रीराम के चरित्र को अपनाएँ तथा उनसे संपूर्ण भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व का भी मार्गदर्शन करें I

संदर्भ ग्रन्थ

1. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2077, बालकाण्ड- 111/04
2. दास, श्यामसुंदर, कबीर ग्रंथावली, दिल्ली, अद्वैत प्रकाशन, संस्करण- 2021, पृष्ठ- 62, दोहा-सुमिरन कौ अंग- 5
3. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2077, अयोध्याकाण्ड, 27/04
4. त्रिपाठी, रामनरेश. *अनर्जगत*, इन्द्रप्रस्थ भारती, अक्टूबर-दिसंबर 2001,तुलसी विशेषांक, अंक-4, हिंदी अकादमी, दिल्ली, पृष्ठ- 16
5. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2077, बालकाण्ड, 104/01
6. वही, बालकाण्ड, 204/04
7. वही, बालकाण्ड, 204/05

8. वही, बालकाण्ड, 204/06
9. वही, बालकाण्ड, 204/07
10. वही, अयोध्याकाण्ड, 136/01
11. वही, उत्तरकाण्ड- 127/6
12. वही, बालकाण्ड- 249/5-6, 250/2
13. वही, बालकाण्ड- 253/7-8, 254/5
14. वही, अयोध्याकाण्ड- 40/5
15. वही, अरण्यकाण्ड- 14/02
16. त्रिपाठी, रमानाथ.तुलसी काव्य में मंगलमयता, इन्द्रप्रस्थ भारती. अक्टूबर-दिसंबर(तुलसी विशेषांक) अंक-4, 2001 हिंदी अकादमी, दिल्ली. पृष्ठ- 51
17. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2077, उत्तरकाण्ड-9/7-8

ISBN 978-1-960627-06-3

9 781960 627063